



श्री विश्वकर्मा प्रणित

वास्तुविद्यायां

क्षीरार्णव

KHSHIRARNAVA

मूल सहित-सुप्रभा नाम्नी
हिन्दी-गुजराती भाषाटीका

: संपादक :

स्थपति प्रभाशंकर ओ. सोमपुरा

शिल्प विशारद

Edited by :

Sthapati Prabhashanker O. Sompura, Shilpa Visharad.

PALITANA (Saurashtra)

‘शिल्प स्थापत्य’ ग्रंथ प्राप्तिस्थान : Shilpa books will be available at

संपादक

१ स्थपति प्रभाशंकर ओ सोमपुरा
शिल्प विशारद,
गोरावाडी, पालीताणा

Edited by

1 Prabhashanker O Sompura
Architect Shilpa Visharad,
Gorawadi, Palitana (Gujarat)
(INDIA)

प्रकाशक

२ बलवतराय सोमपुरा तथा भावृषे
३, पथिक सोसायटी, अहमदाबाद-१३
३ सरस्वति पुस्तक भंडार, बुक सेलर्स,
रतनपोल, हाथीताना, अहमदाबाद
४ महादेव रामचन्द्र जामुण्डे
ग्रण दरवाजा अहमदाबाद

Publishers

2 B P. Sompura & Bros
3, Pathik Society,
Ahmedabad-13
3 N. M. Tripathi & Co
Princess Street, Bombay-2
4 Motilal Banarasidas
Bungalow Road, Jawahar
Nagar, Delhi-7
5 Motilal Banarasidas
Nepali Khapada, P B No
75, Varanasi (U P)

प्रत १००० 1000 Copies

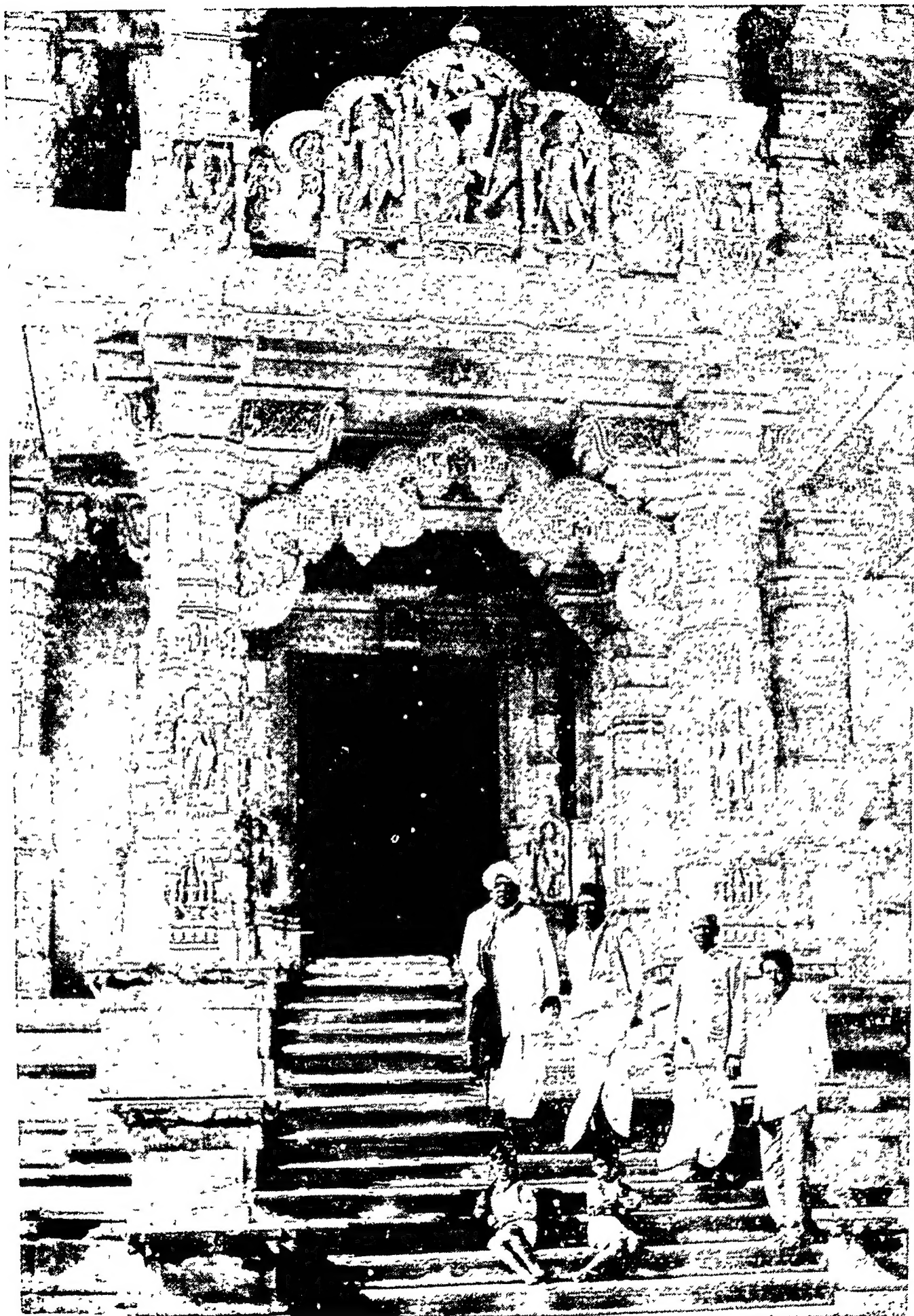
All Rights Reserved

मुल्य रु २५/- (पोस्टेज पृथक्)

Price Rs 25/- (Postage Extra)

मुद्रक

श्री मणिलाल छगनलाल शाह
नवप्रमाण प्रिन्टिंग प्रेस,
धीकाटा रोड, अहमदाबाद



सुप्रसिद्ध भगवान सोमनाथजी के मंदिरका प्रवेशभाग. मंदिर के निर्माता श्री प्रभाशंकर ओ. सोमपुरा खड़े हैं

स्थपति प्रभाशङ्कर-ओषडभाट-सोमपुरा-शिल्पविहारदके वास्तुशास्त्रके ग्रंथसंग्रह

श्री विश्वकर्माप्रणित

- १ क्षीरार्णव
- २ दृक्षार्णव
- ३ दीपार्णव
- ४ जयपृच्छा
- ५ वास्तुविद्या
- ६ सनवतान-अपराजित पृच्छा
- ७ ज्ञान रत्नसौश
- ८ सूत्रप्रदान
- ९ विश्वकर्मा प्रकाश
- १० वास्तुशास्त्रकारिका
- ११ विश्वकर्मा विद्याप्रकाश
- १२ विश्वकर्मा वास्तुशास्त्रम्
- १३ समराक्षण सूत्रधार
- १४ राजवल्लभ
- १५ वास्तुमार
- १६ वास्तुमण्डन
- १७ प्रासादमण्डन
- १८ रूपमण्डन
- १९ रूपावतार
- २० देवतामूर्ति प्रकरणम्
- २१ ज्ञानसार अपराजित
- २२ वास्तुमञ्जरी (अकरफेर)
- २३ वास्तुसार मटन
- २४ वेङ्कटप्रासादतिलक सू.
- वीरपाल

- २५ प्रमाणमञ्जरी सूत्र० मल्लदेव
- २६ वास्तुराज सूत्र० राजसिंह
- २७ वास्तुराज अन्य सर्व विषय
- २८ वास्तुकौतुक सूत्र० गणेश
- २९ कन्यानिधि सूत्र० गोविंद
- ३० वास्तुउद्धारधोरणी
- ३१ वास्तुश्याम सूत्र० कौशिक
- ३२ सुखानन्दवास्तु सूत्र० सुखानन्द
- ३३ वास्तुरत्नतिलक
- ३४ जलाश्रयाधिकार
- ३५ त्रैव्याविहार
- ३६ वास्तुपदीप प० वामुदेव
- ३७ सन्निर्वातपत्र
- ३८ वापिलक्षणम्
- ३९ मयशास्त्र
- ४० शिल्पशास्त्र (उटीया)
- ४१ लक्षण समुच्चय
(विरोचन प्रणित)
- ४२ नारदीय शिल्प

उपग्रंथ (छोटक प्रकरण)

- १ आशुतत्व
- २ केशराज
- ३ जिनप्रासाद
- ४ ऋषमादिप्रासाद
- ५ मेकविशतिमेद
- ६ लिङ्गलक्षण

- ७ श्री वश्यप्रासाद लक्षण
- नीतिशास्त्रके ग्रंथ मुद्रित
- १ शुक्रनिति २ विवेकविलास
- ३ बृहदसहिता ४ वमिष्ठसहित
- ५ नारदसहिता ६ गर्गसहिता
- ७ हयशिपे पंचरात्र
- ८ अभिलषितार्थ चिन्तामणी
- ९ मानसोक्तास

द्राविड शिल्पग्रंथ

- १ मयमतम् २ शितररात्म
- ३ मानमार
- ४ कादयपशितप ५ वास्तुविद्या
- ६ मनुष्यालयचदिका
- ७ इशानाशिवगुरुदेव पद्धति (३)
- ८ विश्वकर्माय शिल्प

पुराण व्याससृनि

- १ मातस्य २ अग्नि ३ भविष्य
- ४ गरुड ५ स्कंध ६ उत्कल
- ७ विष्णुधर्मोत्तर

आगम ग्रंथ

- १ सुप्रभेद २ कामिक
- ३ किरणा ४ अशुभनभेद
- ५ सकला ६ सिद्धांत शेषर
- ७ जीर्णोद्धार दर्शक
- ८ सारसंग्रह ९ पूर्वकीरण



प्रस्तावना

किसी भी देशके प्राचीन स्थापत्य और साहित्यसे ही उस देशकी संस्कृतिका मूल्य आँका जाता है । विद्या और कला देशका अनमोल धन है । शिल्प-स्थापत्य मानव जीवनका अति उपयोगी और मर्मपूर्ण अंग है ।

भारतीय शिल्प स्थापत्य (वास्तुविद्या) का प्रारम्भ काल कब से माना जाय इस बारेमें निर्णय करनेमें प्राचीन साहित्यके आधार लेनेकी आवश्यकता है । ऋग्वेद, ब्राह्मण ग्रंथों, रामायण, महाभारत, पुराण, जैन आगमों और बौद्ध ग्रंथों आदि साहित्यके संदर्भ सहायक हो सकते हैं । ऋग्वेदके सातवें मंडलके दो अध्यायोंमें चंद्रको सुष्टु रतंभोके साथ वास्तुपति इंद्रकी स्तुति है । यहाँ इंद्रको देवोंके स्थापति त्वष्टा कहा गया है । विश्वकर्मा को समग्र विश्वके त्वष्टा माना गया है, उनके पुत्रको भी त्वष्टा कहकर उनके शिष्य विभुकी स्तुति की गई है ।

और ऋग्वेदमें वास्तुविद्याके ज्ञाता अगस्त्य और वसिष्ठके नाम भी दिये गये हैं । त्वष्टा और विभुने इंद्रको वज्र बना दिया था । पाषाणके बनाये हुए सौ नगरोंमें सप्रमाण भवनोंकी रचनाका उद्देख मिलता है । इससे हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि स्थापत्य कलाका प्रारम्भ ऋग्वेदसे भी बहुत वर्षोंसे पहले हुआ होगा । अथर्ववेदके सूक्तोंमें स्थापत्यकलाके बहुत शब्द पाये जाते हैं । सामवेदके गृह्यसूत्रमें गृहारम्भकी धार्मिक क्रियाके तीन अध्याय हैं । आश्वलायन गृह्यसूत्रमें भी वास्तु विद्याके पर तीन अध्याय हैं । भूमिको अतीव वंदनीय मानकर उसका पूजन और उसकी स्तुति दी गई है । इन सब बातोंको होते हुए भी ऋग्वेद या ब्राह्मण ग्रंथोंमें वास्तुविद्याके बारेमें स्वतन्त्र अध्याय नहीं मिलते हैं । मूर्तिपूजाका प्रारम्भ भी वैदिक ब्राह्मण युगमें हुआ था ।

संसारके प्रत्येक प्राणीको जन्मसे ही शीत उष्ण और वर्षाकी प्राकृतिक प्रतिकूलताओंके सामने सुरक्षाकी जरूरत महसूस हुई इसीसे ही वास्तुविद्याका प्रारम्भ स्थूल रूपसे आदिकालमें माना जा सकता है । पर्वतोंकी गुफा या पर्णकुटि बनाकर मानवीने वास किया । वास्तुद्रव्यमें प्रथम घास ओर वांसका उपयोग हुआ, बादमें काष्ठका, बादमें ईंटोंका उपयोग होने लगा । अंतमें पाषाणका उपयोग बाँधकामोंमें होने लगा ।

शुक्राचार्य कहते हैं कि विद्या अनंत है और कलाकी तो गिनती ही नहीं हो सकती । परन्तु मुख्य विद्या बत्तीस और कलाओं चौसठ उनके द्वारा कही

गई हैं। वे विद्या और कलाकी सामान्य व्याख्या देते हुए कहते हैं कि 'जो कार्य वाणीसे हो सके वह विद्या है और मूर्क मनुष्य भी जो कार्य कर सके वह कला है।' शिल्प, चित्र इत्यादि मृक् भावे हो सके उसको कला कहा है।

मिन्न मिन्न आचार्योंने कलाकी संख्याको कम और अधिक बताया है। शुक्राचार्यने चौमठ कलाएँ बतायी हैं। समुद्र पालने जैन सूत्रमे ७० कलाएँ, काम सूत्रमे यशोधरने ६४ (अप्रान्तरसे ६४ × ८ = ५१२ कलाएँ कही गई हैं।) ललित विस्तरामे ६४, काम सूत्रमे २७, श्रीमद् भागवतमें ६४ कलाएँ गिनी गई हैं।

विविध कलाएँ त्रिभिध क्रियामे होती हैं। मनुष्य जिस कलाका आश्रय लेता है उस कला परसे उसकी जातिका नाम होता है। इस तरह कलाके वर्गानुसार जातियोंके समूह भी बनने लगे। चार वर्णाश्रमोंमेसे भेद पड़ने लगे।

वास्तुशास्त्र स्थापत्य और शिल्पकी व्याख्या—

वास्तुविद्या या वास्तुशास्त्र, स्थापत्य और शिल्प शब्दकी व्याख्याके अभाससे उसका मिश्र स्वरूप समझकर भाषाका प्रयोग हो रहा है। परन्तु वास्तुशास्त्र इन सबोंसे व्यापक अर्थमे है। उसका अतर्गत स्थापत्य और स्थापत्यका अतर्गत शिल्प है।

१. वास्तुशास्त्र—देशपथ, नगर, दुर्ग, जलाश्रयादि सभ, उद्यानगटिका आराम स्थानों, राज प्रासादों, देव प्रासादों, भवनों, सामान्यगृहों, शल्यज्ञान, शिराज्ञान, भूमिपरीक्षा इन सब विद्या वास्तुशास्त्र है।

२. स्थापत्य—दुर्ग, जलाश्रयो, राजप्रासादो, देवप्रासाद, भवनों, सामान्यगृहों वगैरहके बाँधकाम स्थापत्य है। इनके शास्त्रको विशेषकर स्थापत्य शिल्पशास्त्र कहा गया है।

३. शिल्प—दुर्गके द्वार, राजभवन, देवप्रासाद, जलाश्रयो वगैरह स्थापत्योंके सुशोभन, अलङ्कृति, गवाक्ष, झरोखे, नकशी, मूर्तियाँ—प्रतिमाएँ ये सब शिल्प हैं।

वास्तुशास्त्रके प्रणेता—मत्स्यपुराणमे शिल्पके अठारह आचार्यों के नाम ऋषि-मुनियों आवि के दिये हुए हैं। बृहत् महितारंगे दूसरे मात आचार्यों के नाम दिये हुए हैं। अग्निपुराण अ० ३९ मे लोकाख्याधिकामे शिल्पशास्त्रके पर पचीस ग्रंथोंकी नोंध दी हुई है। उनमे कई तांत्रिक और क्रियाओंके ग्रंथ हैं। परन्तु उनमे शिल्पशास्त्रके बहुत उल्लेख हैं। स्मृतिकार आचार्यों के सहिता ग्रंथोंमे और नीतिशास्त्रके ग्रंथोंमे और पुराणोंमे भी शिल्पशास्त्रके बहुत उल्लेख हैं। त्रिशकर्म

प्रकाशमें प्रारम्भमें स्तुति करते कहा है कि महादेवने पाराशरको वास्तुशास्त्रका ज्ञान दिया । पाराशरे बृहद्ग्रन्थको और बृहद्ग्रन्थने विश्वकर्माको वह ज्ञान दिया । 'मानसार' में बत्तीस शिल्पाचार्यों के नाम दिये हुए हैं । विश्वकर्माके मानसपुत्र चार जय भय सिद्धार्थ और अपराजित नामसे थे । कई ग्रंथोंमें सिद्धार्थको त्वष्टा भी कहा है । उन्होंने लोह कर्म, यंत्रकर्ममें कौशल्य प्राप्त किया । बाकी पुत्रोंने विश्वकर्माको प्रश्नों करके वास्तुविद्याका संपादन किया । उनके संवादके रूपमें ग्रंथ रचे गये हैं ।

स्थापत्योका विकास क्रम

स्थापत्योमें मुख्यतया देवमंदिरोंके विविध विभाग घाट पद्धतिका विकास क्रमशः पृथक् पृथक् कालमें और देशके खास विभागमें प्रचलित एक या दूसरी सांप्रदायिक शैलीमें देशके उस विभागमें कालबलसे नौवीं दशवीं शताब्दी तक शिल्पकृतियोंमें परिवर्तन होते गये । उसके बाद उसकी रचनाके खास सिद्धांत निश्चित हुए । इस तरह देवमंदिरादिकी रचनाके रूढ नियम पिछले कालमें अर्थात् बारहवीं शताब्दीसे निश्चित होकर लिखे गये यह निःशंक माना जा सकता है ।

पाञ्चाज्य विद्वानों भारतीय शिल्पकलाके सांप्रदायिक भेद मानकर शिल्पकी रचनाकी पहचान कराते हैं, यह बिल्कुल अयोग्य है । यह तो सिर्फ प्रवर्तमान शिल्प पद्धतिमें कालभेद या तो प्रांतिय भेद हैं ।

भारतका शिल्पी वर्ग—

भारतका प्रमुख शिल्पी वर्ग—भारतके प्रत्येक प्रांतमें प्राचीन वास्तुशास्त्रका अभ्यासी वर्ग विद्यमान था । वे अपने अपने प्रांतके प्रासादोंकी शैली रचना करते थे । कालबलसे या धर्मके प्रति दुर्लक्ष्यसे या विधधर्मियोंकी धर्माधताके कारण अमुक प्रांतमें यह वर्ग नष्ट हो गया है या धर्म परिवर्तनसे नष्ट हुआ है । बंगाल, बिहार, आंध्र, पंजाब, सिंध, सरहद प्रांत या कश्मिरमें तेरह चौदहवीं शताब्दी तक इस वर्गका अस्तित्व था ।

१. पश्चिम भारतमें सोमपुरा ब्राह्मण शिल्पीओं—वास्तुशास्त्रके निष्णात माने जाते हैं । अभी भी वे अपनी कलाको सुरक्षित बनानेका प्रयास करते हैं । गुजरात, सौराष्ट्र, कच्छ, राजस्थान और मेवाड़में वे घेर बिखेर बसते हैं । स्कंदपुराणके कथनानुसार प्रभासके पुत्र विश्वकर्माके अवतार रूप उनको माना गया है । वे ब्राह्मण जातिके होते हुए भी यजमानवृत्तिका दान नहीं स्वीकारते हैं । शिल्पज्ञ गृहस्थके रूपमें जीवन व्ययतित करनेका आग्रह उनका है । वे शिल्प

ग्रंथके संग्रहकर्ता है। उनके चान्ह गोत्र ऋषि कुलके है। वे यज्ञोपनित रखते हैं। सगोत्र लग्न नहीं करते हैं। और मृत्युके पश्चात् अग्नि सम्स्कार करते हैं।

२ भागत्के पूर्वमे उड़ीया-ओरिस्सा प्रदेशमे महाराणा नामक शिल्पी वर्ग है। वह शिल्पग्रंथोंका संग्रहकर्ता है। मन्दिर बनाता है। हालमे उसका व्यवसाय विज्ञेयत मूर्तिकलाका है। महाराणा जातिमे पापाण कर्म करनेवाले लोगोंको राज्य द्वारा महापात्रका मानद् पद भी मिला हुआ है। उसी तरह लोह या काष्ठके काम करनेवालोंको 'चोघरी' और 'ओझा'का मानद् पद भी मिला है। सोरधाके राजाने लोहकर्म करनेवाले एक परिवारको 'दास'का पद दिया है। पापाण कर्म करनेवालोंमे स्वपति मूर्तिकार भी है। इन सभी काष्ठलोहादि कामों करनेवाली एक ही जाति महाराणा नामकी है। उसमे परस्पर रोटी वेटी व्यवहार है। उन लोगोंमे क्षत्रिय हो या उससे निम्नवर्ग हो यह नहीं कहा जा सकता है। वे यज्ञोपनित नहीं रखते हैं। बियाँ पुनर्लग्न कर सकती है। उड़ीयामे ब्राह्मणादिमे मत्स्याहारकी छूट है। महाराणा जातिमे मृत्युके बाद अग्निमस्कार होता है।

३ द्रविड दक्षिण-मदुराई और मद्रासकी और विराट् विश्व ब्राह्मण आचार्यमे नामसे अपनेका बताता हुआ जिल्लीवर्ग है। घर जिल्ली ग्रंथका संग्रहकर्ता है। मन्दिरका और मूर्तिकाम करता है। विधिसे यज्ञोपनित धारण करता है। उम वर्गमे विरवा पुनर्लग्नकी प्रथा है। उसके तीन गोत्र है। १ अगम्य २ राज्यगुरु ३ सन्मुख सरस्वती सगोत्र लग्न नहीं काता है। मृत्युके बाद भूमिवाह देता है। उस प्रदेशमे नायकर, पिल्लेवाल, केन्टर और मुन्लीआर ऐसी निम्नजातिके कारीगर शिल्पकाम करते हैं। परन्तु वे मूलमे शिल्पी जातिके नहीं हैं। महाबलिपुरममे गणपति स्वपति और काचिपुरममे गोरीशकर स्वपति वहाँकी शिल्पशालाओंमे अध्यापक है।

४ कर्णाटकर-मैसूर-आत्र तेलगण और महाराष्ट्र प्रदेशमे पञ्चान्तके नामसे विश्वकर्मा जातिके शिल्पी वसते हैं। उनके पाँच कर्म व्यवसायके अनुसार उसमे गोत्र है। (१) पापाणकर्मनालेका, गोत्र प्रत्यस (२) लोहकर्म, गोत्र सानस (३) काष्ठकर्म, गोत्र सनातन (४) कसकार, गोत्र अभनग्र (५) सुवर्णकार, गोत्र सूर्यास इन पाँचोंका कर्मके अनुगार गोत्र है। ब्राह्मणके बिना वे किसीके हाथका भोजन नहीं करते हैं। इन पाँचामे परम्पर रोटी वेटीका व्यवहार है। वे सगोत्र लग्न नहीं करते हैं। यज्ञोपनित धारण करते हैं। बियाँ पुनर्लग्न करती हैं। उनमे कुछ मासाहारी भी हैं। वे शिल्पग्रंथोंका संग्रह करते

हैं। वे मंदिर, रथ, मूर्ति और काष्ठ वगैरहका काम करते हैं। गायत्री आदि का नित्यपाठ करते हैं। मृत्युके बाद अग्निसंस्कार करते हैं। आंध्रमें श्रीकाकुलम् लक्ष्मीपुरम्में उदुपुडु नामकी शिल्पीओंकी जाति थी। उसके दो चार घर वहाँ थे। उन लोगोंके पास “सारस्वती विश्वकर्मायम्” नामका ग्रंथ था। उनका अस्तित्व अभी नहीं मिलता है। यह परिवार शिल्पकार्यके अभावमें अन्य व्यवसायमें पड़ा हुआ मालुम पड़ता है।

५ तैलंगणमें विश्वकर्मा शिल्पी बसते हैं। वे शिल्पग्रंथका रक्षण करते हैं। मंदिर और मूर्तिका काम करते हैं। काष्ठ और लोहका काम भी करते हैं। करीब तीन सौ सालसे मुस्लीम राज्य प्रदेशोंमें रहनेसे सहवास दोषसे मांसाहार करते हैं। तो भी उनका ब्रह्मत्व कम नहीं हुआ है। गायत्री पाठ पूजा आदि करते हैं। यज्ञोपवित धारण करते हैं। किसी भी उच्च जातिके ब्राह्मणके हाथका भोजन भी लेते नहीं हैं। उपरोक्त पंचाननज्ञातिमें वे नहीं गिने जाते हैं। मृत्युके बाद अग्निसंस्कार भी करते हैं।

कर्णाटक मैसूरमें कन्नडी भाषा-मद्रास प्रदेशमें तमिल-केरालामें मलयालम और आंध्र जैलंगण प्रदेशमें तेलुगु भाषाका व्यवहार लोगोंमें है। उनके शिल्प-ग्रंथ संस्कृत नागरीलिपीके बदले उनकी लिपीमें लिखे हुए हैं।

६ जयपुर अलवरके प्रदेशोंमें गौड ब्राह्मणोंकी जातिके शिल्पीओं विशेषकर प्रतिमाका कुशल काम करते हैं। मंदिरोंका निर्माण भी करते हैं। यज्ञोपवित विधिसे धारण करते हैं। शुद्ध शाकाहारी हैं। उनमेंसे कभी देहातोंमें कृषिकर्म भी करते हैं। मृत्युके बाद अग्नि संस्कारका रिवाज है।

मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेशमें कभी भागोंमें ‘जांगड’ नामकी जाति अपनेको शिल्पीवर्गमें गिनती है। उनमें कभी सादा पापाणकर्म, काष्ठकर्म, चित्रकर्म और लोहकर्म करते हैं। कभी देहातोंमें कृषिकर्म भी करते हैं। विश्वकर्माको अपने इष्टदेव मानते हैं। जांगडमें कभी यंत्रविद्यामें कुशल हैं, जिस तरह गुजरातमें पंचाल जाति है।

७ गुजरात सौराष्ट्र और कच्छमें वैश्य, मेवाडा, गुर्जर, पंचोली जाति काष्ठकर्ममें प्रवीण है। पॉचवीं पंचाल जातिके शिल्पीओं लोहारका काम करते हैं। वे सब विश्वकर्माको अपने इष्टदेव मानते हैं। आगेकी चारों जातियोंके शिल्पी सुथारी काम रथकाम देवमंदिरोंके साधनों वगैरह चांदीका अलंकृत काम करते हैं। पंचालभाइओं लोहकर्ममें और यंत्र विद्यामें भी ‘जांगड’ जातिकी

तरह कुशल है । उपरोक्त पाँचों जातिमें पचोली अपनेको उच्च मानते हैं । यज्ञोपवित भी धारण करते हैं ।

स्थापत्याधिकारी शिल्पग्रन्थोंमें उल्लेख है कि यजमानको चाहिये कि गुणदोष परस्पर वह शिल्पका सत्कार करें । और अपने कार्यका प्रारम्भ करे । शास्त्रकारोंने बाँधकामके अधिकारीके चार वर्ग बनाये हैं । १ स्थपति (प्रमुख) २ सूत्रग्राही जिसको शिल्पीओंकी भाषामें “सुतर छोडा” कहते हैं । वह नकशे बनानेमें और कार्यकी शुरुआत करनेवाला निपुण होता है । ३ तक्षक—सूत्रमानके प्रमाणको जाननेवाला सुदर—काष्ठ या पाषाणादि कार्य या नकशीरूप करनेवाला करानेवाला ४ वर्धकी—दो प्रकार है । एक तो काष्ठकर्म करनेवाला वर्धकी (सुधार—सुत्रधार) और दूसरा माटीकार्यमें निपुण—मोटलीस्ट ।

भारतीय शिल्पीयोंकी प्रशंसा

जहाँ शिल्पीओंमें जड़ पाषाणको सजीवरूप देकर पुराण के काव्यको हुबहु बताया है, जिसका दर्शनकर गुणज्ञ प्रेक्षकों शिल्पीकी सर्जनशक्तिकी प्रशंसा करते नहीं थकते हैं, यहाँ टकनके शिल्पसे तथा पिंछीके चित्रसे ये शिल्पी अमर कृतियोंका निर्माण कर गये हैं । अखंड पहाडमेंसे कडारी हुई इलोराकी काव्यमय विशाल स्थापत्यकी रचना तो शिल्पीकी अद्भुत चातुर्य कलाका बेनमून प्रतीक है ।

भारतके शिल्पीओंने पुराणोंके प्रसंगोंका पाषाणमें सजीव कड़ाया है । उनके ओजारकी सर्जनशक्ति परमप्रशंसके पात्र है । पाषाणके शिल्प परसे शौर्य और धर्मबोध प्राप्त होता है । जड़पाषाणको वाणी देनेवाले कुशल शिल्पी भी कवि ही हैं । वे बहुत वस्त्रनादके पात्र है । अलङ्कृत कला किसी धर्म या जातिकी नहीं है । वह तो समग्र मानव समाजकी है ।

जड़ पाषाणमें प्रेम, शौर्य, हास्य, करुणा या किसी भी भावका मूर्त करना कठिन है । चित्रकार तो रंगरेखासे वह सरलतासे बता सकता है । परन्तु शिल्पी जैसे रंगोंकी सहायके बिना ही पाषाणमें भावकी मृष्टि खडा करता है । उधर ही उसकी अपूर्व शक्तिका परिचय होता है । भारतीय शिल्प स्थापत्य आज भी जियन्त कला है । युरोपिय शिल्पीओंके साथ तुलना करते कहना पड़ता है कि भारतीय शिल्पका लक्षण अपनी कृतिमें केवल भावना उतारनेका होता है । उन युरोपी शिल्पी तादृश्यताका निरूपण करता है । उन दोनोंके मूर्ति-प्रधानका उदाहरण लें । अनेक कनियोंने स्त्रीकी प्रकृति विकृतिके गुणगान किये हैं । उनके मौंदर्यका पान करानेवाले भगभूति और कालिदास जैसे महान कविओंने

उसके रूप गुणकी शाश्वतगाथा गाई है । उसकी प्रकृतिसे प्रसन्न भारतीय शिल्पीओंने स्त्री सौंदर्यको मातृत्व भावसे प्रदर्शित किया है जब युरोपी शिल्पीओंने वासनाके फलरूप स्त्रीको कंडारी है ।

भारतीय शिल्पीओंने भारतीय जीवन दर्शन और संस्कृतिको अपना सर्वोत्तम लक्ष्य मानकर राष्ट्रके पवित्र स्थानोंको चुन कर वहाँ अपना जीवन बिताकर विश्वकी शिल्पकलाके इतिहासमें अद्वितीय विशाल भवनोंका निर्माण किया है । दीर्घ काय शिलाओंको तोड़कर भूख और तृपाकी भी परवाह किये बिना अपने धर्मकी महत्तम भावनाको राष्ट्रके चरणोंमें समर्पित किया है । जनताने भी शंखनादसे अपने शिल्पकारोंकी अक्षय कीर्तिका चतुर्दिश प्रसारण किया है । ऐसे शिल्पीओंकी अद्भूत कलाके कारण जगतने भारतको अमरपद दिया है । ऐसे पुण्यश्लोक शिल्पीओंको कोटि कोटि धन्यवाद !

भारतके उत्तम कला धामों पर तेरहवीं सदीके बाद दुर्भाग्यके चक्र चल गये, चारों ओर धर्मांधताके बहुतसे प्रहार सात सौ साल तक हुए, तो भी भारतीय कला और संस्कृति जिवित रही है उसकी दृढ़ बुनियादको चलित नहीं किया जा सका है । उसके अवशेष भी गौरवप्रद हैं । आज विदेशी कला-पारखुओं आश्चर्य मुग्ध होकर उनको देखते हैं । भारतीय शिल्पीओंने कलाके द्वासे स्वर्गको-वैकुण्ठको पृथ्वीपर उतारा है । राष्ट्र जीवनको समृद्ध कर प्रेरणा दी है । ऐसी स्थापत्य कलाके प्रति आज राज्य कर्ता सरकार वेपरवाह बनी है । श्रीमंत वर्ग दुर्लक्ष्य करता है यह देशका दुर्भाग्य है । क्षणिक मनोरंजन नृत्य-गीतकी कलाको वर्तमानमें राज्याश्रय मिल रहा है । जब स्थायी ऐसी सुंदर शिल्प कलाके प्रति दुर्लक्ष्य किया जाता है । यह भी कालका वैचित्र्य माननेके सिवा और क्या ?

भारतीय कलामें आयी हुई विकृति

भारतीय कलामें आयी हुई पाञ्चात्य विकृति—वर्तमान शिल्प स्थापत्य और चित्र इन तीनों कलाओंमें आयी हुई विकृति प्राचीन भारतीय कलाका विनाश करेगी । १. स्थापत्यमें पश्चिमका अनुकरण कर पक्षीके घोंसले जैसे बेढंग और कठंगे विकृत और कलाविहीन भवन बन रहे हैं । २. शिल्पमें जहाँ सुंदर मूर्तियोंका सर्जन आँख और मनको आनंद प्रद था उनके स्थान पर सुखे काठके टूटे कि, जिनको हाथ, पैर, मुँह या माथाका ठिकाना नहीं है उनकी प्रशंसा करते हैं, जो वास्तवमें विकृति है । ३. चित्रकला उसकी तादृश्यता और छाया

प्रकाश या रंगोंकी सुन्दर रचनासे शोभती थी, वैसी कलाको देखते ही प्रसन्न हो आनन्द विभोर हो उठता था, उसके स्थान पर जिसके बारेमें कुछ भी समझमें न आये ऐसी टेढ़ी मेढ़ी रेखाओं या शृंग जैसे तुच्छ द्रव्योंमें रंगके धड़ेधड़े कल्पनाको उतावकर उसका गुणगान कर कलाका सत्यानाश करनेवाले मोडर्न आर्टके नामसे जगतकी वचना कर रहे हैं। ऐसी विभ्रुतिको देखकर घृणा और दुःखही लागणी होती है।

जिस कलाको दूरसे देखते ही प्रेरक उसके गुण और मर्मको जानकर आनन्दित होना था, उसके बदले यह कही जाती मोडर्न आर्ट नामकी कृति प्रेरकको 'यह क्या चीज है?' यह नहीं समझा सकती है। ऐसी विभ्रुतिको 'आर्ट' के नाम पर प्रदर्शनोंमें दिखाकर जगतको उलू बनाया जाता है। ऐसी कलाविहीन विभ्रुतिके प्रयाहके सामने देशकी प्राचीन कलावाच्योंको झुवग उठाकर भाग्यीय कलाकी सुगन्ध करनेका अपना फर्ज नहीं भूलना चाहिये।

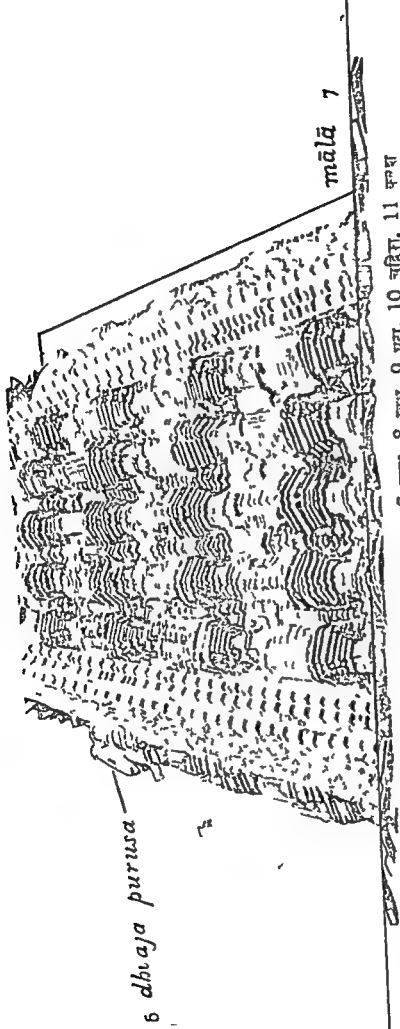
भारतके प्रासादकी जातियाँ—

प्रासाद वास्तुप्रयोगों में मुख्य विषयमें जातिके बारेमें जानना अति आवश्यक है। वास्तुप्रयोगों में बतानी हुई धार्मिक विधि और उद्योग विषय और ऐसी दूसरी वास्तुओं की लम्बी चर्चामें स्थापत्यके अभ्याशीओंकी कम रुचि होती है।

क्षीरार्णव—अपराजितपृच्छा और ज्ञानरत्नकोष जैसे नागरादि शिल्प ग्रंथोंमें भारतीय प्रदेशोंमें प्रयत्नमान प्रासादकी चौदह जातियाँ कही गई हैं। वास्तुराज, वास्तुमजरी और प्रासाद मंडन जैसे पन्द्रहवीं-सोलहवीं सदीके ग्रन्थों में भी उसकी नोंप ली गई है। मण्डनने चौदहमें से आठ जातिओंको श्रेष्ठ कहा है। अपराजितपृच्छाकारने चौदह जातियोंके बारेमें पूरे चार अध्यायों (१०३ से १०६) विगतसे दिये हुए हैं। १ नागर, २ द्रविड, ३ लतिन, ४ भूमिज, ५ वराट, ६ विमान, ७ मिश्र, ८ साधार, ९ विमान नागर, १० विमान पुष्पक ११ बलमी १२ फासनाकार (नपुमकादि), १३ सिंहानलोकन, १४ रथारूढ।

सम्राज्यसूत्रकार अ० ५२ में इस विषयकी चर्चा करता एक छोटा-सा अध्याय है। लेकिन उसमें चौदह जातियाँ नहीं कई हैं और उस विषयके पर विस्तृत चर्चा भी जातिके भेद करके नहीं की गई है। भूमिज, लतिन, नागर, द्रविड, बलमी जातियाँ कही गई हैं। लेकिन उसमें अपराजितपृच्छाकार की तरह व्याख्या नहीं की गई है।

लक्षणमसुचयमें छ प्रादेश प्रकार कहे हैं। १ कलिङ्ग, २ नागर, ३



6 dhvaja purusa

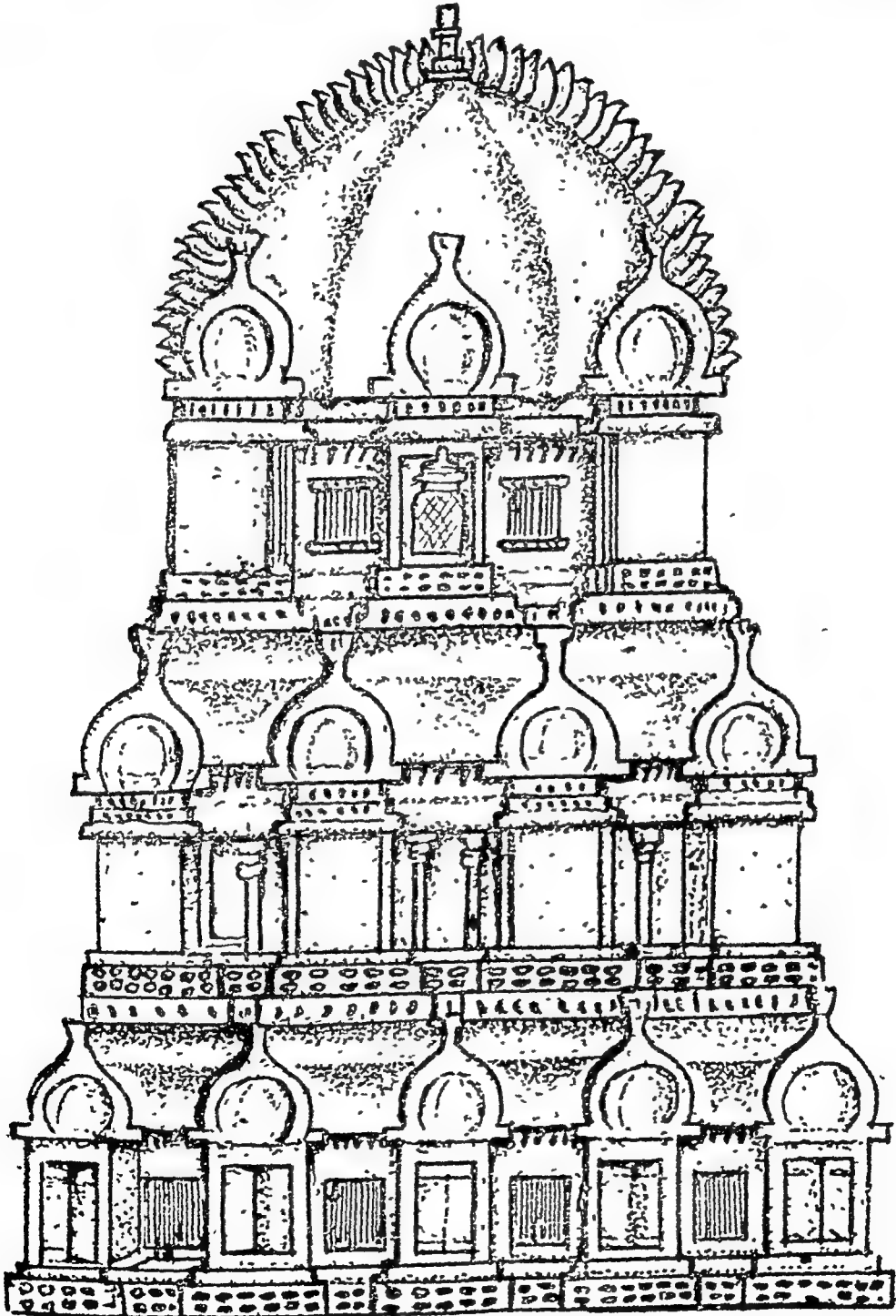
mālā 7

1 वरुणा, 2 प्रहार, 3 रविका, 4 शुरसेनक, 5 स्तम्भक, 6 ध्वजपुत्र, 7 माला, 8 स्तम्भ, 9 पद्म, 10 चक्रिका, 11 कलश

पौराणिक प्रस्तावना प्रासाद आदि दीर्घी
Sthapati Prabhaskar O Sompura, Shilpa Visharad

छाट, ४ वराट, ५ द्राविड, ६ गौड ये छः प्रथायें बताई हैं। लक्षणसमुच्चयकारने विधि स्वरूपानुसार दूसरी छः जातियाँ बताई हैं। जिसके अनुसार १ लतिन, २ कुटिन, ३ शेखरी, ४ चक्रीण, ५ भूमिज, ६ सांधार-इनके उपरांत बलभी और फासनाकारके दो प्रकार निर्दिष्ट हैं।

द्राविड प्रदेशके दशवीं सदीके कामिकागम के अ० ४९ में भी छः प्रकार बताये हैं। १ नागर २ द्राविड ३ वेसर ४ वराट ५ कलिंग ६ सर्वदेशी।



घंटाशालग्रामके पहली शताब्दीका स्तूपमें द्राविड प्रासाद शिखरके तकतीमें-अंकन ..

लखनऊ म्युजियम

द्रविड शिल्पग्रन्थोंमें काश्यपशिल्प और मयमतम् और शिल्परत्नमे तो निर्णय तीन ही जातियाँ बताई गई हैं। १ नागर २ द्रविड ३ वेसर। भारतके पूर्व, पश्चिम, उत्तर प्रदेशों में नागर, दक्षिण में नीचे, द्रविड और उन दोनोंके विचके प्रदेशोंमें वेसर जातिके प्रासादोंकी शैली प्रवर्तमान है ऐसा बताया है।

कामिकागम को ध्यान करते बाकी के द्रविड वास्तुग्रन्थों में जो उपरोक्त जातिका विवरण दिया गया है उसके लक्षणके आधार पर केवल दक्षिणके द्रविड मंदिरों को ही लागू होता है। उत्तर भारत की नागर शैली दक्षिण भारत की नागर शैलीकी विभावना एक दूसरेसे बिलकुल भिन्न है। द्रविड मंदिरों कोशिल्ले राजीबलोचन और सौराष्ट्र के शैलेयका प्रयोग है।

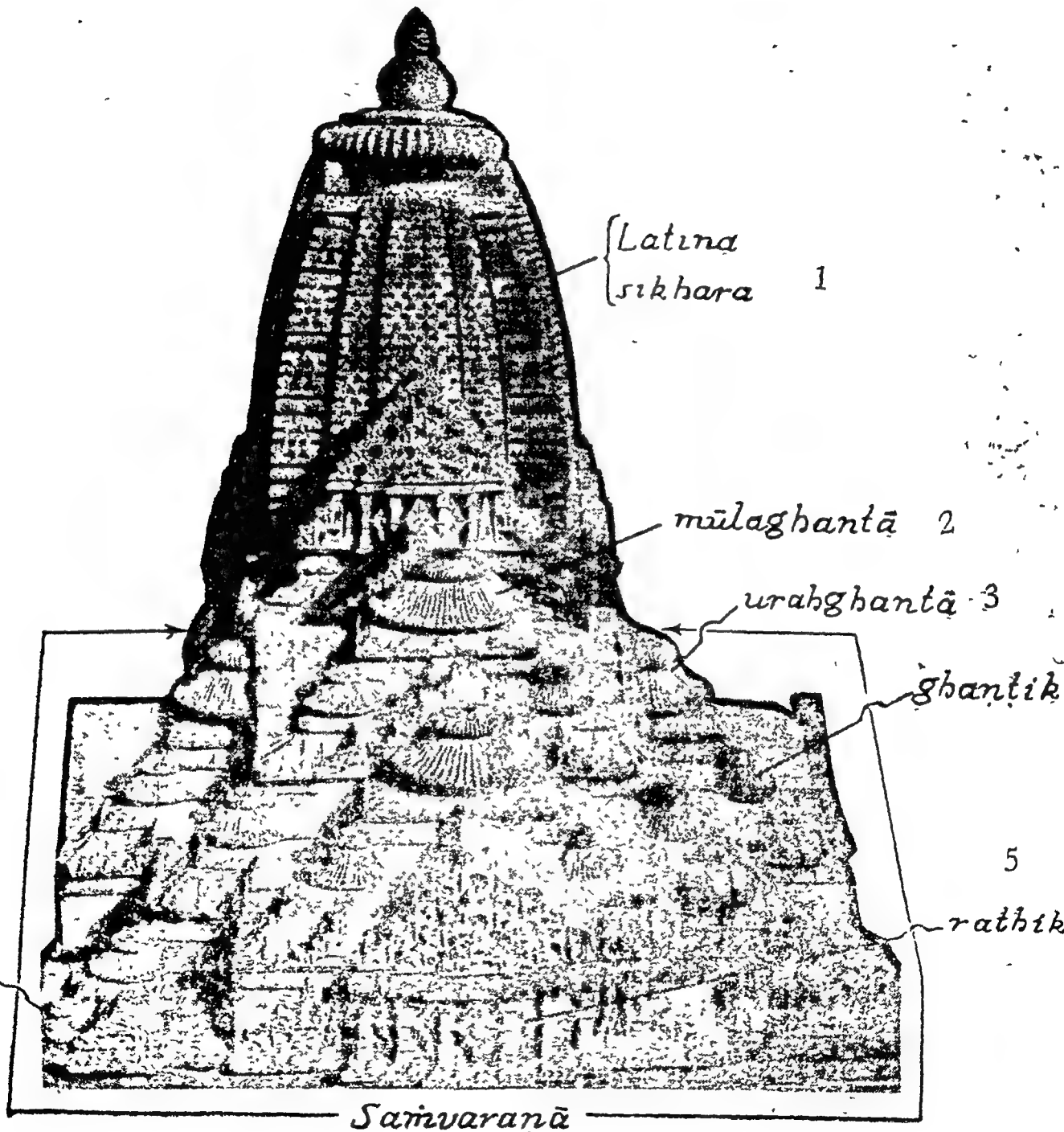
लतिन, भूमिज, कामना और बलमीके प्रकार बहुधा प्रादेशिक शैली के प्रख्यात हैं। साधारण व्याख्याके अनुसार प्रदक्षिणा मार्ग महितके प्रासाद, उनके लक्षण और प्रकारका वर्णन अस्पष्ट है। प्रदक्षिणा मार्गवाले प्रासादों द्रविड के अलावा बहुत-सी प्रातीय शैलीके हैं। भारत के पृथक् पृथक् भागों में प्रवर्तमान जातिके बारेमें कई प्राचीन शिल्पग्रन्थकारोंने सर्वदेशीयतासे जातिके वर्णनके साथ कहा है।

अपराजितपृच्छामें सम्पूर्ण निगतसे नागरशैलीका वर्णन उत्तर भारत के दूसरे प्रादेशिक लक्षणभेद को ध्यान करते गुजरात, राजस्थान के ग्यारहवीं सदीके बाद बनाये हुए मंदिरोंको लागू होता है। उत्तर भारतके पश्चिम भागको अर्थात् भारतकी प्रातीय पद्धतिके मंदिरों को सन्ने स्वरूपमें नागरादि शैलीका कहा है वह योग्य है।

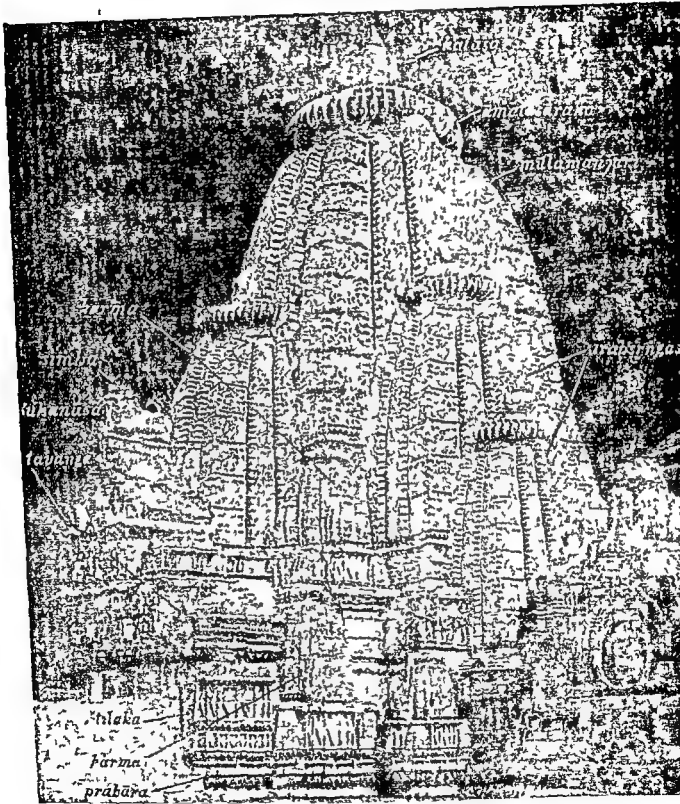
लक्षणसमुच्चय नागरी वर्तना के लिये मध्यप्रदेश, लाट-गुजरात अथवा पश्चिम भारतीय प्रदेशको योग्य मानता है। उपांगवाले चौरसतल पर उर्ध्व वक्र रेखावाले शिखरोंके ऊपर वर्तुल आमलकवाले ऐसी आकृतिके शिखरोंवाले मंदिरों नागर शैलीके व्यापक अर्थमें उस प्रकारमें आ जाते हैं। कर्णाटक प्रदेशमें उत्तर भारत के लतिन स्वरूपवाले मंदिर देखनेमें आते हैं और उत्तर भारत के प्रासादों जो चौरस आकारपर गोल आमलक हैं उसे वेसरजातिके कई विद्वानों पहचानते हैं। उनको श्री एम रामराज द्रविडग्रन्थों के आकारसे बताते हैं लेकिन द्रविडग्रन्थों इस निषयमें अस्पष्ट है। कामिकागम तो कई द्रविड विद्वानों के मतसे विरुद्ध उनको स्पष्टतया उत्तर भारतके मंदिरोंको नागरादि जातिके कहता है।

अपराजितपृच्छाकारके मतसे नागरको जातियोंमें प्रथम कहा जाता है। परन्तु उनकी दि हुई व्याख्याके अनुसार गुजरात राजस्थान और राजुराहो के और एकांडक प्रासादोंका नागर जातिकी मर्यादामें समावेश हो जाता है, परन्तु

विकासक्रम की दृष्टिसे अर्थात् उस एकांडक शिखरवाली जाति ज्यादा प्राचीन होनेसे और उस एकांडकका ही सन्तान होनेसे लतिन को ही नागर कहने का लक्षणसमुच्चय जैसे अपराजितपृच्छासे भी अधिक प्राचीन ग्रन्थों में मत है । इस दृष्टिकोणको ध्यानमें रखें तो प्रासादों की जातिमें एकांडक लतिन जातिको आदि मानना चाहिये । अथवा व्यापक अर्थमें देखें तो एकांडक और अनेकांडक दोनोंको नागरके ही प्रकार के मानना चाहिये । एकांडक ज्यादा प्राचीन और



१ ललितशिखर २ मूलघंटा ३ उरुघंटा ४ घंटिका ५ रथ ६ कूट ७ संवर्ण ।



1 कलश 2_आमलसारक 3 मूलरेखा (मूलमजरी) 4 ऊरुशृङ्ग 5 कर्म 6 सिंह
7 शृङ्गनाम 8 तण्ड 9 तिलक 10 कर्म 11 प्रहार

1 नागर—अनेकाऽक नागरप्रामाद—सामान्यतया कामदपीठ या गजाश्वनरादिपीठ
पूर्णालंकार मंडोपरछाययुक्त—उपर शिखरमें शृङ्ग, ऊरुशृङ्ग, प्रत्यङ्ग तण्ड

अनेकांडक उत्तरकालीन भी सविशेष प्रचलित है। इस स्पष्टीकरण के आधारपर प्रासादों की जाति विवेचन लतिनसे किया जाय तो विशेष तर्कयुक्त गिना जायगा।

१. **नागर**—अनेकांक नागर—सामान्यतया बृहद्का मदपीठ या गजाश्वनरादिपीठ, पूर्णालंकारी मंडोवर, छाद्ययुक्त, उसके शिरपर शृङ्ग, ऊरुशृङ्ग, प्रत्याङ्ग, तवङ्ग तिलक और मूलमंजरी को दल विभक्ति से प्रकट होता हुआ अनेक अंडक के समुहसे रचे जाते शिस्तबद्ध शिखर, जिसके स्कंधके शिरपर आमलसारा कलशयुक्त शिखरको अपराजितपृच्छाकारने नागर जातिको माना है, उसके आगे कवली चोकी होती है लेकिन ज्यादातर वितानयुक्त रंगमंडप अथवा गूढमंडप ऊपर फासना या संवरणयुक्त होती है।

अपराजितकारने नागरके पाँच भेदों और उनके स्वरूप और उनके भेद कहे हैं।

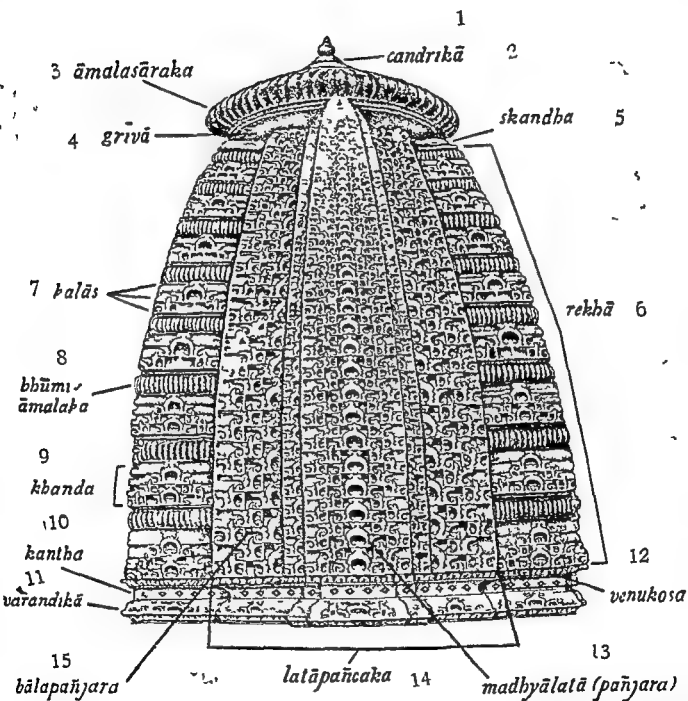
नाम	स्वरूप	भेद
१. वैराज्य	चोरस	५८८
२. पुष्पक	लम्बचोरस	३००
३. कैलास	वृत्त (गोल)	५००
४. मणिपुष्प	लम्बगोल	१५०
५. त्रिविष्टय	अष्टांश	३५०

कुल १८८८

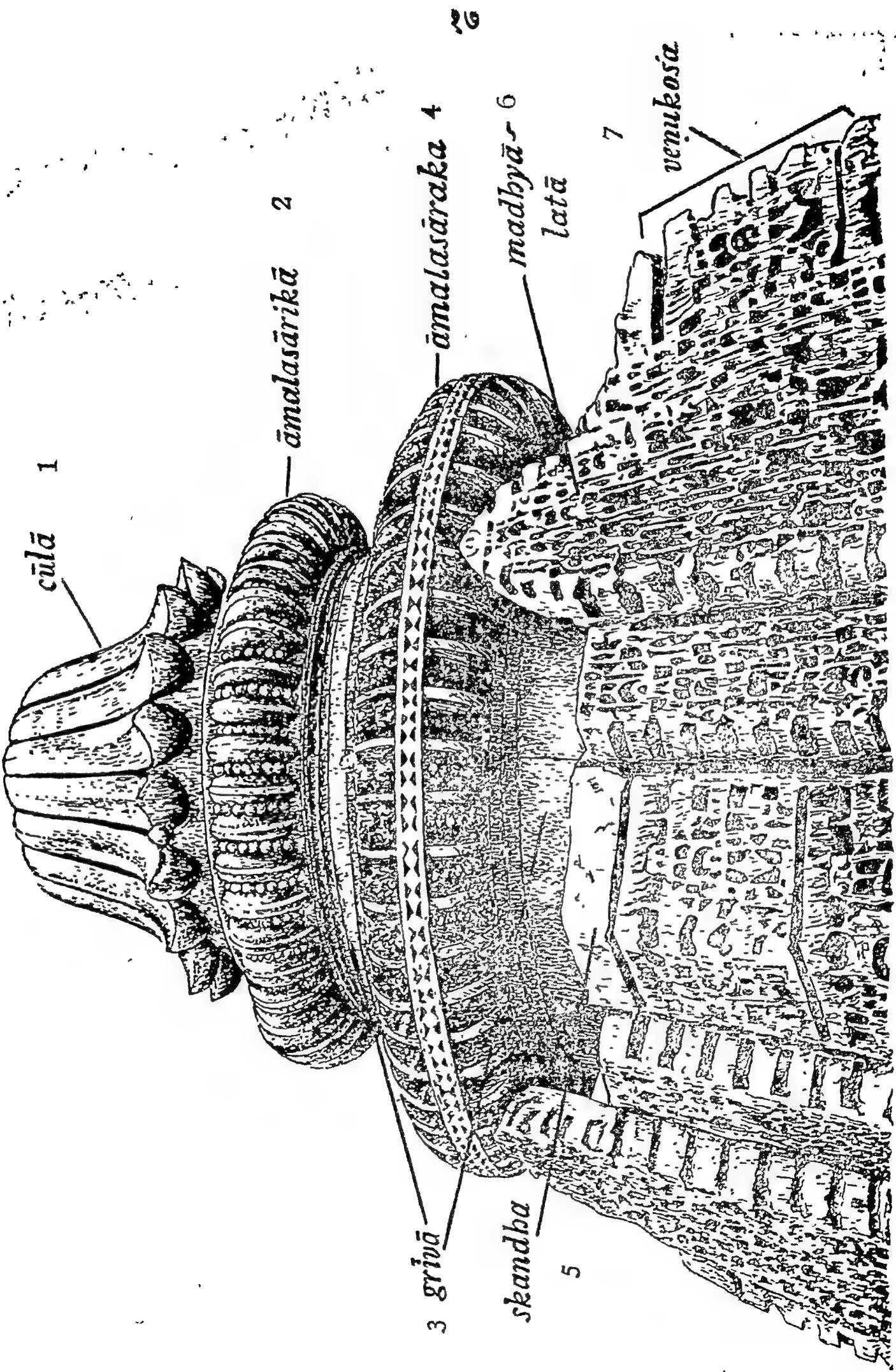
नागरजातिके तलदर्शन पत्र ७५ पर है नागरजाति नारघाट प्रासादके संपूर्ण अंगयुक्त आलेखन यहां बड़ा पेज २ पर दिया है।

२. **लतिन**—शिखर जालांकृत लताओं से बना हुआ (कुडचलेवाला) अने रेखायुक्त वेणुकोपसे आकारबद्ध बनता हुआ और शृङ्गाशृङ्ग रहित एक अमलसारा को कलशयुक्त शिखर होता है। पुराने लतिनका मंडोवरपर छाद्य नहीं होता है। ऐसे प्रासादोंके आगे कवलीके बाद बहुत करके प्राग्रिव (केवल चोकियाला) होता है। नीचे कामद पीठसे उठे हुए उपांगों शिखरके स्कंध तक जाते हैं। शिखर वरंडिकाके ऊपर अंतराल जैसे कण्ठ पर वेणुकोपसे शिखरकी रेखा उत्पन्न होती है। रेखाके अलावा कईमें लतापंचक (पाँच उपांग) होते हैं। उनके शिखर के मध्य भद्रको मध्यलता कहते हैं। शिखरके उपांगोंको बालपंजर (बालझर) कहते हैं। ऊपर की खड़ी रेखा खण्ड कला और भूमि आमलयुक्त होती हैं। इन उपांगोंके उपरी भागको स्कन्ध कहते हैं। लतिन प्रासादों रेखा विस्तारसे सामात्य तथा सवागुने (१ $\frac{1}{8}$) उदयके स्कन्ध तक होते हैं। स्कन्ध पर आमलसारक होता है। उसके अङ्गमें नीचे ग्रीवा चंद्रिका आमलसारिका (पर चुलिका से कही होती है) उसके उपर कलश होता है। शिखर के नीचेका विस्तारका १० भाग करके ५ से ६ भाग स्कन्ध विस्तार होता है।

अपराजितकार कहते हैं कि नागर रेखाके समान परन्तु शृङ्गाँके रहित एकाड़ी शिखर रूचकादिसे उद्भूत होता है। अपराजितवृच्छाकार लतिन के पाँच स्वरूपके पाँच नाम कहते हैं। १ रूपक-चोरस-लघु चोरस २ भव-विभ लतिन शिखर



१ करुत २ चद्रिका, ३ आमलसारक, ४ ग्रीवा, ५ रक, ६ रेखा, ७ कला ८ भूमि-आमलक, ९ खड, १० कड, ११ वरडिका, १२ वेलुकोस १३ मध्यलतापञ्जर १४ लतापञ्चक १५ बालपञ्जर—लतिनशिखर
३ वृत्त-पद्ममालाघर ४ लम्बगोल=मलयमकरध्वज ५ अष्टाभ्र वज्रक-स्वस्तिक इम तरह एक द्वारे पञ्चीश भेद कहे हे।



लतिन शिखरके उर्ध्व अंश

1 चूला. (चूली) 2 आमलसारिका. 3 ग्रीवा. 4. आमलसारक. 5 स्कंध. 6 मध्यलता. 7 चेणुकोश.

३ द्रविड-दक्षिणपथके वास्तुग्रन्थोंके अनुसार द्रविडजाति को पड़वर्ग कहा गया है। तदनुसार १ अविठान (पीठ) २ पाद (स्तम्भयुक्त मंडोवर) ३ प्रस्तर- (वरंडिका और छाद्य-छज्जा) ४ ग्रीवा ५ चुलिका (आमलकचट्टिका-कर्परी पद्मपत्र) ६ स्तूपिका (कलश) जिसे ईतने अंग होते हैं उम्मी द्रविडजातिका प्रासाद जानना। कई चार प्रस्तरके ऊपर कूट और शाला गिरपर की व्यजनासे भूमियाँ बनायी जाती हैं। आगे मुखमंडल किया जाता है। उसके बाह्य भागमें पाद-स्तम्भयुक्त मंडोवर और ऊपर प्रस्तर होता है। मंडप के अंदर मध्यमें चार स्तम्भों पर छाद्य-छत्तियाँ रखते हैं। इससे मंडप को मात्र समदल छादन (Flat Roof) धन्ना किया जाता है।

द्रविडतल दर्शन-तल आयोजन में सामान्यतया चोरस क्षेत्रमें कर्णभद्रादि अगों एक सूत्रमें होते हैं। पादान्तर शलिलान्तर से अगोंको जुड़ा किया जाता है। नागर छन्दको अट्टाईकी तरह मध्यका भद्र और छेडे पर कर्ण कहते हैं। उपरोक्त पड़ वर्गके प्रत्येक के भिन्न भिन्न अगो हैं। उनका विशेष स्पष्टीकरण करने की आवश्यकता है।

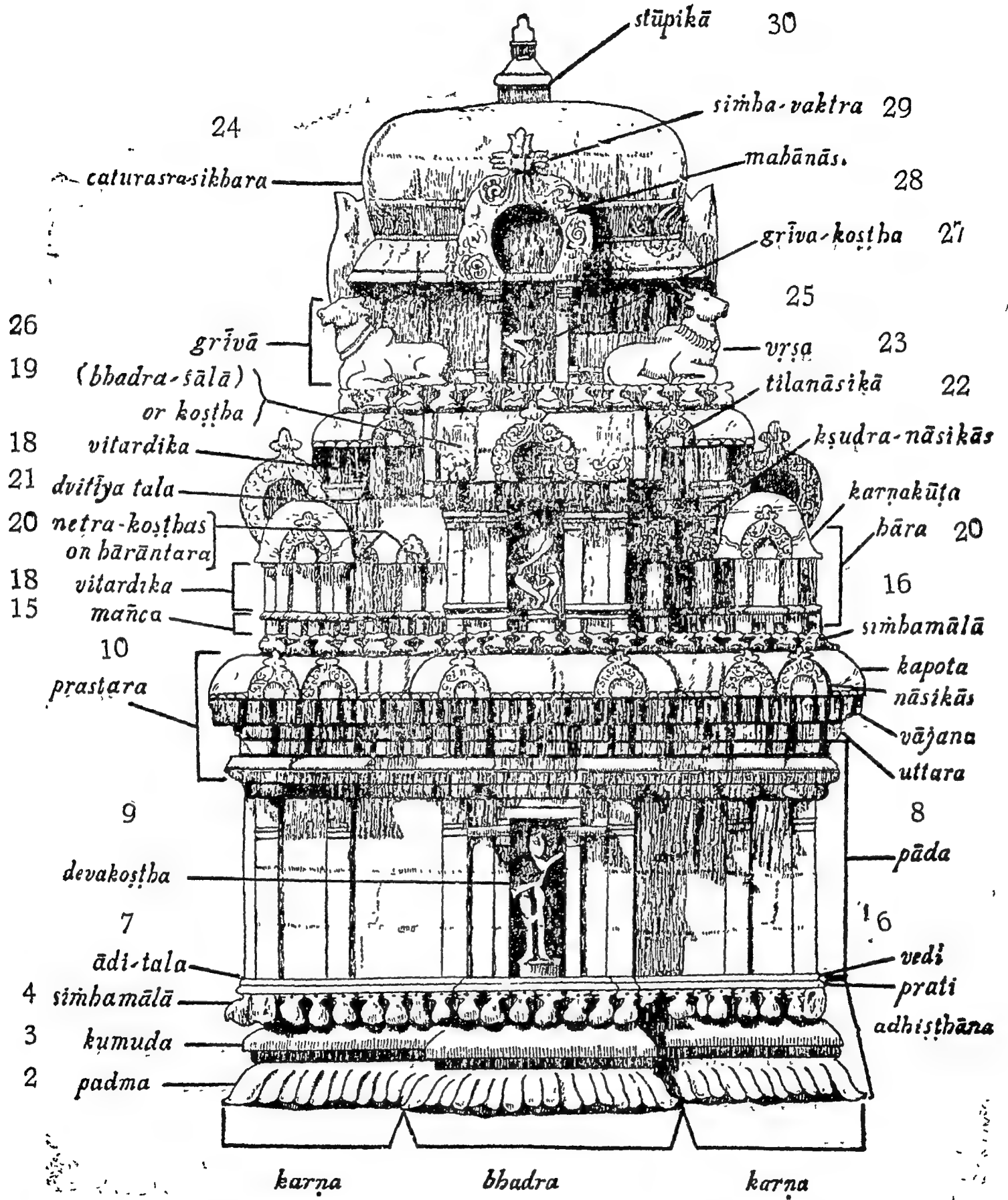
१ अधिष्ठान-पीठको तीन वर्गों सामान्य रीतसे हैं। १ पद्म (जाइम्या) २ कुमुद (कणी छजी) ३ सिंहमाला (ग्रासपट्टी जैसा) उसके पर प्रति और बेदी नामके दो सपाट थर किये जाते हैं। वहाँसे आवितलका प्रारम्भ होता है। उसे पादमें समाविष्ट माना जाता है।

२ पाद-(स्तम्भयुक्त मंडोवर) उसकी तीन बाजु पर भद्रको देवकोष्ठ कहा जाता है। उसमें जिस देवका प्रासाद हो उसके पर्याय स्वरूप रखे जाते हैं। यह बाह्यस्वरूप कहा। अंदर गर्भगृह होता है।

३ प्रस्तर-प्रस्तरके अगमें १ वरंडिका २ उत्तर ३ वाजन और ४ कपोत (अर्धगोल) उसमें चैत्य जैसी नासिकाएँ होती हैं। कपोत-छजेका निर्गम ज्यादा होता है। जो ऊपर मजला हो उसे द्वितीय तल कहते हैं। उसके अगों नीचे दिये हुए हैं।

अ प्रस्तरके ऊपर सिंहमाला-मचके थरों पर कोण-कोने पर कर्णफूट-(दो स्तम्भोका पर चैत्य-झल (कमान) उस स्तम्भिकाके भागको वितर्दिका कहते हैं। मध्य गर्भमें गवाक्ष-कोष्ठको दो तरफ दो दो स्तम्भपर सन्मुख चैत्य झल और उसके विच अर्ध गोलकाकार वरंडिका को भद्रशाल कहते हैं। कर्ण फूट और भद्रशाल के विचके अंतरमें नेत्रकोष्ठ (हारान्तर)-हारके नीचे क्षुद्रनासिका के ऊपर तिलनासिक (छोटी ठकार) यहाँ द्वितीय तालपूर्ण होता है।

व-उसके पर चतुस्र अष्टाश्र या धृत-शिखरका (शुंखत्र जैसे) प्रारम्भ होता है। उसमें सिंहमाला पर पीढान कलक (छत छतियासे ढँका हुआ) उपर जो



द्रविड प्रासाद शिखर सह

- 1 अधिष्ठान, 2 पद्म, 3 कुमुद, 4 सिंहमाला, 5 प्रति, 6 वेदी, 7 आदितल, 8 पाद, 9 देवकोष्ठ, 10 उत्तर, 11 वाजन, 12 नासिका, 13 कपोत, 14 मंच, 15 सिंहमाला, 16 कर्णकूट, 17 भद्रशाल-(कोष्ठ), 18 नेत्रकोष्ठ (वारान्तर), 19 द्वितीयतल, 20 क्षुद्र नासिका, 21 तील, 22 चतुरस्र शिखर, 23 वृष, 24 ग्रीवा, 25 ग्रीवा कोष्ठ, 26 महानास, 27 सिंहनक्त्र, 28 स्तुपिका.

गोल या अष्टाश्र शिखर (गुंबज) हो तो कोने पर वृषभ, सिंह या गरुडके बड़े स्वरूप रखते हैं। अगर कर्णकूट रखते हैं।

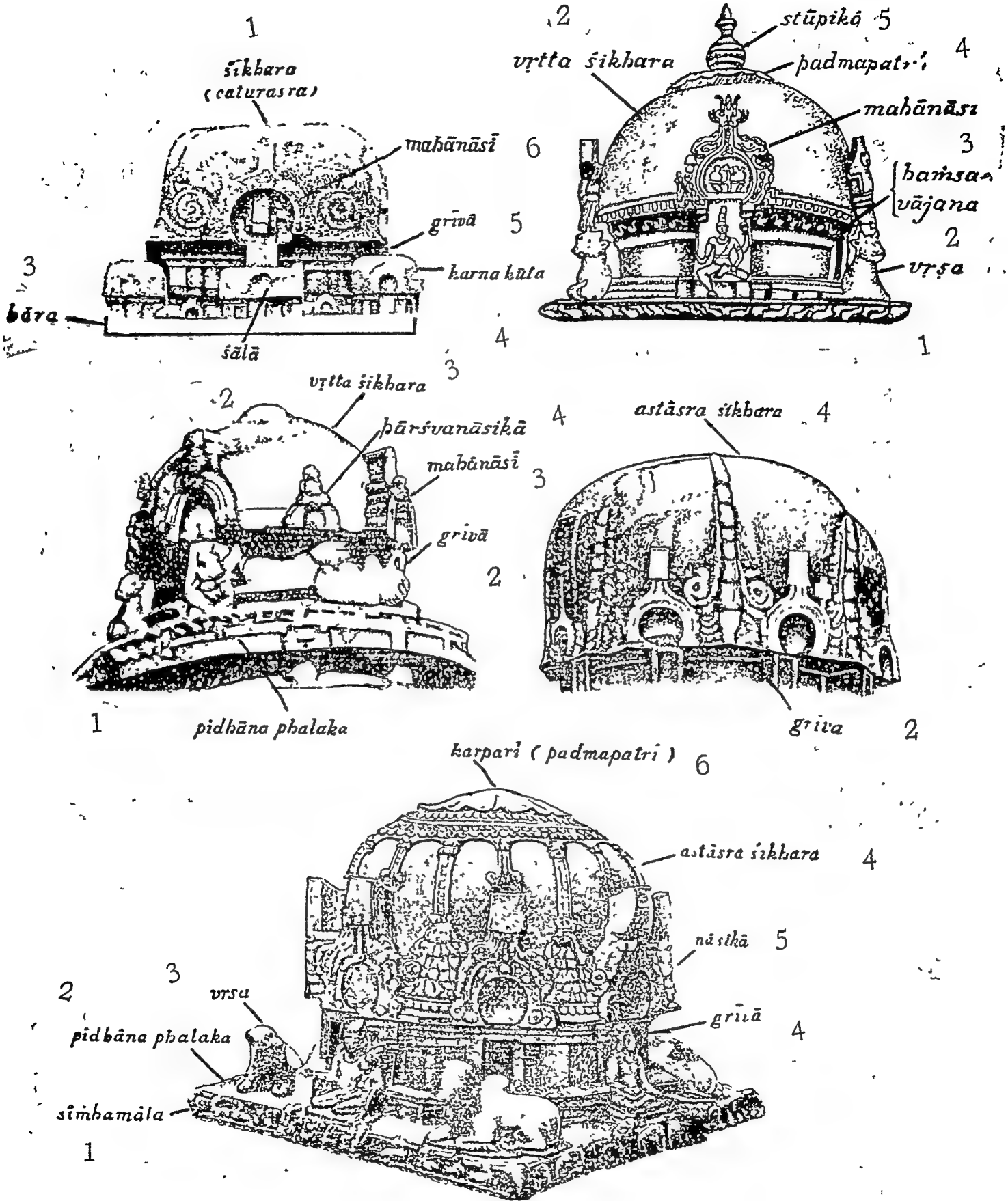
४ ग्रीवा-नरडिका कपोत पर सादी जघाके जैसे भागको ग्रीवा कहते हैं। (उसके कोनेमें वृषादि और मध्यमें दो स्तभों को ग्रीवाकोष्ठ-गोत्रमें देवस्वरूप करते हैं। उसके उपर महानासी (चैत्य-झूल), महानासी की मचपर ढेरके रूपमें सिंहवृत्त (प्रास मुखके समान) किया जाता है। गर्भके दो महानासी के मध्यमें कोने पर पार्श्वनासिक भी कई लोग करते हैं। महानासीका अपर नाम भद्रनासी भी है। कई स्थलों पर ग्रीवाके थरमें स्तभों करने के अलावा वहाँ दो देव रूप या ऋषिमुनिके बैठे रूप भी करते हैं। परन्तु उनका पद महानासी से अलङ्कृत करते हैं। कोई उस रूपके स्थानपर शाला (सादा भद्र) भी करते हैं। उपर महानासी तो कोई भी प्रकारमें होता ही है। ग्रीवाके उपर निकलता हुआ हसवाजनका फिरता थर करके उसके पर दूसरा छाटवाला उससे निकलता हुआ थर किया जाता है। उसके पर शिखर होता है।

ग्रीवाके पर हसवाजन या दूसरे थरके स्थानपर दडछाद्य जैसा छज्जा निकालकर उसके पर भी शिखर (गुंबज जैसा) होता है। ग्रीवा स्तूपिका के मध्यके गुंबज जैसे शिखरका पहलूमें स्थान नहीं है।

५ चूलिका-शिखर अर्द्ध भागमें (नागर छन्दके चद्रसरूप) पद्मपत्रिका-अथवा कर्पटी पत्र रूप विस्तृत होता है।

६ स्तूपिका-चूलिकाके पर द्रविड शिखरका सर्गोपरि स्तूपिका नागर छन्दके कलशरूप होता है।

अपराजितकारने द्रविड प्रासादके पाँच भेद कहे हैं। १ स्वस्तिक, २ सर्वतोभद्र ३ वर्धमान, ४ सूत्रपञ्चा, ५ महापञ्चा इन पाँचोंके क्रमसे एक एकसे सौ दोसौ, तीनसौ, चारसौ और पाँचसौ इस तरह कुल पन्द्रहसौ भेद किये हैं। परन्तु उसका स्पष्टीकरण दिया नहीं है। अपराजितकार द्रविड छन्दके स्वरूप का वर्णन करते हुए कहते हैं कि पीठके उपर कर्णरेखा की भूमिका क्रमसे करना। उसकी विभक्ति दक्ष-लताशृंगों के क्रमसे उत्पन्न होती है। मेघ, मकर कुटादि कटकौसे आवृत्त वेदी घटा नासिकादि से शोभता हुआ द्रविड छन्दका प्रासाद समझना।



द्रविड प्रासादके शिखरके पृथक् पृथक् स्वरूप

1. 1 चतुर्दशशिखर. 2 शाला. 3 हार. 4 कर्णकूट. 5 ग्रीवा. 6 महानासि.
2. वृत्तशिखर-1 वृष. 2 हंसवाजर. 3 महानासि. 4 पद्मपत्र. 5 स्तूपिका.
3. वृत्तशिखर-1 पीढान फलक. 2 ग्रीवा. 3 महानासि. 4 पार्श्वनासि.
4. अष्टशिखर-1 सिंहमाला. 2 पीढान फलक. 3 वृष. 4 ग्रीवा. 5 नासिक. 6 कर्परि पद्मपत्रिका.

४. भूमिज—

भूमिज प्रासादोंमें कई बार तलदर्शन अष्टभद्री या अष्टकंणी या घृतसंस्थान पर आँका जाता है। पीठ और मडोवर के सामान्य लक्षणों अनेकाऽऽ नागर जैसे ही होते हैं। परन्तु शिखर प्रकृतिके मूलगत फर्क होनेसे उसका पूरा दृश्य विशिष्ट बनता है। उसे छाद्य-छज्जा क्वचित् होता है। उसके शिखरकी रेखा नांगरीके जैसी लेकिन रेखाकी अंदर उत्तरोत्तर शृंगयुक्त होती है। शिखरके कर्ण प्रतिरथ और २५के उपागमें एक पर दूसरा-तीसरा-इस तरह सात शृंगों उत्तरोत्तर चढ़ाये हुए होते हैं। उसके शिखरको बालपजर (बालंजर) के उपाङ्ग नहीं होते हैं। परन्तु भद्रके पर मालारूपमें लता सिंघी हुई होती है। भद्रकी लताको माला कहते हैं। इससे सिर्फ शिखरके भद्रमें कुडचल कडारा होता है। और कर्ण और प्रतिरथके उपागोंमें उत्तरोत्तर शृंगों (श्रुट) चढ़ाये हुए होते हैं। प्रत्येक शृंगों पर कुभी स्तभीकायुक्त जवा और उसके पर प्रहारके ऊँचे धरों करके फिर क्रमसे शृंग-कूट चढ़ाये हुए होते हैं। एक, दो, तीन, पाँच, सात इस तरह क्रमसे उत्तरोत्तर शृंगों शिखरके स्फुटतक चढ़ाये हुए होते हैं। स्फुट पर मीबा, घटा, पद्म, छत्र, चद्रिकायुक्त आमलक होता है। उसके पर सर्वापरि कलश होता है।

उसके मडोवरके धरोंमें छज्जा क्वचित् ही होता है। छज्जे पर वरंडिका और केवालके घाटोंगले धर पर प्रहार होता है। वहाँसे शिखरका प्रारम्भ होता है। भद्रको रबिका कहते हैं। वह देवरूपसे अलकृत होता है। उसके पर (नागरछदके उद्गमको) शुरसेनक कहा जाता है नीचे बड़ा होता है। शिखरके कर्ण-प्रतिरथ पर चढ़ाये हुए शृंगोंके धरको स्तम्भकूट कहते हैं। नागरछदकी तरह स्फुटसे नीचे ध्वजाधारके पीछे बाहर प्रतिरथमें निकाला हुआ होता है।

भूमिज द्वातोंमें आगे गृढमडप अगर रगमडप किया जाता है। मालवा, महाराष्ट्रमें भूमिज जातिके प्रासाद देखनेमें आते हैं। क्वचित् उत्तरकर्णाटकमें भी अपराजितकारने भूमिजके स्वरूपका वर्णन करते कहा है कि—यासकी तरह उत्पन्न हुआ हो जिस तरह कूट बड़ेसे छोटे धीसे क्रमसे चढ़ाते जाना। दल धिभक्ति उपागोंके अगोंसेयुक्त भूमिज छदके प्रासाद जानना।

अपराजितकारने भूमिजके तीन प्रकार कहे हैं। १ चोरस निपधे-२ घृत-कुमुद ३ अष्टाश्र-स्वस्तिक-और उसके दश-सात और आठ इस तरह तीन प्रकारसे भूमिज करना। जिन सबके ६२५ भेद कहते हैं।

५-वराट जाति-भूमिकाके क्रमसे जघाहीन करते जाना। भूमिकावालो शृंग शृंगोंसे युक्त-बहुत शृंगोंगला रेखा प्रतिरथ भद्र और प्रतिभद्र युक्त मदार पुष्पिका और घटागला ऐसी वराट जातिके लक्षण जानना।

अपराजितकारने वराटजातिके पांच प्रकार कहे हैं । १ वराट २ पुष्पक ३ श्रीपुंज ४ सर्वतोभद्र ५ सिंह । इन पाँचोंके १२०२ भेद कहे हैं ।

६ विमानजाति-चोरस तलको रथ उपरथको भद्रके थोड़े उपांगोंवाले विमानजातिके प्रासाद जानना ।

विमान छंदके पाँच प्रकार-१ विमान २ गरुड ३ ध्वज ४ विजय ५ गंधमादन । इन प्रत्येक पुष्पमाला घर आकारके लता शृंगवाले जानना । उनके प्रत्येक नामानुक्रमसे भेद कहे हैं । ३००-४००-५००-६००-७०० इस तरह कुल पच्चीस सौ भेद कहे हैं ।

७. मिश्रक जाति-नागर छंदका अनेक तिलकवाला तिलकोंसे शोभता मिश्र छंदका प्रासाद जानना । अनेक आकार रूपवाला जानना । अपराजितकार उसके अठारहसौ भेद कहते हैं ।

८ सांधारा जाति-या सांधार जाति-व्युत्पत्तिकी दृष्टिसे स-अंधार-जो प्रासादों गर्भगृह प्रदक्षिणा मार्ग सहितके हों तो उन्हें सांधार कहा जाता है । ऐसी रचनामें प्रकाशका बहुत कम अवकाश होता है । अिससे वे स-अंधार कहे जाते हैं । ऐसे प्रदक्षिणा मार्गवाले सांधार प्रासाद नागर जातिमें बहुत स्पष्ट रीतसे बताया गया है । जिनको प्रदक्षिणा मार्ग नहीं होते हैं । वैसे प्रासादोंको निरंधार प्रासाद कहा गया है ।

सांधार प्रासादके बाह्य भागके प्रमाणसे शिखर किया जाता है । ऐसे सांधार प्रासादों गुजरात सौराष्ट्र, राजस्थान, मेवाड़में हैं । वैसे सांधार प्रासादों मध्यप्रदेश के खजुराहोंमें भी हैं । सोमनाथका महाप्रसाद सांधार जातिका है । सांधार जातिका तलदर्शन पत्र ७५ पर है । यह देखो !

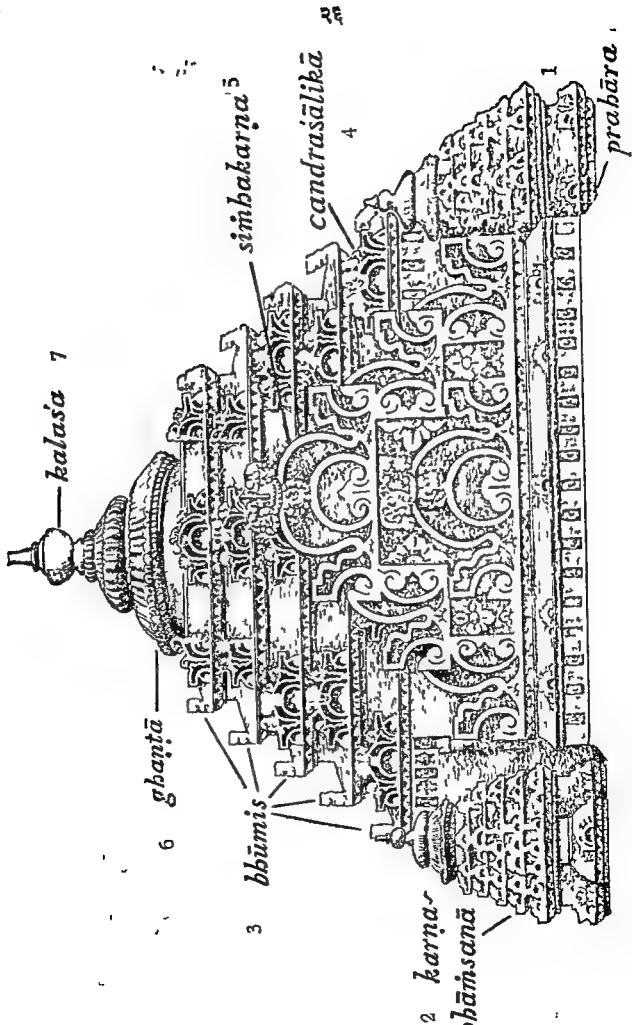
अपराजितकार उसका स्वरूप बताते हैं । तलच्छंद जिसके विभक्त उपांगोंवाले है, उसमें गर्भगृह, दिवारें, भ्रमवाला-जिसे भ्रमों क्रमयोगसे कहे हो उसके पर शिखर हो उसे सांधार छंदके प्रासाद जानना ।

उसके सात प्रकार-१ केसरी २ नंदन ३ मन्दर ४ श्रीतरू ५ ईन्द्रनील ६ रत्नकूट ७ गरुड उन सातोंका अनुक्रमसे भेद कहा है । दो-तीन-एक-छः-तीन-सात और तीन अिस तरह मिलकर कुल पच्चीस भेद कहे हैं ।

९. विमान नागर-नागर उपर छंदयुक्त लताशृंगवाला हो वैसे प्रासादका विमान नागर छंद जानना ।

१०. विमान पुष्पक-विमान नागर छंद उपर शिखरमें पुष्पक जैसा उरुशृंग होवे वैसा, वह सर्व कामनाओंको देनेवाला ऐसा विमान पुष्पक छंदका प्रासाद जानना ।

११. वलभी-वलभी जातिके प्रासादों लतिन नागर छंदसे भी प्राचीन जातिके मालुम होते हैं । सौराष्ट्रमें उत्तर गुप्त कालके कदवार (प्रभासके पास) हैं, और पोरबंदर द्वारिकाके बिचके हर्षद माताके स्थानपर बहुत सामान्य रूपमें वलभी प्रासाद हैं ।



नपुंसका-फासनाकार कहा है। कितनोंके कोने पर कर्णफासना-फासनाकार कूट चढ़ाते हैं। फासनाकार प्रासादोंका तलदर्शन हस्तांगुल उपांगोवाला सिर्फ कर्ण-रेखा और भद्र विशेषकर होता है। उदकान्तर वर्जित-पानीतारके उपांग होते हैं। फासकिया-फासना शैली गर्भगृह परसे मंडप फासना करनेकी पद्धति बादमें प्रविष्ट हुई है।

फासनाकार मंदिरों, खजुराहो, गुजरात, चेदी प्रदेश, अमरकंटक, आवू, देलवाडा, राजस्थान, कलिंग-ओरिस्सा-भुवनेश्वरमें हैं। फासनाकारके पाठों जयपृच्छा-प्रमाणमंजरी-वृक्षार्णव-अपराजित पृच्छा और लक्षणसमुच्चयमें उल्लेख है।

फासनाको गुजरात-सौराष्ट्रके शिल्पीओंने 'तरसटियु' कहा है। वह 'त्रिषट्' का अपभ्रंश है। अर्थात् तीनों तरफके दर्शनवाला-परंतु त्रिषटा शब्द शिल्पग्रंथोंमें नहीं मिलता है। बहुत सादगीसे फासना मंदिर होता है जिससे भारतके हरेक प्रदेशोंमें सादे स्वरूपमें फासनाकार मंदिर देखनेमें आते हैं।

कलिंग-उडिया प्रदेशोंमें भुवनेश्वर पुरी और कोनार्कके मंदिरोंके मंडपों पर फासना चढ़ाई हुई दिखती है। छाजलीके पाँच, सात या नौ थरोंके बिच एक साढ़ थर जंघाके जैसा चढ़ाया जाता है उसे "कांति" कहा जाता है। उसके पर फिर पाँचके थर छाजलीके चढ़ाकर घंटा और कलश चढ़ाते हैं। कलिंग शिल्प ग्रंथोंमें छाजलीको 'पीडा' कहा गया है। वैसे सात-नव थरोंके उदयको 'पोटल' कहते हैं और उसपर बीचके एक सादे थरको कांन्ति कहते हैं। उपरके दूसरे पाँच-सात थरोंके उदयको भी 'पोटल' कहते हैं। उसके पर घंटाके नीचे ग्रीवाको "बिक्री" कहते हैं। उसके पर मंडपकी फासनाके सर्व थरोंके उदयको "गंडी" कहते हैं। यद्यपि, शिखरके उदय भागको भी "गंडी" कहते हैं। इस तरह शिल्पीओंको प्रांतीय भाषाके शब्दोंसे थरोंका परिचय दिया गया है। अपराजित-कारने फासनाकारको नपुंसक छंदका प्रासाद कहा है।

१३. सिंहलोकन-छाद्य-छाद्योंसे उत्पन्न हुआ, जिसके उपर कोनेको सिंहसे शोभायमान करना। उसके पर घंटा-घंटा आकृति की करना। उसे 'सिंहलोकन' छंदका प्रासाद कहते हैं।

१४. रथारूह-नागर छंदसे उद्भूत-शकट-गाडेके उपर नागरछंदका, जिसको तीन चक्र हो वैसे आकारका कामनाको देनेवाला ऐसा रथारूह छंदका प्रासाद जानना। अपराजितकारने दारु कर्म (काष्ठकार्य) से उद्भूत सिंहावलोकन दारुके जैसे छंदका रथारूह जाननेके लिये कहा है।

उपरोक्त चौदह जातिमें पाँच-छः जातिका विशेष स्पष्टीकरण नहीं है। इससे उसका परिचय करना मुश्किल है। तो भी उसके अविक प्रयत्नसे सशोधन प्रादेशिक भ्रमण करके करने की जरूरत है। जावा, सुमात्रा, अनाम (चपा) कवोडिया, सियाम आदि बृहद्भारत प्रदेशोंमें भारतीय शैलीके भव्य और विशाल प्रासादोंका निर्माण हुआ है। वे अपनी इन चौदह शैलियोंमें आये हुए होना चाहिये। या-भारतीय शैलीकी कौटुबिक प्रथा है।

शिल्पस्थापत्य में विवादग्रस्त प्रश्नो

शिल्पियों में कई विवादग्रस्त प्रश्न हैं। कई बार यजमानको ऐसे प्रश्न उलझनेमें डालते हैं। इनमेंसे कई प्रश्न बुद्धियुक्त हैं और कई निरर्थक दुराग्रही भी हैं। स्थलके पर हुए पुराने कामके उदाहरण देकर वे विवाद उग्र बनाते हैं। कई रूढिग्रस्त प्रणालिका को अग्र करते हैं। इन सबका समाधान शास्त्राधार विशेष सबल गिना जाता है। कईबार शास्त्रके पाठोंका अपनी बुद्धयानुसार अर्थ करके अपने मतका समर्थन करते हैं। निष्पक्ष रीतसे बुद्धि पूर्वक व्यवहार को भी लक्ष्यमें लेकर सोचना चाहिये। जहाँ पाठोंका अभाव हो वहाँ परंपरागत प्रणालिका को भी मान देना पड़ता है। अगर वहाँ पुराने स्थापत्य को उदाहरण रूप स्वीकारने पर बाध्य होना पड़ता है।

सत्रहवीं सदीसे शिल्पियों कई प्रथाओंको अनुसरे हैं। उसमें कुछ शास्त्र विमुख हैं। ये प्रथायें शास्त्रविहीन हैं परन्तु प्रणालिकाएँ हैं इस तरह मानकर उसका अनुसरण या ऐसे मतमतांतर के लिये दुराग्रह न करना चाहिये। ऐसे उदाहरण देकर अपने मतका समर्थन न करना चाहिये। प्रतिपक्ष का अपमान अवगणना करनेकी बलण भी अनीच्छनीय है।

१. गणितके विषयमें—इक्कीस अंग मीलानेको कहा है। जिस तरह ज्योतिषी को पूरे अंगोको देखकर मुहूर्त नीकालनेमें असमर्थ होता है उस तरह शिल्पमें विशेषकर लगभग चार-अंगोंको मीलानेका प्रयास करते हैं। १ आय, २ नक्षत्र ३ गण, ४ चन्द्र। शास्त्रकारों कहते हैं कि—

“द्विभिश्चेष्ट त्रिभिश्चेष्ट पंचभिः सर्वमुत्तमम् ।”

सामान्यतया रत्नाई चौड़ाई के गजके उपरके आँगूलोंमें विपमअक होना चाहिये। तो आय श्रेष्ठ आता है। शिल्पशास्त्रमें शिल्पिओं गज अर्थात्-हस्त और उसमें ३६ आँगुल प्रमाणका मानते हैं, फूटकी प्रथाको नहीं स्वीकारते

हैं। क्योंकि उसके गणितकी रचना इस प्रकार हुई हैं। सामान्यतया दो फूटका एक गज होता है।

२. यह गणित कहाँसे मिलायें, यह कहा है—मंदिर के बाहर के भागमें मिलानेके लिये कहा है। व्यवहार दृष्टिसे कुछ ठीक करने के लिये अंदर भी गणित मिलानेकी कोशिश करता है। जब प्रतिपक्ष कहता है कि बाहरके विभाग कर उसके विभाग पर ओसार-दिवार रखते अंदर जो माप रहा उसे वहाँ गणित मिलानेकी जरूरत नहीं है, चाहे वह राक्षस गणका नक्षत्र क्यों न हो? इस पक्षकी बात दुर्लक्ष्य करने योग्य नहीं है। परन्तु जो वहाँ भी गणित मिलाया जाय तो अच्छा ऐसा मेरा मत है।

३ नक्षत्रके विषयमें शिल्पियों देवमंदिरको देवगण, गृहको मनुष्यगण या यवनको राक्षसगणना नक्षत्र सामान्यतया मिलाते हैं। वह परंपरा है लेकिन ज्योतिषके नियमानुसार देवोंका जन्म नक्षत्र राक्षसगण हो वहाँ देवमंदिरमें राक्षस गण नक्षत्र मिलानेका आग्रह कभी लोग रखते हैं। शिल्पियोंकी परंपरा जो आगे कही गई है वह है। देवमंदिरमें देवगण ओर मंडपों या चोकीको मनुष्य गण या देवगण नक्षत्र मिलाते हैं। शिल्पियोंकी परंपराका समर्थन करता हुआ एक पाठ है। परन्तु उसे द्विअर्थी मानते हैं।

४ शिलास्थापन—मध्यकी कूर्मशिलाके नौ खंडोंमें नौ चिह्नों करनेमें विश्वकर्माके सभी ग्रंथों एक मत हैं। लेकिन मध्यकालके एक सूत्रधार वीरपालने 'प्रासादतिलक' ग्रंथमें इन चिह्नोंको अग्निकोणके क्रमसे करनेके लिये स्पष्टरूपसे कश है। इस विषयमें शिल्पी वर्गमें चर्चा है। लेकिन अब तक कोई दुराग्रह नहीं है इस बात आनंदकी हय।

५ शिलास्थापन कहाँ करना? उस विषयमें सामान्य मतसे गर्भगृहके बिच खडे मध्यगर्भमें शिलास्थापन करना। परन्तु देवता पद स्थापनके हिसाबसे जहाँ देव स्थापन करना हो उसके नीचे शिला स्थापन करना चाहिये। वह सूत्र अिस दीपार्णव और ज्ञानरत्नकोषमें है। और नाभि खड़ी करनेकी प्रथा है। ग्रंथोंमें उसका स्पष्टीकरण नहीं है। और मध्यकी कूर्मशिलाका प्रमाण भी कहते हैं। परन्तु फिरती अष्टशिलाओंका प्रमाण नहीं दिया हुआ है। वहाँ शिल्पियों प्रथाको अनुसरते हैं। जहाँ शास्त्राधार न हो वहाँ शिल्पियों प्रथानुसार वर्ते यह स्वाभाविक है। कूर्मशिलाके कहे हुअे मानके अनुसार लम्बी और उससे आधी चौड़ी अष्टशिला रखनेकी परंपरा है।

६ जगति विषयमें—प्रासादकी सीमा मर्यादा—शिल्पियों उसका सामान्य अर्थ दुर्ग भी मानते हैं। लेकिन प्रासादकी चारों ओर देवकुलिकाओं सहस्रलिंगकी या जिनायतनकी या ६४ देव्यायतनकी या पचायतन जहाँ हो वहाँ विशाल जगती विस्तारसे करनी होती है। जगतीका प्रासादकी भूमिमर्यादा मानकर सामान्य ओटा-जगती ऊँची कर उम पर भीट पीठका प्रारंभ होता है। परन्तु स्थानमान और शहरमें भूमि सकोचके कारण वैसे प्रकारकी जगती न हो तो वह दोष नहीं है। या तो विशाल भूमि पर मध्यमें प्रासादका निर्माण किया जाता है। वहाँ उसकी विशालताको ही जगती माननेका कारण है।

७. मीट-पर पीठके विषयमें प्रासादके प्रमाणसे महापीठ या कामदपीठ शास्त्रमान प्रमाणित बनाना कहा है। परन्तु स्थानमान और कभी वार द्रव्यानुसारके हेतुका आश्रय जानकर पीठ प्रमाणसे कम करनेका कहा है। तब कभी शिल्पियों गहरे अभ्यासके अभावसे विरोध करते हैं। परन्तु कहे हुअे मानते पीठ कर्म करनेके प्रमाण दीर्घांग-क्षीरांग और 'ज्ञान रत्न कोपादि' ग्रंथोंमें स्पष्ट दिये हैं।

अर्ध-भागे त्रिभागेऽपि पीठ-चैत्र नियोजयेत्।

स्थानमानाश्रयं ज्ञात्वा तत्र दोषो न विद्यते ॥

कहे हुअे मानसे आधा या तीसरे भाग उच्च प्रमाण पीठ करनेमें दोष नहीं जानना। मुख्य मंदिरका महापीठ या कामदपीठ और किसी देवकुलिकाओंको १०८ जिनायतन, ६४ शक्त्याय २४ विष्णुयतन या २४-५२-७२-८४ या १०८ जिनायतनोंको कर्णपीठ कम करनेमें दोष नहीं है।

८ प्रासाद-उदयमानके विषयमें शिल्पीयोंमें सोलहवीं सदीके बादके मंदिरोंमें कुछ छूट लेकर उदयमान अधिक करने लगे। क्योंकि पट्टहवीं सदीके बाद स्तम्भके अंतरके बीच कमानों बनानेकी प्रथा शुरु हुई। जिससे द्वारकी शाखाके समसूत्रमें स्तम्भको रखते थे। ऐसे रखकर पद (दो स्तम्भोंके बीचका अंतर) के अर्ध भागके बराबर उदय-उभणी कमानके कारण ठेकीको चढाकर रखते हैं। जिससे उदयमान बढ जाता है। परन्तु जिस विषयमें शिल्पियोंमें वादविवाद नहीं है। ऐसे समयमें स्तम्भको कितना ऊँचा गिना जाये यह प्रश्न उपस्थित होता है। वस्तुतः भरणेके तल पर्यंतका स्तम्भ गिना जाय, कम उच्च-उभणीमें कमान करने जाते तब द्वार बाढसे स्तम्भको छोटा कर उस पर काठासरा चढाके कमान करते हैं। तब उसे पायचागलका दोष अज्ञानतासे कहते हैं। कमान शिल्पमें कहाँ कहीं गई है। तब वह 'पायचा' शब्द शिल्पियोंमें कहाँसे निकला? ऐसे

बीना समझसे विवाद (कम अभ्यासीओंके द्वारा) उठाये जाते हैं। यह निरी अज्ञानता है। प्रतोल्यामें जौर मेघनाद मंडपमें तोरण करते हैं। तब स्तंभ पर ठेकी-गड्डी चढानेका कहा है।

९ द्वारमान—इस विषयमें खास वादविवाद नहीं है। सामान्यतया निरंधार प्रासादोंमें ५'-५" या ६'-१" या ६'-९" का द्वारोदय अपने हिसाबसे आयमेल करके रखनेकी प्रथा है। परन्तु विस्तारमान विषयमें वर्तमानकालके यजमानोंका आग्रह द्वारविस्तार अधिक रखनेके लिये होता है। यद्यपि यथा योग्य रीतसे विस्तार हो सके इतना रखना। शास्त्रदृष्टिसे थोड़ी छूट लेकर करे, परन्तु यजमान तो गर्भगृहमें वाहनको ले जाना हो वैसा दुराग्रह करे तब शिल्पियोंको शास्त्रीय दृष्टिकी मर्यादासे थोडा बडा करना, परन्तु मर्यादाका विशेष लोप न करना चाहिये।

१० द्वार-शाखाके नीचे कुंभीवाढको तिलकडे कहे हैं। उनसे अंगुल डेढ अंगुल उदम्बर-उबर नीचा होता है। मंडोवरके थरवाले कुंभावाढसे उबर अर्ध भागमें, तीसरे भागमें या चौथे भागमें नीचे उतारनेका प्रमाण देते हैं। तो कभी शिल्पियों उबर नीचे उतारनेके साथ तिलकडे और मंडपकी कुंभीओं भी उतारने मतके हैं। यह वादविवाद उग्र होकर चलता है। एक पक्ष मानता है कि जो "कुंभके न सभा कुंभी" यह प्रमाण है तो तिलकडों या कुंभीओंको नीचे नहीं उतार सकते हैं। तिलकडे कुंभा कुंभीको बराबर रख सिर्फ उबर ही खोडना-नीचे उतारतेका प्रमाण कहा है। इस तरह उबर नीचे उतारना जिससे दर्शनार्थीओंको आनेजाने की सानुकूलता रहे।

“उदम्बरान्ते हृते कुंभि स्तम्भ च पूर्ववत् ।

सांधारे च निरंधारे कुंभि कृत्वा उदरम्बम् ॥

इस श्लोकका अर्थ—उबर ही फक्त खोडनाकुंभी और स्तंभको तो पूर्ववत् रखना। लेकिन प्रतिपक्ष “उदंबर हृते कुंभिः” का अर्थ उबर और कुंभी खोडना-नीचे उतारना ऐसा अर्थ करते हैं। यह वादविवाद जो मध्यस्थ दृष्टिसे देखा जाय तो सांधार प्रासादमें उबर और कुंभी नीचे उतारे हुए पुराने कामोंमें देखते हैं। परन्तु निरंधार प्रासादमें उबरके साथ कुंभी खोडनेका बराबर नहीं है। तो भी हम यह नहीं कह सकते कि ये दोनों पक्ष झूठे हैं।

११. मंडोवर पर विभागमें—शास्त्रकारोंने कुम्भा कलश छज्जे तकके बारह, तेरह थरों कहे हैं। परन्तु अल्पव्ययके कारण यजमान कम थर करावे उसमें दोष नहीं है। स्तंभ वाढ-समसूत्र जंघा टोच पर होती है और सामान्य रीतसे

द्वार-वाढ समसूत्र भी स्तम्भ वराजर होता है। परन्तु जघामे भद्रके गवाक्षो द्वार वाढसे नीचे होते हैं। ऐसे समयमे द्वार और गवाक्ष वाढ समसूत्र मे होनेका आग्रह न रखना चाहिये। अठारहवीं सदीमे बहुतमे मन्दिर गुजरात, सौराष्ट्र, कच्छ, राजस्थान वगैरह स्थलों पर हुए तीन पदोंका गर्भगृह पर तीन शिलारों और बाह्य मंडोवरके घाटके बदले कडाउ दावडी की सादी दिवारोंकी प्रथा शुरू हुई है। यहा समाजने यह शैलीका इस काळमे स्वीकार किया वह सामुहिक रीतसे दोष मान स्त्रिकार किया और हजारो मन्दिरों यह शैलीका हुआ तब वहाँ दोष मानना न चाहिये ऐसा मेरा मतव्य है।

१२. देवता-दृष्टिपद-विषयमे भिन्न भिन्न ग्रन्थकारोंमे मतभेद है, परन्तु सर्वसाधारण द्वारोदयके आठ भागके सातवें भागमे फिर उसके आठ भाग कर सातवें भागमे देवदृष्टि त्रिपुरूप और जिनकी-मिलाने के लिये कहा है। अर्थात् द्वारोदयके ६४ भागमे पचपनमे भागमे दृष्टि मिलाना। इस प्रथाको शिल्पीवर्ग स्वीकारता है। आये हुए सूत्रमानसे दृष्टि ऊँची या नीची जरा भी न रखने के लिये शिल्पग्रन्थोमे कहा है। कई जैन विद्वानों “सप्तमा सप्तमे भागे” का अर्थ करते हैं कि सातवें के आठवें, भागकर सातवें भागमे अर्थात् छ. और सात के बीच दृष्टि आय मेलमे रखना। परन्तु शिल्पीवर्ग सातवें भागमे ही भागपर और नहि कि नीचे-आय मेल-प्रासाद मदनकार कहते हैं। परन्तु विश्वकर्मा के कोई भी प्राचीन ग्रन्थमें आय मेल पर दृष्टि रखनेके लिये नहीं कहा है। दृक्षार्णव और क्षीरार्णव आदि ग्रन्थोमे गजाश विभागमें ही दृष्टिसूत्र रखना। एक बालके अग्रभाग जितना मी फर्क नहीं रखना। यह मतमतान्तर शिल्पियों और जैन विद्वानों के बीचका सामान्य है। गजाशका अर्थ सातमा हि होता है नहि के गजाय।

उपरोक्त मतमतान्तर दो इक्के आठवें भागके वराजर है। परन्तु ठम्कुर-फेरके मतसे (५'-५" द्वारोदयके हिसाबसे) १८ अगुल नीची, दिगम्भराचार्य वसुनन्दीके मतसे सोलह अगुल, 'क्षीरार्णव' 'दीपार्णव' के दूसरे मतसे २२ अगुल दृष्टि उत्तरागसे नीची रखनेके लिये कहते हैं। ऐसे बड़े अंतर ग्रन्थकारों के मतमतान्तरमे कौनसा मत स्वीकारना? यह प्रश्न होता है, यद्यपि वर्तमान मे सर्वमान्य ६४ भागके पचपनमे भागका मत अधिक व्यवहारमे है। पृथक् पृथक् देवदेवीकी दृष्टि स्थिर भिन्न भिन्न करके प्रतिष्ठाके समय पर वादविवाद होनेसे पहले उसका निर्णय कुशल शिल्पियोंको ले लेना चाहिये। अब जो कोई पुराने मन्दिरोंमे जो दृष्टि नीची हो तो तब शिल्पियो वीरज रखकर पूर्वाचार्यके कोई ग्रन्थका मत देखकर अपना अभिप्राय देना चाहिये।

१३. देवता पद स्थापन के-संबंधमें भिन्न भिन्न ग्रंथकारोंने पृथक् पृथक् विभाग प्रतिमा स्थापनके कहते हैं। यद्यपि उसमें कमज्यादा तफावत है। प्रासाद तिलक, और विवेकविलास, गर्भगृहार्ध के पीछलेमें पाँचवें के तीसरे भागमें कृष्ण, जिन और सूर्यकी मूर्ति स्थापन करनेके लिये कहा है। अलवत्त, शास्त्राधार सच्चा है, परन्तु जिन तीर्थंकर के बारेमें वह अपवादरूप हो वैसा पुराने उदाहरणोंसे लगता है। अन्य देवोंको तो पधराई हुई मूर्तिके पीछे प्रदक्षिणा करने की प्रथा है। वह जो कहे हुए विभागमें पधराई हुई हो तो प्रदक्षिणा होस के तो जैनोमें चातुर्मुख के सिवा कहीं भी अिनप्रमु के गर्भगृह के अंदर प्रदक्षिणा होती हो वैसा देखनेमें नहीं आता है। इससे जिन प्रभुकी पिछली दिवार से परिकर जितनी जगह रखकर पधराई हुई देखनेमें आती है। जो कि पद विभाग के अनुसार प्रतिमा बिठानेका आग्रह रखनेवाले शिल्पीका मंतव्य झूठ है ऐसा नहीं कहा जा सकता। परन्तु वह व्यवहारमें नहीं है। गर्भगृहके अर्धमें $\frac{1}{4}$ भागमें सिंहासनपीठ रखे जाते हैं। 'प्रासाद मण्डन' के एक दूसरे प्रमाणमें—

‘पटाऽधो यक्ष भूताद्या-पटाग्रे सर्वदेवता’

इस सूत्रको जिन प्रभुके बारेमें शिल्पियोंने स्वीकारा हो ऐसा लगता है।

१४. शिखर का विषय-गहन है। उसे अधिक अंडकों या कर्म ऊरुशृङ्ग प्रत्यागादि वगैरह चढ़ानेके होते हैं। अनुभवके रहित सूत्रोंसे पकड़कर रखनेवाले और दुसरोकी क्षति निकालते हैं यह अयोग्य हैं। 'समदल' उपांगवाले प्रासाद के शिखरमें शिल्पियोंको कम तकलीफ पड़ती है। परन्तु 'हस्तांगुल' उपांगवाले प्रासादके शिखरमें तो शिल्पीकी सचमुच कसौटी होती है। उसकी कदर करने के बदले अल्पज्ञों क्षति निकालते हैं, यह दुःसह लगता है। अठारहवीं सदीमें हुए तीन पदपर तीन शिखरोंके पायचे-मूलकर्ण गर्भगृहके पाटके समसूत्रमें मिलाने की शिल्पियों की प्रथा उद्यम समयमें थी। हस्तांगुल शिखरमें शृङ्गोंके निर्गम ऊरु शृङ्गों पर शृङ्ग मिलानेमें शिल्पियोंको मुश्किली आती है। यह सब कठिनाईयां बुद्धिमान शिल्पि मिलाके सुन्दर शिखर बनाते हैं।

१५. शिखरके ध्वजादंड की धारण करता हुआ ध्वजाधारध्वजाधार-कलावा शिखरकी खड़ी मूल रेखाके उदयके छहवें भागमें उसके $\frac{1}{8}$ हीन करके उस स्थानमें करनेके लिये कहते हैं। ध्वजाधार का अर्थ ध्वजादंडको धारण करता आधाररूप कलावा होता है, यह मेरा मंतव्य है। ऐसा बहुतसे पुराने शिखरोंमें पीछे होता है। किसी स्थानपर ध्वजापुरुष की आकृति भी देखनेमें आती है। इससे ये दोनों मतका परस्पर खंडन करनेवालों का वाद अयोग्य है। परंतु

शिखरके स्तम्भसे नीचे ध्वजाधार कलावा तो होना ही चाहिये। यह निश्चितता से मान्य करना ही चाहिये, उसमें वादको स्थान नहीं है। जो वहाँ दुरामह किया जाय तो वह अयोग्य है। शास्त्राधारको मानना ही चाहिये। शास्त्राधार ही वहाँ पुराने किसी स्थानके उदाहरण को प्रमाण नहीं माना जा सकता।

१६. नोगरादि शिल्पमें शिखरके स्तम्भों छ' भाग विस्तारसे सात भागका आमलसारा विस्तार करनेके लिये कहा है। जो ध्वजाधार शिखरकी खड़ी मूल रेखाके उदके $\frac{3}{4}$ भागपर स्तम्भके नीचे रखनेके लिये कहा है। इस ओलमेको देखनेसे आमलसारा के वृत्तसे ध्वजादंड बाहर निकल जाय यह स्पष्ट है। इससे ध्वजादंडको स्थिर रखने के तीन स्थानक ध्वजाधार-दूमरा स्तम्भ (बावणाके पास) एक लग-छीद्र पाडकर रखना। तीसरे आमलसारा की बाहर कलावा का घाट करके उसमें छिद्र करके उसमें ध्वजादंड खड़ा करनेसे कैसे भी झझाजातोमें वह स्थिर खड़ा रह सके, यह रीत शास्त्राचार है।

आमलसारा में छिद्र करके ध्वजादंड खड़ा करनेकी प्रथा देहसौ-दोसौ सालसे है, यह बराबर नहीं है। 'क्षीरणज' अ १३० के श्लोक ११ से २४ तकमें इस सरवेध अर्थात् मस्तकमें वेध कहकर बहुतसे दोष दुष्ट फलदाता कहे हैं और स्तम्भ-वाय के ऊपर ध्वजादंड गाड़ने को भी वैसा ही वेधदोष कहा गया है।

ध्वजादंडकी लंबाईका जो मान कहा है वह ध्वजाधारमें बराबर से गिना जा सकता है, परंतु जो आमलसारा में ध्वजादंड गाड़ा जाय तो उसे साल रखना पड़े और वह शिखरके प्रमाणसे बहुत ऊँचा बड़ा होवे। यह झूठा है। शास्त्रोंमें ध्वजादंड को साल रखनेके लिये कहा नहीं है। आमलसारा में उसे गाड़ना होता तो सालका निर्देश उसमें होता।

आमलसारा में ध्वजादंड स्थापन करने का दुरामह रखनेवाले शिल्पियों जो पुराना काम हुआ हो उसका उदाहरण देकर अपने सूतका समर्थन करते हैं परंतु यहाँ शास्त्राधारके स्थान प्रमाणसे अन्य मार्ग असत्य है।

१७. ध्वजादंडके साथ स्तम्भिका खड़ी करनेके लिये कहते हैं। अपराजित कार और क्षीरणजकारने स्तम्भिकाको कितनी ऊँची करना ? कैसे करना ? उसमें शिखर क्या करना ? वगैरह विगतसे प्रमाण दिया हुआ है और स्तम्भिका को दंडके साथ गज गजपर मजबूत बावेकी पट्टीया बाँधों, बाँधनेके लिये कहा है। आमलसारेमें बड़ा रखनेके मतानुश्रुतिओं स्तम्भिकाको निरर्थक मानते हैं। दंडको

स्थिर करनेमें वह वह बल नहीं दे सकता है। ऐसी दलीलें करके स्तंभिका की अगत्यको नहीं स्वीकारते हैं। उपरोक्त शास्त्रीय पाठोंके मतका समर्थन करनेवालों के बुजुर्गोंने डेढ़सौ साल पहले जो किया हो उसके प्रमाणरूप देते हैं। परंतु सज्जनोंके लक्ष्यमें सत्य हकीकत समझमें आवे तब वे आगेकी क्षतियों को सुधारे और सत्य मार्गका अवलंबन करें।

१८. प्रासाद पुरुष की सुवर्णमूर्ति आमलसारामें स्थापन करनेके लिये कहा है। उसके बायें हाथमें तीन शिखाओंवाली ध्वजापताका धारण करने के लिये कहा है। उसे कई शिल्पीओं त्रिपताकका अर्थ पताका-ध्वजाके बदले मुद्रा मानते हैं। परंतु सामान्यतया शिल्पीओं पताकाका अर्थ ध्वजा करके वैसी आकृति की सुवर्णमूर्ति जो प्रासादके प्राणरूप है उसे स्थापन करते हैं।

१९. पताका-ध्वजा कैसी करना? उस विषयमें शिल्पग्रंथोंमें बहुत स्पष्टता से कहा है कि पताका-ध्वजादंड के बराबर लम्बी और उसके $\frac{1}{2}$ भागकी चौड़ी चोरस करना। लटकते सिरे को तीन या पाँच शिखाग्र करना! कई ब्राह्मण विद्वानों पताका त्रिकोण होती है और पताका दंड के उदयमें रखना वैसी मान्यता रखते हैं। परंतु उपरोक्त रीतसे शिल्पशास्त्रों के आधारको मान्य रखा जाय तो त्रिकोण पताका का स्थान नहीं रहता है। वे अन्य अशास्त्रीय रीतसे किये हुए परंपरागत पताकाओं के उदाहरण देते हैं, परंतु वह सत्य नहीं है। विद्वान भूदेवों को उनके मतानुसारका शास्त्रीय पाठ प्रासादकी पताकाका दिखाने का आग्रह करनेसे उन्होंने यज्ञयागादि क्रियाके या उसके मंडप परकी ध्वजाओं का पाठ बताया। अमुक दिशामें अमुक वर्णकी त्रिकोण ध्वजा का प्रमाण है, परन्तु प्रासादके शिखरको वह सूत्र लागु नहीं होता है, तो भी किसी विद्वान आचार्य इस विषयमें प्रकाश देंगे वैसी आशा हम रखते हैं।

२०. राजस्थानमें शिखर पर पाषाणके कलशके स्थानपर तांबेके या सुवर्ण के पतरेका कलश पोला बनाकर उसमें घी भरते हैं, परन्तु सिर्फ पतरेका कलश कर चढ़ानेकी रीत झूठी है। राजस्थानमें बहुत करके इस प्रथाको मानने वाले विशेष हैं। पतरेके कलशका विधान झूठा है। पाषाणका ही कलश करके उसका विधिसर अभिषेक पूजन करके रखना चाहिये। बादमें उसके पर सुवर्णके पतरेका कलश चढ़ानेमें हरकत नहीं है। ध्वजादंड काष्ठका ही होना चाहिये—मगर अब पाईप दण्ड बनाते हैं, ये ठीक है लेकिन पाईपके अंदर सळंग एक काष्ठका तो दण्ड रखना ही चाहिये—अन्यथा गलत है!

२१. अठारहवीं सदीमें मूर्तिभंजक विधर्मियोंका भय दूर होनेसे गुजरात, सौराष्ट्र, कच्छ, राजस्थान वगैरहके जैन सधोंने भयसे भटारी हुई हजारे मूर्तियों को बाहर निकाला इससे अधिक मूर्तियों को बिठाया जा सके वैसे तीन पदके गर्भगृह करनेकी आवश्यकता समयानुकूल उत्पन्न हुई। प्रत्येक गाँवके जैन सधने वैसे मन्दिरों पर तीन शिखरों बनानेका आग्रह रखा। उस कालके शिल्पियों को समयानुकूल वर्तन करने पर बाध्य होना पड़ा। इससे अठारहवीं सदीसे ऐसे तीन पदपर तीन शिखरोंवाले हजारों मन्दिरों हरेक गाँवमें हुए। पालीताना अनुजय पर उस कालमें हुई टुँरोंके कई सौ मन्दिरों भी ऐसे ही प्रकारके हुए हैं। सामुहिक सर्वमान्य रीतसे इस अपवादको स्वीकारना पड़ा, परन्तु यह झूठा है यह कहते पहले सोचना चाहिये। वर्तमानकालमें ऐसे तीन पदवाले गर्भगृह करनेके हो तब अभी-चाहे एक शिखर करे या पाँच पदपर तीन करे परन्तु डेढ़से-सो साल पहलेके ऐसे मन्दिरोंको दोषित नहीं कहना चाहिये।

कईवार मूलपाठोंका अर्थ करनेमें मतभेद होता है। कईवार मूलपाठ और क्रियाकी भिन्नतासे ऐसा होता है। परन्तु विद्वान पुरुषों अपने मतका दुराग्रह नहीं रखते हैं। किसी भी कालमें क्रियाका भिन्न अर्थ करके कार्य हुआ हो ऐसा हो सकता है। तब वे सब मन्दिर झूठे हैं, यह कहना अतिशयोक्ति है, सोच समजसे निर्णय करना।

क्षीरार्णव

क्षीरार्णव ग्रन्थके सशोधन के लिये हमारे हस्तलिखित ग्रन्थसंग्रह की करीब छ-सात प्रतियाँ वि. स. १८१० से १९०३ तकके समयमें लिखाई हुई हैं और रोयल एशियाटिक सोसायटी की बॉम्बे शाखाकी लाईब्रेरीकी पुस्तककी शके १८१८ की प्रत, (३) बरोड़ा प्राच्य विद्यामन्दिर की प्रत परसे लिखी हुई कैंपी और गुजरातके शिल्पी श्री नटवरलाल मो. सोमपुरा की और नि. स. १७१० के अज्ञातकी प्रत-इन सब प्रतोंका मिलान करके हो सके इतना क्रमबद्ध सशोधन करनेका मैंने प्रयत्न किया है। सौराष्ट्रके सोमपुरा शिल्पियों की कुछ प्रतें मैंने पहले प्राप्त की थीं, वे मेरे ग्रन्थसंग्रहसे अधिक नहीं थीं, और बहुत कम भिन्न थीं और १०१ अध्यायसे १२० वे अध्यायके ९३ वे श्लोक तककी अपूर्ण प्रतें प्राप्त हुई थीं, कुछ तो इससे भी कम अध्यायोंवाली प्रतें भी मिली थीं।

मूल ग्रन्थके आगेके ९८ अष्टानवे अध्यायों लुप्त हैं और अध्याय १०० के बादका ग्रन्थ-निस्तार कितना है यह नहीं प्राप्त हुआ। गुजरात सौराष्ट्रकी प्रतों १०१ अध्यायके पूर्व शिला प्रकरण से शुरू होती है परन्तु रोयल एशियाटिक

सौसायटी की पुस्तकोंमेंसे मुझे आगेका दो अध्याय, गणित विषयका और जगति लक्षणका प्राप्त हुई। कहते हैं कि मेवाड राजस्थानमें कोई सोमपुरा शिल्पी के पास ज्यादा विस्तारवाली प्रत हैं। दुर्भाग्यवशात् उसको प्राप्त नहीं कर सका हूँ।

संशोधन करते प्राप्त हुई प्रतोंकी (१) अशुद्धता (२) कुछ अध्यायोंमें अस्तव्यस्तता (३) एक विषय अपूर्ण छोड़कर दूसरे विषयोंके अशुद्ध पाठों आना (४) अध्याय ११२ में सिर्फ तीन ही अशुद्ध श्लोकमें दिया हुआ है, जिसका कुछ अर्थ प्राप्त नहीं होता है। (५) और स्तंभ, कुंभी, द्वार, शंखोद्वार-गर्भगृहके प्रमाण, स्वरूप, मंडोवरके साथ स्तंभके छोड़का समन्वय इन विषयोंकी प्राप्त हुई प्रतोंके अध्याय १०१, १११, ११७ और ११५ में आगे-पीछे या कम-ज्यादा या बारबार पाठो आता है, पुरानी शुद्ध प्रतोंके अभावसे ऐसी स्थितिमें ग्रंथको क्रमबद्ध करने की छुट लेनी ही पड़ती है। इसमें मैं तो क्या निष्णात और बड़े विद्वान भी क्या कर सकें ? वैसे समय सुज्ञ विद्वानोंका कर्तव्य छूट देनेका है। अनिच्छासे ऐसी छूटके लिये शिल्पज्ञाता विद्वानोंकी क्षमा चाहता हूँ।

अगर इस ग्रंथको अपूर्ण रखूँ ? क्षीरार्णवकी प्राप्त प्रतों इतनी अशुद्ध हैं कि कितने स्थानपर उनको मूल स्वरूपमें रखनेका कार्य अर्थहीन और मुश्किल था ! तो भी उसको क्रमबद्ध करने का प्रयास किया है। तो भी मेरे अल्प प्रयत्नोंसे मैं शिल्पी समाज या उसके रसज्ञ विद्वान् समाजके आगे कुछ इतना तो रखनेके लिये सौभाग्यशाली हुआ हूँ। इसकी कद्र होगी तो मुझे आत्म-संतोष मिलेगा।

निरन्धार प्रासादोंकी शैलीके नियमों शिल्पीवर्गमें कई लोगोंसे परम्परासे रूढ़ हो गये हैं। पिताके कार्यका अनुकरण उसका परिवार करे, इस तरहसे सैकड़ों वर्षोंसे हुआ है। इससे शिल्पीवर्ग में कुछ निरक्षरता आने लगी। हस्तलिखित ग्रन्थोंकी अगत्यता कम मालूम समजनेसे, और ग्रंथकी प्रतोंमें अशुद्धि बढ़ती जानेसे और ग्रंथों-पिटारों के आभूषणरूप मिलकत गिने जाने लगे इससे पद्धतीपूर्वक अभ्यास बहुत अल्प सहस्रांश में होता था। विद्याके मर्म विस्मृत होते चले। सभाग्यसे सिर्फ सक्रिय ज्ञान रहा है। इसीलिये भारत का शिल्पीवर्ग अभी कुछ सजीव है ऐसा दिखता है।

निरन्धार प्रासादों परंपरासे-रूढिसे शिल्पियों बाँधते रहे परन्तु भ्रमवाले साधार महाप्रासादोंके स्थापत्यका अति दुर्घट ज्ञान और क्रिया छः सौ, सात सौ, सालसे विधर्मी राज्यभयसे बँधाये नहीं गये। इससे वैसे प्रकारका ज्ञान विस्मृत होता गया। वर्तमानमें श्री सोमनाथका सभ्रम महाप्रासादका निर्माण मेरे नेतृत्व

मे हुआ। उसके कार्यारम्भमे वैसे शिल्प साहित्यकी बहुत अगत्य मालुम हुई। सद्भाग्यसे हमारे भारद्वाज कुल परंपरामे ऐसे प्रकारके साधार महाप्रासाद के विषयका ज्ञान—साहित्य श्री विश्वकर्मा की कृपासे रक्षित रहा था। इससे वैसा कठिन शिल्प-साहित्यको समझनेके लिये बहुत सरलता रही।

क्षीरार्णव ग्रंथमे निरधार प्रासादोंके यम-नियमों हैं लेकिन विशेष कर वह साधार महाप्रासादके विषय अधिक उपयोगी साहित्य है। सामान्य शिल्पी-वर्गको उपयोगी अध्यायों मे थोड़ी अशुद्धि थी परन्तु जो प्रयोगमे कम है वैसे साधार महाप्रासादोंके अध्याय बहुत अशुद्धियोंसे भरे हुए थे। इससे ग्रंथशुद्धिका कार्य कठिन बना था।

वृक्षार्णव ग्रंथ मे जितना छुटक छुटक अध्यायों प्राप्त हुआ है उसमे महाप्रासादोंकी रचनाके पाठों, उनके यम नियमों दिये हुए हैं। जैसा कि ऊपर कहा है वह ग्रंथ व्यवहारमे वर्तमान कालमे न होनेसे उनकी प्रतों बहुत अल्प प्राप्त हुई हैं। यद्यपि वह ग्रंथ भी संपूर्ण मिलता नहीं है। उसकी स्थिति भी क्षीरार्णव जैसी है। उसका सशोधन मैंने यथामति प्रयत्नसे करीब तीस सालसे अनुवाद के साथ किया था परन्तु दूसरी प्रतोंके अभावमे उसका मिलान न हो सका था। वहाँ तक उसमें क्षतियाँ रहनेका भय बहुत रहता था। सुयोगसे मारवाड़ पालीकी और बि—स १७६८ की एक प्रति और पाटणकी छुटीछवाड़ पाठोंवाकी प्रत उपरांत रोयल एशियाटीक सोसायटीकी प्रतके आधारपर अभी उसका सतोपप्रद सशोधन कर रहा हूँ। यह वृक्षार्णव-ग्रंथके प्रकाशनके लिये सुज्ञ विद्वानों और पुरातत्त्वज्ञों मुझपर स्नेहभावसे दबाव डाल रहे थे तो सद्भाग्यसे गुजरात की एक बड़ी मानवती मातबर सस्था की तरफसे प्रकाशन के लिये कार्य होनेकी संभावना है। वृक्षार्णव ग्रंथ अद्भुत है।

वृक्षार्णव ग्रंथके सशोधनमे बहुत मुश्किल हैं, यह कार्य कठिन है तो भी उसको पूरा करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ, जिसके अंग्रेजी संस्करणमें मेरे स्नेही श्री मधुसुदन अ डाकी मुझे सहायक हो रहे हैं।

शिल्प स्थापत्यका विषय हमारे कुल परम्परा का है। इससे परिवारिक संस्कार वारसेमें मिले यह स्वाभाविक है। कैलासवासी पूज्य पिताश्री और मेरे दो स्व बडील बन्धुओं त्र्यंबकलालभाई और श्री भाईशंकरभाईने विद्या के संस्कार सींचे, मार्गदर्शन दिया। उनका ऋण मुझसे अदा नहीं हो सकता है। फनिष्ठ बडीलबन्धु श्री रेवागकरभाई हमारी समस्त ज्ञातिमें ५० साल पहले प्रथम प्रेज्युएट हुए थे। वे मेरे ग्रंथ-प्रकाशनमे श्रम और अनुभवका लाभ हमेशा देकर

उपकृत कर रहे हैं। वडिलोंके ऋण स्वीकारको नोंध लेते मुझे आनन्द होता है। उनकी शुभाशिषों की कृपावर्षा हमेशा मेरेपर होती रहो ऐसी जगन्निर्यन्ता श्रीहरिके प्रति मेरी नम्र प्रार्थना है।

सुप्रसिद्ध श्री सोमनाथ महाप्रासादका निर्माण मेरे हाथोंमें होनेसे उसके ट्रस्टके कामकाजके बारेमें राजप्रमुख श्री नामदार स्व. जामसाहब, सर दिग्विजय सिंहजी साहब और महाराष्ट्री वर्तमान राजमाता नामदार गुलाबकुंवरबा साहेबाके परिचय में अवसरनवार आनेका प्रसंग होता था। वे नामदार शिल्प के प्राचीन अमूल्य विद्या और साहित्य के प्रकाशन के लिये मुझे प्रोत्साहन देते थे और वर्तमान नामदार राजमाता साहेबा शिल्पका अभ्यासक्रम योजकर उसका क्रियात्मक ज्ञान मिले वैसी पाठशालाएँ स्थापकर शिल्पी विद्यार्थीओंको तैयार करनेके लिये मुझपर बहुत दबाव डाल रहे हैं। विद्यार्थीका सर्वप्रकार के आर्थिक बोझा उठाने की व्यवस्था भी कर रही हैं। यह उनका विद्या-कलाके प्रति प्रेम है। इस ग्रन्थ-प्रकाशनके लिये मैं उन नामदारोंका ऋणी हूँ।

गुर्जर साहित्यकी अस्मिताके प्रकटकर्ता उत्तर प्रदेशके भूतपूर्व गवर्नर श्रीमान् कन्हैयालाल मा. मुन्शीजी जो हालमें सोमनाथ ट्रस्टके प्रमुखश्री हैं। वे मेरे प्रति सदा सद्भाव बता रहे हैं, उन्होंने ग्रंथका पुरोवाचन लिखनेकी कृपा की है, इसलिये मैं उनका उपकृत हूँ।

श्रीमान् श्रीगोपालजी, नेवटियाजी, शेठजी, शिल्प-स्थापत्य कला प्रति और हमारे परिवार प्रति हमेशा प्रेम और आदर रखते हैं। उन्हींसे श्री विरला परिवारके संसर्गमें आनेका प्रसंग रहता है। शिल्प-स्थापत्य कला साहित्य के प्रकाशन के लिये हमेशा प्रोत्साहन देते रहते हैं।

प्रीन्स ऑफ वेल्स म्युझियमके डायरेक्टर, पुरातत्त्वके प्रखर विद्वान् पुरातत्त्वज्ञ डॉ. मोतीचन्द्र भाईसाहबने समय और श्रम लेकर यह ग्रन्थकी भूमिका लिखी है इसलिये मैं उनका हृदयपूर्वक आभार मानता हूँ।

क्षीरार्णव ग्रंथके संशोधन कार्यमें व्याकरण शुद्धिकी क्षतियाँ विद्वानों को मालूम पड़ेगी लेकिन वास्तुशास्त्र के ग्रंथोंकी भाषा ही वैसी निराली है। मूल संस्कृतमेंसे प्राकृत, मागधी, पाली वगैरह आपाएँ उत्पन्न हुई। इस तरह वास्तु-शास्त्रके ग्रन्थोंकी भाषा ही वैसी है। एक विद्वानने संस्कृत पदमें कहा है,

ज्योतिषे तन्त्रशास्त्रे य विवादे वैद्यशिल्पके
अर्थमात्रं तु गृहणीयान्नात्र शब्दं विचारयेत्।

“ज्योतिष, तत्रशास्त्र, निवाद, आयुर्वेद और शिल्प ग्रन्थोमे उनकी भाषाके शब्दोंका बहुत विचार न करते उनके भावार्थको ग्रहण करना।” सुख पुरुषो व्याकरणादि क्षतियोंके प्रति उपेक्षा कर हसवृत्ति धारण करेगे ऐसी मेरी प्रार्थना है।

इस ग्रन्थका यथायोग्य अनुवाद किया गया है, परन्तु जहाँ जहाँ अस्पष्ट पाठों हों या जहाँ शकाओं या अपूर्ण पाठों हों वहाँ भावार्थ दिया है। कई स्थलोपर असमृद्ध पाठों या अति अशुद्धि के कारण अनुवाद करनेका अशक्य हुआ है। वैसे पाठभेदों की स्पष्टता मिलते ही वहाँ योग्य सुधारके लिये अनुरोध है। मैं नहीं कह सकता हूँ कि मेरा अनुवाद क्षतिरहित है, अपूर्णता और अशुद्धिसे आर्द्ध हुई क्षतियोंके लिये उदारभावसे विद्वान महाशयों क्षमा करें।

क्षीरार्णवके प्रारम्भके ९८ अध्यायों की अपूर्णता के कारण प्राप्त ग्रन्थों के अध्यायों के एक साथ क्रमाक, अध्याय सख्या सुगमताके लिये रखे गए हैं।

ग्रन्थके भाषानुवाद के साथ प्रत्येक अगनी टीका और अन्य ग्रन्थोंके मतान्तर की नोंध दी हुई हैं। ग्रन्थ-वाचन से अर्थ नहीं सरता है। क्रियात्मक ज्ञान (प्रेक्टीकल) का मर्म देनेसे ग्रन्थ सपूर्ण बनता है। उसके साथ कोष्ठकों अनेक आलेखनो, नकशे और चित्रों में इसी विषयोंको स्पष्ट करनेके लिये जरूरी हैं। वे और अन्य प्राचीन ग्रन्थोंके अवतरण भी दिये गए हैं। ग्रन्थको अधिक समृद्ध बनानेके लिये यथामति प्रयास किया है। मेरे प्रयास की कद्र विद्वान वाचक करेंगे ऐसी आशा रखता हूँ।

यशपरम्परा के व्यससाय मे मेरा ज्येष्ठ पुत्र श्री बलरत्तराय और पौत्र श्रीचन्द्रकांत यह शिल्प-स्थापत्य व्यससायमे जुड़ाये हैं वो कुलपरम्परा को समृद्ध करेंगे यही प्रभु प्रार्थना है। दूसरा पुत्र विनोदराय एम ई अमेरिका सीवील एन्जनीयर है। श्रीहर्षदराय बी ए एल एल बी अहमदाबाद हाईकोर्ट एडवोकेट है। श्रीधनन्तराय बी ए एल एल बी बैंक व्यससायमें हैं।

क्षमायाचना—एक विद्वान कहते हैं, “कविकी जिह्वामे और शिल्पीयोंके के हाथोंमे सरस्वती बसती है” शिल्पीकी बानी—भाषामे व्याकरणकी त्रुटियाँ सहज ही हो उनके प्रति उपेक्षा दिखाकर ग्रन्थके मूल अर्थ—भावार्थको विद्वानों ग्रहण करेंगे ऐसी मेरी प्रार्थना है।

ग्रन्थका हिन्दी अनुवाद श्री जयेन्द्रकुमारमाणिकलाल शाह, एम ए “राष्ट्र-भाषा रत्न” ने श्रम लेकर सुन्दर किया है और ग्रन्थका सुन्दर और स्वच्छ छपाईकाम अहमदाबादके नवप्रभात प्रेसमे उसके प्रोप्रायटर श्री मणिलालभाई और

प्रेस स्टाफके हेड श्री शंकरसिंहजीने श्रम लेकर किया है। ग्रंथमें आये हुए कई ब्लोकका सुन्दर काम कर प्रोप्युलर प्रोसेस स्टुडियोने ग्रंथको सुन्दर आकर्षक बनाने का यथाशक्ति प्रयत्न किया है, इन सभी मित्रोंकी सहर्ष नोंध लेकर आभार मानता हूँ।

ग्रन्थमें आये हुए कई ब्लोकके आलेखन सौराष्ट्र गुजरातके प्रख्यात युवान शिल्पकार श्री चन्दुलाल भगवानजी और अभी प्रभासपाटण सोमनाथजी के कार्य पर है वे मेरे भानजे शिल्पकार श्री भगवानजी मगनलालने भी अन्य आलेखादि कार्यमें-दोनों मुझे सहायक हुए हैं। इस बातका सहर्ष उल्लेखकर आभार मानता हूँ।

सर्वेत्र सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः ।

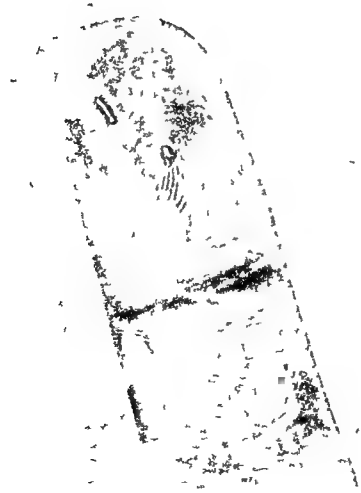
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा काश्चं दुःखमाप्नुयात् ॥

इति शुभं भवतु, श्री कल्याणमस्तु ।

वि. सं. २०२३ वैशाख शुदी त्रीज,
अक्षयत्रतीया

पालीताणा ता. १२, मी मे सन १९६७

स्थपति प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुरा
शिल्प-विशारद



भूमिका

डॉ. मोतीचन्द्र, (एम ए, पीएच डी (एण्डन)

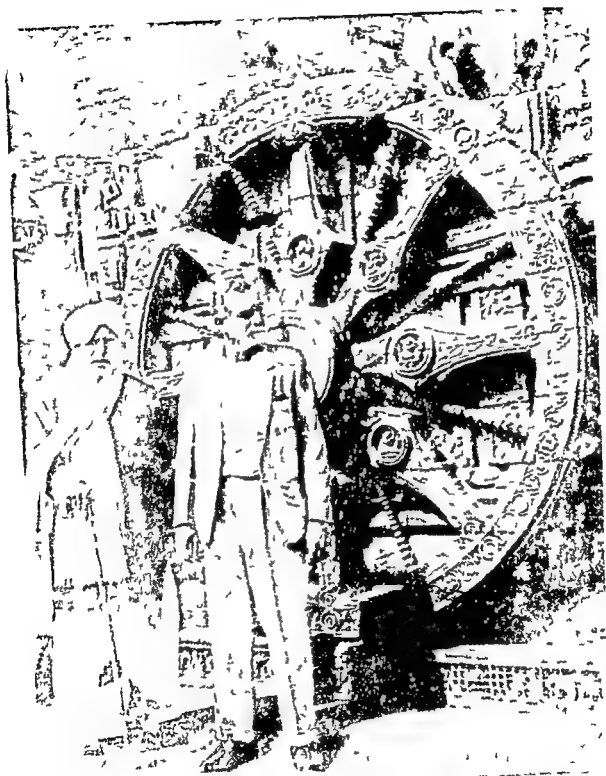
हायरैक्टर, प्रिन्स ऑफ वेल्स न्यूजियम, बम्बई

क्षीराण्वके टीकाकार श्री. प्रभाशंकर ओवडभाई—सोमपुरा भारतीय स्थापत्य शास्त्रके उन इने गिने विद्वानोमे है। जिन्होंने अपनी कुलगत परंपरा और संस्कृतमें लिखित वास्तुशास्त्रकी चर्चा और अध्ययनको एक नया रूप दिया है। यह तो प्रायः सभी विद्वान मानते हैं कि स्थापत्य शास्त्रकी पुस्तकोंमें अनेक असंबद्ध विस्तार होने पर भी उनमे सत्यका अच्छा सामा अंश है। जिसका वास्तविकतासे नजदीकका संबंध है। पर उस वास्तविकता को पकड़मे लानेके लिये मध्यकालीन वास्तुशास्त्रकी परिभाषिक शब्दावली तथा उपलब्ध ग्रंथमंदिरोंके अवयवोंसे उसकी तुलना केवल श्री सोमपुराजी जैसे विद्वानोंके बसकी ही बात है। सच बात तो यह है, श्री सोमपुराजीने मध्यकालीन वास्तुशास्त्र अध्ययनके लिए हमारे सामने एक दृष्टिनिंदु रखा है जिसे ध्यानमे रखकर चलनेसे यह पता चलता है कि देवाल्योंके जो नकशे, अवयव तथा अलंकार हमारे सामने आते हैं उनमे सार्थकता है और उनकी कृति वास्तुशास्त्रके उन मिथ्यातों पर आश्रित है जिनका क्रमिक विकास हुआ है। इसमें सन्देह नहीं कि मध्यकालीन वास्तुशास्त्रके अनेक अमिप्राय समायान्तरमे रुढ़िगत होकर अपनी नवीनता रंगे बैठे, पर यह बात केवल वास्तुशास्त्रों तकका सीमित नहीं थी। मध्यकालीन भारतीय संस्कृतिके अनेक उपादानोंमे भी हमे यही बात दीख पड़ती है।

शास्त्ररूपमें वास्तुविद्याका उदय कब हुआ, यह कहना तो संभव नहीं है। फिर भी प्राचीन साहित्यमे वास्तु संबंधी चाहे वह वैदिक हो या नागरिक अनेक उदाहरण मिलते हैं। वैदिक साहित्यसे ऐसे उदाहरणोंका समग्र श्री सुविमलचन्द्र सरकारने अपनी पुस्तक “सम ऑसपेक्टस् ऑफ़ टी अर्लियेस्ट सोशियल हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया” मे कर दिया है। वैदिक शास्त्रोंमे वास्तुशास्त्र संबंधी शब्द सीधे सादे हैं। पर वास्तुका जीवनसे इतना निकटका संबंध था कि वास्तु संबंधी प्रक्रियायोंके लिए वास्तुयाग और वास्तुनरकी कल्पना की गई। आश्वलायन (४/२/६/१३) गोमिल (४/८) तथा आपस्तंब (६/१६) गृह्यसूत्र तो भूमि शोधन संबंधी नियमोंका विवेचन करते हैं, तथा वास्तुशास्त्रिका उल्लेख करते हैं। ऋग्वेदमें वास्तोत्पत्ति त्रायद वास्तुके अधि देवता थे, जो गृह्यसूत्रोंमें वास्तुपुरुष हो गये। सूत्रोंके आधार पर यह कहा जा सकता है कि एक मध्य स्तंभका आधार मानकर ही गृहकी रचना होती थी।



सुप्रसिद्ध सोमनाथजी के मंदिरमें भारत के राष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णजी और
स्थपति प्रभाशंकर सोमपुरा शिल्पविशारद



शिल्पविशारद श्री प्रभाशंकरजी सोमपुरा के अपना सुपुत्र शिल्पज्ञ श्री बलवतराय (आर्चिटेक्ट) ओरिस्सा के सुप्रसिद्ध कोनाक स्यमदिरका प्लॉयमे रथचन के पास

प्राचीन बौद्ध साहित्य (ए. सी. कुमारस्वामी । अर्ली इन्डियन आर्किटेक्चर, ईस्टर्न आर्ट १९३०-१९३१) तथा जैन साहित्य (डॉ. मोतीचन्द्र, आर्किटेक्चरल डेटा इन जैन केनोनिकल लिटरेचर, जर्नल एशियाटिक सोसायटी, वाल्युम २६ भाग २. १९५१) के आधार पर हम ईसापूर्व तथा ईसाकी आरंभिक सदियोंमें भारतीय वास्तु पर प्रकाश डाल सकते हैं। पर वास्तु संबंधी इन साहित्यिक उदाहरणों का सीधा सम्बन्ध या तो स्तूप, चैत्य, तोरण, वेदिकाकी बनावटोंसे अथवा प्रासाद और नगरकी रचना और नकशोंसे है। इन उदाहरणोंका संबंध ईसा पूर्व दूसरी सदीसे लेकर ईसाकी २-३ सदी तकके स्थापत्यसे है।

वास्तुशास्त्र संबंधी जो परिभाषाएँ हमें इस युगमें मिलती हैं, उनका संबंध अधिकतर काष्ठ निर्मित स्थापत्यसे है। उस युगके जो चैत्य और विहार लेणों बच गई हैं। उनके नकशे भी काष्ठसे बने आरामों तथा प्रासादोंसे लिए गए हैं। जिन देवमंदिरोंकी कल्पना मध्यकालमें हुई उनका इस युगमें पता न था। जो परिभाषाएँ अपने युगमें पूरी सार्थक थीं, बादमें चलकर जब वास्तुकलामें पत्थर और ईंटोंका प्रयोग होने लगा वह अपने अर्थ खोने लगीं, और गुप्त युगमें उन नई परिभाषाओंका जन्म हुआ जिनका तत्कालीन स्थापत्यसे काफी संबंध था। इन परिभाषाओंका कालान्तरमें संग्रह कर लिया गया होगा और इस तरह वास्तुशास्त्रका जन्म हुआ।

अब प्रश्न उठता है कि क्या गुप्त युगके पहले भी लिखित रूपमें वास्तुशास्त्र था अथवा नहीं। तत्कालीन साहित्यमें वास्तु संबंधी शब्दोंका खुलकर प्रयोग होनेसे तो ऐसा पता चलता है कि कुछ ग्रंथ जिनका अब पता नहीं है, ऐसे रहे होंगे जिनमें तत्कालीन वास्तु और उसके अवयवोंका वर्णन रहा होगा। ऐसा लगता है कि ३-४ सदीमें मंदिरोंकी बनावटमें कुछ खोज बीन आरंभ हो गई थी। कमसे कम रायपसेणिय सूत्रसे पता चलता है कि यान-विमानकी जो राजमहल अथवा देवमंदिरका ही प्रतीक था बनावट कुछ अधिक अलंकृत होती। इसके स्तंभोंकी सजावट लीलामयी शालभंजिका तथा ईहामृग, वृषभ, गंधर्व, मकर, विहग, व्यालक किन्नर, शरभ, कुंजर, वनलता तथा पद्मलता इत्यादि अभिप्रायोंका प्रयोग हुआ है। स्तम्भकी वज्रवेदिका पर विद्याधर युगल उत्कीर्ण होते थे, तथा उनकी सजा घंटियोंके जालसे होती थी। यन-विमानके तीर और सीढ़ियाँ होती थी, जिनके अवयवो यथाणेमा, स्तम्भ फलक;— सूची, संधि तथा अवलंबन बाहुका उल्लेख है। यान-विमानके तीन तरफ तोरण होते थे जिनकी ऊपरी शलाका, स्वस्तिक, श्रीवत्स, नंद्यावर्त, वर्धमान भद्रासन, कलश, मत्स्य और कलशसे सजा होती थी। तोरण स्तम्भमें निशीदिकाएँ होती

थी, जिनमे नागदोमे किंकिणी घटाजाळ तथा चित्रचित्र सृत्रमालाँ लटकी होती थी। कुछ निशीदिकाओमें शालभजिकाँ बनी होती थीं। द्वार, तोरण, स्तम्भ तथा प्राकारकी घनापटमें जाल कटक, प्रासादावतसर, शिखर, जालिका, तिलक, अर्धचन्द्र, पद्मस्तक, तुरग, मकर, किंपुरुष, गधर्व, वृषभ, मिथुन, मघाट, इत्यादिका भी स्थान होता था।

पर गुप्त युगमें वास्तुकलाने एक दूसरा ही रूप ग्रहण किया। उस युगके साहित्यमें वास्तुविद्या सत्रयी शब्दोंका खुलकर प्रयोग हुआ जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है, कि गुप्त युगमें वास्तुशास्त्रका प्रणयन हो चुका था। तथा कमसे कम नागरिक वास्तुकला अपनी काफी परिष्कृत रूपमें प्रकट हो चुकी थी। इस युगमें देवमंदिरोंका मीधासाधा आकार हमारे सामने आ चुका था जिसमें स्थापत्य, मूर्ति तथा अभिप्रायका एक अपूर्व समुलन था। पर जैसे जैसे मंदिरोंकी बनावट पेचीदा होती गई, वैसे ही वैसे स्थापतियों और सूत्रधारोंको स्थापत्यके बहुतसे प्रश्नों पर विचार करना पड़ा, जिसके फलस्वरूप गणित तथा ज्यामितिक आधारों पर भारी भारी प्रस्तर शिलाओंको लगानेके तरीकोंका समाधान हुआ। वास्तुशास्त्रके विकासके साथ ही साथ उसके पारिभाषिक शब्दोंका भी क्रमशः विकास हुआ और मंदिरके अवयवों और अलंकारोंके लिये भी शब्द स्थिर हुए। वराहमिहिरने बृहत्संहिता ५६/१५ में लिखा है।

ग्रंथं माङ्गल्यविहगैः श्रीवृक्षैः स्वस्तिकैर्घटैः
मिथुनैः पत्रवल्लीभिः प्रमथेधोपशोभयेत् ॥१५॥

इसके पहले श्लोकमें द्वारके दोनों द्वारशाखामें द्वारपालोंका चलेख है। माङ्गल्यविहग, श्रीवृक्ष, स्वस्तिक, कुंभ, मिथुन (स्त्री-पुरुष युग्म), पत्रवल्ली और प्रमथ तो गुप्त युगके वास्तु-अलंकारकी विशेषता हैं ही, और इस युगके मध्यप्रदेशके गुप्त मंदिरोंमें पाए जाते हैं। इन अलंकारोंका प्रयोग कुषाण युगमें भी होने लगा था, पर इनका परिष्कृत प्रयोग गुप्त युगमें ही हुआ।

अब एक प्रश्न उठता है कि गुप्तकालके मंदिरों पर बनी हुई गंगा यमुनाकी मूर्तियोंका जिसका कालिदासने यथार्थ च गंगे यमुने तदानीं 'स चामरे देवमसेविपाताम्।' कुमारसम्भ, ७-४२ में उल्लेख किया है। बृहत्संहिताने क्यों छोड़ दिया है? इसका कारण वही हो सकता है कि, तबतक गंगा यमुनाकी मूर्तियोंका तत्कालीन वास्तुमें सम्मत प्रयोग न रहा हो। पर चन्द्रगुप्त द्वितीयके समयमें ज्यामिलक द्वारा निरचित पादताडितकम् (डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल डॉ. मोतीचन्द्र, चतुर्भाषी, पृ. २१२) से तो पता चलता है कि

गुप्त युगमें गंगा-यमुना संज्ञक मंदिर बनने लगे थे। इलोराके कैलासके एक भागमें ऐसाही मंदिर है। पादताडितकम् में (पृ. १७१-७२) देश के महलोंके वर्णनमें एक परिभाषिक शब्दोंकी लंबी तालिका यह बतलाती है कि, इस युगमें भी नागरिक वास्तुशास्त्रकी परिभाषा काफी प्रचलित हो चुकी थी—विट कहता है—

“मैं वेशमें पहुँच गया। अहा, वेशकी वैसी अपूर्व शोभा है। यहाँ अलग अलग बने हुए वप्र (मकानकी कुर्सीका ऊँचा जेजा), नेमि (दीवारोंकी नींव), साल (परकोटा), हर्म्य (ऊपरी तलके कमरे), गोपानसी (खिड़कीकी चोटी), बलभीपुट (मंडपिका और उसकी उभरी छत), अट्टालक (अटारी), अवलोकन (गोख), प्रतोली (पौर), तथा विटंक (पक्षियोंके लिए छतरी) तथा प्रासादों से भरे हुए चौड़े चौक वाले तथा कक्ष्या विभाग में बंटे हुए, सुनिर्मित, जलपूर्ण परिखाओं से युक्त, छिड़काव से सुशोभित, नलकी फूंक से साफ किए हुए (सुषिर फूत्कृत), उत्कोटितलिप्त (टपरियाका पलस्तर किए हुए), लिखित (चित्रकारी किए हुए), स्थूल और सुक्ष्म नकाशियों से सजाए हुए (सूक्ष्म विविक्ता रूप-शत निबद्धानि) बंध-संधि, द्वार, गवाक्ष वितार्दि (वेदिकाका चबुतरा), संजवन (चतुःशाल घरका बड़ा चौक) तथा वीथी और निर्यूहों (निकली हुई वेदिकाओं वाले छज्जो) से संयुक्त थे....”।

इस तालिका में शिखर शब्द उल्लेखनीय है। लगता है गुप्त युगमें किसी न किसी रूपमें शिखर प्रचलित हो चुका था, पर इसका पूर्ण विकास मध्यकाल ही में हुआ। इस बातकी बड़ी आवश्यकता है कि साहित्य में बिखरे हुए वास्तुशास्त्रकी परिभाषाएँ इकट्ठी की जायँ क्यों कि साहित्यकारों द्वारा इन शब्दोंकी परिभाषाएँ लिखरी हुई होती हैं तथा स्वकालीन वास्तुका जीवित चित्र खींच देती हैं। ऐसे जीवित चित्र हमें वास्तुविद्या संबंधी ग्रंथोंमें भी नहीं मिलते क्यों कि उनमें शास्त्रीय पक्ष पर ज्यादा ध्यान दिया गया है और व्यावहारिक पक्ष पर कम। इस दिशामें डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल का प्रयत्न स्तुत्य था; पर अब वे नहीं रहे। इस लिये यह आवश्यक है कि संस्कृत-प्राकृत-अपभ्रंश और प्रादेशिक भाषाओंके साहित्यकी पूरी तरह से खोज वीन करके वास्तुविद्या संबंधी शब्द इकट्ठे किये जायँ। इससे दो लाभ होंगे। पहला तो यह कि वास्तुशास्त्रमें वर्णित पारिभाषिक शब्दोंकी टीकाके रूपमें ये काम देंगे और दुसरी और वे हमें यह भी बताएँगे कि उन शब्दों के प्रयोग के अर्थ एकसे रहे हैं अथवा बदले भी हैं।

प्राचीन शिल्पशास्त्रोंका अध्ययन करना उतना आसन नहीं है जितना कि समझ लिया जाता है क्योंकि न केवल शिल्प संबंधी ग्रंथोंकी भाषा ही दुरूह है परंपरा नष्ट हो जानेसे उनका ठीक ठीक अर्थ भी नहीं लगता। उन पर टीकाएं भी उपलब्ध नहीं हैं, जिससे उनके समझने में कुछ सहारा मिल सके। उदाहरणार्थ डॉ० आचार्य “मानसार” को वास्तुविद्याका आदिम स्रोत मानते

है और उनका विश्वास है कि जो कुछ भी सामग्री उसमें सुरक्षित है, वह प्राचीन और विश्वसनीय है। पर दूसरा मत है कि मानसारकी सामग्रीका संग्रह बहुत बाद में दक्षिण भारत में हुआ और इसमें भी अविक सामग्री केवल शास्त्रीय है जिसका वास्तविकता से संपर्क नहीं है। वास्तव में वास्तु-विद्याकी रोज़ परस से यह पता चल जाता है, कि उत्तर और दक्षिण भारत में वास्तुकी परिवृद्धि अपने ढंगसे हुई क्यों कि इनके विकास में बहुत कुछ 'समानताएँ भी हैं। अब समय आ गया है कि उत्तरी और दक्षिणी शैलियोंका संश्लेषणात्मक विवेचन करते हुए यह दिखलानेका प्रयत्न किया जाय कि किन सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक तथा भौगोलिक परिस्थितियों के कारण उत्तर और दक्षिण भारत के वास्तु में अंतर आया तथा भाषाओंकी भिन्नता होते हुए दोनों की परिभाषाओं में कितनी समानता है।

पर जिस तरह के अध्ययनकी ओर मैंने इशारा किया है वह तक समझ नहीं जब तक श्री सोमपुराजी ऐसे विद्वान जिनका परंपरासे सीधा संपर्क रहा है इस कामको अपने हाथमें न ले क्योंकि विश्वविद्यालयों से निकले विद्यार्थी जिन्होंने प्राचीन भारतीय वास्तुशास्त्र लिया है न तो वे संस्कृत जानते हैं न उन्हें परंपरागत वास्तुकलाका ही ज्ञान होता है। श्री० सोमपुराजी द्वारा "क्षीरार्णव" के अध्ययनसे यह बात स्पष्ट हो जाती है। इस ग्रंथकी भी भाषा समझकर उसका ठीक ठीक अर्थ करना तथा तत्कालीन मंदिरोंके अवयवोंसे उस परिभाषाकी तुलना करना उन्हींका काम है। प्रत्येक संपादनमें पग पग पर उनकी अध्ययनशीलताका पता लगता है। अनेक स्थलों पर रेखा चित्र तथा नकशाने तो सोने में सुहागेका काम किया है। ऐसे अपरिचित कामको हाथमें लेनेमें विद्वान लेखकको किन किन कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा होगा वे ही जानते हैं। पर वे इस कहावतके कायल हैं। प्रारंभ चोत्तमजनाः न परित्यजन्ति। अतः श्री० सोमपुराजी का ध्यान एक बातकी ओर दिलाना चाहता हूँ। ग्रंथमें अनेक परिभाषाएँ आई हैं। उनका बहुधा आपसमें सामंजस्य नहीं मिलता। प्राचीन मंदिरोंके अवयवोंके निश्चित परिभाषाओं के लिये यह आवश्यक है कि शब्दों में एकरूपता लाई जाय। मेरा यह भी सुझाव है कि भारतीय वास्तुकोशका सकलनका भी आरम्भ कर दिया जाय। ऐसे कोशके लिए वास्तुशास्त्रके ज्ञाताओं, पुरातत्त्वज्ञविदों तथा धर्म और समान शास्त्रोंका सहयोग आवश्यक है। सुना है कि बनारसकी अमेरिकन एजेंसी इस ओर प्रयत्नशील है। विद्वानों को चाहिए कि इस कार्यमें एकेडेमी का हाथ बटावें।

प्रिन्स ऑफ वेल्स म्यूजियम, }
पंथ-१ ता. ३-४-६७ }

मोतीचंद्र

आमुख लेखक—माननीय श्री कनैयालाल मा० मुनशीजी

उत्तर प्रदेशके भूतपूर्व-गवर्नर, गुजरातके ज्योतिर्धर,
गुजराती साहित्यमें अस्मिता प्रकटकर्ता

भाइ श्री प्रभाशंकर-ओघडभाइ सोमपुरा अपने भारतके एक सुप्रसिद्ध स्थपति और शिल्पके ज्ञाता हैं । स्थापत्य और शिल्पके बड़े जानकारी सोमपुरा परिवारके वंशानुवंश वारसामें मीली है । पुराण प्रथित भृगु ऋषिके भानजा और प्रभासके पुत्र देवोंका स्थपति श्रीविश्वकर्मा ज्यों भारतके आद्य विख्यात स्थपति थे । यह सोमपुरा परिवार के मूलपुरुष गिना जाता है । और सोमपुरा वंशके उत्पत्ति-क्षेत्र प्रभासपाटन गिना जाता है । यह वंशके महापुरुषोंने गुजरात, राजस्थान, मेवाड़में मंदिरोका शिल्प स्थापत्यके निर्माणमें महत्वपूर्ण हीस्ता दीया है ।

भाइ श्री प्रभाशंकरजी सोमपुरा भगवान श्री सोमनाथके नवनिर्मित महा-प्रासादके प्रमुख स्थपति हैं । स्थापत्यके शास्त्रीय और क्रियात्मक उभय ज्ञान श्री सोमपुराजीके खूनमें है । “ दीपार्णव ” नामक मंदिर स्थापत्यके स्पर्शित महाग्रंथ उन्होंने गुजरातके चरणमें अर्पित कीया है । यह प्रकारके ग्रंथ गुजराती भाषामें प्रथम होनेसे श्री सोमपुराजीकी यह सिद्धि विरल है ।

“ क्षीरार्णव ” के लेखन-संपादन और प्रकाशन द्वारा भाई श्री सोमपुराजी अपने भारतीय स्थापत्य-साहित्यका एक अमूल्य ग्रंथ देश समक्ष प्रस्तुत करते हैं । यह ग्रंथ मूल स्वरूपमें बहुत विशाल होगा । परन्तु उनके सिर्फ बावीश प्रकरणों वर्तमानमें उपलब्ध हुये हैं । उन पर भाइ श्री सोमपुराजी मूलपाठ-सहित, हीन्दी-गुजरातीमें “ सुप्रभा ” नामक विवरणके साथ प्रकाशित कर रहा है । प्रचलित अभिप्रायानुसार यह ग्रंथके प्रणेता श्री विश्वकर्मा था । कालक्रममें यह ग्रंथका कितते खंडो नष्ट हुआ है । परन्तु ज्यों बावीश प्रकरणों भाई श्री सोमपुराजी सविवरण प्रस्तुत करते हैं । इस परसे मालुम पडता है । की मूल ग्रंथ भव्य महाप्रासादों के निर्माणमें स्थापत्यके विविध दृष्टिकोणसे शास्त्रीय शैली प्रस्तुत करते हैं ।

यह अद्भूत ग्रंथमें मूल श्लोकका हीन्दी-गुजराती विवरण है । और वास्तुशास्त्रके विशाल साहित्यमेंसे उल्लेखनीय अवतरण देवों अनेक सुंदर आकृतियों और आलेखनों सहित भाइ श्री सोमपुराजी प्रतिपादित विषयको ऐसे विशदतासे पेश कीया है । की सामान्य वाचकगण भी सरलतासे समज सके ।

“ दीपार्णव ” और “ क्षीरार्णव ” जेसे ग्रंथ भारतीय स्थापत्यके गौरव सम हैं । वास्तुशास्त्रके यह परंपरागत ज्ञानके विशाल वर्गके लिये ज्यों रीतसे विद्वान् श्री सोमपुराजीये सुलभ कर दिया है । इस लिये धन्यवाद—

विद्या कला और सरस्वती त्रिवेणीका उपासक और लक्ष्मी तथा सरस्वतीका
जहाँ सदावास है ऐसे उद्योगपति श्रीमान् श्री श्रीगोपालजी नेवटियाजीका

पुरोवाचन

‘क्षीरार्णव’ के प्रकाशनके सवधमे श्रेष्ठ श्री प्रभाशकरजीने मुझे भी कुछ लिखकर भेजनेके लिये अनुरोध किया है। मैं इस विषयका कोई ज्ञाता नहीं। मैं तो इतना ही जानता हूँ कि श्री प्रभाशकरजी प्राचीन भारतीय स्थापत्यके वेजोड विद्वान हैं। प्राचीन ग्रंथोंके अध्ययनके द्वारा ही नहीं, किन्तु भारतके प्रायः सभी प्राचीन मंदिरों और प्रासादोंको देखकर तथा अनेक निर्माण-कार्य-संपादन कर आपने जो ज्ञान प्राप्त किया है, यह अद्वितीय है।

बनहूँके निकट कल्याणमे अभी पिछले वर्ष एक नया मंदिर निर्माण हुआ है, और इस कार्यका संपादन श्री प्रभाशकरजीके द्वारा हुआ। इस विषयमे मेरा श्री प्रभाशकरजी से निरंतर सम्पर्क रहा और इस बुद्धिमता-विवेकशिलता, सर्वांगिक निष्पृष्टता और निर्लोभताके साथ वह कार्य आपने संपादन किया उससे हम सब बहुत ही प्रभावित हुवे हैं।

श्री प्रभाशकरजीने प्राचीन स्थापत्य सवधी अनेक ग्रंथोंका प्रकाशन किया है, और उसी श्रेणीका “क्षीरार्णव” भी एक है। इस ज्ञानको छपी हुई पुस्तकके रूपमे प्रस्तुत करनेका प्रशस्नीय कार्य श्री प्रभाशकरजीने किया है। आजके प्रगतिशील जगतमे यह ज्ञान बहुत पीछे रह जाता है, फिर भी जब कभी इस ज्ञानके आधार पर निर्माण-कार्य सम्पन्न होता है, तो उसके सजीव रूपमे इस प्राचीन स्थापत्यका महत्व प्रदर्शित होता है।

कतिपय वर्ष पहले मे सोमनाथ मंदिरके दर्शनके लिये गया था और तभी से मेरा श्री सोमपुराजी से सम्पर्क बढ़ता गया। सोमनाथ मंदिरके नव-निर्माण से लेकर आधुनिक जमानेमे बहुतसे मंदिरोंके निर्माण इत्यादिका कार्य प्राचीन पद्धतिके अनुसार श्री सोमपुराजीने सम्पन्न किया है। ऐसा मालुम होता है कि इस प्राचीन कालका कोई एक पुरुष जीन्दा रह गया है। और अगले जमानेकी सेवा कर रहा है। उनके द्वारा प्रस्तुत स्थापत्य भले ही प्राचीन कहा जाय लेकिन आज वह कितना अपूर्व है। कितना बहुमूल्य है, वह देखनेवाले ही जान सकते हैं। मुझे इसका अनुभव हुआ है, इसलिये मुझे ऐसा लिखनेका अधिकार है।

मैं श्री सोमपुराजीके दीर्घायुकी कामना करता हूँ। और भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि उनके हाथोंसे ओर भी निर्माण-कार्य सम्पन्न हो, उन्हें धीर्ति मिले और वे अजर अमर हो।

श्री विश्वकर्मा प्रणित क्षीरार्णव वास्तुशास्त्र ग्रंथकी विषयानुक्रमणिका

क्रमांक अध्याय	विषय अध्याय ९९ (क्रमांक अ० १)	पत्र संख्या
१—९९	क्षीरार्णव-वृक्षार्णवकी ग्रंथ रचना	१
	प्रासाद पुरुषाङ्ग कल्पना १ प्रासादकी चौद जाती ३	३
	वास्तुद्रव्य और उनका फल नारद विश्वकर्मा संवाद प्रश्न	४
	वास्तुगणितका २१ अङ्ग	५ से २७
	अधिक गुण और अल्प दोषवाला वास्तु निर्दोष समझना	२६-२७
	आलेखन अष्टआय (६) नाडीचक्र (२०)	
२—१००	जगति लक्षण अध्याय (क्रमांक अ० २)	२८
	जगति विस्तारमान-भ्रमणि-उदयमान सहस्रलिङ्ग-६४ योगिनी	
	और जिनायतकी जगति विशेष	२८ से ३३
	जगती उदयमें थर विभाग-आगे पगथि	३४
	प्रतिहार और बलाणक मंडप-कक्षासन वेदिका देववाहनका मंडप ३७-४०	
	आलेखनो-पंचायतन (३०) ५२-२४ जीनायतन (३१-३२)	
	जगतीउदय (३५) प्रतोल्या स्वरूप (३६) कक्षासन विभाग (३८)	
	पीठ युक्त प्रतोल्या (३९)	
३—१०१	अध्याय (क्रमांक अ० ३) कूर्मशिला निवेशनम्	४१
	पाषाणकी कूर्मशिलाका मान प्रमाण आकृति (४३) नौशिलाका नाम ४५	
	हेम सुवर्णका कूर्मप्रमाण-शिला स्थापनकी विधिक्रम देव शिल्पिपूजन ४७	
	आलेखन उमा महेश युग्म (५६) पंचमुख विश्वकर्मा (४४) वृषभहस्ति-३२ (४८)	
४—१०२	अध्याय (क्रमांक अ० ४) भिट्टमान	४९
	भिट्टमान प्रमाण और उनका त्रय भिट्ट विभाग और खरशिला यु० ५०-५१	
	आलेखन-भिट्टत्रय-महापीठ (५०) प्रनाल मकरमुख (५१)	
५—१०३	अध्याय (क्रमांक अ० ५) पीठमान प्रमाण	
	१ पीठमान प्रमाण २ मंडोवरदयसे पीठमान-आया हुआ पीठ	
	मानसे आधा या तृतीय भाग पीठ नीयोजन स्थान मानसे करना ५३-५५	
	आलेखन-महापीठ-कामदपीठ और कर्णपीठ (५३) पीठ बाह्य	
	प्रनाल चंदनाथ (५५)	५५
६—१०४	अध्याय क्रमांक अ १ (प्रासादोदयमान प्रमाण) उभणी सांधार ५६	
	प्रासादके छाद्य नीचे दो जंघा	५८
	(३) और पचास हस्तके प्रासादकी बार जंघा करना	
	(४) सांधार निरंधार प्रासादके भित्तिमान	५९
	आलेखन सांधार प्रासादका महा मंडोवर (५७) वृषभयुग्म (६०)	

- ७—१०५—अध्याय (क्रमांक अ० ७) द्वारमान ६१
 नागरादि द्वारमान प्रमाण—ज्येष्ठ मध्यम और ऋनिष्ठमान—आलेखन—
 कन्याण प्रतोल्या—तोरण (६२) सप्तशाखा द्वार और अर्धचंद्र (६६) ६२-६४
- ८—१०६—अध्याय (क्रमांक अ० ८) पीठ थर विभाग ६५-७३
 कामदपीठ विभाग ३३ और १८ दो प्रकार महापीठ विभाग ८५
 और ९० भागका दो प्रकार, -जाड्या कणि प्रासपट्टी—कामदापीठ
 गज, अश्व, नर-पीठका आंतरविभाग ६५ से ७३
 आलेखन—जाडवा—कणिका—प्रासपट्टी—गज अश्व—नरपीठका प्रत्येक
 आंतर विभाग—महापीठ कामदपीठ और कर्णपीठ (६५-७३)
- ९—१०७—अध्याय (क्रमांक अ० ९) मंडोचर थर विभाग ७४-८७
 (१) नागरादि मंडोचर १४४ भागका (२) उमरी पर त्रय
 भूमि उदयका विभागका महामंडोचर भाग २४९ ७५-८७
 (३) मंडोचर २०६ विभागका उनका प्रत्येक थरका आंतर
 विभाग आलेखन साथ ७९-८६
 आलेखन—साधार निरधारका तलदर्शन (७५) छ प्रकारके मंडोचर—
 स्तम्भ समन्वय साथे (७६) द्वय जघायुक्त अलंकृत महामंडोचर
 (७८) जघामें देवस्वरूपादि (८०) सोमनाथका उद्गम—और
 भरणी स्वरूपादि ८१-८२
- १०—१०८—अध्याय (क्रमांक अ० १०) मेरु मंडोचर ८८-१००
 ९०६ विभागका मंडोचर पर (त्रीश हाथका प्रासादको त्रय भूमिका
 विभाग १६० + १२१ + ९६ = ३७७) विभाग पात्रिश हाथका ८९ से
 प्रासादके चार जघा भूमि करना (चालिश हाथके पांच जघा—९२
 भूमि करना प्रत्येक छाव नीचे दो दो जघा और भूमि—९३ करना
 १ से १२ जघा १० हाथके प्रासादको करना चार जघाका
 नामकरण कहा है (९१-९६) ९५-९६
 साधार—प्रासादका मंडोचर साथ अंदरके स्तम्भ छोटका समन्वय ९९
 छना परका प्रहारका १९ आंतर विभाग (श्लोक ६-८) ९२
 आलेखन दश दीप्पाल (८९-९०) दशावतार विष्णु (९१) प्रहार
 (१९), चार भूमि जघाका मंडोचर (९४) सोमनाथका पुराना
 मंडोचर (९१) सोमनाथ महाप्रासाद और द्वारिकाका तलदर्शन
 (९७-९८) साधार—निरधार प्रासादका मंडोचरके साथ स्तम्भका
 छोटका समन्वय (९९) १००
- ११—१०९—अध्याय (क्रमांक अ० ११) गर्भगृहोदय—और द्वार शाखा विभाग १०१
 गर्भगृहका घाच स्वरूप (१०१) स्तम्भ छोड़ उदय विभाग १०२

- प्रनाल विचार (१०३) त्रिपंच-सप्त-नवशाखा तल विभाग १०४ से ८
 उदम्बर और अर्धचंद्र-शंखोद्वार शाखामें परिवार-देवोंका रूप करना १०९ से १३
 आलेखन—गर्भगृहका आंतर और बाह्य उपाङ्गो चार प्रकार-१०१
 स्तंभ छोड़ विभाग (१०२) त्रि-पंच-सप्त नवशाखाका तलदर्शन (१०५)
 त्रिशाखा द्वार-उदम्बर अर्धचंद्र पंचशाखाका अलंकृत द्वार उदम्बर अर्धचंद्र (१०६)
 सप्त-नवशाखाका तलदर्शन और अर्धचंद्र १०९-१९
 द्वारशाखाका रूपवाला ठेका और उतरंज विभाग ११३
- १२—११०—अध्याय (क्रमांक अ० १२) प्रतिमा-पीठ लिङ्गमान १५१
 द्वारोदयका विभागसे पीठ और उर्ध्व प्रतिमाका तीन प्रकारका
 मान और शयन प्रतिमा विस्तार प्रमाण द्वार मानसे—राजलिङ्ग ११५-१८
 द्वार विस्तारसे चतुर्मुख प्रतिमा प्रमाण ११९
 आसनस्थ-उर्ध्वस्थ प्रतिमामान टीप्पणमें गृहयोग्य पूजा प्रतिमामान १२९-२०
 देवपीठ सिंहासनोदय थर विभाग (आकृति १२२) १२१-२२
 आलेखन—वराह-और ललाट तिलक शिवका स्वरूप विरालिका युक्त १७-१८
- १३—१११—अध्याय (क्रमांक अ० १३) देवता द्रष्टिपद स्थापन १२३
 गर्भगृहना द्वारोदयका ३२ विभाग देवताद्रष्टि स्थापन द्रष्टिवेध १२३-२५
 गर्भगृहार्धमें २८ विभागमें देवस्थापन १२६
 टीप्पणमें द्रष्टि और देव स्थापन विभागके बारेमें पृथक पृथक
 ग्रंथका मतमतांतर (१२४ से १३६) देव द्रष्टि और पद स्थापन
 विभाग दर्शक पृथक पृथक ग्रंथोका मत मतांतरका कोष्टक १३५-२६
 आलेखन—दशावतार विष्णुका १० स्वरूप (१२७-१३०) अग्निदेव-१२९
- १४—११२—अध्याय (क्रमांक अ० १४) शिखर-भद्र नासक सरवेध १३७-४२
 त्रि पंच सप्त नव नासक १३७-४० शिखरोदय त्रण प्रमाण १४०
 शिखरकी मूल रेखाका प्रमाणसे स्कंध प्रमाण और उनका उपाङ्ग विभाग १४०-४१
 सरवेधका महादोष १९१-९२ आलेखन—नासक १३९
- १५—११३—अध्याय (क्रमांक अ० १५) शिखराधिकार १४३-७३
 शिखरोंका विविध आकार अेकी तल पर होता है—निरंधार
 और सांधार प्रासादमें शिखरकी मूल पायचा कहाँ मिलाना १४५
 शिखरको विस्तारसे उदयका तीन प्रकार एको परि दुसरा उरु-
 श्रृङ्गका उदयका विभाग प्रमाण १४६
 शिखरका पायचासे स्कंधका प्रमाण शिखरकी मूलका विस्तारसे
 चतुर्गुण सप्तवृत्तमें सवाया शिखरकी रेखा आँकना १४७
 शिखरका मूलमें दश भाग और स्कंध पर नव भागका उपाङ्ग
 करना स्कंध पर आमने सामने प्रतिरथके कौनके बराबर आमल
 सारा विस्तार करना १४८-१४९

साधार प्रासादके घालजर (१५०) स्वधहीन और स्वधवेधदोष १५१
 छाद्योर्ध्वसे शिखर स्तम्भका २१ विभागमें शुक्लनासका पचविध प्रमाण १५०
 कोकिला-लक्षण-(प्रासादपुत्र) १५४ आमलसारा विभाग १५५-५६
 शिखरका स्तम्भके मोण पर तापम-या शिव या जिन मूर्ति रखना १५७-५९
 ध्वजादंडका शिखरगर्भे निश्चित स्थान, ध्वजावर स्तम्भवेधका प्रमाण
 ध्वजादंडके साथ स्तम्भीका ध्वजावतीका प्रमाण और आठति
 कलश (डंडा) प्रमाण प्रासादसे $\frac{1}{2}$ रखना उनका विभाग (१×६) १६१-६२
 प्रासाद पुरुषका प्रमाण-आठति-धृत कलश साथ आमलसारा में स्थापनविधि १६३
 ध्वजादंडका मान प्रमाण और दैर्घ्य प्रमाणका पृथक् पृथक् मान,
 पर्व=अर्धात् गाला और प्रथी=मकरणी सम विषम रखनेका विधान
 शिवशक्तिका दंड पर्व, ध्वजदंडकी मूर्ति-पाटलीका प्रमाण,
 श्रेष्ठ दंडमष्ट, पताका प्रमाण, ध्वजहीन शिखर रखनेका दोष १६४-से १७२
 यजमान-स्वामि-प्रासाद पूर्ण हुये स्थपतिसे करनेकी प्रार्थनाशुभाक्षिप १७२-१७३

१-आलेखन शृगोर्ध्वशृंग उरुशृंग उरुशृंग रखनेका विभाग १४४

० आमलसारा विभाग ३ (१४८) १४८ दूत ४ साधार-निरवार
 प्रासादका मूल शिखरका उपाग घालजर-१५१ ६ रेखा-१
 स्कन्धान्त-२ घटान्त-३ शिखान्त (१५२) ७×१४ विभाग आमलसारा
 १५१ ध्वजाधर-स्तम्भिका-ध्वजादंड-पताका पाटली (१५८) ७ कलश
 विभाग १×६ और १५×१० सुवर्णका प्रासाद पुरुष (१६४) सारा शिखर
 विभागे ध्वजाधारका स्थान के साथ ध्वजदंड पाटली पताका (१६५)
 ११ छाद्योर्ध्व शिखरकी रूपवात्री जघा, भद्रके अलटुतगवाक्ष १६७

१६-११४-अध्याय (क्रमांक अ० १६) अथ रेखा विचार १७४-८१

पचमंडसे उन्नतिश खट तकका रेखाका १५ भेद (१७४) चारसो
 पेंतीस कलाभेदो
 शिखरका पायचा और स्तम्भका फालना विभाग आमलसारा प्रमाण १७५-७६
 अजितादि २५ रेखाका नाम-आकार-और खट पच-सप्तनव
 नासक विभाग-सरतर-वारिमार्ग आलेखन नासक विभाग १७७-८१

१७-११५-अध्याय (क्रमांक अ० १७) स्तम्भ (मान प्रमाण और) लक्षणधिकार

प्रासाद माने स्तम्भमान-दुसरा पचविध प्रमाण-तीसरा समा-मटपका मान ८२-१८३
 पाच प्रकारका स्तम्भका तलदर्शन और नामकरण १८५-८७
 स्तम्भका घाट-घटपल्लवयुक्त देवानना और इलिका तोरणायुक्त-मदलयुक्त १८६
 प्राशिव या नृत्यमटपका पीठ वधका तीन प्रकार और आठति । १८८-८९
 तीन, पाँच या सात नव भूमि उदय मडप चतुर्मुख प्रासादके
 चारों ओर मटपों करना । १८९

चतुर्मुख महाप्रासादों जो देशमें न हो वहाँ सूर्य विना दिन और चंद्र विना रात्री समान जानना । १८९

मंडपकी जंघा-या वैदीकादिमें-शीवका पंच स्वरूप-लास्य तांडव करना । वैतालः विविध वार्जित्र युक्त नारद स्तुवरु सिद्धि-बुद्धि सहीतका नृत्य गणेश ऋषि-मुनीयों-गोपीयों युक्त कृष्ण-स्त्री पुरुषके युग्म स्वरूपोंमें नृत्य करते इन्द्रादि, दिग्पालों, सूर्यादि ग्रहो, वारा राशि, २७ नक्षत्र, आठ आय, आठ व्यय, नव तारा, सात स्वर-छ राग, छत्रीश रागिनीयाँ, वारह मेघ-यक्ष, गंधर्व, विद्याधर, नाग कीन्नर आदि अनेक देव-देवाङ्गनाओं, इलिकातोरण, गज, सिंह, विरालिका साथ करना । १९१-१९७

आलेखन—घटपल्लवयुक्त स्तंभ-मदल-मकरयुक्त तोरण १८४-९६-९८ मकर तोरण तीन प्रकार-१ तीलक, २ हींडोलक, ३ गवांलुक १९६-९७ स्तंभोंका पंच तलस्वरूप (१८५) मंडपके पीठके तीन प्रकार १८९ रुपस्तंभों तोरण और द्वार चोकी चतुष्किका १९० कर्णाटकी देवाङ्गना १८७ शिवस्वरूप चार (१८९) रामपंचायतत १९२ पंचमुख हनुमंत-पंचमुख गणेश १९३ । आदित्य-सूर्य १२ स्वरूप नवग्रह १९५

१८ ११६ अध्याय (क्रमांक अ० १८) मंडपाधिकार १९८-२३७

- मंडप क्या क्या हेतुके लीये करना ? १९८ १९८
- प्रासादके प्रमाणसे १ सम २ सवाया ३ डेढा ४ पोनेदो गुने ५ दोगुने ६ सवादो गुने ७ ढाई गुने ऐसे सात प्रकार मंडप हस्त मानसे करना । १९८-१९९
- शिखरका शुकनास से मंडपोर्ध्व घंटाका समन्वय २०० २००
- सांधार निरंधार प्रासादसे मंडपका उदयका तीन प्रमाण १ उत्तरज्ञोदय २ छज्जोदय ३ भरणी उदय २००-२०२
- वितान-धुमट छतका मुख्य तीन भेद १ समतल २ उदितानी ३ क्षिप्तानुक्षिप्त वितानका घाटका ६६ विभागे थरो २०३-२०९
- (१) पुष्पकादि २७ मंडपों १२ से ६६ स्तंभ प्रमाण २०९-२१२
- (२) सुभद्रादि प्राग्रिव वारा मंडप । ४ से २८ स्तंभ प्रमाण २१३
- (३) मेरवादि २५ मंडप ६६ से ११२ स्तंभ प्रमाण, दो से पाँच भूमि उदय २१४-१९
- (४) आठ गुड मंडपके नाम और स्वरूप (५) शिवनादि मेघनादि महामंडप २२३ गर्भगृह मंडप और चतुष्किका भूमितल उत्तरोत्तर निम्न रखना २२५
- पंचविध वलाणक नाम स्वरूप स्थान और प्रमाण उत्तरङ्ग जगतिके आगे मंडप या चोकि, विषय पाट छाद्य कहा मिलाना २२६-३०
- संवरणाधिकार-अङ्ग विभाग घंटा-कूट संख्यामान कोष्टक (२६३) २३१-३७
- सांधार निरंधार प्रासादके मंडपका कक्षासन युक्त स्तंभादि उदयके ३ मान २०८

आलेखन—चतुष्क्रिया छत (२०३) क्षिप्तानुक्षिप्त छत (२०६) कोल

गजतालुयुक्त चितान गुम्फज मडप तलदर्शन (२०४) २०६-७

१ पुष्पकादि १ से २७ मडपका तल २०९ २ प्राग्नि द्वादश मडप तल २१३

३ मेरवादि मडप नाम स्तम्भ सख्या कोष्टक तथा ६ से ३६ स्तम्भ मडप रचना २१७

४ गूढ मडप जप्टका तलदर्शन शिवनाद मेघनादक मडप तल २२०-२४

१ लक्ष्मीनारायण-योगेश्वर विष्णु योगेश्वर शिव तोरण २२५

२ शिव-विष्णु ब्रह्मा-त्रिमूर्ति तोरण २२७

चतुः शिव परिकर तोरण (२२९) सप्त मानुकाएँ २३२ स्वरणा २३२-३६

१९ ११७ अध्याय (क्रमांक अ० १९) साधार भ्रम निरूपणाध्याय २३८-२४७

एक, दो, तीन भ्रम उत्पन्नका प्रासाद प्रमाण १० से २५

हाथका प्रासाद को एक भ्रम करना भ्रम और भित्तिप्रमाण २७ हाथके

प्रासादको दो भ्रम, ज्येष्ठ, मध्यम, कनिष्ठमान भ्रम और

भित्तिप्रमाण तीन भ्रमका मान उनका भ्रम और भित्तिप्रमाण। २३८-२४३

भ्रमयुक्त प्रासादमें शिवादि देव गणेश लज्जलिङ्ग-सूर्यादि नयग्रह

नारदादि रूपि पाङ्गो, युधिष्ठिर, भैरव, ब्रह्माके प्रासादमें

यक्षिष्ठादि ऋषिका स्वरूप करना। २४३-२४७

आलेखन—साधार प्रासाद तल एक भ्रम (एक मुख) तल (२३८) द्वय भ्रम

त्रयमुख (२३९) द्वय भ्रम चातुर्मुख (२४०) त्रय भ्रम चातुर्मुख २४२

ब्रह्मा महोपासुर मर्दिनी सूर्य-विष्णु श्रुतेश्वरी शारदा सरस्वतीका वार स्वरूप २४२-४५

भ्रम, भैरव, क्षेत्रपाल, शिव उमा स्वरूप ललाट उर्ध्व तिलक २४६

शिव ताडव चतुः स्वरूप। २४७

२० ११८ अध्याय (क्रमांक अ० २०) साधार चातुर्मुख प्रासाद लक्षण २४८-२७७

नारदजीका प्रश्न चतुर्मुख जीन भवनका श्लोक ३ से १० अस्पष्ट

अठराह तल विभाग पर २६९ श्रृंगका मानतुल्य प्रासाद २५०

दशाह तल पर मातङ्ग प्रासाद २५२

पीठ और मडोवर विभाग ४८॥ का एक जघाका कनिष्ठ मान

पीठ और मडोवर विभाग ५३॥ का दो जघाका मध्यमान

पीठ और मडोवर विभाग ७० का तीन जघाका ज्येष्ठमान २५३-२५५

जगतिका रीधे व्यासका पद-कोठा परसे जिनायतनकी सकलन

जगदीका २८ x २५ खड्ड पदसे ८४ जीनायतनका जिणमाला २५५-२५८

द्वारमानसे चातुर्मुख प्रतिभामान और दृष्टिमान-दृष्टिविध दोष २५९-६२

आलेखन—१ मानतुल्यशिखर २ मडोवर कनिष्ठमान ४८॥ भाग ३ म यमान

५३॥ भाग (४) ज्येष्ठमान मडोवर द्वयजघा भाग ७० (५)

८४ जीनायतन जिणमाला तल (६) जीन प्रतिमा विभाग (७)

जीन प्रतिमा परिकर विभाग (८) समवसरण (९) अष्टापद।

२१ ११९ अध्याय (क्रमांक अ० २१) केशरादि वैराज्यकूल प्रासाद २६४

अठाई-दशाई तल विभागोंका २५ प्रासादोंका नाम	२६५
अठाई तलविभक्तिका ११ शिखर ।	२६७
दशाई तल विभागके १४ चौदा शिखर ।	२७१
शृङ्ग श्रीवत्स मिश्रक रुचक-तिलक	२७५

आलेखन केसरी शृंग श्रीवत्स तिलक मंजरी कूट	२६५
केसरी शृंग सर्वतोभद्र नंदन नंदशाली नंदीश मंदिर	२६७-६८
वैराज्यकूल अठाई केसरी प्रा० तथा सर्वतोभद्र प्रा०	२६७
वैराज्यकूल अठाई मंदिर प्रा० तथा श्रीवत्स प्रा०	२६९
वैराज्यकूल दशाई नंदन प्रा० २७२ पृथ्वीजय प्रा०	२७२-७३
वैराज्यकूल दशाई विमान प्रा० २७४ वज्रक प्रा०	२७४-७६

२२ १२०—अध्याय चातुर्मुख महाप्रासाद स्वरूपम् २७८

क्षेत्रके घट विभाग-कोठा करके देवकुलिकाओंकी रचना करना २७८-७९

बेतालीशाई तल विभक्ति पर चंद्रशाल प्रासाद भ्रमयुक्त शिखर २८०

चातुर्मुख प्रासादने चारों ओर मंडपो-उनका तलविभाग पीठ २८२

चोबिस और बावन जिनायतनके चंद्रवक्र नाम २८३

जगती पद-खंड विभाग करके ८४ चौराशि जिनायतन

महाधर साथ करना मंडपो मेघनाद करके नालिमंडप और २८४

आगे सिंहद्वार चातुर्मुख-मानतुङ्ग प्रासाद २८५

मध्यका चोमुख प्रासादको चारों ओर एक मंडप गवालुकासे

छाद्य हो और नागर मंडोवर-मूल चोमुखको करके चारों ओर अस्सी

८० स्तंभो प्रदक्ष्णमें करके मध्यकी पंक्ति चोविश चैत्यकी और

चारों कोण पर तेरा तेरा चैत्य करके पूरे बावन हों कोनेके

अंतरसे चारों और छः महाधर करना यह रचनाको ताराउली

नाम समझना २८६

भद्रका कोठाका तीन मुखभद्रको रम्य ऐसो सुभद्रा नामकी वेदिका

करनेसे उनका नाम किरणाउली समझना २८८

बावन जिनायतनमें दो मंडप आगे वेदिकाके आगे पगथी पंक्ति

हैं । वहीतेर जीनायत बाह्य हो वेदिका युक्त मध्ये मंडप हो

आगे नालिमंडप वेदिकावाला १५ भागका कर्ण २५ भद्र हो

ऐसे स्वरूप लक्षणवाला सौभाग्यिनी नाम समझना २८९

ब्रह्मस्थानका पच्चीश खंडमें चातुर्मुख प्रासाद अंजोपाज्ञोवाला करना उसके

सौ खंड-कोष्ठाकी मध्यमें चारों ओर मेघनाद द्वीभूमि मंडपो करना २९०

बहीतेर जीनायत नालि मंडपयुक्त करना उनमें मेरुकी रचना २९१ से

करना २८५ खंड-कोष्ठमें चार खंड मुखाग्रे बाह्य वेदिका

शुक्त करना ऐसा चातुर्मुख चार भूमि उदयना करना आगे	
नाली मटप दो तीन भूमि उदयका वेदिका साथ करना-सर्ग	
अग्ने पगथीकी पक्ति करना	२९०
चातुर्मुख प्रासादको एकसे नव जघा करना चारो ओर मिश्रमेघ	
ओर सिंहाद मटपो करना	२९३
भाठसे पदरा हाथके प्रासादके भ्रममें दो भूमि योजना करनी	
एक भूमिसे बारह भूमि तक जघा करना	२९४
भीष्ट १४ भाग पीठ ४७ भागका उर्वे प्रथम भूमि मडोवर भरणी तक ४५॥	
२४ दूसरी भूमि छज्जा २९	२९
१९ तीसरी भूमि भरणी तक २४	२४
१८ चौथी भूमि छज्जा तक २६	२६

१२४॥

जघामे लोकपाल दीगपाल देवाङ्गनाओका स्वरूप लास्य ताडवादि २९७
 त्रय ताल सह वादित्र साथ करते हैं देवो आयुध बाहन साथ
 त्रय करते हैं जैसेके उत्पन्न हो रहा हो, छ और आठ हाथ-
 धाला षेय स्वरूपी इद्र रभाके साथ अग्नीदेव उर्वसी साथ यम
 तिलोचना साथ क्षेत्रपाल क्षची, वरुण, रभा, वायुदेव मनुष्योपा,
 ईश मेनका साथ करना । प्रासादके इशान कोणसे मेनकादि
 देवाङ्गनाका स्वरूप करना ३००

१ मेनका २ लीलावती ३ त्रिषिचिता ४ सुदरी ५ शुभागीनी ३०१ से
 ६ हसाउली ७ सूर्यकला ८ कर्पूरमजरी ९ पद्मिनी १० गूढ
 शब्दा (पद्मनेत्री) ११ चित्रिणी १२ चित्रवत्तभा पुत्रवत्तभा
 १३ गौरी १४ गावारी १५ देवशायी १६ मरिचिका १७
 चद्रावली १८ चद्ररेखा १९ सुगन्धा २० क्षनुमर्दिनी २१
 मानवी २२ मानहेसा २३ स्वभावा २४ भावमुद्रिका २५
 मृगाक्षी २६ उर्वशी २७ रम्भा (उत्तान) २८ भुजधोपा २९
 जया ३० निज्या (मोहिनी) ३१ चद्रवक्रा (तिलोत्तमा) ३२
 कामरु (लोक ११३ से १३४) ३१७

यह वत्तीस देवाङ्गनाओंके नाम स्वरूप लक्षण, उनकी द्रष्टि निम्न
 रूपके नृत्य करती करना । कई देवाङ्गनाका स्वरूप एकसे
 अधिक कोन कोनका करना । ३०३ देवाङ्गना दीगपाल यक्ष गर्ध्व
 स्यादि नवग्रहो चातुर्मुख प्रासादमें जघामे वितानमें (गुम्बजमें)
 वेदिकामें करना ३१३

देवाङ्गनाओंका स्थान स्वर्ग है । दुगरी द्योतवनम, तीसरा मही-
 तलके चातुर्मुख प्रासादमें स्थूल देहे वसेली है लोक १०३ पत्र ३०८
 दो छज्जा और चार जघाना मडोवर ३१६
 कनली मान प्रमाण १ चित्रा २ विचित्रा ३ अभया ४ रूपचित्रा ३१६
 साधार निरधार प्रासादके भित्तिमान ३१७

चतुर्मुख प्रासादका शिखरमें चारों ओर सुंदर शुकनास दो तीन भूमि पर करना एक दो ऐसे वार भूमि तक जंघाका क्रमयोगसे करना ।

३१८

गर्भगृहका अर्धमें पडांश ज्येष्ठ, सातमेंशे मध्य-दशांश कनिष्ठमान ? चतुर्मुख प्रासादके त्रयखंडमें एक खंड भ्रमका-मंडपो त्रण खंडपदका या ववचित नीवलता करना दो मंडपके बीच एक पदका अंतर रखना मंडपके द्वी भूमिमें तीन ओर वेदिका करना उससे आगे रंङ्गमंडप डेढ भूमि उदय करना आगे पांच पदका वलाणक मंडप करना-उसके नाली मंडपना अग्र भागमें द्वयभूमिमें वेदिका करना ऐसे चारों ओर करना । ३१८-३१९

निर्गमवाला नालिमंडपके भद्रमें तीन ओर तीन द्वार करना ।

चातुर्मुख प्रासादकी प्रदक्षणामें ९६ देवकुलीका चार मूल और आठ महाधर-मीलके एकत्र १०८ जीनायतन हुअे ।

३२०

दुसरा प्रकार नालि मंडप छोडकर मेघनाथ मंडप आगे एक पद छोडके दुसरा मंडप और उससे आगे एक पद छोडके तीसरा सभ्रम मंडप बनाना उसमें समवसरणकी रचना करना-उसमें मूलनायकसे छोटी प्रतिमाको पधराना । मंडपका अंतर सुधीमें भूमियुक्त मंडप करना महाधर प्रासादके सन्मुख समवसरणकी रचना करना ऐसी चारो ओर बुद्धिमान शिल्पीसे करना मंडपोकी चारो ओर १०८ जीनायतन दुसरा महाधरके मध्य समवसरण ऐसो दो महाधरके बीच समवसरण ते मान युक्तिसे दोष रहित करना प्रदक्षणाकी पीछली पंक्तिमें महाधरकी दुसरी पंक्ति करना ऐसे जीनायतनका भ्रममें १०८की संख्या करना ।

आलेखन—चातुर्मुख चंदशाल प्रासादके शिखर

२८१

चंदशाल प्रा आगे चारो और ९६×९६ स्तंभका मंडप तलदर्शन २८७

मानतुंङ्ग प्रा० आगे २८ विभागके १०४ स्तंभोका मंडपका तलदर्शन २८४

चातुर्मुख १३×४ = बावन जिनायतनका तलदर्शन २८७

किरणाउलि-पंदरा भाग, ९६ स्तंभका मंडप २८८

भीट और ४७ उदयभाग महापीठ २९६

देवाङ्गना ३२ मेनकादिसे कामरूप आदि ३२+८=४० देवाङ्गनाओ स्वरूप ३०४-१३

द्वय छाद्य और चार जंघायुक्त मंडोवर ३१५

१०८ देवकुलिकाका महा चातुर्मुख प्रासाद तलदर्शन ३२१

इति सविस्तर अनुक्रमणिका

देव स्तुति और ग्रंथ संपादक परिचय

गणाधिप नमस्कृत्यं देवीं सरस्वतीं तथा
ब्रह्मा विष्णु महेशादि सूर्य दिनकर सदा ॥१॥
शिल्पशास्त्र प्रकतरा विश्वकर्मा महामुनिम् ।
मनसा वचसा नत्वा ग्रन्थारम्भं करोमहम् ॥२॥

गणोंके अधिपति श्री गणेश, सरस्वती ब्रह्मा, विष्णु महेश और सूर्यको नमस्कार करके शिल्पशास्त्रोंको उत्कृष्ट करनेवाले महामुनि श्री विश्वकर्माको मानवचरसे वंदन करके मैं प्रभाशङ्कर इस ग्रंथ पर सुप्रभा नाम्नी भाषा टीकाको प्रारम्भ करता हूँ ।

घंशेस्मिन् रामजी शिल्प ख्यातोऽय वास्तुकर्मणि ।
तस्मिन्नैवान्वये जात प्रभाशङ्कर पञ्चम ॥३॥
जगत् विख्यात विश्वकर्मा नारद संवाद रूप ।
क्षीरार्णव ग्रंथ नामाऽय प्राणकृत शिवः ॥
सुप्रभा नाम्नी टीकाया ग्रथेऽस्मिन् हि करोति सः ॥३॥

भारद्वाज गोत्रमें श्री रामजीभा जैसे वास्तुकर्ममें विख्यात स्थपति पूर्वकालमें हो गये इसी कुलमें श्री जोषडभाइके कनिष्ठ पुत्र प्रभाशङ्कर स्थपति पांचवी पीढ़ीमें हुए । जगत विख्यात विश्वकर्मा और नारदजीका संवाद रूप क्षीरार्णव नामक शिल्पशास्त्र पर सुप्रभा नाम्नी भाषा टीका ऐसे विख्यात कुलके स्थपति श्री प्रभाशङ्करने लिखी है ।



॥ ग्रंथ संपादकको अभिनन्दन पत्रिका ॥

आदि देव महादेव कृपापात्रो महातनुः ।
ओषडजी महाप्राज्ञ शिल्पशास्त्र विशारद ॥५॥
कैलासस्य महामेरो जीर्णोद्धार कारकः ।
प्रभाशङ्कर नामाय मान्य केपा न कारकः ॥६॥
सत्य सत्य पुनः सत्य सत्यधर्म प्रवर्तकः ।
वृक्षार्णव शिव प्रोक्ते क्षीरार्णव यतनो हरिः ॥७॥
ग्रन्थानां शिल्पशास्त्रस्य पुनरुद्धार कारकः ।
आदि देव नमस्तुभ्य नमस्तुभ्य विशारद ॥८॥

आदिदेव श्री महेशको उपापात्र महाप्राज्ञ ऐसे श्री जोषडभाइके सूत महाप्राज्ञ शिल्पशास्त्र विशारद श्री प्रभाशङ्करभाई सोमनाथजी महामेरु कैलासके जीर्णोद्धारकारक है । श्री प्रभाशङ्करजी ससारमें कीसके मान्य नहीं है । जपे तु सजके है । यह सत्य है और बारबार सत्य है कि शिवजी द्वारा रचित वृक्षापीव और हरि रचित “क्षीरार्णव” सत्यधर्मके प्रवर्तक है । श्री प्रभाशङ्करभाई शिल्पशास्त्रके ग्रन्थोंके पुनरोद्धारक है । हे ! आदि देव ! आपको नमस्कार हो और हे ! शिल्प विशारद ! आपको भी नमस्कार है ।

शुभेच्छक स्नेहायिन मनसुखलालजी सोमपुरा ।



सुप्रसिद्ध भगवान सोमनाथ मंदिर पर स्व. जामसाहेब भूतपूर्व गवर्नर श्री के. एम. मुनशीजी
बंबईके भूतपूर्व गवर्नर श्री प्रकाशजी सोमनाथ मंदिर के निर्माता स्थपति प्रभाशंकरजी
और मंदिर के शिल्पकलाकार भगवानजी भ. सोमपुरा



श्री कृष्णचन्द्र प्रभुका देहोत्सर्ग स्थान पर-संपादक स्वपति प्रभाशकर भूतपूर्व
राष्ट्रपति डॉ राजेन्द्रप्रसाद की और स्व श्री जामसाहेब प्रभासपाटण

श्री गणेशाय नमः

श्री सरस्वत्यै नमः
श्री विश्वकर्मा विरचित

श्री विश्वकर्माणे नमः

॥ क्षीरार्णव ॥

वास्तुशास्त्रम्

KSHIRARNAVA

—सुप्रभानाम्नी भाषाटीका—

(अध्याय० ९९) (क्रमांक अ० १)

श्री विश्वकर्मावाच—

वृक्षार्णवं शिव प्रोक्तं क्षीरार्णवं स्ततो हरिः

हरिहरोक्तं तं श्रेष्ठं ग्रंथाकारे प्रवर्तते ॥१॥

श्री विश्वकर्मा कहे छे. शिवजीने वृक्षार्णव कहेलुं. अने विष्णुने क्षीरार्णव कहेलुं ते शिव अने विष्णुना मुण्ठी वहेलुं ते उत्तम ग्रंथना आकारे जगतमां प्रवर्तते. १.

श्री विश्वकर्मा कहते हैं । शिवजीने वृक्षाणवि कहा था और विष्णुने क्षीरार्णव कहा था । शिव और विष्णुके मुखसे निकला हुआ वह शास्त्र ग्रंथ के रूपमें जगतमें प्रचलित हुआ ।

प्रासादो देवरूपः स्यात् पादौ पाद शिलास्तथा

गर्भश्चैवोदरं ज्ञेयं जंघा पादोर्ध्व मुच्यते ॥२॥

स्तंभाश्च जानवो ज्ञेया घंटा जिह्वा प्रकीर्तिता

दीपः प्राण रूपो ज्ञेया हृषाने जल निर्गतः ॥३॥

ब्रह्म स्थानं यदैतच्च तन्नाभिः परिकीर्तिता

हृदयं पीठिका ज्ञेया प्रतिमा पुरुषः स्मृतः ॥४॥

प्रासादनी रचनाने देव शरीर रूप कह्युं छे. पायानी शिला पग रूपे, गर्भगृह = उदर = पेट रूपे, पाया परनी जगती नांघ रूपे, थांसला ढींगण, घंटा लल रूपे, दीपक-दीवो प्राण रूपे, शुद्ध रूपे अनाल = परनाण, देवतुं अक्षस्थान नाभि, पीठिका रूपे हृदय, अने प्रतिमा ओ पुरुष रूपे जानलुं. २-३-४.

प्रासादकी रचना को देव शरीररूप माना गया है । नींवकी शिलाको पाँव के रूपमें, गर्भगृहको उदर के रूपमें, नींवकी भूमिको जंघाके रूपमें, स्तंभ को

जानुके रूपमे, घटाको जिह्वाके रूपमे, दीपकको प्राणके रूपमे, प्रनाल को गुदाके रूपमे, देवके ब्रह्मन्थाको नाभि पीठिकाको हृदयके रूपमे और प्रतिमाको पुरुषके रूपमे जानना । २-३-४

पादचारस्त्वहंकारो ज्योतिस्तच्चक्षुरुच्यते
तद्धर्मं प्रकृतिस्तस्य प्रतिमात्मा स्मृतौ बुधैः ॥५॥
तलकुंभादधोद्वार तस्य प्रजननं स्मृतम्
शुक्रनासा भवेन्नासा गणाक्षः कर्णउच्यते ॥६॥
कायापाली स्मृतः स्कंधे ग्रीवा चामलसारिका
कलशस्तु शिरोज्ञेयो मज्जादित्पर संयुतं ॥७॥

पगने स याग अङ्कशर, दीपने प्रकाश यक्षु इधे, उपग्ने लाग तेनी प्रकृति, प्रतिमा आत्मा इधे बुद्धिमाने जलुवा क्षाग्ना कुलीना तण्णी नीचेने लाग ते लिगइधे जलुवे शिभग्ने शुक्रनाभ ये नाभिकाउप, गवाक्ष अशुभा डानइप, शिभरने स्कंध ते भलो अने आमलसागनु गणु ते गणु कर्ण इप, आमलमाराने डण्ण ते भस्तक इधे जलुवु आमडी अने तेनी नीचेने लाग ते युनानु भ्लाष्टर जलुवे

पद मचारको अहकारके रूपमे, दीपकके प्रकाशको चक्षुके रूपमे उर्ध्वभागको उसकी प्रकृतिके रूपमे, प्रतिमाको आत्माके रूपमे बुद्धिमानोको समझना चाहिये । द्वारके कुभीके तलसे निम्न भागको लिङ्गके रूपमे जानना । शिररके शुक्रनासको नासिकारूप, झरोंखों को कानरूप, शिरर के स्कंधको रजभा, और आमलसारा के कठको कठरूप, आमलसाके कलशको मस्तरूप जानना । और उसके निम्न भाग को, जो सडीके प्लास्टर का है, चमडी समझनी । ५-६-७

मेदश्च वसुधा विद्यात् प्रलेपो मासमुच्यते
अस्थिनो च शिलास्तस्य स्नायुकीलादयः स्मृताः ॥८॥

चक्षुषि शिखरा स्तस्य ध्वजाकेश प्रकीर्तिताः

एव पुरुषरूपं तु ध्यायेन्च मनसा सुधीः ॥९॥

पृथ्वी मेद इधे, मास युनाने लेप, डाडकाओ गिलाइधे, भीला अने पाँउ-कुंश ते स्नायुउधे यक्षुउप गृग-शिभरीओ, ध्वज डेगइधे, ये नीते, आमाहना सर्व अगोन पुरुषइधे मनथी ध्यान कणु ८-९

पृथ्वीका मेद के रूपमे, सडीके लेपका मांसके रूपमे, शिलाओंका हड्डियों-

કે રૂપમે, કીલે, પાંડ ઓર છુકરોં કા સ્નાયુકે રૂપમે, શૃંગકા ચક્ષુકે રૂપમે, શિશ્વરકી ધજાઓં કા કૈશકે રૂપમે—અિસ તરહ પ્રાસાદકે સર્વ અંગોં કા પુરુપરૂપસે સતસે ધ્યાન કરના । ૮-૯

નાગરા દ્રાવિડાશ્ચૈવ લતિનાશ્ચ વિમાનકાઃ

મિશ્રકાશ્ચ વરાટાશ્ચ સાંધારા ભૂમિજા સ્તથા ॥ ૧૦ ॥

વિમાન નાગચ્છંદા વિમાન પુષ્પકાથવા

વલ્લભા ફાંસનાકારા સિંહાવલોકા સ્થરૂહા ॥ ૧૧ ॥

પ્રાસાદની જાતિ ચ્છંદ ૧ નાગરાદિ ૨ દ્રાવિડાદિ ૩ લતિનાદિ ૪ વિમાનાદિ ૫ મિશ્રકાદિ ૬ વરાટાદિ ૭ સાંધારાદિ ૮ ભૂમિજાદિ ૯ વિમાન નાગરાદિ ૧૦ વિમાન પુષ્પકાદિ ૧૧ વલ્લભાદિ ૧૨ ફાંસનાકારાદિ ૧૩ સિંહાવલોકનાદિ ૧૪ સ્થારૂહાદિ એમ પ્રાસાદની ચૌદ જાતિઓ જાણવી. ૧૦-૧૧

પ્રાસાદકી ચ્છંદ જાતિ ૧ નાગરાદિ ૨ દ્રાવિડાદિ ૩ લતિનાદિ ૪ વિમાનાદિ ૫ મિશ્રકાદિ ૬ વરાટાદિ ૭ સાંધારાદિ ૮ ભૂમિજાદિ ૯ વિમાન નાગરાદિ ૧૦ વિમાન પુષ્પકાદિ ૧૧ વલ્લભાદિ ૧૨ ફાંસનાકારાદિ ૧૩ સિંહાવલોકનાદિ ૧૪ સ્થારૂહાદિ इसी तरह प्रासाद की चौदह जातियाँ जानने योग्य हैं । १०-११

एते चतुर्दश विख्याताः प्रासादजातयः स्मृताः

मृत्साकाष्ठेष्टकाशैल धातु रत्न भवाः सुधीः ॥ १२ ॥

કુર્યાત્ સ્વશક્તિ પ્રાસાદશ્ચાતુર્વર્ગફલં ભવેત્

પાંસુનાદિ સુરાગારે ક્રીડ્યા વિહિતશ્રિતઃ ॥ ૧૩ ॥

દેવ મંદિરો માટીના, કાષ્ટ લાકડાનાં, ઇંટના, પાષાણનાં, ધાતુ રત્નાદિ વાસ્તુ દ્રવ્યાદિના, પ્રાસાદો પોતાની શક્તિ અનુસાર કરાવવાથી ચાર વર્ગ (ધર્મ અર્થ કામ અને અતે મોક્ષ) ના ફળની પ્રાપ્તિ થાય છે. માટી આદિના દેવમંદિરોમાં લક્ષ્મી કીડા કરે છે. ૧૨-૧૩

(૧) ક્ષીરાણિવ ગ્રંથની પ્રતો ગુજરાત સૌરાષ્ટ્રમાં ઘણી અશુદ્ધ અને અસ્ત-વ્યસ્ત સ્થિતિની, વિષયક્રમના અભાવવાળી, એક વિષય ફરી ફરી આવે, એક વિષય અધ્યાહાર રાખી બીજો વિષય આવે, તેવી પ્રતો ઘણી જોવામાં આવી છે. તેમાંથી અને તેટલો ક્રમ ગોઠવીને જુની પ્રતોના ક્રમને લક્ષ્યમાં રાખીને આ ગ્રંથ ક્રમબદ્ધ લખવા પ્રયાસ કરેલ છે. સૌરાષ્ટ્ર ગુજરાતની પ્રતોમાં પ્રાસાદને દેવ મનુષ્ય સ્વરૂપની કલ્પના અને ગણિત વિષય અમોને દેખવામાં આવતો નથી. કુર્મશિલાના ૧૦૧ અધ્યાયથી પ્રારંભ થાય છે. ગણિત વિષય અમોને રોચક એશિયાટીક સાંસારિકની લાચરેરીના ચોપડામાંથી જે પ્રાપ્ત છે તેમાં કેટલુંક અધ્યાહાર અને સંક્ષિપ્તમાં હોવાથી અમોએ તેની પૂર્તિ અનુવાદમાં કરી અને તેટલી અપૂર્ણતા ટાળવા પ્રયત્ન કરેલ છે.

मिट्टीके, इटके, पाषाणके, धातुके, रत्नादिके—इन वास्तु द्रव्यादिके देवमंदिर अपनी शक्तिक अनुसार बनवानेसे चार वर्ग (धर्म अर्थ काम और अंतमे मोक्ष) के फलकी प्राप्ति होती है। मिट्टी आदिके देवमंदिरोंमे लक्ष्मी क्रीडा करती है। १२-१३

श्री नारदोवाच—

येनेदं सप्त लोकां तं त्रैलोक्यं सचराचरम्
तस्मै ईशाय नित्याय नमः श्री विश्वकर्मयो ॥ १ ॥

अव्यक्तं व्यक्तता नित्यं येन विश्वचराचरम्
तस्मै ईशाय नित्याय नमः श्री विश्वकर्मणे ॥ २ ॥

वास्तु कर्म लक्षणेन प्रासाद विधि युक्तिः
गणित ज्योतिषाचारं कथय मम प्रभो ॥ ३ ॥

श्री नारदजी कहे छे जे सप्तलोकना अते त्रैलोक्यभा सचराचर छे ओनी रचना करवा बाणा ओवा श्री विश्वकर्मानि नित्य भास नमस्कार हो। अव्यक्त बाणी न शक्य अने व्यक्त बाणी शक्य ओवा जे विश्वने विधे सचराचर छे तेनी रचना करवाबाणा नित्य छथि श्री विश्वकर्मानि भास नमस्कार हो छे प्रभु ! लक्षययुक्त वास्तुकर्म के जे प्रासादनी विधि गणित अने ज्योतिषना आधार छे प्रभु ! भने कहे। १-२-३

श्री नारदजी कहते हैं—जो सप्तलोकके अंतमे त्रैलोक्यमे सचराचर हैं उसकी रचना करनेवाले श्री विश्वकर्माको नित्य मेरा नमस्कार हो। अव्यक्त और

ते वायकृद् दशभुजः करे आनदनी वात ओ छे के पूरा ओकवीश अगे आ ग्रंथभा आपेक्षा छे महर्षि नारदमुनि अने विश्वकर्माना सवाद ३५ आ अथ छे

(१) गुजरात, सौराष्ट्रमे क्षीरार्णव ग्रंथकी हस्त प्रत बहुत अशुद्ध, अस्त व्यस्त, विषय के अनुक्रमके अभाववाली, विषयके पुनरावर्तनवाली, एक विषयको छोड़कर दूसरे विषय की चर्चावाली, देखनेमें आयी है। उनमेंसे जितना होसके उतना क्रम मिलाकर पुरानी प्रतोंके क्रमको लक्ष्यमें ठेकर यह ग्रंथ क्रमबद्ध लिखनेका प्रयास किया है। सौराष्ट्र गुजरातकी प्रतोंमें प्रासाद के देव मनुष्य स्वरूपकी कल्पना और गणित विषय बहुत करके देखनेको मिलता नहीं है। कुर्मशिला के १०१ अध्यायसे प्रारंभ होता है। गणित विषय हमें रोयल एशियाटीक सोसायटीकी लाइब्रेरी की पुस्तकोंमे से जो यत्किंचित् प्राप्त हुआ, उसमें कुछ अध्याहार और सक्षिप्तमे होनेसे हमने उसकी पूर्ति अनुवादमें करके जितनी हो सके उतनी अपूर्णता दूर करनेका प्रयत्न किया है, सो वाचस्पति हमें क्षमा करें। यह आनंदकी बात है कि पूरे इक्षिप्त अंग इस ग्रंथमे समाविष्ट हैं। महर्षि नारद मुनि और विश्वकर्माके सवादके रूपमें यह ग्रंथ प्रस्तुत है।

व्यक्त ऐसे विश्वमें जो सचराचर है उसकी रचना करनेवाले नित्य ईश्वर श्री विश्वकर्माको मेरा नमस्कार हो ।

हे प्रभु, लक्षणयुक्त वास्तुकर्म, प्रासादकी विधि, गणित और ज्योतिषके आचारको मुझे बताओ । १-२-३.

श्री विश्वकर्माउवाच—

(१) आय— शृणुवत्स महाप्राज्ञ यत्त्वं परिपृच्छसि
इदानीं तं कथयिष्यामि गणित वास्तु कर्मके ॥ ४ ॥
आयत्वं च पृथुत्वेन गुणयेदायकर्माणि
अष्टभिर्हरेत्भागं यत्शेषं आयादिशेत् ॥ ५ ॥

श्री विश्वकर्मा कहे छे. हे महागुणवान वत्स ! तमे न्यारे पूछे छे त्यारे हुं तमने उभणुं वास्तुकर्मनुं गणित कहुं छुं. क्षेत्रना लंबाई अने पड़ोनाईना अंकोंने गुणने आठे लागतां ने शेष रहे ते तेढामे आय न्णुवे. ४-५

श्री विश्वकर्मा कहते हैं—हे महागुणवान वत्स ! जब आप पूछते हो तो मैं अभी तुम्हें वास्तु कर्मका गणित कहता हूँ । क्षेत्रकी लंबाई और चौड़ाईके अंकोंको गुनकर आठसे विभाजित कर जो शेष रहे उतनी संख्याका आय समझना । ४-५

आयानां विषमेषुभे ध्वजः सिंहो वृषोगजः

अधमानो खरध्वाक्षः धूमः श्वानः सुखावह ॥ ६ ॥

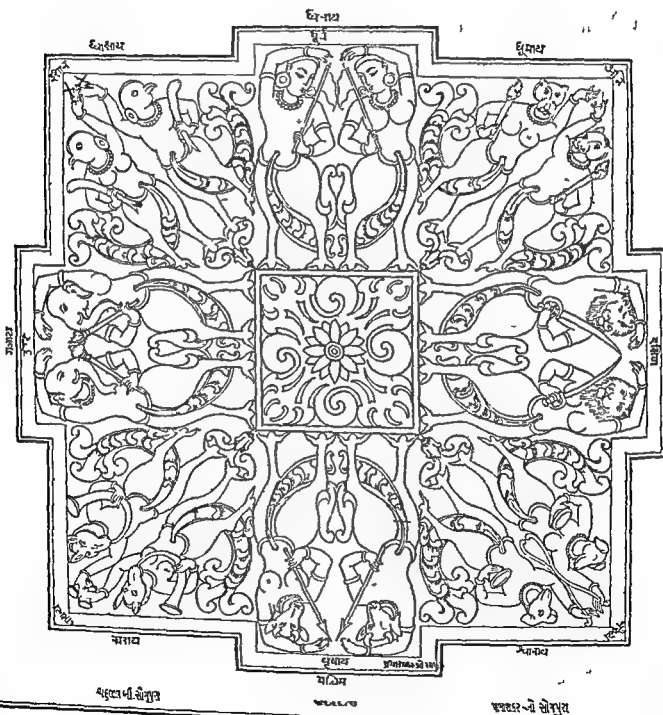
ते आठ आयोमां ने विषम अंक वधे ते १ ध्वज ३ सिंह ५ वृष ७ गज येम चार आय ते शुभ न्णुवा अने षेडीसम आयोमां २ धूम ४ श्वान ६ खर ८ ध्वाक्ष ये अधम छे पणु तेना स्थाने सुभने देनार न्णुवा. ६

उन आठ आयोंमें जो विषम अंक शेष रहे तो १ ध्वज ३ सिंह ५ वृष ७ गज इन चार आयोंको शुभ समझना और सम आयोंमें २ धूम ४ श्वान ६ खर ८ ध्वाक्ष अधम हैं लेकिन वे अपने स्थान पर सुखकर समझना । ६

(२) स्थानना आयनुं सर्व शिल्पग्रंथोमां क्खुं छे. परंतु दीपाव्णि नेवा ग्रंथमां मनुष्येना आय कढवानुं क्खीने धरनेा आय अने धरधण्णीना आयना परस्पर लक्षक लाव तन्वानुं क्खुं छे.

(२) स्थानके आयका सर्व शिल्पग्रंथोंमें उल्लेख है । लेकिन दीपार्णव जैसे ग्रंथमें मनुष्यका आय निकालनेके लिये कहकर घरका आय और घरके मालिकके आयके परस्पर भक्षक भावको तजनेके लिये कहा गया है ।

(૨) નક્ષત્ર— આયામે યદિ ક્ષેત્રંતુ વિસ્તરં ગુણવેદ્ય
 સપ્ત વિંશત્યાર્હેરેત્માગં ગ્રંપં સ્યાત્ ફલં નિશ્ચયઃ ॥ ૭ ॥
 ફલેચાષ્ટ ગુણે તસ્મિન્ સપ્તાવિંશતિ ભાજિતે
 યત્ત્વેત્રં લભતે તત્ર નક્ષત્રં તદ્ગૃહેષુચ ॥ ૮ ॥



અષ્ટ આયકા સ્વરૂપ

ક્ષેત્રની લખાઈ અને પહોળાને ગુણીને સત્તાવીશે ભાગતા જે શેષ રહે તે નિશ્ચયથી ફળ બાણુ (તે નક્ષત્રની મૂળ ગણ) તે ફળને આઠ ગુણા કરી સત્તાવીશે ભાગવાથી જે શેષ રહે તે વાસ્તુના નક્ષત્રનો અંક બાણુવો.

क्षेत्रकी लम्बाई चौड़ाईको गुनकर सत्ताईशसे विभाजित करते जो शेष रहे उसे निश्चयसे फल जानना (उस नक्षत्रकी मूल राश) उस फलको आठ गुने कर सत्ताईशसे विभाजित करनेसे जो शेष रहे उसे वास्तुके नक्षत्रका आंक समझना । ७-८।

समचोरस ओर छ आंगुल सुधीका कमीजास्तीका देवगण नक्षत्रो ओर शुभ आय मीलानेका कोष्टक अंक गज ओर आंगुलका है ।

लंबाई चौड़ाई	देवगणा नक्षत्रो	लंबाई चौड़ाई	देवगणा नक्षत्रो	लंबाई चौड़ाई	देवगणा नक्षत्रो
१-१ X ०-२१	स्वाति	• १-१३ X १-१३	अनुराधा	• २-१५ X २-१५	रेवती
• १-१ X १-१	मृगशीर्ष	१-१५ X १-२१	रेवती	२-१५ X २-२१	रेवती
१-१ X १-५	श्रवण	१-१९ X २-१	पुष्य	२-१७ X २-११	पुष्य
१-१ X १-७	अनुराधा	१-१९ X १-२३	श्रवण	२-१९ X ३-१	मृगशीर्ष
—		• १-२१ X १-२१	रेवती	२-१९ X २-२३	हस्त
{ १-१ }		१-२१ X २-३	रेवती	२-२१ X २-२३	स्वाति
{ १-३ }		२-१ X २-५	हस्त	—	
{ १-५ }	रेवती	—		• २-२३ X २-२३	अनुराधा
{ १-७ }		• २-५ X २-५	पुष्य	३-१ X ३-५	हस्त
{ १-९ }		• २-७ X २-७	पुष्य	३-१ X ३-९	रेवती
—		२-७ X २-११	हस्त	३-३ X ३-७	स्वाती
• १-५ X १-५	मृगशीर्ष	२-१३ X २-१७	श्रवण	३-३ X ३-९	रेवती
१-५ X १-९	स्वाति	२-१५ X २-९	रेवती	३-५ X ३-९	रेवती
१-७ X १-११	हस्त				
१-११ X १-१७	मृगशीर्ष				
१-१३ X १-१५	स्वाति				
१-१३ X १-१७	हस्त				

उपर प्रमाणे देवगणा नक्षत्रो ओर शुभ आय मीलानेके लीये बडा क्षेत्र-गणीत

ग. आ. ग. आ. ग. आ.

मिलाना हो तो २-६ के ४-१२ के ६-१८ के नवगज उपरोक्त अंकमें मिलानेसे

उपर लिखा चौहि देवगणा नक्षत्रो आयगा यह सरल रीत है ।

धारेला देव तथा मनुष्य गणका नक्षत्रो लानेके लीये क्षेत्रकी दोनु ओर आंगुलका अंक लानेका कोष्टक

क्षीरार्णव अ-२९ क्रमांक अ-१.

पूर्व	दक्षिण	पश्चिम		उत्तर
		अक्षांश	अक्षांश	
१३	२१	२१	१३	२०
७	२२	२२	१३	१०
—	२३	२३	१३	—
१७	२४	२४	१३	५
२९	२५	२५	१३	५
२९	२६	२६	१३	५
२९	२७	२७	१३	५
२९	२८	२८	१३	५
२९	२९	२९	१३	५
२९	३०	३०	१३	५
२९	३१	३१	१३	५
२९	३२	३२	१३	५
२९	३३	३३	१३	५
२९	३४	३४	१३	५
२९	३५	३५	१३	५
२९	३६	३६	१३	५
२९	३७	३७	१३	५
२९	३८	३८	१३	५
२९	३९	३९	१३	५
२९	४०	४०	१३	५
२९	४१	४१	१३	५
२९	४२	४२	१३	५
२९	४३	४३	१३	५
२९	४४	४४	१३	५
२९	४५	४५	१३	५
२९	४६	४६	१३	५
२९	४७	४७	१३	५
२९	४८	४८	१३	५
२९	४९	४९	१३	५
२९	५०	५०	१३	५
२९	५१	५१	१३	५
२९	५२	५२	१३	५
२९	५३	५३	१३	५
२९	५४	५४	१३	५
२९	५५	५५	१३	५
२९	५६	५६	१३	५
२९	५७	५७	१३	५
२९	५८	५८	१३	५
२९	५९	५९	१३	५
२९	६०	६०	१३	५
२९	६१	६१	१३	५
२९	६२	६२	१३	५
२९	६३	६३	१३	५
२९	६४	६४	१३	५
२९	६५	६५	१३	५
२९	६६	६६	१३	५
२९	६७	६७	१३	५
२९	६८	६८	१३	५
२९	६९	६९	१३	५
२९	७०	७०	१३	५
२९	७१	७१	१३	५
२९	७२	७२	१३	५
२९	७३	७३	१३	५
२९	७४	७४	१३	५
२९	७५	७५	१३	५
२९	७६	७६	१३	५
२९	७७	७७	१३	५
२९	७८	७८	१३	५
२९	७९	७९	१३	५
२९	८०	८०	१३	५
२९	८१	८१	१३	५
२९	८२	८२	१३	५
२९	८३	८३	१३	५
२९	८४	८४	१३	५
२९	८५	८५	१३	५
२९	८६	८६	१३	५
२९	८७	८७	१३	५
२९	८८	८८	१३	५
२९	८९	८९	१३	५
२९	९०	९०	१३	५
२९	९१	९१	१३	५
२९	९२	९२	१३	५
२९	९३	९३	१३	५
२९	९४	९४	१३	५
२९	९५	९५	१३	५
२९	९६	९६	१३	५
२९	९७	९७	१३	५
२९	९८	९८	१३	५
२९	९९	९९	१३	५
२९	१००	१००	१३	५

चंद्र	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
१	१३	२१	२१	२०
२	१४	२२	२२	२०
३	१५	२३	२३	२०
४	१६	२४	२४	२०
५	१७	२५	२५	२०
६	१८	२६	२६	२०
७	१९	२७	२७	२०
८	२०	२८	२८	२०
९	२१	२९	२९	२०
१०	२२	३०	३०	२०
११	२३	३१	३१	२०
१२	२४	३२	३२	२०
१३	२५	३३	३३	२०
१४	२६	३४	३४	२०
१५	२७	३५	३५	२०
१६	२८	३६	३६	२०
१७	२९	३७	३७	२०
१८	३०	३८	३८	२०
१९	३१	३९	३९	२०
२०	३२	४०	४०	२०
२१	३३	४१	४१	२०
२२	३४	४२	४२	२०
२३	३५	४३	४३	२०
२४	३६	४४	४४	२०
२५	३७	४५	४५	२०
२६	३८	४६	४६	२०
२७	३९	४७	४७	२०
२८	४०	४८	४८	२०
२९	४१	४९	४९	२०
३०	४२	५०	५०	२०
३१	४३	५१	५१	२०
३२	४४	५२	५२	२०
३३	४५	५३	५३	२०
३४	४६	५४	५४	२०
३५	४७	५५	५५	२०
३६	४८	५६	५६	२०
३७	४९	५७	५७	२०
३८	५०	५८	५८	२०
३९	५१	५९	५९	२०
४०	५२	६०	६०	२०
४१	५३	६१	६१	२०
४२	५४	६२	६२	२०
४३	५५	६३	६३	२०
४४	५६	६४	६४	२०
४५	५७	६५	६५	२०
४६	५८	६६	६६	२०
४७	५९	६७	६७	२०
४८	६०	६८	६८	२०
४९	६१	६९	६९	२०
५०	६२	७०	७०	२०
५१	६३	७१	७१	२०
५२	६४	७२	७२	२०
५३	६५	७३	७३	२०
५४	६६	७४	७४	२०
५५	६७	७५	७५	२०
५६	६८	७६	७६	२०
५७	६९	७७	७७	२०
५८	७०	७८	७८	२०
५९	७१	७९	७९	२०
६०	७२	८०	८०	२०
६१	७३	८१	८१	२०
६२	७४	८२	८२	२०
६३	७५	८३	८३	२०
६४	७६	८४	८४	२०
६५	७७	८५	८५	२०
६६	७८	८६	८६	२०
६७	७९	८७	८७	२०
६८	८०	८८	८८	२०
६९	८१	८९	८९	२०
७०	८२	९०	९०	२०
७१	८३	९१	९१	२०
७२	८४	९२	९२	२०
७३	८५	९३	९३	२०
७४	८६	९४	९४	२०
७५	८७	९५	९५	२०
७६	८८	९६	९६	२०
७७	८९	९७	९७	२०
७८	९०	९८	९८	२०
७९	९१	९९	९९	२०
८०	९२	१००	१००	२०

(૩) વ્યય- નક્ષત્રં વસુભિર્મત્તં યત્તચ્છેપં વ્યયો ભવેત્
સમોવ્યયઃ પિશાચશ્ચ રાક્ષસશ્ચ વ્યયોઽધિકઃ ॥

વ્યયો ન્યૂનો નરોઽદ્યક્ષો-ધનધાન્યકરઃ સ્મૃતઃ ॥ ૯ ॥

નક્ષત્રના અકને આઠે લાગતા જે શેષ ગુહે તે વ્યય બાણવો આયનો
અક અને વ્યયનો અક એક સરખો આવે તો પિશાચ બાણવો બે વ્યયનો
અક અધિક આવે તો રાક્ષસ બાણવુ અને બે વ્યયનો અક આય કરના એકો
આવે તો શ્રેષ્ઠ અને ધનધાન્યને દેનાર બાણવો ૯

નક્ષત્રકે અકનો આઠસે વિભાજિત કરતેમે જો શેષ રહે હસે વ્યય
સમજના । આયકા અક ઔર વ્યયકા અક સમાન હો તો પિશાચ જાનના । જો
વ્યયકા અક અધિક આવે તો રાક્ષસ સમજના ઔર જો વ્યયકા અક આયસે
કમ આવે તો શ્રેષ્ઠ ઔર બન ધાન્યકો દેવનેગલા સમજના । ૯

(૪) અંશક- મૂલરાશૌ વ્યયં ક્ષિપ્યં ગૃહનામાક્ષરાણિચ
ત્રિભિરેવં હરેન્દ્રામો યચ્છેપ તદ્વશકઃ ॥ ૧૦ ॥

દ્વો યમશ્ચ રાજાના અંશક સ્ત્રિભિરેવચ

પ્રમાણં ત્રિવિદ્યોત્કતવ્યા જ્યેષ્ઠ મધ્યમ કન્યસાઃ ॥ ૧૧ ॥

નક્ષત્રની મૂળરાશિનો અક, વ્યયનો અક, અને ઘરના નામાક્ષરનો અક,
એ ત્રણેનો મરવાળો કરી તેને ત્રણે લાગતા શેષ ગુહે તે ૧ ઇંદ્ર ૨ યમ ૩
રાજાશ એમ અનુક્રમે ત્રણ અશક બાણવા એ ત્રણ પ્રમાણની જ્યેષ્ઠ મધ્યમને
કનિકા ત્રણ વિધિ છે ૩ (ત્રણ અશકના સ્થાન નીચે ફૂટનોટમાં આપેલા છે)

। નક્ષત્રની મૂળ રાશીકા અક, વ્યયકા અક, ઔર ઘરકે નામાક્ષરકા અક,
इन तीनोंको मिलाकर उसे तीनसे विभाजित करते जो शेष रहे वह १ इन्द्र
२ यम ३ राजाश इसी तरह अनुक्रमसे तीन अशक जानना । इन तीन प्रमाण
की ज्येष्ठ मध्यम और कनिक-तीन विधियाँ हैं । (तीन अशकके स्थान नीचे
फूटनोटमें दिये हैं) ।^३

- (૩) (૧) ઈન્દ્રાશક-ગ્રાસાદ, પ્રતિમા, ત્રિગ, પીઠ, મડપ, વેદી કુડ, વિગ્રહ પ્થબદડ,
પતાકા, ગાન ગાળા, અલગ, અને વસ્ત્રના સ્થાને ઈન્દ્રાશક આપવો
(૨) યમાશક-નાગદેવને કૈરવ, નવગ્રહ, ગમભાતૃકા, દુર્ગા એળખા ગ્રાસાદો, વેપારીની દુકાન,
મઘ માસની દુકાને, સર્વ અગ્નિને એ મર્ગ સ્થાને યમાશક આપવો તે શુભ છે
(૩) રાજાશક-ગજ સિંહાસન, પનગ, પાનખી, ગજગૃહ, અશ્વજનશાળા, નગર ગ્રામની
રચનામા અને સાધારણ ઘરને વિષે ગજાશક આપવો તે શુભ છે.

(५) तारा— गणयेत्स्वामि नक्षत्रं यावदक्षं गृहस्य च
नवभिश्च हरेत्भागं शेषे ताराः प्रकीर्तिताः ॥ १२ ॥
ताराः षड् शुभा श्येकाद्वि चतुः षड्चाष्टनवके
त्रि पंच सप्तभिः श्रै एभि तारा विवर्जिता ॥ १३ ॥

घरधणीना नामना नक्षत्रथी घरना नक्षत्र सुधी गणुतो ने अंक आवे तेने नवे भागतां ने शेष रहे तेटलाभी तारा नक्षुवी. छतारा शुभ नक्षुवी. षडेकी भीष्ट योथी छठी आठमी अने नवमी तारा शुभ छे. अने त्रीं पांचभी सातभी ये त्रण तारा नेष्ट छे ते तनवी. १२-१३

गृहपतिके नामके नक्षत्रसे घरके नक्षत्र तक गिनते जो अंक आवे उसे नौसे विभाजित करते जो शेष रहे इतनी संख्याकी तारा जानना । छः ताराको शुभ समझना । ये प्रथम, दूसरी, चौथी, पष्ठी, और अष्टमी, नवमी शुभ जानना । तीसरी, पाँचवीं और सातवीं ये तीन तारा नेष्ट हैं—इन्हें छोड़ना चाहिये । १२-१३*

(६) गण— पुनर्वस्वश्चिनी पुष्य मृगश्रवण रेवती
स्वाति हस्तानुराधा च एते देवगणाः स्मृताः ॥ १४ ॥
भरणी रोहिणी चार्द्रा पूर्वाणां तृतीयं तथा
उत्तरात्रितयं चैव नवैते मानुषागणाः ॥ १५ ॥
विशाखा कृत्तिकाश्लेषा मघा च शततारका
चित्रा ज्येष्ठा धनिष्ठा च मूलमे ते च राक्षसाः ॥ १६ ॥

- (३) (१) इन्द्रांशक—प्रासाद, प्रतिमा, लिङ्ग, पीठ, मंडप, वेदी, कुण्ड, विप्रगृह, ध्वजादण्ड पताका, गानशाला, अलंकार और वस्त्रके स्थानपर इन्द्रांशक देना ।
(२) यमांशक—नागदेवको भैख, नौग्रह, सप्त मातृका, दुर्गा ये सब प्रसादों व्यापारीकी दुकान, मद्य मॉसकी दुकातको, सर्व अस्त्रोंको—इन सर्व स्थानोंको यणांशक देना शुभ है ।
(३) गजांशक—राज सिंहासन, पर्यक, पालखी, राजगृह, अश्वगज शाला, नगर ग्रामकी रचनामें और सामान्य घरोंके लिये गजांशक देना शुभ है ।

(४) तारानां नामो—१ शांता २ मनोहरा, ३ कूरा ४ विजया ५ क्लोद्भवा ६ पद्मिनी ७ राक्षसी ८ वीरा ९ आनंदा ये नव ताराओंमां ३ कूरा ५ क्लोद्भवा ७ राक्षसी ये त्रण तारा अशुभ डडी छे.

(४) ताराके नाम—१ शांता २ मनोहरा ३ कूरा ४ विजया ५ क्लोद्भवा ६ पद्मिनी ७ राक्षसी ८ वीरा ९ आनंदा इन नौ ताराओंमें ३ कूरा ५ क्लोद्भवा ७ राक्षसी तीन ताराओंको अशुभ कहा गया है ।

देवगणना नक्षत्रो-पुनर्वसु, अश्विनी, पुष्य, मृगशीर्ष, श्रवण, रेवती, स्वाति हस्त अने अनुराधा એટલા નવ નક્ષત્રો દેવગણના બાણવા-ભરણી, રાહીણી, આર્દ્રા ત્રણે પૂર્વા ત્રણ ઉત્તર એ નવ નક્ષત્રો મનુષ્યગણના છે રાક્ષસગણના નક્ષત્રો-વિશાખા, કૃતિકા, અશ્લેષા, મઘા, શતભિષા, ચિત્રા, બેઘા, ધનિષ્ઠા, અને મૂળ એટલા નવ નક્ષત્રો ગર્ક્ષમ ગણના બાણવા

દેવગણકે નક્ષત્ર—પુનર્વસુ, અશ્વિની, પુષ્ય, મૃગશીર્ષ, શ્રવણ, રેવતી, સ્વાતિ હસ્ત ઔર અનુરાધા યે નૌ નક્ષત્ર દેવગણકે હૈ ।

મનુષ્ય ગણકે નક્ષત્ર—મરળી, રોહીણી, આર્દ્રા, ત્રીન પૂર્વા ઔર ત્રીન ઉત્તર યે નૌ નક્ષત્ર મનુષ્યગણકે હૈ । રાક્ષસગણકે નક્ષત્ર-વિશાખા, કૃતિકા, અશ્લેષા, મઘા, શતભિષા, ચિત્રા, જ્યેષ્ઠા, ધનિષ્ઠા, ઔર મૂળ-યે નૌ નક્ષત્ર રાક્ષસગણકે હૈ ।

સ્વર્ગણે ચોત્તમા પ્રીતિ-મધ્યમા દેવ માનુષે

કલહો દેવ દૈત્યાના મૃત્યુર્માનસ રાક્ષસૈ ॥ ૧૭ ॥

ધર અને ઘઘણીના નક્ષત્રનો ભે એક જ ગણ હોય તો ઉત્તમ પ્રીતિ દાયક બાણુ ભે એકનો દેવગણ અને બીજનો મનુષ્યગણ હોય તો મધ્યમ બાણુ અને ભે એકનો દેવગણ અને બીજનો રાક્ષસગણ હોય તો હ મેશા કલેશ કરાવે ભે એકનો મનુષ્ય ગણ અને બીજનો રાક્ષસગણ હોય તો મૃત્યુ કરાવે ૫ ૧૭

ઘર ઔર ઘરકે માલિકકે નક્ષત્રકા જો ઇક હી ગણ હો તો ઉત્તમ પ્રીતિદાયક જાનના । જો ઇકકા દેવગુણ ઔર દૂસરેકા રાક્ષસગણ હો તો હમેશા કલેશ કારક બના રહે । જો ઇકકા મનુષ્યગણ ઔર દૂસરેકા રાક્ષસગણ હો તો મૃત્યુ કરનેવાલા બને । ૧૭^૫

(૭) ચંદ્ર— કૃતિકાદિ સપ્તસપ્ત પૂર્વાર્દિતઃ પ્રદક્ષિણે

અષ્ટ વિંશતિ ઋક્ષાણિ તતઃ ચંદ્ર મુદીરયેત્ ॥ ૧૮ ॥

અગ્રતો હરતે આયુ પૃષ્ઠતો હરતે ધનં

વામ દક્ષિણ તો ચંદ્રો ધનધાન્ય કરસ્મૃતાઃ ॥ ૧૯ ॥

(૫) ગણના સબધમા મનુષ્યના હે દેવના જન્મ નક્ષત્ર ના ગણ પરથી કહેલુ છે ૫૦૭ સામાન્ય રીતે દેવનો દેવગણ અને મનુષ્યનો મનુષ્યગણ અને યવનમ્લેચ્છનો રાક્ષસ ગણ આમ માનનાની શિષ્ટીઓની પ્રથા છે

(૫) ગણકે ચારેમ મનુષ્યકે યા દેવકે જન્મ નક્ષત્રકે ગણકે ઉપરસે કહા ગયા હૈ । કેલિન સામાન્યત દેવકા દેવગણ ઔર મનુષ્યકા મનુષ્યગણ ઔર યવન મ્લેચ્છકા રાક્ષસગણ માનનકી શિલ્પીઓકી પ્રણાટિકા હૈ ।

प्रासादे राजवेश्मणु चंद्रोदयाच्चसन्मुखः

अन्येषां च न दातव्यं श्रीमंतादि गृहेषुच ॥ २० ॥

कृतिकाथी सात नक्षत्रो पूर्वभां मघाथी सात नक्षत्रो दक्षिणभां अनुराधाथी सात नक्षत्रो अने साभिजित सहित सात नक्षत्रो पश्चिमभां अने धनिष्ठाथी सात नक्षत्रो उत्तरभां अने सात सात नक्षत्रो चारे दिशाओंभां प्रदक्षिणाये जाणुवा. ओटवे जे नक्षत्र जे दिशानुं होय त्यां तेनो चंद्रमा जाणुवो. घरने सन्मुख चंद्रमा होय तो आयुष्य हरे. पाछण चंद्रमा होय तो लक्ष्मीनो नाश थाय. डाणी जमणी तरफ चंद्रमा होय तो धन अने धान्यनी वृद्धि थाय. प्रासाद अने राजभवनने विषे चंद्रमा सन्मुख देवो. (डाणी जमणी तरफ पणु आपी शकाय) जाडी गीळा वणुने के श्रीमंतना घरने पणु सन्मुख चंद्रमा न देवो. १८-१९-२० ६

कृतिकासे सात नक्षत्र पूर्वमें, मघासे सात नक्षत्र दक्षिणमें, अनुराधासे सात नक्षत्रों और साभिजित सहित सात नक्षत्रों पश्चिममें और धनिष्ठासे सात नक्षत्रों उत्तरमें, इसी तरह सात सात नक्षत्रों चारों दिशाओंमें प्रदक्षिणासे जानना। अर्थात् जो नक्षत्र जिस दिशाका हो वहाँ उसका चंद्रमा जानना। घरके सन्मुख चंद्रमा हो तो आयुष्य हरता है। पीछे चंद्रमा हो तो लक्ष्मीका नाश होता है। बायीं और दायीं तरफ चंद्रमा हो तो धन धान्यकी वृद्धि होती है। प्रासाद और राजभवन आदि के लिये चंद्रमा सन्मुख देना। (बायीं-दायीं तरफ भी देते हैं।) इसके अलावा दूसरे वर्णको या श्रीमंत के घरको भी सन्मुख चंद्रमा नहीं देना। १८-१९-२० ६

उराशि गृहक्षेत्रेच यद्वक्षं षष्टिभिर्गुणितं तथा

पंचत्रिंशच्छतैर्भक्तवाच्छेषं भुक्ति रजादयः ॥ २१ ॥

अश्विन्यादित्रयं मेषः सिंहः प्रोक्तो मघात्रयं

मूलादि त्रितयं चापः शेषेषु नवराशयः ॥ २२ ॥

वास्तुः घरना क्षेत्रनुं जे नक्षत्र आव्युं होय तेने साठे गुणीने अकरो

(६) चंद्रमाने मेणववा विषयभां सूत्रधार राजसिंह विरचित “वास्तुराज” अ० ७भां श्रुं छे के पार्श्व दक्षिण वामेषु भवनाग्रे देव भूपयो। देवने राज भवनने सन्मुख अने डाणी जमणी तरफ चंद्रमा आपवो।

(६) चंद्रमाको मिलानेके विषयमें सूत्रधार राजसिंह विरचित ‘वास्तुराज’ अ० ७ में कहा गया है कि पार्श्व दक्षिण वामेषु भवनाग्रे देवभूपयो। देव और राजभवनको सन्मुख और बायीं दायीं तरफ चंद्रमा देना।

पांत्रीशे लागवा जे शेष रहे ते आहु मेषादि मुक्त राशि जाणुवी. (लघ्वी आवे ते गत राशि जाणुवी.) अश्विनी भरणीने कृत्तिका जे त्रण नक्षत्रांनी मेष राशि, मघा, पू. श्रावणी, उ. श्रावणी जे पण नक्षत्रांनी सिंह राशि जाणुवी. मूण, पू. पाठा जे त्रण नक्षत्रांनी धन राशि जाणुवी. आडी अजमे नक्षत्रांनी ऐकेक राशि जेम नव राशि जाणुवी. २१-२२

वास्तु—घरके क्षेत्रका जो नक्षत्र आया हो उसे साठसे गुनकर एक सौ पैतीससे विभाजन करते जो शेष रहे वह चालु मेषादि मुक्त राशि जानना । (लघ्वी आवे, वह गत राशि है ।) अश्विनी, भरणी, और कृत्तिका—ये तीन नक्षत्रोंकी मेष राशि—मघा, पू—फाल्गुनी, उ—फाल्गुनी ये तीन नक्षत्रोंकी सिंह राशि जानना । इसके अतिरिक्त दो दो नक्षत्रोंकी एक राशि इस तरह नौ राशि समझना । २२ ८ इति राशि.

कर्कमीव वृश्चिकते विप्र मेष सिंह धन ते क्षत्रिय

वृषकन्या मकर ते वैश्य मिथुन तुला कुंभ ते शुद्रक

गृहस्वामी समोच्च जात्या न जात्या गृहस्योच्च च ॥ २३ ॥

कर्क मीन अने वृश्चिक राशिनी आह्वाणु जाति, मेष सिंह अने धननी क्षत्रिय जाति, वृष कन्याने मकरनी वैश्य जाति, मिथुन तुलाने कुंभनी शुद्र जाति जाणुवी. धरनी राशिनी जाति ऐक होय अगर धरधणुनी राशिनी जाति ऐक होय अगर धरधणुनी राशि उच्य जाति होय तो श्रेष्ठ जाणुवुं. परंतु जे धरनी राशिथी धरधणुनी राशिनी उच्य जाति होय तो ते कनिष्ठा जाणु तेवुं न करवुं. २३

घरकी राशिकी जातिसे गृहपतिकी जाति समान हो अगर गृहपतिकी राशिकी उच्य जाति हो तो श्रेष्ठ समझना । लेकिन जो घरकी राशिसे गृहपति की जाति उच्य हो तो उसे कनिष्ठा जान कर वैसा नहीं करना । २३ ° इति राशि अङ्क ॥ ८ ॥

९ राशि मैत्री सप्तमे चोत्तमा प्रीतिः षडष्टे मरणं ध्रुवं ।

(षडाष्टक) नवपंचमिते क्लेशः पुष्टि द्वादश चतुर्थके ॥ २४ ॥

तृतीयैकादशमैत्री द्वितीये द्वादशे रिपुः ।

एवं च षड्विधोक्तव्यं शेषेषु प्रीतिरुत्तमा ॥ २५ ॥

(७) भाषा छंद—

कर्कमीन वृश्चिक ते विप्र, मेष सिंह धन ते क्षत्रिय

वृषकन्या मकर ते वैश्य, मिथुन तुला ते कुंभ शुद्रक ॥

गृह अने स्वामि समानजात अथवा स्वामि उच्च जात

शुभ फलदाता कहिये एह धन धान्यनी वृद्धि करेह ॥

भवन और भवनपतिकी राशि परसे

		अ व ई	ब व उ	क छ घ	ड ढ
भवनका नक्षत्रो	राशि	मेघ १	वृषभ २	मिथुन ३	कर्क ४
अश्विनी भरणी कृत्तिका १ २ ३	मेघ १	इष्ट	दरिद्र	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ
रोहिणी मृगशिरा ४ ५	वृषभ २	दरिद्र	इष्ट	दरिद्र	श्रेष्ठ
आर्द्रा पुनर्वसु ६ ७	मिथुन ३	श्रेष्ठ	दरिद्र	इष्ट	दरिद्र
पुष्य अश्लेषा ८ ९	कर्क ४	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ	दरिद्र	इष्ट
मघा पू. फा उ फा १० ११ १२	सिंह ५	क्लेश	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ	दरिद्र
हस्त चित्रा १३ १४	कन्या ६	मरण	क्लेश	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ
स्वाति विशाखा १५ १६	तुला ७	प्रीति	मरण	क्लेश	श्रेष्ठ
अनुराधा जेष्ठा १७ १८	वृश्चिक ८	मरण	प्रीति	मरण	क्लेश
मूल पू. पादा उ पादा १९ २० २१	धन ९	क्लेश	मरण	प्रीति	मरण
श्रवण धनिष्ठा २२ २३	मकर १०	श्रेष्ठ	क्लेश	मरण	प्रीति
शतभिषा पू. भाद्रा २४ २५	कुम्भ ११	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ	क्लेश	मरण
उ. भाद्रपद रेवती २६ २७	मीन १२	दरिद्र	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ	क्लेश

इष्ट अनिष्ट खडाष्टक दर्शक कोष्टक

म ट	प ठ ण	र त	न य	भ घ फ ढ	ज ख	ग म	द च झ घ
सिंह ५	कन्या ६	तुला ७	वृश्चिक ८	धन ९	मकर १०	कुंभ ११	मीन १२
क्लेश	मरण	प्रीति	मरण	क्लेश	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ	दरिद्र
श्रेष्ठ	क्लेश	मरण	प्रीति	मरण	क्लेश	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ
श्रेष्ठ	श्रेष्ठ	क्लेश	मरण	प्रीति	मरण	क्लेश	श्रेष्ठ
दरिद्र	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ	क्लेश	मरण	प्रीति	मरण	क्लेश
इष्ट	दरिद्र	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ	क्लेश	मरण	प्रीति	मरण
दरिद्र	इष्ट	दरिद्र	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ	क्लेश	मरण	प्रीति
श्रेष्ठ	दरिद्र	इष्ट	दरिद्र	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ	क्लेश	मरण
श्रेष्ठ	श्रेष्ठ	दरिद्र	इष्ट	दरिद्र	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ	क्लेश
क्लेश	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ	दरिद्र	इष्ट	दरिद्र	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ
मरण	क्लेश	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ	दरिद्र	इष्ट	दरिद्र	श्रेष्ठ
प्रीति	मरण	क्लेश	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ	दरिद्र	इष्ट	दरिद्र
मरण	प्रीति	मरण	क्लेश	श्रेष्ठ	श्रेष्ठ	दरिद्र	इष्ट

આગળ કહ્યું તેમ અશ્વિનીથી ત્રણ નક્ષત્રની મેષ રાશિ મધ્યથી ત્રણ નક્ષત્રની મિહ રાશિ મૃગથી ત્રણ નક્ષત્રની ધનરાગિ બાણવી બાકી બખ્ખે નક્ષત્રોની એકેક રાગિ બાણવી

ધનની ગણિથી ધનના સ્વામીની રાગિ ગણુતા બે માતમી આવે તો પ્રીતિ કરાવે છઠ્ઠી કે આઠમી આવે તો મૃત્યુ કગવે નવમી કે પાચમી આવે તો કલેશ કગવે બીજી કે બારમી આવે તો શત્રુતા કરાવે ચોથી કે દસમી આવે તો પુષ્ટિ કગવે ત્રીજી કે અગ્યાગમી આવે તો મૈત્રી ભાવ બાણુવો એ રીતે બહાષ્ટક કહ્યું બાકી પ્રીતિ કર્તા છે ૨૪-૨૫

પૂર્વાક્તિકે અનુસાર અશ્વિનીસે ત્રીન નક્ષત્રની મેષ રાગિ મધ્યસે ત્રીન નક્ષત્રની સિંહ રાગિ મૂલસે ત્રીન નક્ષત્રની ધન રાગિ સમચના । ઇસકે બાલાગા બો બો નક્ષત્રોંકી ંક બક રાગિ ગાનના ।

રોહિણી-મૃગશીર્ષ	આર્દ્રા પુનવસુ	પુણ્ય અશ્લેષા	હરત ચિત્રા	સ્વાતિ વિશાખા
વૃષ	મિથુન	કર્ક	કન્યા	તુલા
અનુરાધા જ્યેષ્ઠા	શ્રવણ ધનિષ્ઠા	ઞતમિષા-પૂ	ભાદ્રપદ	હ ભાદ્રપદ રેવતી
વૃશ્ચિક	મકર	કુમ્ભ	મીન	

ઘરકી રાગિસે ઘરકે સ્વામિકી રાગિ ગિનતે જો સાતમી આવે તો પ્રીતિ કારક હૈ । ઝટ્ટી યા આઠમી આવે તો મૃત્યુકારક વને । નોમી યા પાંચમી આવે તો કલેશ કારક વને । દસમી યા વારહમી આવે તો શત્રુતા કરાનેવાલી વને । ચોથી યા દમવી આવે તો પુષ્ટિકારક વને । ત્રીસમી યા ગ્યારહવી રાગિ આવે તો મૈત્રી ભાવ ગાનના । ઇસી તરહ પઢાપ્રક કહા ગયા હૈ । ઇસકે સિગા પ્રીતિકર્તા હૈ । ૨૪-૨૫

૧૦ ગૃહ મૈત્રી-મેષ વૃશ્ચિકયો ગોમઃ શુભો વૃષ તુલાધિપઃ ।

કન્યા મિથુનયોઃ સૌમ્યઃ કર્કસ્ય ચંદ્રમા સ્મૃતઃ ॥ ૨૬ ॥

સૂર્યક્ષેત્રે ભવેત્સિંહ ધનમીને સુરોરગુરુઃ ।

મકરકુમે ગનિ શ્રેવં ંતે ક્ષેત્ર ગૃહાધિપાઃ ॥ ૨૭ ॥

આત્મક્ષેત્રે ન પીઢયંતે સ્વસ્થાને ક્ષેત્રપાલકાઃ ।

નિપમ સ્થાને ગ્રપીઢયેત્ ઇતિ ચ ગૃહેમાઃ સ્મૃતાઃ ॥ ૨૮ ॥

બારે રાગિના સ્વામિ કહે છે મેષ અને વૃશ્ચિકનો સ્વામિ મગળ તુલા અને વૃષનો શુક, કન્યાનો મિથુનનો ગુધ, કર્કનો સ્વામિ મોમ મિહનો સૂર્ય, ધન અને મિનનો શુક, મકર અને કુલ રાગિનો સ્વામિ શનિ બાણુવો આ માત બ્રહ્માને બાર ગાગિ ક્ષેત્રના અધિપતિ બાણુવા તે પોત પોતાની રાગિમા

स्वस्थ रही पीडा न करे पोताना आप्तजन (मित्र)ना क्षेत्रस्थानमां होय तो पणु पीडा न करे पणु शत्रुस्थान विषमस्थानमां पीडा करे .तेथी शत्रु मित्रभाव जेवो. २६-२७-२८

वारह राशिके स्वामिके वारेमें कहा जाता है । मेप और वृश्चिकका स्वामि मंगल, तुला, और वृषका शुक्र, कन्या और मिथुनका बुध, कर्कका स्वामि सोम, सिंहका सूर्य धन और मिनका गुरु, मकर और कुंभ राशिका स्वामि शनि समझना । इन सातों ग्रहोंको वारह राशि क्षेत्रके अधिपति समझना । वे अपनी राशिमें स्वस्थ रहकर पीडा न करें । अपने आप्तजन (मित्र) के क्षेत्रस्थानमें हो तो भी पीडा न करें लेकिन शत्रुस्थान-विषम स्थानमें पीडा करें इसी लिये शत्रुमित्र भाव देखना । २६-२७-२८

राशिका स्वामी और मित्र शत्रु या समभाव देखनेका कोष्टक

राशि	स्वामी	मित्रभाव	शत्रुभाव	समभाव
सिंह	सूर्य	चंद्र-गुरु मंगल	शुक्र शनी	बुध
कर्क	चन्द्र	सूर्य बुध	—	गुरु शुक्र मंगल शनी
मेप वृश्चिक	मंगल	सूर्य-चंद्र गुरु	बुध	शुक्र शनी
मिथुन कन्या	बुध	सूर्य शुक्र	चंद्र	मंगल गुरु शनी
धन मीन	गुरु	सूर्य चंद्र मंगल	बुध-शुक्र	शनी
वृषभ तुला	शुक्र	बुध-शनी	सूर्य मंगल	चंद्र गुरु
मकर कुंभ	शनी	बुध शुक्र	सूर्य चंद्र मंगल	गुरु

રવિ સ્તાનુગોમૈત્રી ગુરુચંદ્રાદિતઃ શુભાઃ ।

શેષા તૃતીયાણા ઇમિર્યુક્તાના શસ્યતે ॥ ૨૯ ॥

રવિમંદે સદા વૈર કુંજમદે તથૈવ ચ

ગુરુથ શુક્રયો વૈરં વૈરંચ બુધ ચંદ્રયોઃ ॥ ૩૦ ॥

રવિને મંગળ તથા ગુરુ અને ચંદ્રને મૈત્રી
ખાકી ત્રણ ગૃહો આથે પણ મૈત્રી રવિ અને શનિને
વૈર મંગળ અને શનિને વૈર, ગુરુ ને બુધ તથા
શુક્રને વૈર, બુધને મોખ ગત્રુ (સૂર્યને શુક્ર શનિને
વૈર) ચંદ્ર ને મંગળ બુધને વૈર શુક્રને મૂર્ધ ચંદ્રને વૈર
શનિને ચંદ્ર મંગળને રવિ આથે વૈર ૨૯-૩૦

રવિ ઓર મંગલ તથા ગુરુ ઓર ચંદ્રકો મૈત્રી,
અન્ય ત્રણ ગ્રહોં કે સાથ મી મૈત્રી, રવિ ઓર શનિનો
વૈર, મંગલ ઓર શનિકો વૈર, ગુરુ ઓર બુધ કો
તથા શુક્રકો વૈર, બુધ ઓર સોમ ગત્રુ (સૂર્યકો શુક્ર,
શનિસે વૈર) ચંદ્ર ઓર મંગલ, બુધકો વૈર, શુક્ર ઓર
સૂર્ય ચંદ્રકો વૈર-શનિકો ચંદ્રસે, મંગલકો રવિસે વૈર ।
૨૯-૩૦ હિતિ ગૃહમૈત્રી અદ્ધ ॥ ૧૦ ॥

ત્રયનાદ્યાત્મકં ચક્રં સર્પાકાર સ્વરૂપકમ્

નવ ભાગાકિતં કુર્યાદશ્વિન્યાદિ ત્રિકં લિખેત્ ॥ ૩૧ ॥

એક નાડી સ્થિત તસ્મિનૃષં ચેદ્ વરુન્યયોઃ

તેન મરણ વિજાનિયાદંશતથે સ્થિતં ત્યજેત્ ॥ ૩૨ ॥

સ્વામિ સેવક મિત્રાણાં ગૃહાણા ગૃહસ્વામિના

રાજા તથા પૌરાણા ચ નાડીવેધઃ સુસ્વાવહઃ ॥ ૩૩ ॥

ત્રણ નાડીની રેખાવાળુ સર્પાકાર રૂપ નવ
ભાગની વાકી આકૃતિવાળુ એક ચક્ર કરવુ તે વાકના
એકેક ભાગમા અનુક્રમે અશ્વિન્યાદિ ત્રણ ત્રણ નક્ષત્રોનુ
જોડકુ સિદ્ધિ પશ્ચિતમા વેધવુ તે રીતે નવસર્પાંગ
ભાગમા સત્તાવીશ નક્ષત્રો લખવા આ સર્પાકાર ચક્રમા
વર અને કન્યાનુ નક્ષત્ર એક નાડીમા આવે તો મૃત્યુ થાય તેથી નક્ષત્ર અશ
તજવા સ્વામિ મેવક, ઘર અને ઘરધણી, રાજા અને નગર, આ જો એક નાડીમા
વેધ થાય તો સુખદાયક બધુવુ ૩૧-૩૨-૩૩



तीन नाडियोंकी रेखावाला सर्पाकार रूप नौ भागकी वक्र आकृतिवाला एक चक्र बनाना । उस वक्राकृतिके एक एक भागमें अनुक्रमसे अश्विन्यादि तीन तीन नक्षत्रोंके युगलको सीधी पंक्तिमें वेधना (लिखना) इस तरह नौ सर्पांग भागमें सत्तावीस नक्षत्रों लिखना । इस सर्पाकार चक्रमें वर और कन्याका नक्षत्र एक नाडीमें आवे तो मृत्यु होती है । इसी लिये नक्षत्र अंशको तजना । स्वामि सेवक, घर और मालिक राजा और नगर—एक नाडीमें उसका वेध हो तो सुखदायक समझना । ३१-३२-३३ इति नाडीवेध अङ्ग ॥ ११ ॥

१२. अधिपति—गेहस्योदयकं क्षेत्रफलेन गुणयेद्बुधः

अष्टभिस्तु हरेच्छेषं शुभः सोऽधिपतिः समः ॥ ३४ ॥

विकृतः कर्णकश्चैवं धूमदो वितथस्वरः

विडालो दुन्दुभिश्चैव दान्तः कान्तोऽधिनायकः ॥ ३५ ॥

बुद्धिमान् शिल्पीये घरनी उल्लिखिता अंकने क्षेत्रक्षणे शुभानां न अंक आवे तेने आठे लागतां न शेष रहे ते अधिपति जाणवो. तेमां सम—येकी अधिपति शुभ जाणवो. अने येकी अंकने अधिपति नेष्ट जाणवो. १ विकृत २ कर्णक ३ धूम्रक ४ वितथस्वर ५ विडाल ६ दुन्दुभि ७ दांत अने ८ कान्त ये आठ अधिपतिनां नाम जाणवां. ३४-३५

बुद्धिमान् शिल्पीको घरके उदयके अंकको क्षेत्रफलसे गुनते जो अंक आवे उसे आठसे भागते जो शेष रहे उसे अधिपति जानना चाहिये । उसमें सम अधिपति शुभ जानना । और विषम अंकके अधिपतिको नेष्ट समझना । १. विकृत २ कर्णक ३ धूम्रन ४ वितथस्वर ५ विडाल ६ दुन्दुभि ७ दांत और ८ कान्त, ये आठ अधिपतिके नाम हैं । ३४-३५.

मतांतर— यदायव्यय संयोगे यदैक्यं वसुभिर्मजेत्

शेष स्त्वधिपतिः केचिन्विषमः स भयावहः ॥ ३६ ॥

अधिपतिनुं गणित करवाने। जीने मत आय अने व्ययना अंकने सरवाणे। करी तेने आठे लागतां शेष रहे ते अधिपति जाणवो. (अधिपतिने। विषम येकी अंक होय ते लय उत्पन्न करे येकी सम शुभ जाणवो.) ३६

अधिपतिका गणित करनेका दूसरा मत—आय और व्ययके अंकका मिलान कर उसे आठसे विभाजित करते जो शेष रहे उसे अधिपति समझना । अधिपतिका विषम अंक भय उत्पन्न करे । सम अंक शुभ समझना । ३६

इत्याधिपति अङ्ग बारहवाँ ॥ १२ ॥

१३ १४ १५

लग्न तिथी वार—आयर्क्षव्यय तारांशाधिपात् क्षेत्रफले क्षिपेत्

अर्के भस्ते भवेल्लग्न मय लग्नेष्ट संगुणे ॥ ३७ ॥

हते शरैः शेषन्तु तिथिर्नाम समं फलम्

तिथौ नघ्नं वारः स्यान्कर्कषोमुनिभिर्हते ॥ ३८ ॥

धरतु गणित करता आवेस आय, नक्षत्र, व्यय, तारा, अशक अने अधिपतिना अकेमा क्षेत्रक्षणना अकना सरवाणाने पारे लागता जे शेष रहे ते लग्न नक्षत्र लग्नना अकने आठे शुष्मिने पदरे लागता शेष रहे ते तिथि वार नक्षत्री तेनु क्षण नाम प्रमाणे छे तिथिने नवे शुष्मिने साते लागता शेष रहे ते वार नक्षत्रे ३७-३८

घरका गणित करते आवे हुए आय, नक्षत्र, व्यय, तारा, अशक और अधिपतिके अकोमे क्षेत्रफलका अक मिलाकर वारहसे विभाजित करते जो शेष रहे उसे लग्न समझना । लग्नके अकको आठसे गुनकर पदरसे विभाजित करते जो शेष रहे उसे तिथि जानना । उसका फल नामके अनुसार है । तिथिको नौसे गुनकर सातसे विभाजित करते जो शेष रहे उसे 'वार' समझना । ३७-३८

लग्नफल-वृषभ सिंह वृश्चिक कुम्भ लग्न उत्तम फलवाले, मिथुन कन्या, धन मिन लग्न मध्यम फलवाले, मेघ कर्क तुला मकर लग्न कनिष्ठ फलवाले हैं । उसमे कनिष्ठ फलवाले लग्नको तज देना ।

तिथिफल-पण्ढमी, एकादशी, एका, नवतिथि-ब्राह्मणके लिये श्रेष्ठ, दूज, सप्तमी, द्वादशी, भद्रातिथि-क्षत्रियके लिये श्रेष्ठ, तृतीया, अष्टमी, त्रयोदशी-वैश्यके लिये श्रेष्ठ, चतुर्थी, नौमी, और चतुर्दशी-विष्णु तिथि-शूद्रके लिये श्रेष्ठ, वशावी और पूर्णिमा देवमदिरोंके लिये श्रेष्ठ उससे उलटी तिथियाँ नेष्ट जानना ।

वारफल-ध्वजाय हो तो रविवार श्रेष्ठ, घृषाय हो तो सोमवार श्रेष्ठ, धूम्राय हो तो मंगलवार श्रेष्ठ, सर और श्वानाय हो तो बुध, गजाय हो तो गुरुवार श्रेष्ठ, ध्वजाय हो तो शुक्रवार श्रेष्ठ, सिंहाय हो तो शनिवार श्रेष्ठ समझना । इससे उलटा तजना ।

वार प्राकारात्तर—क्षेत्ररुद्रगुण कृत्वा सप्तभिर्भागमाहरेत्

शेषरव्यादयोवारा रवि मौमौ विचर्जितौ ॥ ३९ ॥

क्षेत्रक्षणने अज्यारे शुष्मिने साते लागता जे शेष रहे ते अनुक्रमे रवि आदि सात वारे नक्षत्रे तेमा रवि अने मंगलवार तत्प्रा ३९

क्षेत्रफलको ग्यारहसे गुनकर सातसे भागते जो शेष रहे उसे अनुक्रमसे रवि आदि सातवार जानना । उसमे रवि और भोम वारको तजना । ३९

१६. अथोत्पत्ति—नवधनं गृह नक्षत्रं रुद्रसंख्या समन्वितम्

पंचमिस्तु हरेद्भागं शेषमुत्पत्तिः पंचधा ॥ ४० ॥

प्रासाद के घरना नक्षत्रने नवगणुं करवाथी ने अंक आवे तेमां ११ उमेरी सरवाणो करतां ने संख्या थाय तेने पांचे लागतां ने शेष रहे ते पांच प्रकारनी उत्पत्ति जाणवी. ४०

१ वधे तो धान २ वधे तो सुखप्राप्ति ३ वधे तो स्त्री प्राप्ति ४ वधे तो धनप्राप्ति ५ वधे तो पुत्रप्राप्ति थाय.

प्रासाद या घरके नक्षत्रको नौसे गुनकर जो एक आवे उसमें ग्यारह मिलाकर जो संख्या हो उसे पाँचसे विभाजित करते जो शेष रहे उसे पाँच प्रकारकी नक्षत्रकी उत्पत्ति समझना । १ शेष होतो बहुत दान २ शेष हो तो सुख प्राप्ति ३ शेष हो तो स्त्री प्राप्ति ४ शेष हो तो धन प्राप्ति और ५ शेष हो तो पुत्र प्राप्ति होती है । ४० इति उत्पत्ति अङ्ग ॥१६॥

(१७) अथोधिपतिवर्गवैर

नामाक्षर	वर्ग	नामाक्षर	वर्ग
अ-इ-उ-ए का	(१) गरुडवर्ग	त-थ-द-ध-न का	(५) सर्पवर्ग
क-ख-ग-घ-ङ का	(२) विडालवर्ग	प-फ-ब-भ-म का	(६) मूषकवर्ग
च-छ-ज-झ-ञ का	(३) सिंहवर्ग	य-र-ल-व का	(७) मृगवर्ग
ट-ठ-ड-ढ-ण का	(४) श्वानवर्ग	श-ष-स-ह का	(८) मेषवर्ग

गृह और गृहपतिके नामाक्षरपरसे वर्ग निकालना ।

सूर्यो ओतुः सिंहः श्वा सुसर्पास्तु मृग मीढकाः

वर्णाधिपाः क्रमा दृष्टौ भक्ष्यो यः पंचमो मतः ॥ ४१ ॥

१ गरुड २ विडाल ३ सिंह ४ श्वान ५ सर्प ६ उँदर ७ मृग ८ मेष आ आठे अनुक्रमे ते ते वर्णना अधिपति छे. ये अधिपतिना वर्गमां दरेकने तेनाथी पांचमे भक्षक छे, माटे ते तज्यो. १ गरुडने ५ सर्पने वैर ३ सिंह अने ७ मृगने वैर, २ विडालने मूषकने वैर, ४ श्वान अने ८ मेषने वैर ४१.

१ गरुड २ विडाल ३ सिंह ४ श्वान ५ सूर्य ६ मूषक ७ मृग ८ मेष ये आठों अनुक्रमसे अपने अपने वर्गके अधिपति हैं । ये अधिपतिके वर्ग में प्रत्येकका उससे पाँचवाँ भक्षक है । अिसीलिये त्याज्य है । गरुडको ५ सर्प से वैर ३ सिंह और मृगको वैर २ विडाल और मूषकको वैर ४ श्वान और ८ मेषको वैर ४१ इति अधिपति वर्ग अङ्ग ॥१७॥

१८. योनिवैर—अश्वोऽश्विनी शतभयी भरिणी प्रौष्ठमयोगजिः

कृत्तिका पुष्ययोच्छागो रोहिणी मृगयो रहिः ॥४२॥

धाच भूलार्दयोर्योनिः सर्पादित्यो विडालरुः

पूर्वाफा मघयोगशु रफोत्तर ययो स्तुगौः ॥४३॥

हस्त स्यात्योस्तु महिषी व्याघ्रश्चित्रा विशाखयोः

ज्येष्ठानुराधयो रेणः पुषाढा श्रवणे कपिः ॥४४॥

अश्विनी और शतभिया की अश्वयोनि । भरणी और रेवतीकी गजयोनि ॥

कृत्तिका और पुष्यकी अजयोनि । रोहिणी और मृगशीर्षकी सर्पयोनि ॥

मूल और आर्द्राकी श्वानयोनि । आश्लेषा और पुनर्वसुकी विडालयोनि ॥

पूर्वाफाल्गुनी और मघाकी मृगयोनि । उ भाद्रपद और उ फाल्गुनीकी गौयोनि ॥

स्वाति और हस्तकी महिषी योनि । चित्रा और विशाखाकी व्याध योनि ॥

ज्येष्ठा और अनुराधाकी मेढा योनि । पूषा पाढा और श्रवणकी कपियोनि ॥

उ पाढा और अभिजितकी नकुलयोनि । पुषा भाद्रपद और घनिष्ठाकी सिंहयोनि ॥

४२-४३-४४

उपादाभिजितोर्नक्षत्राः सिंहः मिहेः पूमाधनिष्ठयोः

मेघमर्कटयोर्वैरंगो व्याघ्रं गज सिंहयोः ॥४५॥

श्वानैरा सर्पनकुलं विडालोन्दुरके महत् ।

महिषाधमिति त्याज्यं मृत्युः स्त्री भयं वेऽस्मत् ॥४६॥

मेघ योनीको मर्कट योनिसे वैर । गौ योनि और व्याघ्र योनीको वैर ॥

गज योनि और सिंह योनीको वैर । श्वान योनि और श्वानर योनीको वैर ॥

सर्प योनि और नकुल योनीको वैर । विडाल योनि और मृग योनीको वैर ॥

महिष योनि और अश्व योनीको वैर

नक्षत्र और योनिका उपरके अनुसार परस्पर वैर है । जिससे स्त्री और पुरुष गृह और गृहपतिके नक्षत्रोंकी योनियोंका परस्पर वैर तज देना । नहि तो मृत्यु होती है । ४५-४६ इति योनि वैर अङ्ग ॥१८॥

१९. अथ नक्षत्रवैर—त्रैर्योत्तरफाल्गुन्यश्वि युगले स्वाति मरण्योर्द्वयोः ।

रोहिण्युत्तर पादयोः श्रुति पुनर्वस्वो विरोधस्तथा ॥

चित्रा हस्तभयोश्च पुण्यफणिनो ज्येष्ठा विशाखद्वयोः

प्रासादे भवनासने च शयने नक्षत्रवैरं त्यजेत् ॥४७॥

उत्तरा फाल्गुनी और अश्विनीको वैर । रोहिणी और उत्तराषाढाकी वैर ॥

चित्रा और हस्तको वैर । स्वाति और भरणीको वैर ॥

श्रवण और पुनर्वसुको वैर । पुष्य और अश्लेषाको वैर ॥

नक्षत्रों के वैर इस तरह हैं । जिसीलिये प्रासादमें, गृहमें, आसन और शैयामें घर और घरके मालिकके परस्पर वैरको तजना । ४७ इति नक्षत्रवैर अङ्ग ॥१९॥

२१ २७

अथायुष्यत्था विनाश—गुणयेदृष्टभिः क्षेत्रफलं षष्टिविभाजितम्

लब्धं दसगुणं जीवच्छेषं भूत समाहृतम् ॥४८॥

पृथिं व्यापस्तया तेजोवायुराकाशमेव च

पञ्चतत्त्वानि जानीयादंतकाले प्रभेदने ॥४९॥

क्षेत्रक्षणने आठे गुणी साठे लाग देतां जे अंक आवे तेने दशे गुणुतां जे अंक आवे त्यां सुधी ते वास्तुनुं आयुष्य ज्ञाणुवुं. (तेटले समय ते स्थिर रहे) साठेनो लाग देतां जे शेष रहे तेने पांचे लाग देवा ओटले तत्त्व आवेशे जे. जे विनाशना तत्त्वना नाम ज्ञाणुवा. १ वधे तो पृथ्वी २ वधे तो जल तत्त्व ३ वधे तो तेज अग्नि तत्त्व ४ वधे तो वायु तत्त्व ५ वधे तो आकाश तत्त्व विनाश ज्ञाणुवुं. जे पांचेय तत्त्वोथी वास्तुना अंत काणनो लेह ज्ञाणुवो. (८) ४८-४९

क्षेत्रफलको आठसे गुणकर साठकी संख्यासे भागते जो अंक आवे उसको दससे गुणते जो अंक आवे वहाँ तक उस वास्तुका आयुष्य जानना । (उतना समय वह स्थित रहे ।) साठकी संख्यासे भागते जो शेष रहे उसे पाँचकी संख्यासे भागना । जिससे तत्त्व निकलेगा । इसे विनाश के तत्त्वका नाम जानना । १ शेष रहे तो पृथ्वी तत्त्व २ शेष रहे तो जल तत्त्व ३ शेष रहे तो तेज तत्त्व (अग्नि) ४ शेष रहे तो वायु तत्त्व ५ शेष रहे तो आकाश तत्त्व विनाशका जानना । इन पाँचां तत्त्वोंसे वास्तुके अंतकालका भेद जानना । ४८-४९

सच्छिल्पतंत्र नामना ग्रंथमां वास्तु द्रव्यना अधिकार प्रमाणे तेनुं आयुष्य अपावेस छे. उपर कहुं तेम क्षेत्रक्षणने आइगणुं करी साठे लागतां जे आवे ते ज क्षण थयुं ते डांङरी अने भाटीना वास्तुनुं स्थिर आयुष्य ज्ञाणुवुं. ते क्षणने दश गणुं करवाथी छिट अने भाटीने चुनाथी अनेत्र वास्तुनुं आयुष्य ज्ञाणुवुं. ते क्षणने नेवुं गणुं करवाथी पत्थर अने मीसाथी अनेत्र वास्तुनुं आयुष्य ज्ञाणुवुं. ते क्षणने ओक सो सितेर गणुं करवाथी धातुथी अनेत्र वास्तुनुं आयुष्य ज्ञाणुवुं.

सच्छिल्पतंत्र नामके ग्रंथमें वास्तुद्रव्यके अधिकार अनुसार उसकी आयु बताया है । क्षेत्रफलको आठ गुनाकर आठसे भागते जो शेष आवे वह ही फल हुआ । इसे कैंकरी और

द्वि मिः श्रेष्ठं त्रिभिः श्रेष्ठं पंचभिश्चोत्तमोत्तमम्
सप्तभिः सर्वकल्याणम् नवभिः सर्व सपदः ॥५०॥

प्रासाद के घरनु आय नक्षत्रादि जलित करवाभा ओछाभा ओछा जे अग भेजवाया अगर त्रयु अग भेजवे तो श्रेष्ठ, पाच अग भेजवाय तो सर्वथी उत्तम जलुयु अने जे सात अग भेजवाय तो सर्व दृष्ट्याणु डाक जलुयु अने नव अग भेजवाय तो सर्व सपत्तिनी प्राप्ति थाय ५०

प्रासाद या घरके आय, नक्षत्रादिके गणित करते समय कमसे कम दो अङ्ग मिलाना या तो तीन अङ्ग मिलाये जाय तो श्रेष्ठ, पाँच अङ्ग मिलाये जाय तो सर्वसे उत्तम समझना । और जो सात अङ्ग मिलाये जाय तो सर्वकल्याण कारक जानना । और नौ अङ्ग मिलाये जाय तो सर्वसपत्तिकी प्राप्ति होती है । ५०

आयऋक्ष चंद्रगण व्यय तारांशक राशयः ।
राशिमैत्रां ग्रहमैत्री नाडीवेध अधिपतिः ॥५१॥
लग्नतिथिवारोत्पत्ति अधिपति वर्ग वैरं
योनि वैरं ऋक्ष वैरं स्थितिर्नाशक रिशतिः ॥५२॥

प्रासाद के गृहादि वास्तुकार्यभा १ आय २ नक्षत्र ३ व्यय ४ गण ५ व्यय ६ तारा ७ अशक ८ राशि ९ राशिमैत्री १० ग्रहमैत्री ११ नाडीवेध १२ अधिपति १३ लग्न १४ तिथि १५ वार १६ उत्पत्ति १७ अधिपति वर्ग वैर १८ योनि वैर १९ नक्षत्र वैर २० स्थिति अने २१ नाश के गीते ओछ वीश अगे छहो ५१-५२

प्रासाद या गृहादिके वास्तुकार्यमे १ आय २ नक्षत्र ३ चंद्र ४ गण ५ व्यय ६ तारा ७ अशक ८ राशि ९ राशि मैत्री १० ग्रहमैत्री ११ नाडी वेध १२ अधिपति १३ लग्न १४ तिथि १५ वार १६ उत्पत्ति १७ अधिपति वर्ग वैर १८ योनि वैर १९ नक्षत्र वैर २० स्थिति और २१ नाश इस तरह अिकीस अङ्ग कहे । ५१-५२

गुणाश्च बहुवो यत्र दोष मेको भवेद्यदि
गुणाधिक्यं चाल्पदोष कर्तव्यं नात्र संशयः ॥५३॥

मिट्टीके और गडुके वास्तुका स्थिर आयुष्य जानना । उस फरको दस गुना करनेसे इंट मिट्टी और खड़ीसे बने हुए वास्तुका आयुष्य जानना । उस फरको नियायाने गुना करनेसे पत्थर और सीमे से बने हुए वास्तुका आयुष्य जानना । उस फरको एफ सौ सत्तर गुना करनेसे गहसे बने हुए वास्तुका आयुष्य जानना ।

જે વાસ્તુમાં ઘણા ગુણો હોય અને કેઈ એકાદ દોષ હોય તો પણ તે અગર ઘણા ગુણો હોય અને અલ્પદોષ હોય તો પણ તેવાં કાર્ય નિર્દોષ જાણવાં. તેમાં કદિ પણ શંકા ન રાખવી જેમ અગ્નિમાં જળનાં થોડાં બિંદુ અસર કરતાં નથી તેમ તે જાણવું. ૫૩

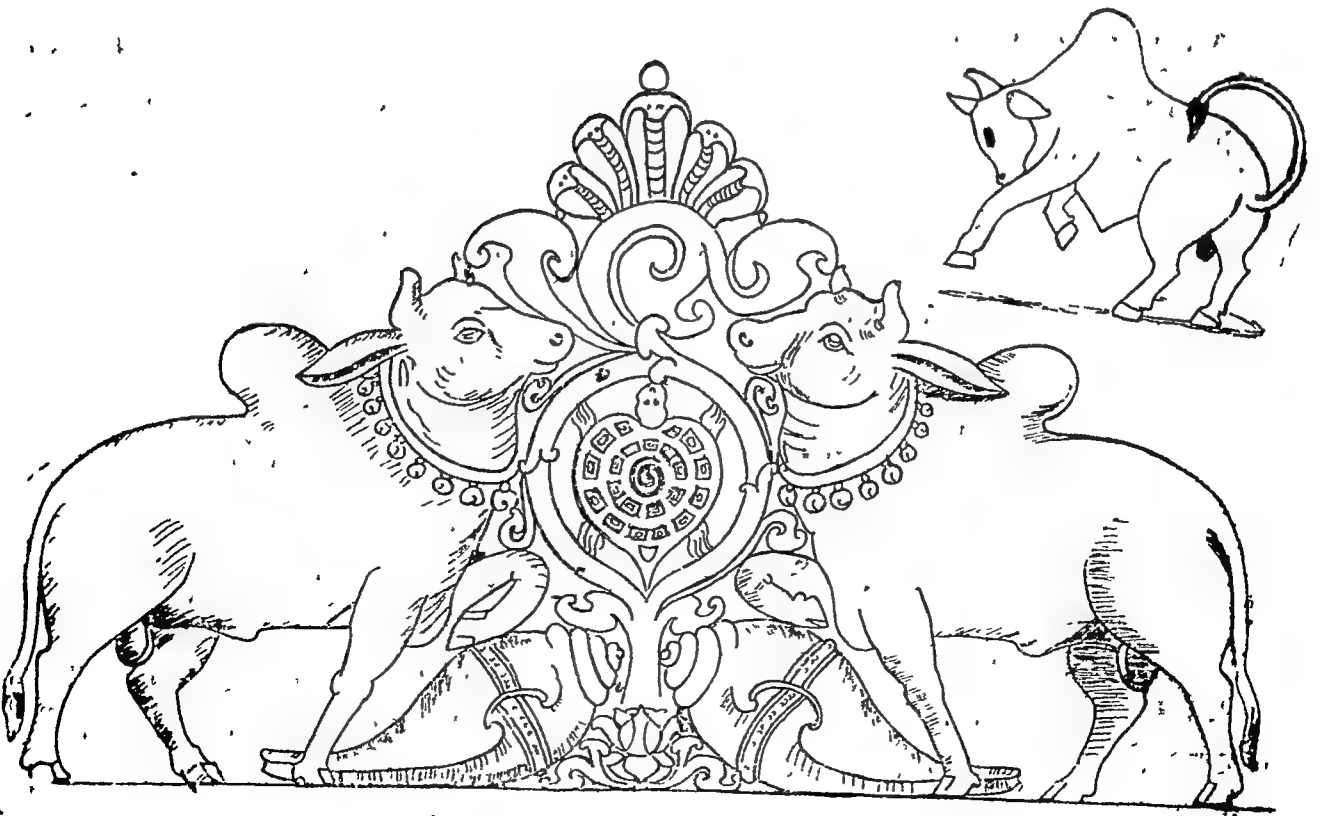
जिस वास्तुमें बहुत गुण हों और किंचित् एक दोष हो तो भी या बहुत गुण होने पर भी अल्प दोष होता भी तो वैसे कार्यको निर्दोष समझना । इसमें कभी संशय नहीं करना । जिस तरह अग्निमें जलके थोड़े बिन्दु असर नहीं करते हैं इस तरह समझना । ५३

इति श्री विश्वकर्मा कृते क्षीरार्णवे नारद पृच्छायां आयव्ययादि गणिताधिकारे
नवनति तमोऽध्याय ॥ ९९ ॥ (क्रमांक अ. १)

इति श्री शिल्प विशारद स्थपति प्रभाशंकर ओषडभाई सोमपुरा अनुवादित विश्वकर्मा और
नारदजीके संवादरूप क्षीरार्णव वास्तुशास्त्रका आयव्ययादि गणिताधिकार निन्यानवे ॥ ९९ ॥

अध्याय पर सुप्रभा नाम्नी भाषा टीका ॥ ९९ ॥ (क्रमांक अ. १)

ઈતિ શ્રી શિલ્પ વિશારદ સ્થાપિત પ્રભાશંકર ઓષડભાઈ સોમપુરા અનુવાદિત વિશ્વકર્મા અને
નારદજીના સંવાદરૂપ ક્ષીરાર્ણવ વાસ્તુ શાસ્ત્રના આયવ્યયાદિ ગણિતાધિકાર ૯૯ મા
અધ્યાય પર સુપ્રભા નામની ભાષા ટીકા. ૯૯



जगती लक्षणम्

क्षीरणव अ० १००—क्रमाक अ० २

श्री विश्वकर्मा उवाच—

अथातः संप्रवक्ष्यामि जगती लक्षणं रिपि
प्रासादो लिङ्गमित्युक्तं जगती पीठ मेख ॥ १ ॥
सा चा मुढ दिशा भागा मनोज्ञा सर्वतः प्लवा
प्रतिहारी देवकुलं विभागा नामतः परे ॥ २ ॥

श्री विश्वकर्मा कहे छे डे डे डे ऋषिराज, हुये हु तमने प्रासादनी जगतीना
लक्षण कहुं छु प्रासाद शिवलिङ्ग रूप छे अने जगती पीठ जगन्नाथारी रूप
जगन्नाथी ते द्विभूट न होय तेची दिशाविभागमा अने मनने आनंद आपनारी
अने उपरथी सर्व तरङ्ग पाणीना ढाणवाणी तेची जगती शुभ जगन्नाथ तेमा देवना
प्रतिहारी अने देवकुलना स्वर्ग्यो करवा तेना विभाग परथी (६४) नामे कहे
छे १-२

श्री विश्वकर्मा कहते हैं—हे ऋषिराज, अब मैं आपको जगतीके लक्षण
बताता हूँ। प्रासाद शिवलिङ्ग स्वरूप है। और जगती पीठ—जलधारी रूप है।
यह दिङ्मूढ न हो वैसी दिशाके विभागमे और मनोरजनी और उपरसे सर्व
पाजुमे जलके ढालनाली जगतीको शुभ समझना। उसमे देवके प्रतिहारों और
देवकुलके स्वरूपकरना। उसके विभाग परसे (६४) नाम कहे हैं। १-२

प्रासादस्यानुमानेन जगति विस्तरो भवेत्
प्रथमा पद्गुणा प्रोक्ता द्वितीया च चतुर्गुणा ॥ ३ ॥
तृतीया द्विगुणाख्याता पञ्चगुणा थवा भवेत्
पृथमा कनिष्ठा प्रोक्ता द्वितीया चैव मध्यमा ॥ ४ ॥
तृतीया ज्येष्ठ मित्युक्ता चतुर्था सर्वा भवेत्
ज्ञातव्या क्रमयोगेन सर्वशिल्पि विशारदः ॥ ५ ॥

(१) इससे मिलते जुलते पाठ ज्ञानरत्न कोशके प्राचीन शिल्प ग्रंथमे दिये हुए हैं। जगतीका
अर्थ सामान्यतया प्रासादकी चारों ओरका ओटा, दूसरे अर्थमा प्रासादकी सीमा—मर्यादा अर्थात्
उतने विस्तारमें उस प्रासादका दुर्ग ऐसा किया जाता है। ऐसा द्वाविड शिल्पमे विशेष है।
साधार प्रासादमें सीमा मर्यादा, दुर्ग—किला ऐसा मेरा मन्त्र अभिप्राय है। निरेधार प्रासादके

પ્રાસાદના વિસ્તાર માનથી જગતીનું વિસ્તાર માન કહે છે. પહેલી છ ગણી જગતી કનિષ્ઠ માનને કહી છે. બીજી ચારગણી મધ્યમાનને કહી છે. અને ત્રીજી બ્રમણી જગતી પહેાળી રાખવાનું જ્યેષ્ઠ માનને કહ્યું છે. અને ચોથું પ્રાસાદથી પાંચ ગણી જગતી પહેાળી રાખવાનું સર્વને કહ્યું છે. એ રીતના ક્રમયોગથી સર્વ શિલ્પના જ્ઞાતા વિશારદે જાણવું. ૩-૪-૫

પ્રાસાદકે વિસ્તારમાનસે જગતીકા વિસ્તારમાન કહા જાતા હૈ । પ્રથમો છઃ ગુની જગતી કનિષ્ઠમાનકો કહી હૈ । દૂસરી ચાર ગુની મધ્યમાનકી કહી હૈ । ઔર તીસરી દૂગુની જગતી ચૌડી રચનેકા જ્યેષ્ઠ માનકો કહા હૈ । ઔર ચૌથી પ્રાસાદસે પાંચ ગુની જગતી ચૌડી રચનેકે લિયે સર્વકો કહા હૈ । ઇસ પ્રકારકે ક્રમ યોગસે સર્વ શિલ્પકે જ્ઞાતા વિશારદોંકો સમજના । ૩-૪-૫

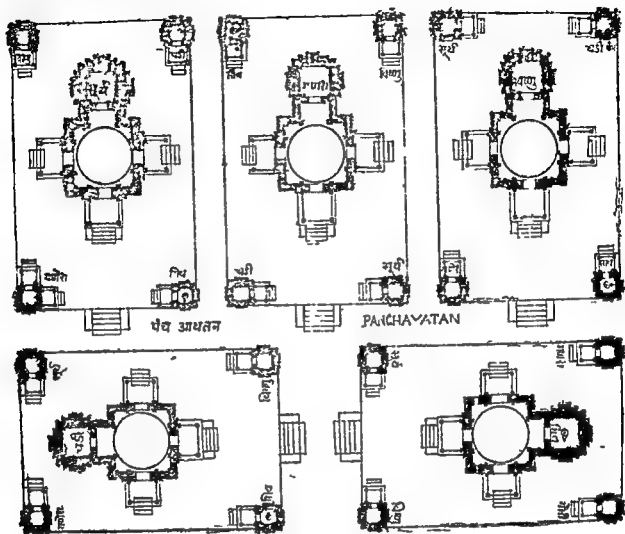
ભ્રમણી કન્યસે ચૈકા મધ્યમે ભ્રમણી દ્વયમ્
જ્યેષ્ઠયા ત્રય ભ્રમણ્યા ચ શાલા ત્રિશાલિકા ॥ ૬ ॥
ભ્રમણી ત્રિભાગોત્સેધે યાવત્ મૂલ પ્રાસાદકમ્
તથૈવાનુક્રમેૈર્વૃદ્ધિ ભ્રમેણ્યો પરિજ્ઞાયતે ॥ ૭ ॥

કનિષ્ઠ માનને એક બ્રમણી કરવી. મધ્યમાનને બે બ્રમણી (નીચે ઉપર બે ટપ્પે બે ભ્રમ પ્રદક્ષિણા) કરવી અને જ્યેષ્ઠ માનને ત્રણ બ્રમણી (ત્રણ ટપ્પે પ્રદક્ષિણા) કરવી. આગળ શાલા કે ત્રિશાલ કરવી. બ્રમણીના ટપ્પાની ઊંચાઈ-મૂળ પ્રાસાદથી ત્રણ ભાગ કરીને રાખવી તેવા ક્રમ અને યોગથી તેની ઉપર કરતાં નીચેની વૃદ્ધિ રાખવી. ૬-૭

કનિષ્ઠમાનકો એક ભ્રમણ કરના । મધ્યમાનકો દો ભ્રમણી (નીચે ઉપર દો ટપ્પેમેં દો ભ્રમ પ્રદક્ષિણાં) કરના । ઔર જ્યેષ્ઠમાનકો ત્રીન ભ્રમણી (ત્રીન ટપ્પોં મેં પ્રદક્ષિણાં કરના । આગે શાલા યા ત્રિશાલા કરના । ભ્રમણીકે ટપ્પેકી ઝૂંચાઈ મંદિરોંકો ચારોં ઓરકા ઓટા યહ અર્થે બરાબર લગતા હૈ । ડાકે ઉદયમેં ઘાટ હો ઔર નિરંધાર પ્રાસાદોંમેં દુર્ગકે આગે પ્રવેશ દ્વાર ડાકે પર ગોપુરમ્ ઔર પ્રતોલી એસા દ્રવિડ મંદિરોંમેં વર્તમાનમેં દેખા જાતા હૈ ।

(૧) આને મળતા પાઠો જ્ઞાનરત્નકોશના પ્રાચીન શિલ્પગ્રંથમાં આપેલ છે. જગતી એટલે સામાન્ય રીતે પ્રાસાદની ફરતો ઓટલો. બીજા અર્થમાં પ્રાસાદની સીમા મર્યાદા એટલે તેટલા વિસ્તારમાં તે પ્રાસાદનો ગઢ કે કિલ્લો કરવામાં આવે છે, આવું દ્રવિડ શિલ્પમાં વિશેષ છે. સાંધાર પ્રાસાદમાં સીમા મર્યાદા દુર્ગ કિલ્લો એમ મારો નમ્ર અભિપ્રાય છે નિરંધાર પ્રાસાદનાં મંદિરોને ફરતો ઓટલો અર્થ વધુ બંધ બેસે છે. તેના ઉદયમાં ઘાટ થાય અને સાંધાર પ્રાસાદમાં પ્રાસાદની સીમા મર્યાદાના દુર્ગને આગળ દરવાજો તેના પર ગોપુરમ્ પ્રતોલી આવું દ્રવિડ મંદિરોમાં હાલમાં જોવામાં આવે છે.

मूल प्रासादसे तीन भागकी करके रखना । वैसे कम और योगसे उसकी उपरसे अधिक नीचेकी घृद्धि करना । ६-७

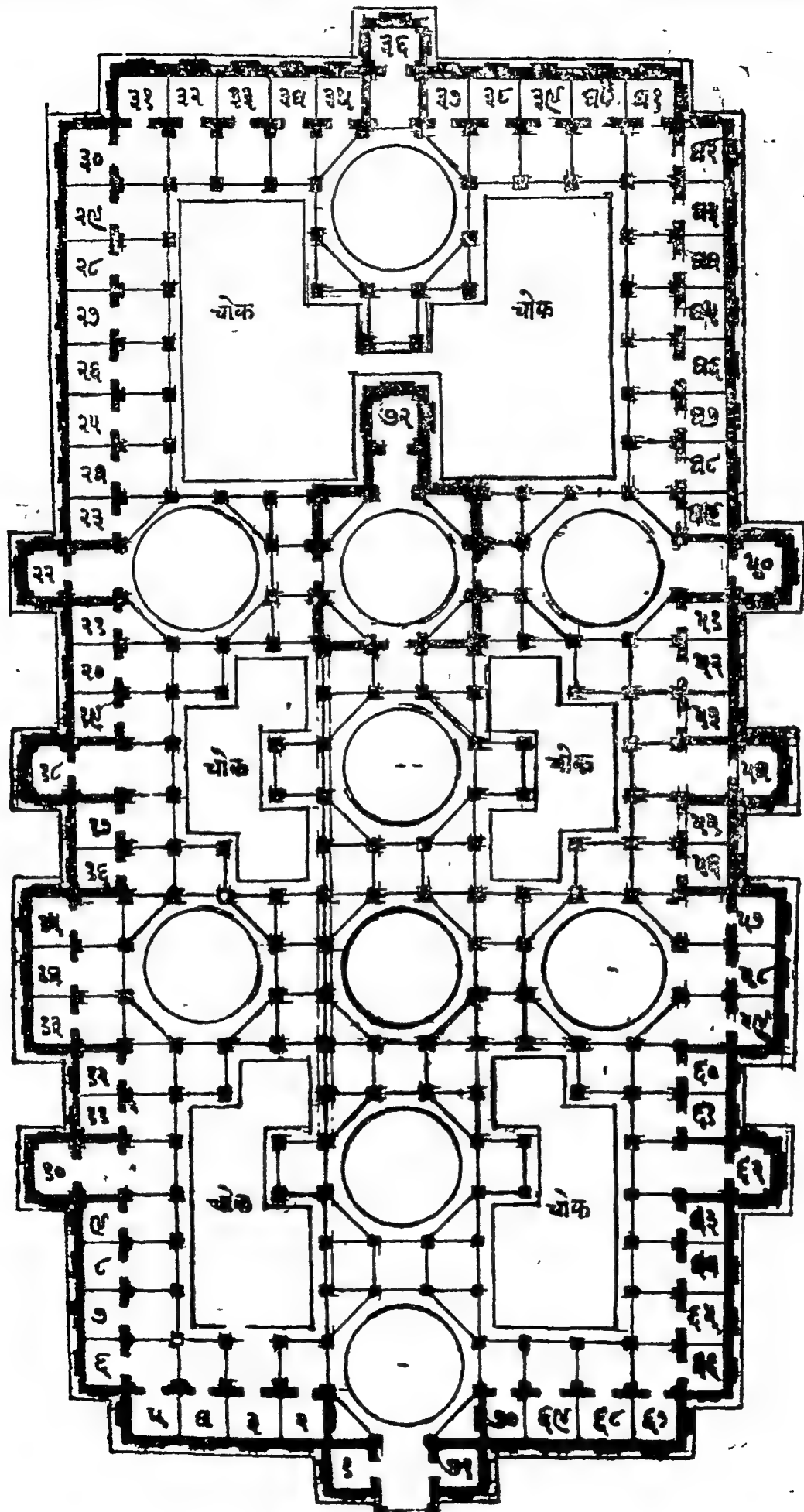


पंचदेवोक्त पंचायतन-जगती

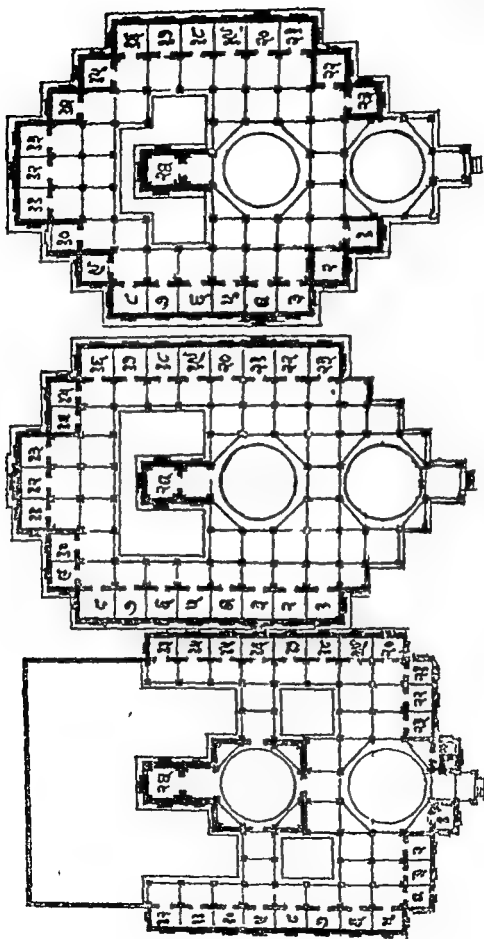
२३करद्वादशेश्वांशं शालात्र्यंशं द्वाविंशके
द्वात्रिंशतिश्चतुर्थांशं सा भूताश शतार्धिके ॥ ८ ॥
एव मन्यश्चकर्तव्यो जगतीनां समुच्छ्रयं ॥ ९ ॥

(२) जगताकी ऊर्चाईका दूसरा मान भी अन्व ग्रथामे कहा गया है । १ हाथके प्रासादकी १ हाथ तक जगती करना, दो हाथके प्रासादको डेढ़ हाथ ऊँची जगती करना । तीन हाथके प्रासादको दो हाथकी चार हाथके प्रासादको ढाई हाथकी-पाँचसे बारह हाथके प्रासादको जगतीकी ऊँचाई प्रासादके अर्ध भागकी करना । तेरहसे चौबीस हाथके प्रासादको प्रासादके तीसरे भाग पर जगती ऊँची करना । पचीससे पचास हाथके प्रासादको जगतीकी ऊँचाई प्रासादके चौथे भाग पर ऊँची करना । इस तरह दूसरा मान कहा है । जगतीको समुद्र ज्यादा रखनेके लिये कहा है क्यों कि आगे देखना हो तो महोत्सव हो सके ।

(२) जगतीनी बियाधुतु पीलु मान अन्य ग्रथोमा ठडे छे ओर दाथना प्रासादने १ दाथ सुधी जगती करपी, थे दाथना ने दोः दाथ बिया जगती करपी त्रयु दाथना ने



चावन जिनायतन की जगती



तीन प्रकारे चौविचा विनायकन कम और उसकी जगती

એક થી બાર હાથ સુધીના પ્રાસાદની જગતી પ્રત્યેક ગળે અર્ધા અર્ધા ગજની ઊંચી કરવી. તેર થી બાવીશ હાથના પ્રાસાદને ગજના ત્રીજા ભાગની (આઠ આઠ આંગળની વૃદ્ધિથી ઊંચી કરવી. તેત્રીશથી પચાસ હાથના પ્રાસાદની જગતી પ્રાસાદના પ્રત્યેક ગળે ગજના પાંચમા ભાગની (ચાર આંગળ અને ૬½ દોરા) ની વૃદ્ધિથી ઊંચી કરતા જવું. એ રીતે જગતીની ઊંચાઈનું માન બાણી કરવું. ૮-૮

एकसे बारह हाथ तकके प्रासादकी जगतीको प्रत्येक गज पर आधे गजकी ऊँची करना । तेरहसे बाईश हाथके प्रासादकी जगतीको गजके तीसरे भागकी (आठ आठ अँगुलकी वृद्धि से) करना । तेईशसे बत्तीस हाथके प्रासादकी जगतीको गजके चौथे भागकी (छः छः अँगुलकी वृद्धि से) ऊँची करना । तेतीस से पचास हाथके प्रासादकी जगतीको—प्रासादके प्रत्येक गज पर गजके पाँचवें भागकी (चार अँगुल—६½ धागेकी वृद्धिसे) ऊँची करते जाना । इस प्रकार जगतीकी ऊँचाईका मान जान लेना । ८-९

‘रससप्तगुणा ख्याता युक्तिपर्याय संस्थिता

योगिन्योत्रिपुरूपे च सहस्रायतनो शिव ॥ ८ ॥

એ હાથની, ચાર હાથના ને અઠી હાથની, પાંચથી બાર હાથનાનો જગતીની ઊંચાઈ પ્રાસાદના અર્ધ ભાગે કરવી. તેરથી ચોવીશ હાથના પ્રાસાદના ત્રીજે ભાગે જગતી ઊંચી કરવી. પચ્ચી-શથી પચાસ હાથના પ્રાસાદને જગતીની ઊંચાઈ પ્રાસાદના ચોથે ભાગે કરવી. આમ બીજું માન કહેલ છે. જગતી સન્મુખ વધુ નીકળતી રાખવાનું કહ્યું છે. આગળ જગ્યા હોય તો મહોત્સવો થાય.

(३) जगतीके विस्तारके लिये तो श्लोक ८ में कहा गया है । इसके अनुसार मुख्य मंदिरकी चारों ओर सहस्रलिङ्ग का आयतन, चौबीस अवतारके चारों ओर मंदिर, ब्रह्माके चार रूपके चारों ओरके मंदिर, शिवके ग्यारह रुद्रके मंदिर, चौसठ योनियोंकी ६४ देव कुलिकायें, जिन-तीर्थकरकी फिरती चौबीस वावन, वहाँतर या एकसौ आठ जिनायतन देवकुलिकाये, गणपतिके ३२ स्वरूपकी देवकुलिकायें, इस तरह अन्य देव-देवियोंके विशेष पर्याय रूपोंकी चारों ओर देव कुलिकाओंसे युक्त प्रासाद और पंचायतन करनेका हो तब वह छः सात गुने से भी विशेष विस्तारमें लेना पड़ता है, उससे कम भी हो सकता है ।

(३) જગતીના માટેનો શ્લોક ૮ માં કહ્યા પ્રમાણે મુખ્ય મંદિર કરતું સહસ્ત્રલિંગનું આયતન, ચોવીશ અવતારનાં કરતાં મંદિરો બ્રહ્માનાં ચાર રૂપનાં કરતાં મંદિરો શિવના એકાદશ રૂપનાં મંદિરો, ચોસઠ યોગિનીઓની દેવ કુલિકાઓ, જન તીર્થ કરના કરતી ૨૪ પર-૭૨ કે ૧૦૮ જિનાયતન દેવકુલિકાઓ, ગણપતિના બત્રીશ સ્વરૂપની દેવકુલિકાઓ એ રીતે અન્ય દેવદેવીઓના વિશેષ પર્યાય રૂપોની કરતી દેવકુલીકાઓ યુક્ત પ્રાસાદ કરવાનો કે પંચાયત મંદિર હોય ત્યારે તે ૭ સાત ગણાથી પણ વિશેષ વિસ્તારમાં લેવું પડે છે, તેથી ઓછું પણ થાય.

पञ्चिना मायेना भद्रिनेनो ओटवो योमठ योगिनीयो, विष्णुना योवीश
अपतागना आयतनो के गिवना महुआयतननी देगीओ (के जिन तीर्थ करेना
२४-५२-७२-८४ के १०८ जिनायतनो) ना पयाटातन भद्रिरो भाउ तेना
प्रभाषुथी युक्तिथी तेनो विन्ता ७ सात गणो जगतीनो गणवो ८

परिवारके माथके मद्रिगेको चौसठ योगिनीयों, विष्णुके चौनीस अवतारके
आयतनो या शिखी सहमायतनी देरियाँ (जिन-तीर्थकरेके २४-५२-७२-८४ या
१०८ जिनायतनों) के लिये जम्मे प्रमाणकी युक्तिसे उसका निस्तार ७ सात
गुना रखना । ८

एतत्तो जगत्योदयं (संगृह्य) सप्तसार्ध विभाजते
भागार्धसुरकं ज्ञेयं पादोनं जाड्य कुंभकम् ॥१०॥
भागार्धकर्णकं कुर्यात् पादोनं सरपत्रिका
भागार्ध सुरकं कार्यं सार्धं भागं तु कुंभकम् ॥११॥
पादोनं भागं मुत्सेयं कलशं कुर्याद्विचक्षणं
भागार्धन्नातर्पत्रं पादोनं कपोतिका ॥१२॥
पुष्पकंठच भागैकं निर्गमं भागं द्वयम्
एतत् कथितं सर्वं जगतीना समुद्धिया ॥१३॥

जगतीना आवेला उदय भानभा माडासात भाग क्वा तेभा अर्धा लागनो
अशे, पोषा लागनो लडयो, अर्धा लागनी कृषी, पोषा लागनी छलुआम
यट्टी ते उपर अर्धा लागनो अशे, होठ लागनो कुलो, पोषा लागनो कणशे,
अर्धा लागनी अधारी, पोषा लागनी देवाण अने ओक लागनो पुष्प कंठ गलतो
(पडोणी अधारी माये) कृषी तेना नीकाणो (अधारीथी जग सुधीनो) ये लागनो
राखवो आ जगतीनी जियाधना भाग क्वा

जगतीके आवे हुए उदयमानमे साढेसात भाग करना । उसमे जावे भागका
ररा, पौने भागका जाडवा, आवे भागकी कणी, पौने भागकी छजीप्रासपट्टी
उसके उपर आवे भागका खुग, डेढ भागका बुभा, पौने भागका कलश,
आवे भागकी अधारी, पौने भागकी केवाल, और एक भागका पुष्पकठ गलता
(चौडी अधारीके साथ) कर उसका नीकाळा (अधारीसे गये तकका) दो भागका
रखना । इस तरह जगतीकी ऊँचाईके भाग कहें । १०-११-१२-१३

देव्यासुदिकपालाश्च यथा स्थानंप्रकल्पयेत्
प्रासाद पश्चिमे भद्रे जगत्या त्रयं कुमारिका ॥१४॥



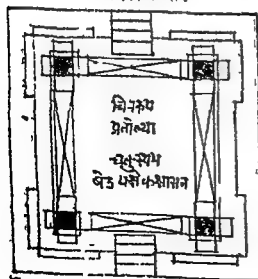
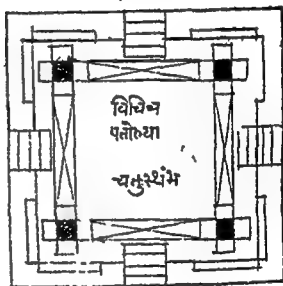
देव प्रासादनी जगतीमां—उदयमां यथास्थाने द्विशा प्रभाषे द्विक्पालोना स्वइपो वगेरेनां स्वइपो इरवां. प्रासादनी पाछण जगतीना
 लद्रमां त्रणु कुमारिकाव्यो नां प्रातः मध्याह्न ने संध्यानां स्वइपो इरवां १४

देव प्रासादकी जगतीके उदयमे यथास्थान पर दिशाके अनुसार दिग्पालोके स्वरूप वगैरह देवोंके स्वरूप करना । प्रासादके पीछे जगतीके भद्रमे तीन कुमारिका-ओंका (प्रातः मध्याह्न और संध्याके) स्वरूप करना । १४

प्रासाद विस्तरं तुल्यं प्रासादाद्वै प्रमाणत
पादेनं वाथ कर्तव्यं सोपाना याम किंसित ॥१५॥
शुंडिकासन विज्ञेया तत्पदे गंड विस्तरम्
द्वितीयं तत्समं ज्ञेयं शुंडिकोऽभय स्थिता ॥१६॥



प्रतोल्या स्वरूप



P.O.S.

भद्रनिर्गम तुल्यं तु जगती गंड निर्गमा
द्वितीयं तत्समं कार्यं प्रतिहारास्तदग्रत ॥१७॥
मूल नायक यन्मानं तन्मानात्पादवर्जितं
तत्समं प्रतिहारा द्वारेच वामदक्षिणे ॥१८॥

प्रासाद जेटलो के तेथी अर्ध के पोणु लागना पडोणा आगण पगथियां करवां. जे भाजु हाथीनी सुंठनी आकृतिना थोथा लागे गंडस्थल हाथणीओ पडोणो राखवो. भीजे तेना जेटलो जे भाजु हाथणीओ करवी. लद्रना नीकाणा थराथर जगतीना गंडस्थलनो नीकाणो राखवो. भीजे पणु तेटलो न करवो. अने तेनाथी आगण निक्षणता प्रतिहारोनां स्वरूपो करवां मूल नायकमूल मंदिरमां पधरावेद देवना मानथी तेनाथी पोणु के तेटला प्रतिहारनां स्वरूपो डाणी नमणी तरइ करवां. १५-१६-१७-१८

प्रासादके बराबर या उससे आगे या पौने भागके चौडे पगथिये आगेके भागमें करना । दोनों तरफ हाथीकी सुंठकी आकृति, चौथे भागपर गंडस्थल विशाल रखना । दूसरा भी उसके बराबर, दोनों तरफ हाथिने करना । भद्रके नीकालेके बराबर जगतीके गंडस्थलका नीकाला रखना । दूसरा भी उतना ही करना । और उसमेंसे आगे निकलते प्रतिहारोंके स्वरूप करना । मूल नायक—मूल मंदिरमें पधराये हुए देवके मानसे उससे पौने या उसके बराबर प्रतिहारके स्वरूप बायीं दायीं ओर करना । १५-१६-१७-१८

बलाणक जगत्योर्द्ध्वे ग्रस्त वामन नामतः

जगत्योपरिमत्तवारण सन्मुखो वामदक्षिणे ॥१९॥

जगतीनी उपर आगण नीक्षणतुं अगर जगतीना उदयमां सभाय तेटली जिंआधना मंडपने ते पर वामन नामनुं भलाणुक कछुं छे. जगतीनी उपर (भलाणुक करतां भाडी रहे त्यां) सन्मुख अने डाणी नमणी तरइ मत्तवारण कक्षासनो करवां.

जगतीके उपर आगे निकलता अगर जगतीके उदयमें समा सके १६ ईतनी ऊंचाई के मंडपको उसके पर 'वामन' नामक बलाणक कहा है । जगतीके उपर (बलाकण करते बाकी रहे वहाँ) सन्मुख और बायीं-दायीं तरफ मत्तवारण कक्षासनों करना । १९

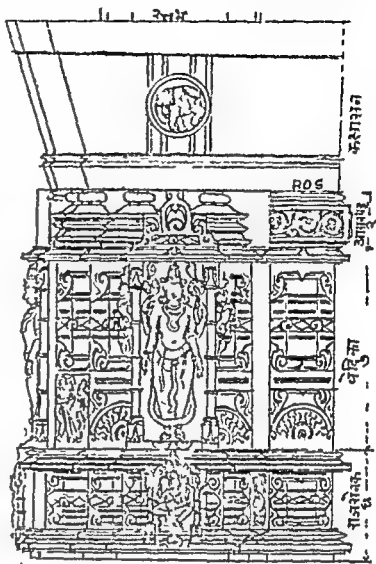
राजसेनश्चतुर्भागे भारपुत्तलिकायुतः

वेदिका रूपसंघाटैः सप्तभाग समुच्छ्रितै ॥२०॥

द्विपदचासनपदं कूटागारैः समन्वितम्

लिलासनं सुखार्थं च कक्षासन करोन्नतम् ॥२१॥

જગતી ઉપર મત્તવાણુ કંવાના ભાગ કહે છે ગન્સેનક આગ ભાગનું કરવું તેમા ભાગ પુત્તલીકાના લામના માથે તે કરવું આન ભાગ બાંચી વેદિકા દેવગ ધર્વાદિ સ્વરૂપ અને વેણી રાશિયાના ઘાટવાળી કંવી તે પર બે ભાગ બડો ચપટ થગ્નો આમન પદ્મ કંવો તેમા આગળના ભાગમા કૂટ-ગ્રામ-મુખ અને દોડીયા વગેરે ઘાટવાળા મુદર બનાવવા તેના પર મુખથી તકીયાની જેમ બેઠવાને કક્ષામન એક હાથ બીજુ કરવું ૨૦-૨૧



જગતીકે ઉપર મત્તવારણ કરનેકે ભાગ કહેતે હૈ । રાજ-સેનક ચાર ભાગકા કરના । ઉસમે મારપુત્તલિકાકા લામસાકે સાથ વહ કરના । સાત ભાગ કૈંચી વેદિકા દેવ ગધર્વાદિ સ્વરૂપ (ઔર વેની રાશિયાકે) ઘાટમાલી કરના । ઉસકે પર બે ભાગ મોટા સપાટ ધરકા આસનપટ કરના । ઉસમે આગે કે ભાગમે કૂટ ગ્રામ-મુખ ઔર દોડિયા વગેરહ ઘાટમાલા મુદર બનાના । ઉસકે પરસુસેમ સનદકી તરહ બેઠનેકે લિયે કક્ષામન એક હાથકા કુવા કરના । ૨૦-૨૧

રાજસેવક, વેદિકા, આસનપટ, કક્ષામન

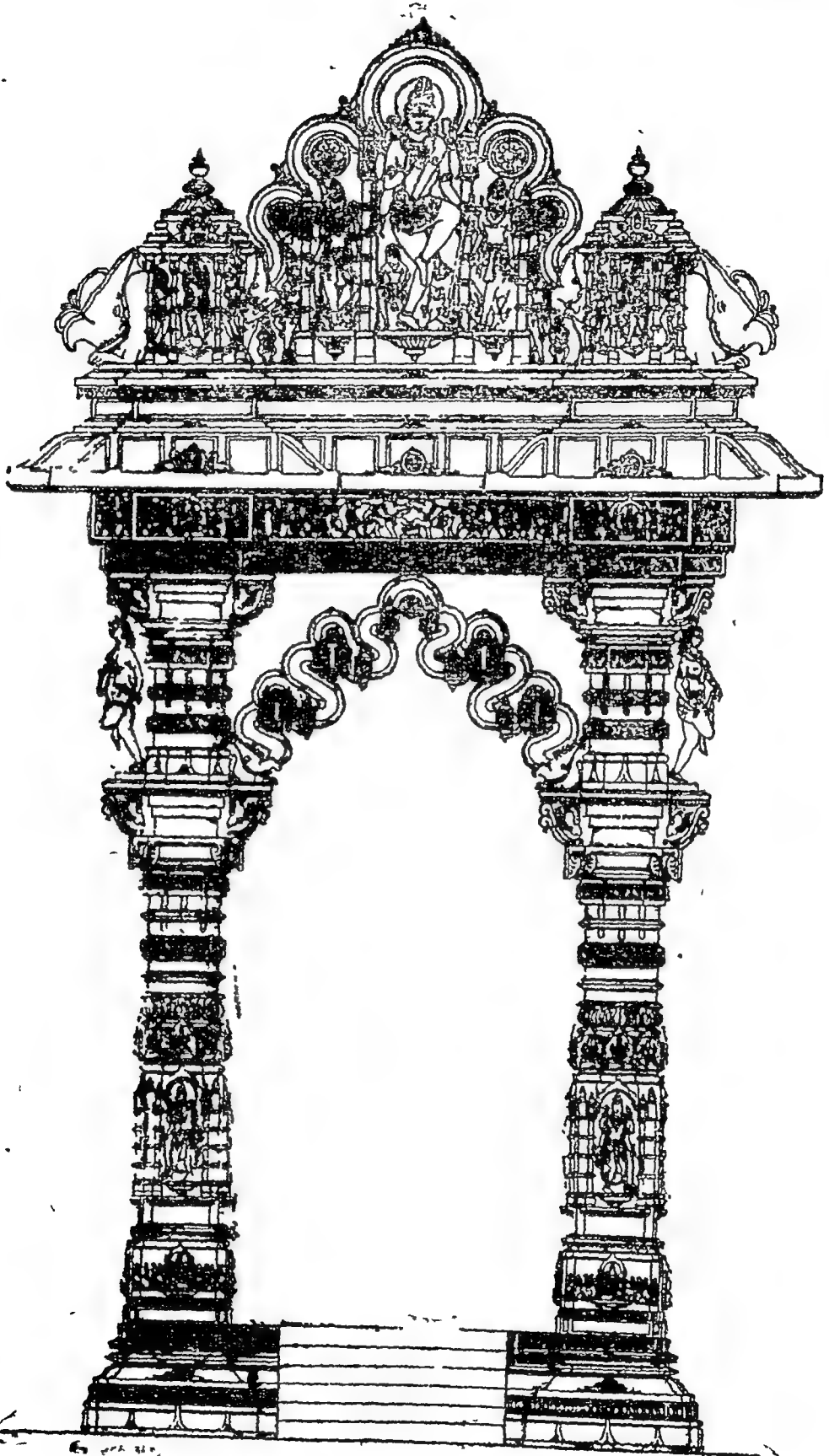
મંડપાગ્રે શુંડિકાગ્રે ચ પ્રતોલ્યાગ્રે તંયન ચ ।

તોરણં ત્રિવિધં જ્ઞેયં જ્યેષ્ઠ મધ્ય કનિષ્ઠકમ્ ॥૨૨॥

સ્તંભગર્ભે મિત્તિગર્ભે તન્મધ્યે ચ વિચક્ષણં

તોરણ સ્પોમય સ્તંભે વ્રહ્મગર્ભેતુ સંસ્થિતૌ ॥૨૩॥

મ ઠપની આગળ પગથિયા, હાથણીનો આગળ પ્રતોલ્યા કંવી તે તોરણ ત્રણ પ્રકારના જ્યેષ્ઠ મધ્યમ અને કનિષ્ઠ એ ત્રણ માનના તોરણ કંવા ચોક્કીના સ્થાનના ગર્ભ ૨ પ્રામાદની સિતના ગર્ભ ૩ તે બે વચ્ચે એટલે ચોક્કી થાલલા



પીઠયુક્ત રૂપસ્તમ્ભ-ફલિકા તોરણ-પ્રવેશ પ્રતોલ્યા

સિંતની વચ્ચે એમ ત્રણ પ્રકારે મધ્યનો ઊભો પ્રદ્મગર્ભ સાચવીને તેની બે બાજુ તોરણના સ્થંભો ઊભા કરવા, ૨૨-૨૩

मडपके आगे पगधिये, हाधिनके आगे प्रतोल्या करना । उसमें तोरण तीन प्रकारके ज्येष्ठ, मध्यम और कनिष्ठ मानके करना । १ चौकीके स्तभ के गर्भ २ प्रासादकी दिवारके गर्भ ३ उन दोनोंके विच अर्थात् चौकी, स्तभ और दिवारके विच गर्भ ये तीन प्रकारसे मध्यके खडे ब्रह्म गर्भको सम्हालकर उसकी दोनों तरफ तोरणके स्तभ करना । २२-२३

व्योमो वृषभ सिंहश्च गरुडो हंस एव च

एकादि सप्तातर चतुष्क्रिका कर्तुं फलप्रदा ॥२४॥

विमान नदी सिंह गरुड के हंस आदि देव वाहनोनु स्थान अेक थी सात पदना अतरे चतुष्क्रिका करीने कवु के म डप कवाधी कताने क्षण भणे छे २४

विमान, नदी, सिंह, गरुड, या हंस आदि देव वाहनोका स्थान एक से सात पदके अतरसे चतुष्क्रिका करके करना जिससे मडप करनेसे कर्ताको फल मिलता है । २४

प्रतोली चाग्रत कार्या कपाटपुट संयुता

द्रवार्गला च कर्तव्या कथ्यतेऽथोक्त्य ॥२५॥

प्रतोल्यानी आगण गढ-दुर्गानी भग्नुत आगणियावाणा कभाडनी जेड करवानु कछु छे २५

प्रतोल्याके आगे दुर्गके मजबूत आधारवाले किवाड़की जोड करनेके लिये कहा है । २५

इति श्री विश्वकर्मा कृते क्षीरार्णवे नारद पृच्छाया जगतीं लक्षणाधिकारे द्रत तमोऽध्याय ॥ १०० ॥ (क्रमांक अ० २)

इति श्री शिल्प विशागद स्थपति प्रभाकर ओषडभाई सोमपुरा अनुवादित श्री विश्वकर्मा अने नारदल्लना सवादइप क्षीरार्णव वास्तुशास्त्रना जगती लक्षणाधिकारना १०० भा अध्याय ५० सुप्रभा नामनी लापा टीका. (१००)

इति श्री शिल्पनिशारद स्थपति प्रभाकर ओषडभाई सोमपुरा अनुवादित श्री विश्वकर्मा और नारदके मराठरूप क्षीरार्णव वास्तुशास्त्रके प्रासाद जगतीं लक्षणाधिकारके १०० वें अध्याय पर सुप्रभा नामकी भाषा टीका । १०० (क्रमांक अ० २)

॥ अथ कूर्मशिलानिवेशनम् ॥

क्षीरार्णव अ० १०१-क्रमांक अ० ३

श्री विश्वकर्मा उवाच—

एक हस्ते तु प्रासादे शिला वेदोङ्गुला भवेत् ।

द्वयङ्गुला भवेद्वृद्धि यावत्दशहस्तकं ॥ १ ॥

दशोर्ध्वं विंशपर्यन्तं हस्ते हस्तैकं मङ्गुलं ।

अर्धोङ्गुलं भवेद्वृद्धि यावत्हस्तं शताङ्गुलं ॥ २ ॥

श्री विश्वकर्मा नारदजीने કહે છે. પ્રાસાદની કૂર્મશિલાનું માન કહું છું. એક હાથના પ્રાસાદને ચાર આંગળની કૂર્મશિલા કરવી. બેથી દસ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે બપ્પે આંગળની વૃદ્ધિ કરવી દસ થી વીસ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે એકેક આંગળી વૃદ્ધિ કરવી. એક વીસથી પચાસ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે અર્ધા અર્ધા આંગળની વૃદ્ધિ પાપાણની કૂર્મશિલાની કરવી.^૧ ૧-૨

શ્રી વિશ્વકર્મા નારદજીકો કહતે હૈં । કૂર્મશિલાકા માન કહતે હૈં । એક હાથકે પ્રાસાદકો ચાર અંગુલકી કૂર્મશિલા કરના । દોસે દસ હાથકે પ્રાસાદકો પ્રત્યેક હાથપર દો દો અંગુલકી વૃદ્ધિ કરના । દસસે વીસ હાથકે પ્રાસાદકો પ્રત્યેક હાથપર એક એક અંગુલકી વૃદ્ધિ કરના । ઈકીસસે પચાસ હાથકે પ્રાસાદકો પ્રત્યેક હાથપર આધે આધે અંગુલકી વૃદ્ધિ પાપાણકી કૂર્મશિલાકી કરનાં ।^૧ ૧-૨.

તૃતીયાંશે કૃતે પિંડ સ્તદોર્ધ્વક્ષોભમામકં ।

પુષ્પરમ્ય યદાકારં શિલામધ્યેમલકૃતમ્ ॥ ૩ ॥

લહેરં ચ મચ્છ મંડૂકં મકરે ગ્રાસમેવ ચ ।

શંખ સર્પ ઘટયુક્તં કૂર્મમધ્યેમલકૃતમ્ ॥ ૪ ॥

આવેલ કૂર્મશિલાના માનથી (સમ ચોરસ કરવી.) કહેલા માનથી ત્રીજે ભાગે બાંધી કરવી. તેના ઉપરના ભાગમાં પુષ્પના આકાર રમ્ય એવી આકૃતિ નવ ખાનાં પાડીને અલંકૃત કરવી. કોતરવી. તે નવ ખાનામાં ૧ જળની લહેર ૨

૧. પ્રાસાદના પ્રત્યેક પ્રમાણમાં જ્યાં જ્યાં હાથ કહેલાં છે ત્યાં એનો ગજ અથવા ૨૪ આંગળ સમજવો. હાથ = ગજ = ૨૪ આંગળ.

(૧) પ્રાસાદકે પ્રત્યેક પ્રમાણમાં જहाँ જहाँ હાથ કહે હૈં, વहाँ હાથકા અર્થ ગજ યાં ૨૪ અંગુલ સમજના । હાથ = ગજ = ૨૪ અંગુલ ।

भाधली ३ देडको ४, भग ५ ग्राम ६ शण ७ मर्प ८ कुल अने मध्यमा
धर्म केतरना (जलचरादि छेवो अने शुभ चिह्नो केतरना) ३-४

आये हुण कूर्मशिलाके मानसे (समचोरम कर्ना) कहे हुण मानसे तीसरे
भागकी मोटी करना । उममे उपरके भागमे पुणके आकारम म्य ओसी आकृति
नौ खाने वनाकर अलकृत कर कोतरना । उन नौ खानामे १ जलकी लहर २
मछली ३ सेडक ४ भग ५ ग्राम ६ शण ७ मर्प ८ कुल और मध्यमे कूर्म
कोतरना (जलचरादि जीवो और शुभ चिह्नोंको कोतरना ।) ३-४

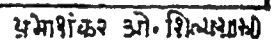
२ अ श्री विश्वकर्माके पाषाणकी इम गिनामा जेट, मच्छ महुक आदि आ
आइति केतरना नु इत्यु के परतु ते आभाविह गने पुराणि गिनामा के केतरनी नेहके
तेम गिपिओनो देवोद वर्य माने छे परतु अनुधार गिपान गिपिन जेअया 'प्रासाद
तिलक' नामना ग्रथमा आ आकृतिओ अग्निओखना इमथी दिशा निदिशामा नाम कहीने
स्पष्ट आपेन छे आ भते पखु केतरना गिपीओ तेम करे छे उदोनी अरु परपरा अम
माने छे के अमे ते गिना रोय पखु ल्या दार होय तेम पूर्व भानिने दारनी तरफ लहे
आवनी नेहके तेथी यन्मानतु इत्याणु आय अने ली ॥ लहेर धाय उदोनी आ
मान्यताने अनुवाद आपे छे

(१) इम गिनामा के मान इत्यु रोय ते प्रमाणकी समयोग्य अने १/३ भागनी
लगाईनी दिशा मध्यनी करी परतु नदा लदादि आट गिनाओनु मान के माप आपेनु
नथी परतु परपरायी तेनु मान इमनिना नेटयी बाणी अने दयाईमा अध परोणी
अने परोणाईमा अरु लडी अगर मध्यनी इम गिना नेटयी लडी आट गिनाओ दिशा
अने निदिशामा स्थापन करी आट गिनामा मान मापनी ओ प्रथा छे ल्या मान माप
कहा न होय त्या ते मय नमा जोरा वाट विवाहमा छत-पु नदि उदोनी परपरा अतुसरु

(२) "ज" श्री विश्वकर्माने पाषाणकी कूर्मशिलामे लहर-मच्छ-महुक आदि आठ
आकृतियाँ कोतरनके लिये कहा है, लेकिन वह स्थाभाविसन्तसे पूर्वादि दिशाके क्रमसे कोतरनी
चाहिये, ऐसा शिपीजर्म से कोई धर्म मानता है । परतु सूत्रधार वीरपाल विरचित ब्रेडाया
'प्रासाद तिलक' नामने ग्रथमे ये आकृतियाँ अग्निओ के क्रमसे दिशा निदिशाने नाम
कह कर स्पष्ट बनायी गयी हैं । इस मतके अनुसार भी कई शिल्पीयाँ करते हैं । उदोनी
परपरा का मत है कि कोई भी दिशा हो लेकिन जहाँ द्वार हो वही पूर्व मानी गयी
है । द्वारकी तरफ लहर आनी चाहिये । इसी यजमानस कस्याण होता है और आनंदमगल
होता है । उदोनी इम मान्यताको अनुवाद मान उता है ।

(३) कूर्मशिलाका जो मान कहा हो उसके प्रमाणकी समचोरम और १/३ तीसरे भागके
मोटेपनकी शिला मध्यनी करना । परतु नदा महुक आदि अष्ट शिलाओका मान या माप नहीं
दिया है, तो भी परपरासे उसका मान कूर्मशिलके बराबर लम्बी और लम्बाईमे जागी चौड़ी
और चौड़ाईमे जाधी मोटी अगर मध्यनी कूर्मशिलाके बराबर मोटी अष्ट शिलाओंको दिशा
और निदिशामे स्थापन करनेके लिये कहते हैं । अष्ट शिलाके मान मापकी यह प्रथा है ।

कूर्म शिला तथा अष्ट शिला



कूर्मशिला तथा अष्टशिला चिन्ह और वस्त्रवर्ण

(ક) મધ્યની દૂર્ભશિક્ષા અને અષ્ટ શિક્ષાના માપથી તેનાથી પહોળા તેની ઢંક શિક્ષાઓ કરવી. મૂળ શિક્ષાઓ પર થોડી જગ્યા રાખીને સંપૂર્ણની જેમ રાખીને ઢંક શિક્ષા મૂકવી. મધ્યની દૂર્ભશિક્ષા પર ચાંદીનો દૂર્ભ મૂકાય છે. તેનું માપ અન્ય અંથોમાં આપેલ છે. એક ગળે અર્ધા આંગળનું માન કર્યું છે. મધ્યની દૂર્ભશિક્ષા મૂકી ચાંદીનો દૂર્ભ સ્થાપન કરી તે પર નાભિનું ભૂંગળું—પાઈપિ ઊભો કરવામાં આવે છે. આ નાભિ ઉપર મુખ્ય પ્રભુ ગિરાજમાન થાય તેના નીચે સુધી લંબાવાય છે.

जहाँ मान माप न बताये हो वहाँ उसके संबंधमें व्यर्थ वाद-विवादोंमें उतरना नहीं। परंतु वृद्धोंकी परंपराको मानना।

(क) मध्यकी कूर्मशिला और अष्टशिलाके मापसे उससे चौड़ी उसकी ढक शिलायें बनाना । मूल शिलाओंके उपर थोड़ी जगह रखकर संपुटकी तरह रखकर ढक शिलाको रखना । मध्यकी कूर्मशिलाके उपर चौड़ीका कूर्म रखा जाता है । उसका माप अन्य ग्रंथमें दिया है ।

दूर्भशिनामान
गण आ

- १—४
२—६
३—८
४—१०
५—१२
६—१४
७—१६
८—१८
९—२०
१०—२२
२०—३०
३०—३७
४०—४२
५०—४७



पचमुल-दशभुज महाविश्वरूपा उर्ध्वे तोरण पक्षे विरालिका युक्त परिकर
नीम्न-जय-मय-त्वष्टा और वाराजित

(ब) दूर्भशिना गलंगुहना मध्यमा पधगनानु साधारण्य रीते द्यु छे परतु
दीपाण्यि अथमा श्री विश्वकर्माने दूर्भशिना भाटे द्यु छे के अर्थ पादे त्रिभागे वा शिलाचैव
प्रतिष्ठयेत् ॥ गलंगुहना अर्धमा के गलंगुहना बोधा लाग के त्रीन लागे पथु दूर्भशिना
प्रतिष्ठित करनी आभ दहेवानो हेतु छे गिनसिग होय तो मध्यमा पधगवे त्या दूर्भशिना
मध्यमा पधगरी निष्ठु आदि देवाना म्यापना निभाग कला छे त्या तेनी नीये दूर्भशिना
पधगनी ते योज्ये दूर्भ निना पनी नाबि अलाघ देव प्रतिभा नीये पशाय आनी शडे
एक गज पर आध अँगुलका मान कहा है। मध्यमी कूर्मशिला रखकर चौदीके कूर्मको
स्थापित कर उसके पर नामिना भुगला-पाईप राज किया जाता है। और नामिके उपर
मुख्य प्रभु विराजमान हो वहाँ नीचे तक लगाया जाता है।

(द) सामान्यतया कूर्मशिलामे गर्भगृहके मध्यमे परानके लिये कहा गया है। परतु
दीपाण्ये प्रथमे श्री विश्वकर्माने कूर्मशिलाके लिये कहा है कि अर्धपादे त्रिभागेवा शिला-
चैव-प्रतिष्ठयेत्। गर्भगृहके आध भागमे या चौथे भागमे या तीसरे भागमें भी कूर्मशिलाका
प्रतिष्ठित करना। इस स्थानका तात्पर्य यह है कि शिवलिङ्ग हो तो मध्यमें पधरावे वहाँ

नंदा भद्रा जयारिक्ता अजिता वा पराजिता ।

शुक्ला सौभागिनी चैव धरणी नवमी शिला ॥५॥

(इ) अष्टशिलाओं दिशा विदिशाओं स्थापन करवानी प्रथा छे. परंतु अन्य ग्रंथोंमें पाँच शिलाओंतुं पणु डह्युं छे. मध्यनी ओक अने चार कोणुंमें इरती ऐम पाँच आवां प्रमाणो छे. डेटलाक ग्रंथोंमें नव शिला स्थापनकरवानी प्रथा वर्तमान कालमें शिल्पीओंमें छे.

(फ) कोरि जेअमी काममें पायो धसी पडे तेवा लयस्थानोंमें अष्ट शिला पधराववानुं अशक्य अने छे. त्यारे त्यां दोष न मानवो जेअंजे जरूरी मुहूर्त करवुं.

(ज) पंचशिला के अष्टशिलाओं कोतरवाना चिन्हो विशे ओक ओवो मत छे के प्रत्येक दिशा विदिशांना दिक्षपालोंतुं ओक आयुधनुं चिन्ह कोतराय छे. विश्वकर्मा प्रकाश ग्रंथमें कूर्मशिलास्थापन विधानमें डहे छे.

स्वस्वासु वाहनाद्यैकं धातुजैस्ताषपात्रै

मुक्तं दाष विधि नाद्यै न्यसे द्रुमं सुरालये ॥

(च) जे दैवतुं मंदिर होय तेना वाहन आयुध शिलाओंमें अंकित करवा शिलाओंनी नीचे धातुपात्र सर्वाषधि सप्त धान्यादि पात्रोंमें भरि भूडवा. शिलाओंने दिक्षपालना वलुं वल्लो लपेटि नीचे कलश, शेवाल, कोडी, सप्त धान्य, गंगाजल, पंचरत्ननी पोदली, वगैरे कलशमें भूडी पधरावे छे. ते नीचे चाँदी के ताम्रका नाग अने काल्यो पणु पधराववानी प्रथा शिल्पीओंमें छे.

कूर्मशिलाको मध्यमें पधराना । विष्णु आदि देवोंके स्थापना विभाग कहे है । वहाँ उसके नीचे कूर्मशिलाको पधराना योग्य है । कूर्मशिलाके उपरकी नामि ब्रह्मरंध्र देव प्रतिमाके नीचे बराबर आ सके ।

(इ) अष्ट शिलाओंको दिशा विदिशाओंमें स्थापन करनेकी प्रथा है । परंतु अन्य ग्रंथोंमें पाँच शिलाओंका भी कहा है । मध्यकी एक और चार कोनेमें फिरती इस तरह पाँच ऐसे प्रमाण हैं । अन्य ग्रंथोंमें नौ शिलाओंका प्रतिस्थापन करनेकी प्रथा वर्तमानकालमें शिल्पियोंमें हैं ।

(फ) किसी जोखमी काममें नीव दूट पडे वैसे भयस्थानमें अष्ट शिलाओंको पधराना, अशक्य बनता है तब वहाँ दोष नहीं मानना चाहिये । आवश्यक मुहूर्त कर लेना ।

(ज) पंच शिला या अष्ट शिलामें कोतरनेके चिह्नोंके वारेमें एक ऐसा मत है कि प्रत्येक दिशा विदिशाके दिग्पालोंके एक आयुधका चिह्न किया जाता है । ' विश्वकर्मा प्रकाश ' ग्रंथमें कूर्मशिला स्थापन विधानमें कहा है—

स्वासु वाहनाद्यैकं धातुजैस्ताष पात्रै

मुक्तं दाष विधिनाद्यै न्यसे द्रुमं सुरालये ॥

(च) जिस देवका मंदिर हो उसके वाहन, आयुध शिलाओंमें अंकित करना । शिलाओंके नीचे धातुपात्र सर्वाषधि सप्तधान्यादि पात्रोंमें भरकर रखना । शिलाओंको दिग्पालके वर्णके वल्लों लपेटकर नीचे कलश, शेवाल, कोडी, सप्त, धान्य, गंगाजल, पंचरत्नकी गढ़डी वगैरह कलशमें रखकर पधराते हैं । उसके नीचे चाँदी या ताम्रके नाग और कूर्मको भी पधरानेकी प्रथा शिल्पियोंमें है ।



ઉમા મહેશ યુગ્મ તોરણ વિરાલિકાયુક્ત પરિકર સ્થાપન કરના । ૫

મય્યે કૂર્મપ્રદાતવ્યં રત્નાલકારસંયુતં ।
 હેમરુપમયઃ કાર્યો દ્વઢરુપમયો ભવેત્ ॥૬॥
 તં ગિલાયાં પંચમાંશેન કર્તવ્યકૂર્મમુત્તમમ્ ।
 સકલલકાર સંયુક્તા દિવ્ય પુષ્પેન પૂજિતામ્ ॥૭॥
 વસ્ત્ર ઘંઢ્ય સંયુક્તં દંદ્રનીકમણી સ્તથા ।
 પુષ્પરાગ ચ ગોમેદ પ્રવાલ પરિવેષિતં ॥૮॥

પૂર્વાદિ દિશા વિદિશાઓમા અષ્ટ શિલા પધરાવી તેમા મધ્યમા નવમી ધરણી નામે શિલા કૂર્મગિલા સ્થાપન કરવી કૂર્મશિલા રત્ન અલકારે સહિત સોના અને રૂપા સહિત દઢ રૂપે સ્થાપન કરવો ૩ તે કૂર્મને રત્ન અલકારે સહિત મર્વ પ્રકાશના દિવ્ય પુષ્પાદિ સામગ્રીથી પૂજન કરવું ઉત્તમ વસ્ત્રો, વૈકૂંઠ ઇન્દ્રનીલ મણી પદ્મરાગ ગોમેદ અને પ્રવાલાદિ રત્નોથી પરિવેષિત કરી સ્થાપના કરવી ૬-૭-૮

૩ કૂર્મગિના પર આદીનો દ્રુમ ડગાનું પ્રમાણ અહીં જિનાના પાચમા ભાગે કહ્યું છે પરંતુ મૂલ સત્તાન અપગણિત મૂલ ૧૫૩ મા ધાતુના ડર્મનું અને પાયાલુના કૂર્મ શિનાના પ્રમાણે સ્પષ્ટ દર્શા છે ઉપર દર્શો તે ગળે અર્ધ આગળનો આદીનો કૂર્મગિના પર ત્રિધિથી પધરાવે

મધ્યની કૂર્મશિલાઓની કરતી આઠ ગિલાઓના નામ કહે છે ૧ નદા ૨ ભદ્રા ૩ જયા ૪ રિક્તા અજિતા ૬ અપગણિતા ૭ શુક્લા અને ૮ સોભાગિની એ આઠ ગિલાઓ પૂર્વાદિ પ્રદક્ષિણાએ સ્થાપના કરવી અને મધ્યની નવમી 'ધરણી' શિલા સ્થાપન કરવી ૫

મધ્યની કૂર્મગિલાઓને ફિરતી આઠ ગિલાઓને નામ કહેતે છે । ૧ નદા ૨ ભદ્રા ૩ જયા ૪ રિક્તા ૫ અજિતા ૬ અપગણિતા ૭ શુક્લા ઓર ૮ સોભાગિની-એ આઠ ગિલાઓનો પૂર્વાદિ પ્રદક્ષિણાએ સ્થાપન કરના । ઓર મધ્યની નોની 'ધરણી' ગિલાનો મી

पूर्वादि दिशा विदिशाओंमें अष्ट शिलाओंको पधराना । उसमें मध्यमें नौवीं धरणी नामकी शिला-कूर्मशिलाको स्थापन करना । कूर्मशिला रत्नालंकारोंके सहित सोना और रुपाके सहित दृढरूपसे स्थापन करना । कूर्मशिलाका पाँचवे भागका चाँदीका उत्तम कूर्म बनाके स्थापन करना ।^३ उस कूर्मको रत्न अलंकारोंके सहित सर्व प्रकारके दिव्य पुष्पादि सामग्रीसे पूजन करना । उत्तम वस्त्रों, वैडूर्य, इन्द्रनील मणी, पद्मराग, गोमेद और प्रवालादि रत्नोंसे परिवेष्टित कर स्थापना करना । ६-७-८.

नंदापूर्वे प्रदातव्यम् शिलाशेषप्रदक्षिणे ।

धरणी मध्ये च संस्थाप्य यथाकर्म प्रयत्नतः ॥९॥

प्रथम पूर्वभा नंदा शिलाने पधराववी. गाडीनी सात शिलाओं प्रदक्षिणां पधराववी. मध्यनी कूर्मशिला धरणी शिलाने यथायोग्य कर्मना प्रयत्ने करीने मध्यमां स्थापना करवी. ६

प्रथम पूर्वमें नंदा शिला को पधराना । बाकी सात शिलाओंको प्रदक्षिणासे पधराना । मध्यकी कूर्म धरणी शिलाको यथायोग्य कर्मके प्रयत्नसे मध्यमें स्थापन करना । ९.

दिग्पालं बलिदद्यात् दिव्यवस्त्रं च शिल्पिने ।

नारिकेल फलं दद्यात् ब्रह्मभोजं च दक्षिणा ॥१०॥

कूर्मशिला स्थापन करतां दिग्पालादिने गली आपवा शिल्पीयाने दिव्य वस्त्राभूषणो देवा. ब्रह्मभोज गमाडी दक्षिणा अने नारियेर-श्रीङ्गणादि आपी संतुष्ट करवा. १०

कूर्मशिलाका स्थापन करते दिग्पालादिको बलि देना । शिल्पियोंको दिव्य वस्त्राभूषण देना । ब्रह्मभोज कराकर दक्षिणा और श्रीफलादि देकर संतुष्ट करना । १०.

इतिश्री विश्वकर्माकृते क्षीरार्णवे नारद पृच्छायां कूर्मशिला निवेशने
शताब्दे प्रथमोऽध्याय ॥१०१॥ (क्रमांक अ० ३)

(३) कूर्मशिलाके पर चाँदीका कूर्म बनानेका प्रमाण यहाँ शिलाके पाँचवे भागमें कहा है, लेकिन सूत्रसंतान अपराजित सूत्र १५३ में धातुके कूर्म और पाषणके कूर्मके प्रमाण पृथक् पृथक् स्पष्ट कहे हैं । उपर बताया हुआ गज आधा आँगुलका चाँदीके कूर्मको मध्यकी कूर्मशिला पर विधिसे पधराना ।

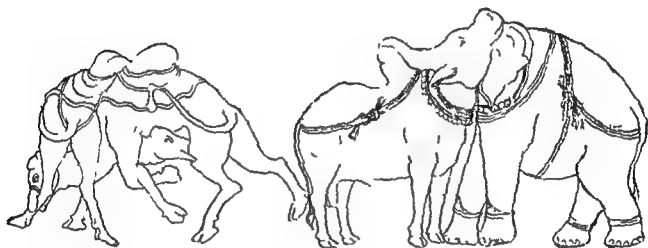
४. कूर्मशिला अने अष्टशिलाभां अंकित करवानां चिह्नो गायत अंशोभां स्वस्तिक आदि चिह्नो करवानुं कहे छे.

उत्तर भारतना अंशोभां नव शिला अने पंच शिलाओं पणु पधराववानुं कहुं छे, धर अर्थभां पंचशिला योग्य छे. प्रासादभां नव शिलानुं प्रमाणु हीड लागे छे.

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव श्रीनारदमुनिभ्यो पठेना कूर्मशिला निवेशननो
शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रभाशङ्क आश्रमार्थ सोमपुराभ्यो ज्येष्ठी भुवनेर आनुवाहनी
मुप्रभा नामनी आया टीक्ष आयेतो ज्येष्ठसो ज्येष्ठो अध्याय १०१

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव नारद मुनिके सवादस्य कूर्मशिला निवेशन
शिल्प विशारद स्थपति आ प्रभाशङ्कर ओषडभाडे सोमपुरा रचित मुप्रभा नामकी भाषा
टीकाका १०१ अध्याय ॥१०१॥ (क्रमांक अ० ३)

कुतूहल



दो साध युद्ध

वृषभ और हस्तियुद्ध एकमें दूसरे का मुख प्रदर्शित होता है।

मध्यमी कूर्मशिला पर नाभिनु भ्रूगणु औलु करानु नागरादि शिरपभा स्पष्ट नहीं
पठु निपीओ नाभि जली हग्वानी प्रधाने अनुसरे छे द्रविड प्रथमा आ विषयभा स्पष्ट
हछे छे के नाभि औली करी श्री विश्वकर्मा प्रमाण अने जग्नि पुराण भा पल्लु नाभि विगेनो
स्पष्ट छल्लेय छे

(४) कूर्मशिला और अष्टशिलामे अस्ति किये जानेवाले चिह्नोंके बारेमें अन्य ग्रंथोंमें
स्वस्तिक आदि चिह्नों बनानेके लिये कहा है।

उत्तर भारतके ग्रंथोंमें नौ शिला और पाँच शिलाओंको भी प्रमाण ठीक है।

मध्यकी कूर्मशिलामे पर नाभिकी नाली खड़ी करनेकी प्रथाको अनुसरते हैं। द्राविड
ग्रंथोंमें इस विषयमें स्पष्ट कहते हैं कि नाभी गड़ी करना। श्री विश्वकर्मा प्रकाश और
अभिपुराणोंमें भी नाभिके बारेमें स्पष्ट उल्लेख है। नागरादि शिरप ग्रंथोंमें नाली खड़ी करनेका
स्पष्ट कहा नहीं है।

अथ भिट्टमान

क्षीरार्णव अ० १०२—क्रमांक अ० ४

श्री विश्वकर्मा उवाच—

एक हस्ते तु प्रासादे भिट्टं वेदाङ्गुलं भवेत् ।

हस्तादि पञ्च पर्यंत वृद्धिरेकैक मङ्गुलम् ॥ १ ॥

पादोनमङ्गुलावृद्धि यावत्दशहस्तकम् ।

शतार्द्ध हस्तमानेन करवृध्यार्द्धाङ्गुलम् ॥ २ ॥

श्री विश्वकर्मा कहते हैं—एक हाथना प्रासादने चार आंगण अङ्गुल (अङ्गु) लिट्ट करवुं. छेथी पांच हाथनाने प्रत्येक हाथे अकेक आंगण अने छेथी दस आंगणनाने पोण्ण पोण्ण आंगणनी वृद्धि करवी. अग्यारथी पचास हाथ सुधीना प्रासादने प्रत्येक हाथे अर्धा अर्धा आंगणनी वृद्धि करवी. १-२.

श्री विश्वकर्मा कहते हैं—एक हाथके प्रासादको चार अङ्गुल ऊँचा (मोटा) भिट्ट करना। दोसे पाँच हाथके प्रासाद को प्रत्येक हाथ पर एक एक अङ्गुल और छः से दस हाथके प्रासादको पौने पौने अङ्गुलकी वृद्धि करना। ग्यारहसे पचास हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक हाथपर आधे आधे अङ्गुलकी वृद्धि करना। १-२.

एवं त्रिपुष्पकं चैव हस्वा चतुर्थांशकृत् ।

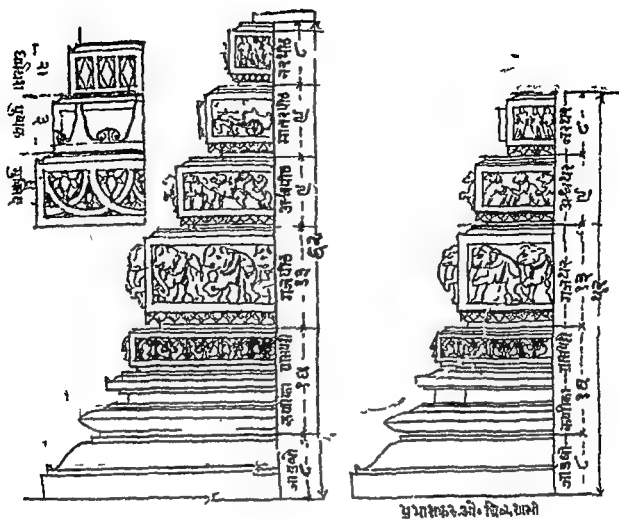
तृतीया च तदुर्ध्वेन कर्तव्यं तद्विचक्षणे ॥ ३ ॥

प्रथमं निर्गमं कार्यं चतुर्थांशेन महामुनि ।

द्वितीया तृतीयांशेन तृतीयं च तदूर्ध्वत् ॥ ४ ॥

अे लिट्ट पुष्प समान उपरापर त्रणु करवा. पोतपोतानाथी योथा अंश नडाधमां ओछा राखता नवुं अेवुं विचक्षण बुद्धिमान शिल्पीअे करवुं. हे महामुनि नारदजी ! पहले लिट्टनो नीकाणो तेनी अंथाधना योथा लाग राखवो अे रीते भीन अने त्रीन लिट्टनो नीकाणो राखवो. ते त्रीन लिट्ट उपर पीठ करवुं. ३-४.

यह भिट्ट पुष्पसमान उपरपर तीन करना। अपने अपने से चौथे अंश के मोटेपनमें कम रखते जाना। ऐसा विचक्षण बुद्धिमान शिल्पीको करना चाहिये। हे महामुनि नारदजी ! पहले भिट्टका नीकाला उसकी ऊँचाई के चौथे भागमें रखना। इस तरह दूसरे और तीसरे भिट्टका नीकाला रखना। तीसरे भिट्टके ऊपर पीठ बनाना। ३-४.



પ્રમાણકર. ૩૦. શિલ્પ. શાસ્ત્રી

મિટ્ઠા ઓર મહાપીઠ

મિટ્ઠામં મિટ્ઠાધર્મેન પિંડવર્ણશિલોત્તમા ।
તત્સપિંડ ચાર્ધેન પરશિલાપિંડમેવ ચ ॥૫॥

(વિશેષ પ્રતિક્ષાણાગ્રે દન્યતેન મહામુનિ ।)
સુદૃઢ સજલં ચૂર્ણ મુદ્રરેશ્વાપિ હન્યતે ॥૬॥
પુનર્જલ મુદ્ગર ચ યદા દ્રવ્યાધિક તતઃ ।
તસ્ય મુર્ધ્ને ચ ગ્રાસાદં કનઘ્યં ચ મહામુને ॥૭॥

મિટ્ઠાની નીચેની વર્ણશિલા અને ખર શિલાનુ પ્રમાણ અને તેની સુદૃઢતા કહે છે પહેલાં મિટ્ઠાની દોઢી વર્ણશિલા, ની બડાઈ રાખવી વર્ણશિલાની બડાઈના અર્ધની ખગડાની બડાઈ રાખવી હે મહામુનિ । વિશેષે કઠીને પ્રત્યેક ધરે સુદૃઢ-મોઢગીન પ્રહાઠથી દઢ કઠ્ઠી કઠી પાણીથી ને સુદૃઢથી બીજા થગ્ને પણ દઢ કરવો હે મહામુનિ । તે ઉપર પાસાઈની રચના કરવી

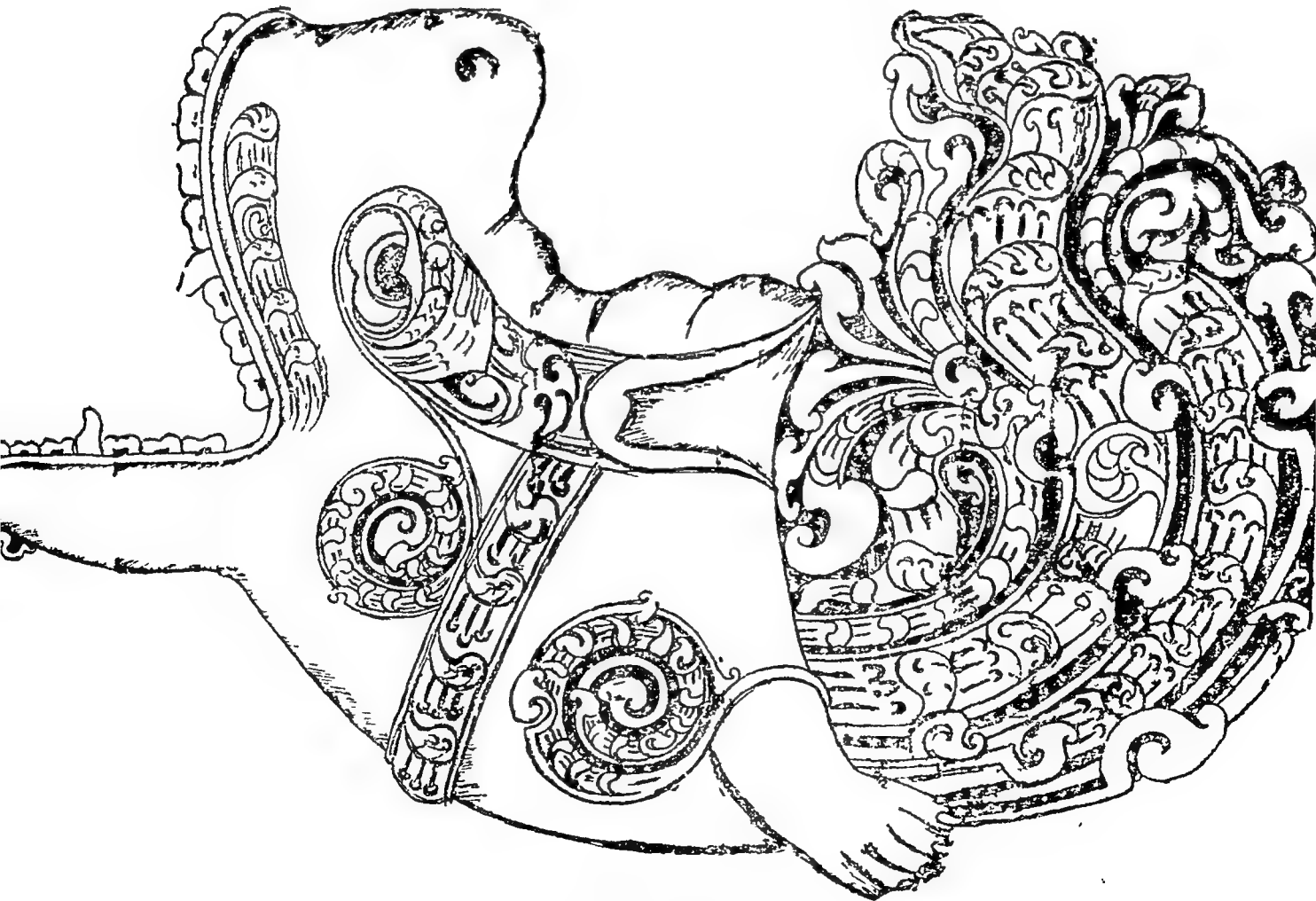
પાટાતર ચ વગ્રમામદાયર મહામુનિ

भिट्ठकी नीचेकी वर्णशिलाका प्रमाण और उसकी सुदृता कहते हैं । पहले भिट्ठसे डेढ गुना वर्णशिलाका मोटापन रखना । उस वर्णशिलाके मोटेपन के अर्ध भागका खरशिलाका मोटापन रखना । हे महामुनि, विशेषकर प्रत्येक स्तरों को मुद्गरके प्रहारसे दृढ करना । संपूर्ण खडीवाले पानीसे रसबस कर मुद्गरसे पीट कर उन शिलाओं को दृढ करना । हे महामुनि ! उसके ऊपर प्रासाद की रचना करना ।

इति श्री विश्वकर्मा कृते क्षीरार्णवे नारद पृच्छायां भिट्ठ मानाधिकारे नाम
शताध्याये द्वितियोऽध्याय ॥१०२॥ (क्रमांक अ. ४)

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवे नारदमुनिने प्रच्छेद भिट्ठ मानना शिल्प विशारद
स्थपति श्री प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुराये रच्येदी सुप्रभा नामनी भाषा टीका
नामना अेकसौ अे भे अध्याय,

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवे नारदमुनिके संवादरूप भिट्ठ मानका शिल्प विशारद
स्थपति श्री प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुरा के हिन्दी भाषानुवादकी सुप्रभा नामकी
भाषा टीका नामका एकसौ दूसरा अध्याय ॥१०३॥ (क्रमांक अ० ४)



॥ अथ पीठमान प्रमाण ॥

क्षीरार्णव अ० १०३-क्रमांक अ० ५

श्री विश्वकर्मा उवाच—

एक हस्ते तु प्रासादे पीठं च द्वादशांगुलम् ।
हस्तादि पञ्चपर्यंतं हस्ते हस्ते पञ्चाङ्गुलम् ॥ १ ॥
पञ्चोर्ध्वं दशयावत् वृद्धिं वेदाङ्गुलं भवेत् ।
दशोर्ध्वं विंशपर्यंतं हस्ते चैवाङ्गुलं त्रयं ॥ २ ॥
विंशोर्ध्वपटत्रिंशति ऊरु वृद्ध्याद्वयांगुलम् ।
अत उर्ध्वं शतार्धेन हस्ते हस्तैरुर्मंगुलम् ॥ ३ ॥

श्री विश्वकर्मा कहे છે એક હાથના પ્રાસાદને બાર આંગળુ ઊંચુ પીઠ કરવુ બે વી પાચ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે પાચ પાચ આંગળની વૃદ્ધિ કરતા જવુ છ થી દશ હાથ સુધીનાને પ્રત્યેક હાથે અચ્ચા આંગળની વૃદ્ધિ કરતા જવુ અચ્ચારથી વીશ હાથ સુધીનાને પ્રત્યેક હાથે ત્રણ ત્રણ આંગળની વૃદ્ધિ કરવી એકવીશથી છત્રીશ હાથ સુધીનાને પ્રત્યેક હાથે બપ્પે આંગળની વૃદ્ધિ કરવી આઠત્રીસથી પચાસ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે એકેક આંગળની વૃદ્ધિ કરવી ૧-૨-૩

શ્રી વિશ્વકર્મા કહતે હૈ । એક હાથકે પ્રાસાદકો વારહ હાથકી ઍંગુલ કી ઁંચી પીઠ કરના । બે સે પાંચ હાથ તકકે પ્રાસાદકો પ્રત્યેક હાથપર પાંચ પાંચ ઍંગુલ કી વૃદ્ધિ કરતે જાના । છ સે દસ હાથ તકકે પ્રાસાદકો પ્રત્યેક હાથ પર ત્રીન ત્રીન ઍંગુલકી વૃદ્ધિ કરના । ઈકીસસે છત્રીસ હાથ તકકે પ્રાસાદકો પ્રત્યેક હાથ પર એક એક ઍંગુલ કી વૃદ્ધિ કરના । ૧-૨-૩

પંચમાશે તતોહીનં કન્યસંશુભ લક્ષણમ્ ।
પંચમાંશાધિકં ચૈવ જ્યેષ્ઠે તદ્વિચક્ષતે ॥ ૪ ॥

આવેલા પીઠના માનનો બે પાચમો ભાગ ઓછો કરીએ તો શુભ એવા લક્ષણવાળુ કનિષ્ઠ માન અને પાચમો ભાગ અધિક કરીએ તો જ્યેષ્ઠા માન બુદ્ધિમાન શિલ્પીએ બાણુ ૪

આયે હુએ પીઠકે માનના જો પાંચગાં ભાગ કમ કરે તો શુભ એસે લક્ષણ વાળા કનિષ્ઠ માન ઔર પાંચગાં ભાગ અધિક કરે તો જ્યેષ્ઠા માન બુદ્ધિમાન શિલ્પિયો કો જાનના । ૪

दिव्यव्यापी महाभुक्तं प्रमाणं द्वयमेव च ।

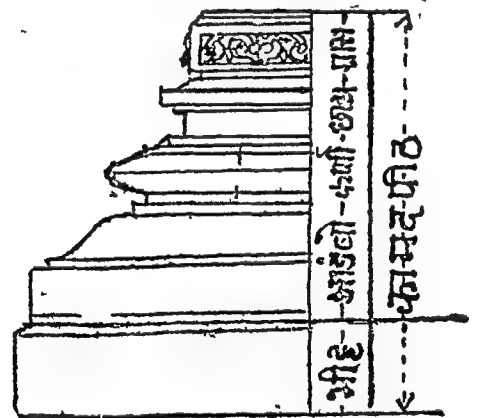
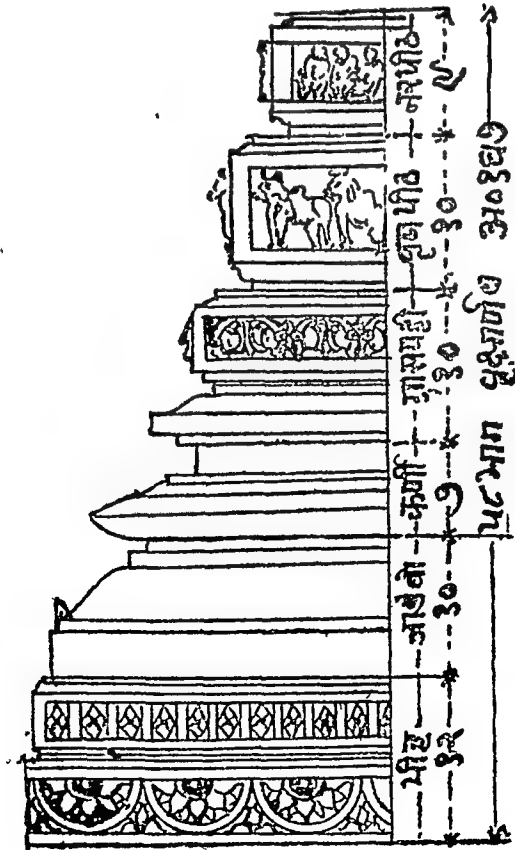
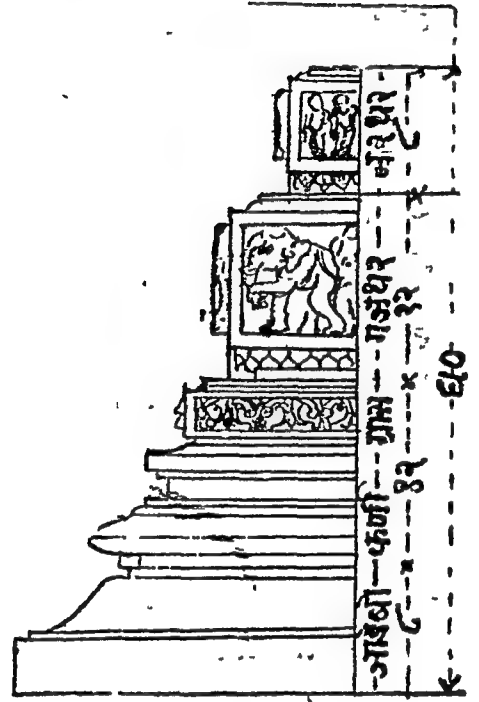
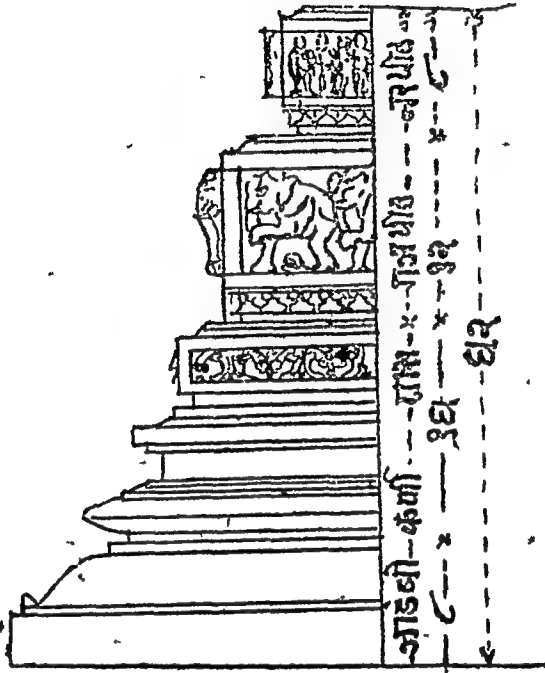
भिद्व त्रयेण संयुक्तं महापीठं विमानकं ॥५॥

मिश्रकपीठ कर्तव्यं द्वि भिद्वं चोर्ध्वयो भवेत् ।

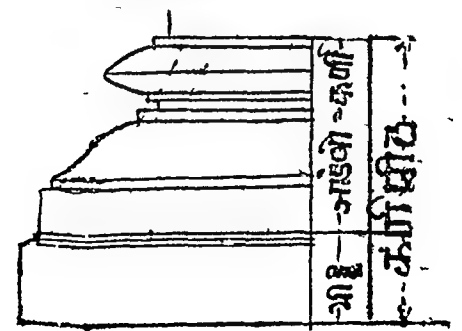
भिद्वैक त्रि महायुक्ता प्रमाणं द्वयमेव च ॥६॥

पीठमान
गण गण आं

- १—००१२
- २—००१७
- ३—००२२
- ४—१०३
- ५—१०८
- ६—१०१२
- ७—१०१६
- ८—१०२०
- ९—२००
- १०—२०४
- २०—३०१०
- ३०—४०६
- ४०—४०२२
- ५०—५०८



प्रभाशेकर.ओ. शिवाशास्त्र



महापीठ-कामद पीठ और कर्णपीठ

एव मादि मुने कार्या पीठभेद मुनीश्वरम् ।

उदयं कथितं पूर्वं (मतो विभागं निगद्यते ।) ॥ ७ ॥

हे दिव्य ब्रह्ममा व्यापी ऋषेः महाभुनि । पीठना मे प्रमाणे छे त्रयु
लिङ्गवाणु वायु महापीठ विमानादि जातिने करु मे लिङ्ग उपर पीठ मिश्रकादि
जातिने करु वणी (नागरादिमा ओक के त्रयु लिङ्ग युक्त ओम मे प्रमाणे
कहा छे ओ रीते हे महाभुनि । मे पीठना लेद कहा पीठनु उदय प्रमाण
मान तो कहु डवे पीठना विलागे आगण कहीश ५-६-७

हे दिव्य ब्रह्ममे व्याप्त महामुनि । पीठके दो प्रमाण हैं । तीन भिङ्गवाला
ऊँचा महापीठ विमानादि जातिको करना । दो भिङ्गके उपर पीठ मिश्रकादि जातिको
करना । और (नागरादि)मे एक या तीन भिङ्गसे युक्त-इस तरह दो प्रमाण कहते
हैं । हे महाभुनि, मेने वे पीठके भेद कहे । पीठका उदय, मान कहा अब पीठके
विभाग आगे बताऊँगा । ५-६-७

द्राविडं प्रासादो मानं वैराटं च अतः शृणु ।

मंडोवरं विंशभाग पट्टभागं पीठमेव च ॥ ८ ॥

द्राविडादि अने वैराटादि प्रासादना पीठ उदय डवे कहु छु मंडोवर्नी
विंशभिन्ना वीश भाग करी छे भागना पीठना उदय जाणवे ८

द्राविडादि और वैराटादि प्रासादका पीठ उदय अब मै कहता हूँ । मंडोवर
की ऊँचाईके वीश भागकर छ' भागके पीठका उदय जानना । ८

अर्धभागे त्रिभागे वा पीठैवं नियोजयेत् ।

स्थानमानाश्रयं ज्ञात्वा तत्र दोषो न विद्यते ॥ ९ ॥

पीठनी विंशभिन्ना कहेला मानथी अर्धा के त्रीन्ना लागे पीठनी योजना
स्थान मानना आश्रय जाणवे करु ते रीते ओछु करवाभा दोष न जाणवे ९

पीठके ऊँचाईके कहे हुए मानसे आवे या तीसरे भागमे पीठ की योजना
स्थान मानका आश्रय जानकर करना । इस तरह क्रम करनेमे दोष न जानना ।
(पीठके धर विभाग १०६ अध्यायमे कहा है ।) ९

१ आवेला पीठमानथी ओछु करवाभा दोष नथी आ प्रमाणना दानना वणी
महाप्रासादमा जेनामा आवे छे तारगा द्वारका, शत्रुजय मुख्य मन्दिर वगैरे वणी विशाल
आयतनोका देव कुटीरओमा पणु ते रीते मानथी ओछु पीठ करी शब्द छे पीठना धर
विभाग २० १०६ मा कहा छे

(१) आवे हुए पीठ मानसे कम करनेमे दोष नहीं है । इस प्रमाणके दृष्टाण बहुतसे
महाप्रासादोमे देखनेमे आते हैं । तारगा, द्वारका-शत्रुजय मुख्य मन्दिर वगैरह विशाल और
आयतनोका देवकुलीकाओमे भी इस तरह मानसे कम पीठ कर सकते हैं । इसमे दोष नहीं
है । पीठका धरविभाग अध्याय १०६ मे सविस्तर कहा है ।

इति श्री विश्वकर्मा कृते क्षीरार्णवे नारद पृच्छायां पीठ मानाधिकारे शताग्रे
तृतीयोऽध्यायः ॥१०३॥ (क्रमांक अ० ५)

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवे श्रीनारदमुनिने पूछेअ पीठमानने। शिल्प
विशारद स्थपित श्री प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुराअ सुप्रभा नामनी रचेली टीकाने।
अेकसे। त्रीजे अध्याय. (१०३)

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवे वास्तुशास्त्र नारदजीके संवादरूप पीठ मानाधिकार
शिल्प विशारद स्थपति प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुरा की रची हुई सुप्रभा नामकी भाषाटीका
का एकसौ तीसरा अध्याय ॥१०३॥ (क्रमांक अ० ५)



महापीठ साथप्रमाल और शिवनिर्माल्यका चंडनाथ

॥ अथ प्रासादोदयमान ॥

क्षीरार्णव अ० १०४—क्रमांक अ० ६

श्री विश्वकर्मा उवाच—

एक हस्ते तु प्रासादे त्रयस्त्रिंशद्भिरङ्गुलैः ।
 द्विहस्ते उदयं कार्यं द्विहस्ते सप्ताङ्गुल ॥ १ ॥
 त्रि हस्तस्य यदामानं मधिकं पंचमाङ्गुला ।
 चतुर्हस्तोदयं कार्यं मेकेणाधिकमङ्गुलम् ॥ २ ॥
 विस्तारेण समं कार्यं पंचहस्तोदय भवेत् ।
 षट् हस्तोदयं कार्यं न्यूना च द्वयमङ्गुलम् ॥ ३ ॥
 उदयं सप्त हस्तेन न्यूनं च सप्तमङ्गुलम् ।
 अष्टहस्तोदयं कार्या षोडशाङ्गुल हीनकम् ॥ ४ ॥
 हीन एकोन त्रिंशत्प्रासादे नवहस्तके ।
 दश हस्तोदयं कार्यं अष्टहस्त प्रमाणकम् ॥ ५ ॥

श्री विश्वकर्मा प्रासादना उदय उल्लिखितु मान कहे छे ओक हाथना प्रासादने तेनीश आगणने उदय कवो, जे हाथना प्रासादने जे हाथ सात आगणने, तेषु हाथनाने तेषु हाथने पाच आगणने, आठ हाथनाने चार हाथने ओक

प्रासादोदयमान

गज गज आ

१—१०८

२—२०७

३—३०५

४—४०१

५—५००

६—५०२

७—६०७

८—७०८

९—७०१८

१०—८००

२०—१२०१०

३०—१७००

४०—२१०२

५०—२५००

आगणने आने पाच हाथना प्रासादने उदय पाच हाथने ओटले विस्तार प्रमाणे गजो उदय गजो, छ हाथनाने छ हाथना जे आगण ओछो, सात हाथनाने सात हाथना सात आगण ओछो, आठ हाथना प्रासादने आठ हाथना सोण आगण ओछो (ओटले ७ गजने ८ आगण) नवहाथना आगणनीम आगण ओछी उल्लिखित शेषवी दश हाथना प्रासादनी आठ हाथनी उल्लिखित गजवी

श्री विश्वकर्मा प्रासादके उदयका मान कहते हैं । एक हाथके प्रासाद को तेत्तीस अङ्गुलका उदय करना । दो हाथके प्रासादको दो हाथ सात अङ्गुल का तीन हाथके प्रासाद को तीन हाथ और पाँच अङ्गुलका, चार हाथके प्रासाद को चार हाथ और एक अङ्गुलका और पाँच हाथके प्रासाद का उदय पाँच हाथका अर्थात् विस्तार के अनुसार समान उदय रखना । छ

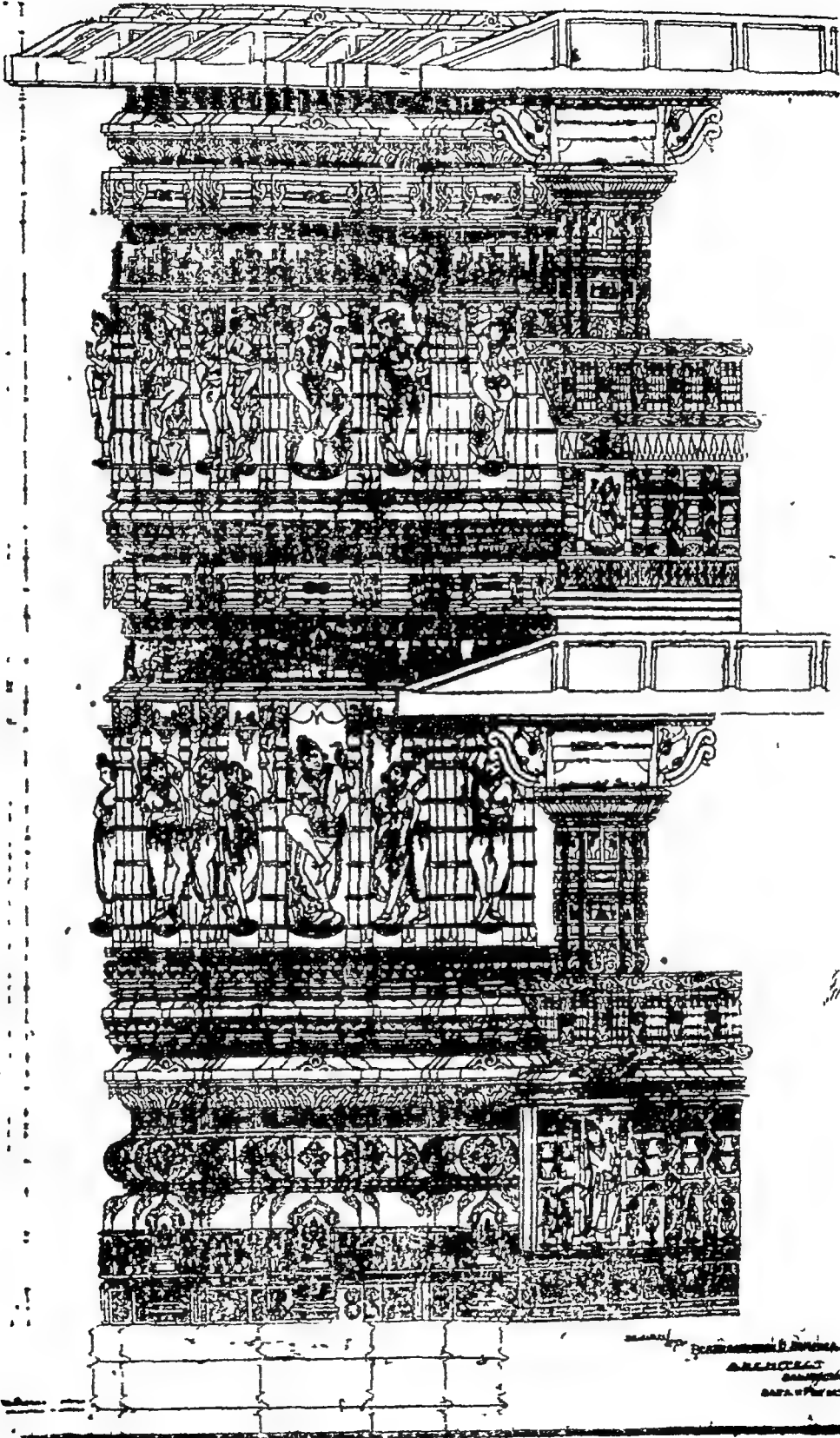
हाथके प्रासादको छ हाथमे दो अङ्गुल कम, सात हाथके प्रासाद को सात हाथमे सात अङ्गुल कम, आठ गजके प्रासाद को सात गज आठ अङ्गुल, नौ हाथ के प्रासाद को नौ हाथमे उनतीस अङ्गुल कम उदय रखना । दस हाथके प्रासाद को आठ हाथका उदय रखना । १-२-३-४-५

DETAIL OF MANDOVAR
FOR
SONMATH TEMPLE
PRAEHAS PATAN

SCALE 1/8" = 1' 0"

प्रासादोदयमान
गण आंगुल

- १—१.०८
- २—२.०७
- ३—३.०५
- ४—४.०१
- ५—५.००
- ६—५.२२
- ७—६.१७
- ८—७.०८
- ९—७.१८
- १०—८.००
- १५—१०.०६
- २०—१२.१२
- २५—१४.१८
- ३०—१७.००
- ३५—२१.०६
- ४०—२१.१२
- ४५—२३.१८
- ५०—२५.००



मोन्दार मंडोवर द्वयभूमि द्वयजंवा और एक छाव

निरेधार प्रासादमा माटी के छटना आनादनी लि त-द्विवालनी नडाछ प्रासादना
 योथा लागे गभवी पापणुना प्रासादने पायने के छडा लागे लागे लि तो नडी राभवी
 डाष्टना कार्यमा सातमा लागे माधार भडाप्रासादोमा आठमा लागे अने धातु
 अने रत्नना प्रासादने प्रासादना दशमा लागे लि तनी नडाछ द्विवाल गभवी १४-१५

निरेधार प्रासादमे मिट्टी या ईटके प्रासाद की दीवारका मोटापन प्रासाद के चौथे
 भागका रखना । पापणके प्रासादको पाँचवे या छठे भागमे दिवारे मोटी करना । काष्ठके
 कार्यमे सातवे भागमे-साधार महाप्रासादोमे आठवे भागमे और धातु और रत्नके
 प्रासादको प्रासादके दसवें भागमे दिवारका मोटापन रखना । १४-१५

इति श्री विश्वकर्मा कृते क्षीरार्णवे नारदपृच्छाया प्रासादोदय मानाधिको
 शताध्याये चतुर्थोऽध्यायः ॥१०७॥ (क्रमांक अ० ६)

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव नारद मुनीश्वर पूज्या प्रासादना उदय मानना
 शिरष विशारद श्री प्रभान-ओषडभार्द्र भोजपुगये ग्येयी सुप्रभा नामनी टीकाने अक्षे
 यारभा अध्याय (१०४)

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव नारद मुनीश्वरके सवाद रूप प्रासादके उदय मानका
 शिरष विशारद स्थपति श्री प्रभाणकर ओषडभार्द्रकी रची हुइ सुप्रभा नामकी भाषा टीकाका
 एकना चौथा अध्याय । १०४ क्रमांक अ०



॥ अथ द्वारमान ॥

क्षीरार्णव अ० १०५—क्रमांक अ० ७

श्री विश्वकर्मा उवाच—

एक हस्ते तु प्रासादे द्वारं च षोडशांगुलम् ।
 इयं वृद्धिः प्रकर्तव्या चतुर्हस्तं यदा भवेत् ॥ १ ॥
 वेदांगुला भवेद्वृद्धि यवित्दशहस्तकम् ।
 हस्ताविंशति मानेन हस्ते हस्ते त्रयंगुला ॥ २ ॥
 द्वयङ्गुला भवेद्यावत् प्रासादे त्रिंशहस्तके ।
 अङ्गुलैक स्ततो वृद्धि यावत्पञ्चाश हस्तकम् ॥ ३ ॥

श्री विश्वकर्मा कहे છે. એક હાથના પ્રાસાદને સોળ આંગળ ઊંચું દ્વાર કરવું તેવી રીતે સોળ સોળ આંગળની વૃદ્ધિચાર હાથ સુધી કરવી. પાંચથી દશ હાથના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે ચચાર આંગળની વૃદ્ધિ કરવી. અચારથી વીશ હાથ સુધીનાને પ્રત્યેક હાથે ત્રણ ત્રણ આંગળની વૃદ્ધિ કરતા જવી. એકવીશથી ત્રીશ હાથનાને બખે આંગળની વૃદ્ધિ કરવી. એકત્રીશથી પચાસ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે એકેક આંગળની વૃદ્ધિ દ્વારના ઉદય માનમાં કરવી. ૧-૨-૩.

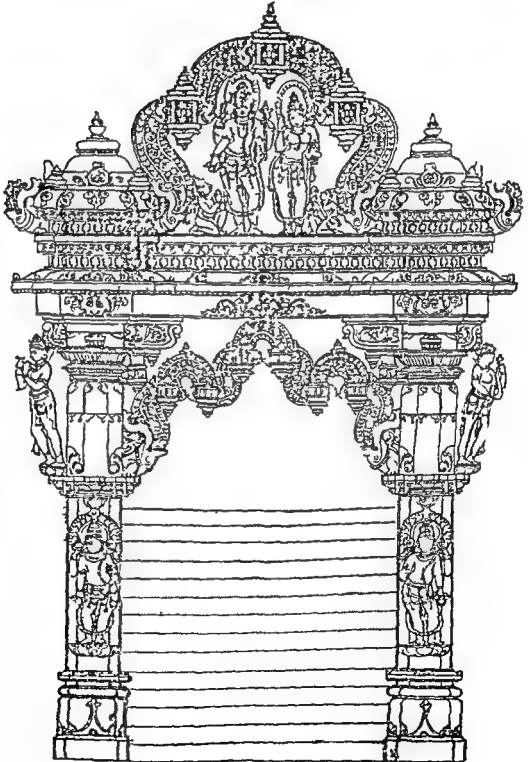
શ્રી વિશ્વકર્મા કહતે હૈં । એક હાથકે પ્રાસાદકો સોલહ અંગુલ ઉંચા દ્વાર કરના । ઇસ તરહ સોલહ સોલહ અંગુલકી વૃદ્ધિ ચાર હાથ તક કરના । પાંચસે દસ હાથકે પ્રાસાદકો પ્રત્યેક હાથપર ચાર ચાર અંગુલકી વૃદ્ધિ કરના । ચારસે વીસ હાથકે પ્રાસાદકો પ્રત્યેક હાથપર ત્રીસ ત્રીસ અંગુલકી વૃદ્ધિ કરતે જાના । ઇકીસસે ત્રીસ હાથકે પ્રાસાદકો દો દો અંગુલકી વૃદ્ધિ કરના । ઇકતીસસે પચાસ હાથ તકકે પ્રાસાદકો પ્રત્યેક હાથપર એક એક અંગુલકી વૃદ્ધિ કરકે ઉદયમાનમેં કરના । ૧-૨-૩.

નાગરં ચ મિદં દ્વારં ઉક્તં ક્ષીરાર્ણવે મુને ।
 દશભાંશે યદિ હીનં દ્વારં સ્વર્ગે મનોરમે ॥ ૪ ॥
 અધિક દશમે પ્રાજ્ઞ પ્રાસાદે પર્વતાશ્રકે ।
 તાવ ક્ષેત્રાન્તરે પ્રાજ્ઞત્વામર્હવાદિ મુનીશ્વરઃ ॥ ૫ ॥

ઉપરોક્ત કહેલું દ્વારમાન નાગરાદિ જાતિ છંદના પ્રાસાદનું બાણુલું હે મુનિ, આ ક્ષીરાર્ણવમાં કહ્યું છે. કહેલા માનથી જો દશમે ભાગ હીન કરવાથી

તે સ્વર્ગમાં મનોરમ એવું દ્રાગ થાય અને જો પર્વતની તક્ષાટીએ ચતુરશિલ્પીઓ કરેલા પ્રાસાદના દ્વારને દશમો ભાગ અધિક કરે તો તે ગુલ બાણુ મહુધિ-ઓમાં આદિ એવા હે મુનીશ્વર, એ રીતે ક્ષેત્રાન્તર (સ્થળાતગતુસાર) દ્વારમાન બાણુવા ૪-૫

દ્વારમાન
ગાગ ગાગ્યા
૧-૦૦૧૬
૨-૧ ૮
૩-૨૦
૪-૨ ૧૬
૫-૨૦૨૦
૬-૨૦૦
૭-૨૦૪
૮-૩૦૮
૯-૩૦૧૨
૧૦-૨૦૧૬
૨૦-૪૦૨૨
૩૦-૫ ૧૮
૪૦-૬૦૮
૫૦-૬ ૧૪



સ્તંભ-મરણા-સરા-આદોલક હીઠોલક તોરણ દેવાદનાઓ કપ્પે લક્ષ્મીનારાયણના ગેચલ
પ્રતોલ્યા પ્રવેશ,

उपरोक्त द्वारमान नागरादि जाति छंदके प्रासादका समझना । हे मुनि, इस क्षीरार्णवमें कहे हुए मानसे जो दसवाँ भाग हीन किया जाय तो वह स्वर्गमें मनोरम ऐसा द्वार होता है । और जो पर्वतकी तलहटीपर चतुर शिल्पीके बनाये हुए प्रासादके द्वारको दसवाँ भाग अधिक करे तो उसे शुभ जानना । महर्षीयोंमें आदि ऐसे हे मुनीश्वर, इस तरह क्षेत्रान्तर (स्थलान्तरका सार) द्वारमान जानना । ४-५.

शिवद्वारं भवेद्वष्टं कन्यसं च जिनालयै ।

मध्यमं सर्वदेवानां सर्वकल्याण कारकः ॥ ६ ॥

उत्तम उदयार्द्धेन पादाधिमध्यमानक ।

कन्यसं चाधिकं तत्र विस्तारे द्वारमेव च ॥ ७ ॥

शिवालयनुं द्वार ज्येष्ठ माननुं सर्वजनोभां आलयनुं के लुनमंदिरनुं द्वार कनिष्ठ माननुं अने सर्व देवोने मध्यमाननुं द्वारमान करवाथी ते सर्व कल्याणकर्ता लक्षणुं. ज्येष्ठमाननुं द्वारना उदयार्द्धे अधः पडोणुं करवुं. मध्यमानना द्वारने योथो लाग वधारवो. अने कनिष्ठ माननुं द्वार तेथी पणु अधिक पडोणुं राखवुं. ६-७.

शिवालयके द्वारको ज्येष्ठ मानका सर्वजनोंके आलयका द्वार और जीनमंदिरका द्वार कनिष्ठ मानका और सर्व देवोंको मध्य मानका द्वारमान करनेसे सर्व कल्याणकर्ता समझना । ज्येष्ठ मानका द्वारके उदयसे आधा चौड़ा करना । मध्य मानके द्वारको चौथा भाग बढ़ाना । और कनिष्ठ मानका द्वार उससे भी अधिक चौड़ा रखना । ६-७.

अज्ञात्वा च यदा ज्ञात्वा यदाद्वारं च तिष्ठतः ।

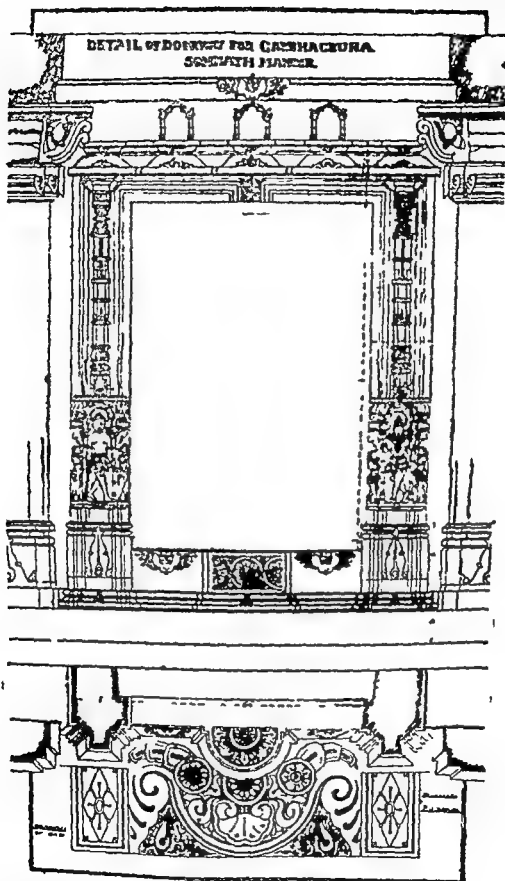
नागरं सर्व देवानां सर्व देवेषु * पूजितः ॥ ८ ॥

लणु के अलणु कदाच द्वारमाननी पडोणाध थध डोय तो पणु ते सर्व देवोने पूजन योय्य ओवुं नागरादि द्वार मान लक्षणुं.

जाने या अनजानेमें कदाचित् द्वारमानकी चौड़ाई हुई हो तो भी उसे सर्व देवोंके लिये पूजन योग्य ऐसा नागरादि द्वारमान समझना । ८

इतिश्री विश्वकर्माकृते क्षीरार्णवे नारद पृच्छायां नागरादि प्रासाद द्वारमानाधिकारे शताग्रे पंचमोऽध्यायः ॥ १०५ ॥ (क्रमांक अ० ७)

इतिश्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव नारदे पूछेला नागरादि द्वारमाननो शिष्य विशारद स्थपति श्री प्रभाशंकर ओधउलार्ध सोमपुराओ रयेदी सुप्रभा नामनी लापा टीकानो ओक सो पांयभो अध्याय. १०५. क्रमांक अ० ७.



सप्त शालाका द्वार और अर्धचंद्र

इतिथी विश्वकर्मा निरचित क्षीरार्णव नारदके सवादरूप नागरादि द्वारमानका शिल्प
विशारद स्वपति श्री प्रभाशकर ओषडभाई सोमपुराको रच्यो हुई सुप्रभा नामकी भाषा टीकाका
एकसौ पाँचवाँ नयाय ॥१०५॥ (क्रमांक अ० ७)

॥ अथ पीठ थर विभाग ॥

क्षीरणव अ० १०६—(क्रमांक अ० ८)

श्री विश्वकर्मा उवाच

पीठोदये भवेत्पूर्वं विभागं च अतः श्रुणु
द्वादश भागं जाड्यकुम्भं च अर्धवार्धकारिकं ॥ १ ॥

द्वयंचसार्द्धं भवेत्कर्णं भागार्धं मुखपट्टिका ।

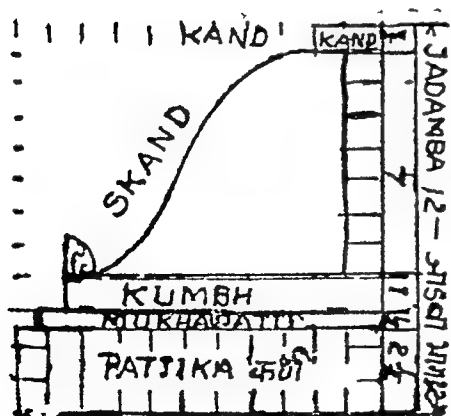
भागमेकं भवेत्कुम्भं शेषं च कंदमेव च ॥ २ ॥

भागोनं च भवेत्पीठं निर्गमं तत्प्रकीर्तिताः ।

तत्रस्कंधं समकुर्यात्कर्णमाली प्रशोभिता ॥ ३ ॥

श्री विश्वकर्मा नारदजीने कहे छे. पीठनी उंचाईनुं प्रमाण आंगण (अ. १०३भां) कहुं हुवे पीठना थर विभाग सांखणो पड़ेदा आर लागेनो नडंओ तेनो अर्धं निकाणो नडंओ नीचेनी पट्टी अंढी लागनी ते पर अरधा लागेनो कंद (मुख पट्टी) ते उपरथी ओक लागेनो गीजे कंद अने आधी उपरनेो कंद पणु ओक लागेनो तेना निकाणा पणु तेददा ४ राखवा. स्कंध-गलतो सात लागेनो राखवो. ओ रीते आर लागना नडंओ पर कर्णिकानो शोभतो थर करवो. १-२-३.

श्री विश्वकर्माने नारदजीको पीठकी उँचाईका प्रमाणं अ० १०३ में कहा ।



जाडवा उदय १२ भाग

अब पीठके स्तर विभागके बारेमें सुनो । प्रथम बारह भागका जाडवा-उसका अर्ध नीकाला-जाडवेके नीचेकी पट्टी ढाई भागकी, उसके पर आवे भागका कंद (मुख पट्टी) उसके उपरके एक भागका दूसरा कंद और बाकी उपरका कंद भी एक भागका, उसके नीकाले भी उतने ही रखना । स्कंध-गलता सात भागका रखना । इस तरह बारह भागके जाडवे पर कर्णिकाका

शोभायमान स्तर करना । १-२-३.

नव भागकुतं पिंडं प्रवेशतत्रमेव च ।

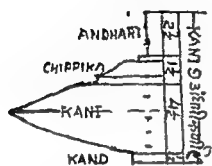
पिंडस्य नवधाकृत्य अंतरपत्रं द्विभागतः ॥ ४ ॥

ચિપ્પિકા સાર્દ્ધભાગંચ નિર્ગમંચ ત્રિભાગતઃ ।

અથઃ કથ ભવેભાગાર્દ્ધકણિ ચત્વારિ સાર્દ્ધતઃ ॥ ૫ ॥

પદ્મભાગં નિર્ગમંતત્ર કણિ કૂર્યાદ્વિચક્ષણ ।

તસ્ય પદં સમકાર્ય ગ્રાસપટ્ટિ ચ છાદયકે ॥ ૬ ॥



કર્ણિકા અતરાલ ભાગ ૧ થયે ૭ ભાગ નીકળતો ખુદ્ધિમાન શિલ્પીએ ગળવે
એ રીતે કર્ણિકાના થયે બેટલા ૪ નવ ભાગની ગ્રાસપટ્ટી નીચે છાજલી (ત્રણભાગની)
કરવી ૪-૫-૬

જાડવેકે પર કળીસે થયે નો ભાગ કરના, ઉસરે ઘાટકી નીર્ગમ મી
ઉત્તની હી કરના । કળીકે મોટેપનકે નો ભાગમે ઉપરકી અતરપત્ર ઢાઈ ભાગકી
ચિપ્પિકા હેઠ ભાગકી ઉંચી ઓર ઉસકા નીકાલ્યા ત્રીન ભાગકા રચના । કળી
સાઢે ચાર ભાગકી ઓર ઉસકી નીચેકા કદ આવે ભાગકા રચના । કર્ણિકાકા
થર ૭ ભાગ નિકાલતા બુદ્ધિમાન શિલ્પીકો રચના ચાહિરે । ઇસ તરહ કર્ણીકાકે
થરકે બરાબર નો ભાગકી ગ્રાસપટ્ટી કી નીચે છાજલી (ત્રીન ભાગકી) ચનાના । ૪-૫-૬

પિંડં કૂર્યાત્ ત્રિભાગેન નિર્ગમં ત્રિણીમેવચ ।

ભાગાર્દ્ધ મુલપટ્ટિ ચ પાદાર્ધ ભાગમેવ ચ ॥ ૭ ॥

સ્કંધ સ્કંધ ભવેન્મેકં છાદયકી તત્ર સિદ્ધયતિ ।

ઉપરિ ગ્રાસપટ્ટિકા પદ દ્વાદશમેવચ ॥ ૮ ॥

ઘસિકા ચાર્દ્ધભાગેન ભાગમેકં તથાર્દ્ધક ।

પંચભાગ ભવેન્ગ્રાસં ભાગેન ઉદર ભવેત્ ॥ ૯ ॥

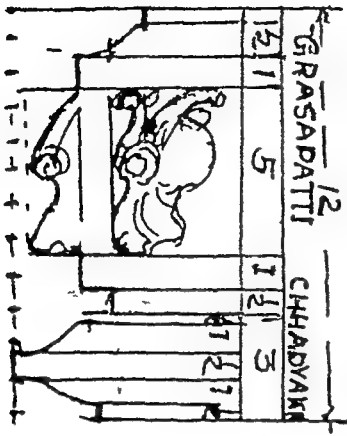
સાર્દ્ધ ચિપ્પિકા કુમં (૧) નિર્ગમં દ્વયમેવ ચ ।

નવ ભાગ ગ્રાસપટ્ટી સર્વકેવલધીમતામ્ ॥ ૧૦ ॥

इति कामदपीठ १.

છાજલી કેવાળની બાડાઈ ત્રણ ભાગ અને નીકળેા પણ ત્રણ ભાગને
ગળવેા, તેની મુખપટ્ટી અર્ધા ભાગની નીચે ઉપરનો કદ ૫ા ૫ા ભાગને અને

નીચે ઉપરના સ્કંધ-ગલતી એકેક ભાગની એ રીતે ત્રણ ભાગની છાજલી કેવાળ સિદ્ધ થઈ.



છાંજલી ગ્રાસ પટ્ટી ભાગ ૧૨

કણી ઉપરની આખી ગ્રાસ પટ્ટી બાર ભાગમાં નવભાગની ગ્રાસ પટ્ટીમાં નીચે અર્ધભાગની ધસી અંધારી ગ્રાસમુખ પાંચમાં ભાગમાં ગ્રાસમુખનો નીકાળો એક ભાગનો તેની નીચે ઉપની પટ્ટીકા એકેક ભાગની દોઢભાગની ચિપ્પિકા ઊંચી અને બે ભાગ નીકાળો ખરાથી રાખવો એ રીતે ત્રણ ભાગની છાજલી અને નવભાગની ગ્રાસપટ્ટી, સર્વમાં કુશળ એવા બુદ્ધિમાન શિલ્પીએ ગ્રાસપટ્ટી યુક્ત (કામદ) પીઠની રચના કરવી. ઇતિ કામદપીઠ ૧.

છાજલી-કેવાલકા મોટાપત્ત ત્રીન ભાગ ઔર નીકાલા મી ત્રીન ભાગકા રખના । ડસંકી મુખપટ્ટી આધે ભાગકી, નીચે ઉપરકા કંદ પા પા ભાગકા ઔર નીચે ઉપરકા સ્કંધ-ગલતી એક એક ભાગકા, ઇસ તરહ ત્રીન ભાગકી છાજલી-કેવાલ સિદ્ધ હુઈ ।

કળીકે પરકી સારી ગ્રાસપટ્ટી વારહ ભાગમેં નૌ ભાગકી ગ્રાસપટ્ટીમેં નીચે આધે ભાગકી ધસી-અંધારી, ગ્રાસ મુખ પાંચ ભાગમેં ગ્રાસ મુખકા નીકાલા એક ભાગકા ડસંકે નીચે ઉપરકી પટ્ટીકા એક એક ભાગકી, ડેઢ ભાગકી ચિપ્પિકા ઝૂંચી ઔર દો ભાગ નીકાલા ડરાસે રખના । ઇસ તરહ ત્રીન ભાગકી છાજલી ઔર નૌ ભાગકી ગ્રાસ પટ્ટી સર્વમેં કુશલ ઐસે બુદ્ધિ-માન શિલ્પીકો ગ્રાસપટ્ટીયુક્ત (કામદ) પીઠકી રચના કરના । ૭-૮-૯-૧૦. ઇતિ કામદપીઠ ૧.

સપ્તમિજાડચકુંભં ચ પઢમિસ્તુ કળાલિકા ।

પંચમિગ્રાસપીઠં ચ નિર્ગમં ક્રિયતે વુધૈઃ ।

ઈમાંસર્વાણિપીઠં ચ સર્વે દેવેષુ નિર્મિતામ્ ॥ ૧૧ ॥

હવે કામદ પીઠનો બીજો પ્રકાર

કામદપીઠ વિ.

૭ બડંબો

૬ કણી

૫ ગ્રાસ

કહે છે. સાત ભાગનો બડંબો છ

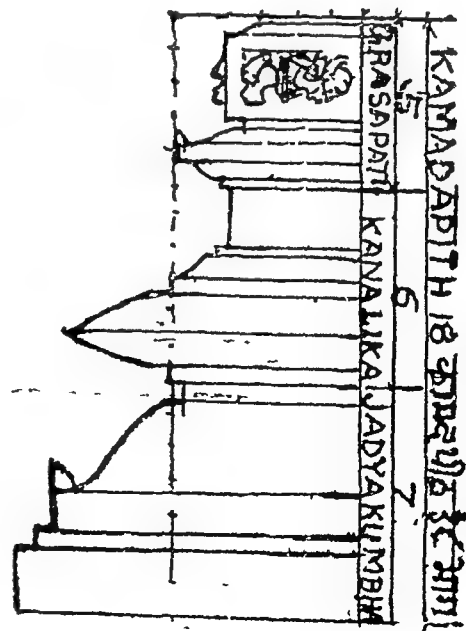
ભાગની કણી અને પાંચ ભાગની ગ્રાસ

પટ્ટી અને તેનો નીકાળો શિલ્પી એ

બુદ્ધિ પૂર્વક (સ્થાત માન પ્રમાણે)

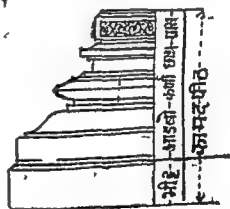
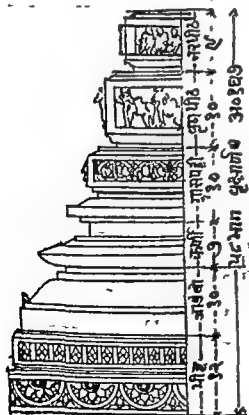
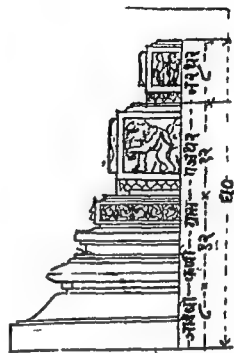
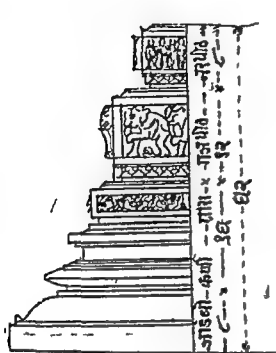
રાખવો. એ રીતના વિભાગના સર્વ પીઠનું સર્વ

દેવોના પ્રસાદને નિર્માણ કરવું. ૧૧ ઇતિ કામદપીઠ ૨.

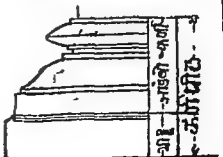


કામદપીઠ-ભાગ ૧૮ પ્રકાર (૨)

अब कामद पीठका दूसरा प्रकार कहते हैं सात भागका जाडवा छ, भागकी कणी और पाँच भागकी ग्रासपट्टी और उसका नीकाला शिल्पीको बुद्धि, पूर्वक स्थान, मानके अनुसार रखना। इस तरहके विभागके सर्पपीठके सर्प देवोंके प्रासादका निर्माण करना। ११ इति कामदपीठ २

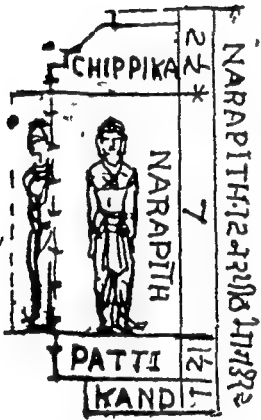


प्रमाणोंका और शिल्पकार



महापीठ, कामदपीठ और कर्णपीठ

नरपीठ द्वादश भागं सर्वतिमतोपरिद्वय (१)
 सार्द्धमध्यसंस्थाने द्विसार्द्धश्चमूर्ध्वनः ॥ १२ ॥
 सप्तभागे नरंकार्यं मध्य स्थाने मुनीश्वरः ।
 अधःकंदभागं च भागमेकं च पट्टिका ॥ १३ ॥
 निर्गमं पद सार्द्धं च वायपट्टि च भागतः ।
 तत्परि मानवाकार्या सप्तभाग समन्विता ॥ १४ ॥
 इमं आद्यपीठं च सर्वतोन्तर संयुत ।
 कर्तव्यं सर्व वर्णानि नित्य कल्याण कारकम् ॥ १५ ॥

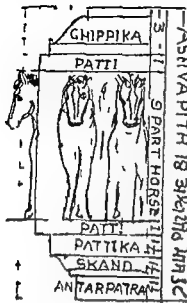


(कामद पीठ कहा पछी डवे महापीठना थशे डडे छे नरपीठ, पार लागनुं पीठना सर्वथी उपरना लागमां डरवुं डे मुनीश्वर, नीचे डेढ लागनो कंद उपर अढी लागनी चिप्पिका उपर डरवी डे मुनीश्वर, मध्यमां सात लागमां नर-मनुष्य देव रूपे डरवां. नीचे अेक लागनी कंद वाय वाय पट्टीका डेढ लाग नीकाणो डरवी. (कुल पार लाग) अे रीते सर्वनी उपर नर आकृति साथेनुं नरपीठ जाणवुं ते सर्व देव वर्णुनि डरवाथी डंभेशां डल्याणु डारी जाणवुं १३-१४-१५.

कामदपीठके बाद अब महापाठके थरके वारेमें कहते हैं । नरपीठ बारह भागका पीठके सबसे उपरके भागमें करना । हे मुनीश्वर ! नीचे डेढ भागका कंद उपर ढाई भागकीं चिप्पिका करना । हे मुनीश्वर, मध्यमें सात भागमें नर-मनुष्य देवके रूप करना । नीचे एक भागकी कंद वायपट्टीका अंधारी करना । (कुल बारह भाग) डेढ भागका नीकाला करना । इस तरह सर्वके उपर नर आकृतिके साथका नरपीठ जानना । वह सर्व देववर्णोंको करनेसे हमेशां कल्याणकारी जानना । १२-१३-१४-१५.

उत्सार्य नरपीठं च वाजिपीठं निवेशितम् ।
 अष्टादश भवेत्भागं कर्तव्यं शास्त्र पारगैः ॥ १६ ॥
 अधः स्कंध सपादोनं सपादं पट्टिका ध्रुवैः ।
 वाजि पट्टि अधोर्ध्व भागे निर्गमं च द्विभागत् ॥ १७ ॥
 अधः सार्द्धतरपत्र उर्ध्व चिप्पिकात्रय ।
 नवभागे वाजिरूप एते मथपीकम् ॥ १८ ॥

नरपीठ नीचे अश्वपीठ अठारलागनुं डरवानुं शिष्य शास्त्रना पारंगतोअे कहुं छे. नीचे सवा लागनो स्कंध, सवा लागनी पट्टी, अश्वरूप नीचे



अश्वपीठ

उपर ओकेक लागनी पट्टी ते जे लाग नीकणती करवी नीचे दोढ लागनी अधारी अने उपर त्रय लागनी चिप्पिका करवी नव लागभा अश्वना स्वर्णो जेर मरोडदार करवा जे गीते अढा लागनु अश्वपीठ जणुवु १६-१७-१८

नरपीठके नीचे अश्वपाठ अठारह भागका करनेका शिल्पशास्त्रके पागगतोने कहा है। नीचे सवा भागका स्कन्द, सवा भागकी पट्टी, अश्वरूप नीचे उपर एकएक भागकी पट्टीको दो भाग नीकलती करना, नीचे डेढ भागकी अधारी और उपर तीन भागकी चिप्पिका करना। नौ भागमे अश्वके स्वरूप जोर मरोडदार

करना। इस तरह अठारह भागका अश्वपीठ जानना १६-१७-१८

महापीठ थर विभाग

गजपीठ १२

कलीअत ८

आसदण १२

गजपीठ २२

अश्वपीठ १८

नरपीठ १२

कुन लाग ८५

कुंजरं द्वाविंश भाग अधोभागं च निर्गमे ।

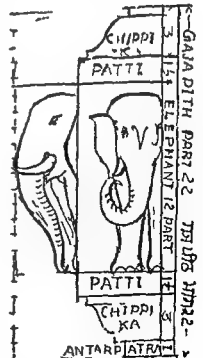
गज चत्वारि निष्काशं पट्टिका त्रिणिमेव च ॥ १९ ॥ -

पिंडं त्रिभागमुत्सेधं पदमेकं वाय पट्टिका ।

(उर्ध्वं चिप्पित्रयं भागार्कोदये गजरूपकम्) ॥ २० ॥

गजपीठोपरंदद्यात् नरपीठं च पूर्वत ।

अश्वपीठथी नीचेना लागे नीकणतु गजपीठ गावीश लागनु करवु चार लागना नीकणता हाथीना स्वर्णो करवा तेनी नीचे उपर १॥ + १॥ लागनी जेभ त्रय लागनी पट्टिकाओ करवी नीचे त्रय लाग जेथी चिप्पिका ते तेनी ओके लागनी वायपट्टिका (अतर पत्र) करवी उपर त्रय लागनी चिप्पिका करवी हस्तिना स्वर्णो चार लाग उदयभा करवा जे रीते गावीश लाग उदयनु गजपीठ जणुवु-गजपीठ उपर सीधु आगण कछु नेवु पछु भूकी शकाय १८-२०



गजपीठ विभाग २०

अश्वपीठसे नीचेके भागमे नीकलता हुआ गजपीठ घाईस भागका करना। चार भागके नीकलते हाथीके स्वरूप करना। उसके नीचे उपर १३ + १३ भागकी

इस तरह तीन भागकी पट्टिकाओं करना । नीचे तीन भाग ऊँची चिप्पिका, उसके नीचे एक भागकी वायपट्टिका (अंतरपत्र) करना । उपर तीन भागकी चिप्पिका करना । हस्तिके स्वरूप बारह भाग उदयमें करना । इस तरह बाइस भाग उदयका गजपीठ जानना । गजपीठके उपर सीधे पूर्वोक्त नरपीठको भी रखा जाता है । १९-२०.

गजस्य नरमध्यायमश्वपीठं त्रयोदशं (१) ॥ २१ ॥

पक्षान्तरे गजसंस्थाने अधो वा उर्ध्वमेवच ।

तत्रांतर हयो कार्यं वाजिरूपं च सप्तमिः ।

निर्गमं द्वयं भागं द्वयं वयमिहोवच ॥ २२ ॥

गजपीठ अने नरपीठनी मध्यमां अश्वपीठ तेर लागनुं करवुं. पक्षान्तरे गजपीठ कोधमां न पणु थाय तेना णदले अश्वने नर पीठ थाय. ते अश्वपीठमां अश्वना स्वरूपे सात लागनां अने णे लागना नीकणता करवा २१-२२ इति महापीठ.

गजपीठ और नरपीठके मध्यमें अश्वपीठ तेरह भागका करना । पक्षान्तरसे गजपीठ किसीमें नहीं भी होता है । उसके बदले अश्व और नरपीठ होता है । उस अश्वपीठमें अश्वके स्वरूप सात भागके और दो भागके नीकलते करना २१-२२ इति महापीठ ।

विश्वांशं ग्रासपीठं मेकादशस्तुकर्णिका ।

चतुर्दशं जाड्यकुंभं नवमं भागपीठकम् ॥ २३ ॥

महापीठ थर विभाग

जडंणो १४

कुली अंतः ११

ग्रासदण्ड १३

गजपीठ २२

अश्वपीठ १८

नरपीठ १२

कुल ८०

ग्रासपीठ तेर लागनुं कुली अगीयार लागनी अने जडंणो चौद लागनो मणी कुल ८० लागनी महापीठ णणुवुं. (१२ नरपीठ १८ अश्वपीठ २२ गजपीठ १३ गायपटी ११ कुलीका १४ जडंणो-कुल ८० लाग) २३.

ग्रासपीठ तेरह भागका-कणी ग्यारह भागकी और जाडंबा चौदह भागका मिलकर कुल ९० भागकी महापीठ जानना ।

(नरपीठ १२ अश्वपीठ १८ गजपीठ २२ ग्रासपीठ १२ कर्णिका ९१ जाडंबा १४ कुल ९० भाग)-२३.

हयव्याघ्रं घरापीठं घराधरं हयैर्युत ।

पृथ्वीप्रति कर्तव्यं वाजिपीठं च नान्यथा ॥ २४ ॥

ग्रासादमांसा स्थापित देवतुं वाहन शिवने वृषल सूर्यने अश्व ग्रहाने हुंस देवीने व्याघ्र के सिंह तेम पीठमां करवा णे रीते अश्व के व्याघ्रनां रूपे

Architectural drawing of the Elevation of the East Wall of the Temple of the Sun at Luxor, Egypt. The drawing shows a series of registers with various figures and symbols. The top register features two seated figures under a canopy. The second register shows a row of seated figures. The third register contains a row of seated figures. The fourth register shows a row of seated figures. The fifth register contains a row of seated figures. The sixth register shows a row of seated figures. The seventh register contains a row of seated figures. The eighth register shows a row of seated figures. The ninth register contains a row of seated figures. The tenth register shows a row of seated figures. The eleventh register contains a row of seated figures. The twelfth register shows a row of seated figures. The thirteenth register contains a row of seated figures. The fourteenth register shows a row of seated figures. The fifteenth register contains a row of seated figures. The sixteenth register shows a row of seated figures. The seventeenth register contains a row of seated figures. The eighteenth register shows a row of seated figures. The nineteenth register contains a row of seated figures. The twentieth register shows a row of seated figures. The twenty-first register contains a row of seated figures. The twenty-second register shows a row of seated figures. The twenty-third register contains a row of seated figures. The twenty-fourth register shows a row of seated figures. The twenty-fifth register contains a row of seated figures. The twenty-sixth register shows a row of seated figures. The twenty-seventh register contains a row of seated figures. The twenty-eighth register shows a row of seated figures. The twenty-ninth register contains a row of seated figures. The thirtieth register shows a row of seated figures. The thirty-first register contains a row of seated figures. The thirty-second register shows a row of seated figures. The thirty-third register contains a row of seated figures. The thirty-fourth register shows a row of seated figures. The thirty-fifth register contains a row of seated figures. The thirty-sixth register shows a row of seated figures. The thirty-seventh register contains a row of seated figures. The thirty-eighth register shows a row of seated figures. The thirty-ninth register contains a row of seated figures. The fortieth register shows a row of seated figures. The forty-first register contains a row of seated figures. The forty-second register shows a row of seated figures. The forty-third register contains a row of seated figures. The forty-fourth register shows a row of seated figures. The forty-fifth register contains a row of seated figures. The forty-sixth register shows a row of seated figures. The forty-seventh register contains a row of seated figures. The forty-eighth register shows a row of seated figures. The forty-ninth register contains a row of seated figures. The fiftieth register shows a row of seated figures. The fifty-first register contains a row of seated figures. The fifty-second register shows a row of seated figures. The fifty-third register contains a row of seated figures. The fifty-fourth register shows a row of seated figures. The fifty-fifth register contains a row of seated figures. The fifty-sixth register shows a row of seated figures. The fifty-seventh register contains a row of seated figures. The fifty-eighth register shows a row of seated figures. The fifty-ninth register contains a row of seated figures. The sixtieth register shows a row of seated figures. The sixty-first register contains a row of seated figures. The sixty-second register shows a row of seated figures. The sixty-third register contains a row of seated figures. The sixty-fourth register shows a row of seated figures. The sixty-fifth register contains a row of seated figures. The sixty-sixth register shows a row of seated figures. The sixty-seventh register contains a row of seated figures. The sixty-eighth register shows a row of seated figures. The sixty-ninth register contains a row of seated figures. The seventieth register shows a row of seated figures. The seventy-first register contains a row of seated figures. The seventy-second register shows a row of seated figures. The seventy-third register contains a row of seated figures. The seventy-fourth register shows a row of seated figures. The seventy-fifth register contains a row of seated figures. The seventy-sixth register shows a row of seated figures. The seventy-seventh register contains a row of seated figures. The seventy-eighth register shows a row of seated figures. The seventy-ninth register contains a row of seated figures. The eightieth register shows a row of seated figures. The eighty-first register contains a row of seated figures. The eighty-second register shows a row of seated figures. The eighty-third register contains a row of seated figures. The eighty-fourth register shows a row of seated figures. The eighty-fifth register contains a row of seated figures. The eighty-sixth register shows a row of seated figures. The eighty-seventh register contains a row of seated figures. The eighty-eighth register shows a row of seated figures. The eighty-ninth register contains a row of seated figures. The ninetieth register shows a row of seated figures. The ninety-first register contains a row of seated figures. The ninety-second register shows a row of seated figures. The ninety-third register contains a row of seated figures. The ninety-fourth register shows a row of seated figures. The ninety-fifth register contains a row of seated figures. The ninety-sixth register shows a row of seated figures. The ninety-seventh register contains a row of seated figures. The ninety-eighth register shows a row of seated figures. The ninety-ninth register contains a row of seated figures. The hundredth register shows a row of seated figures.

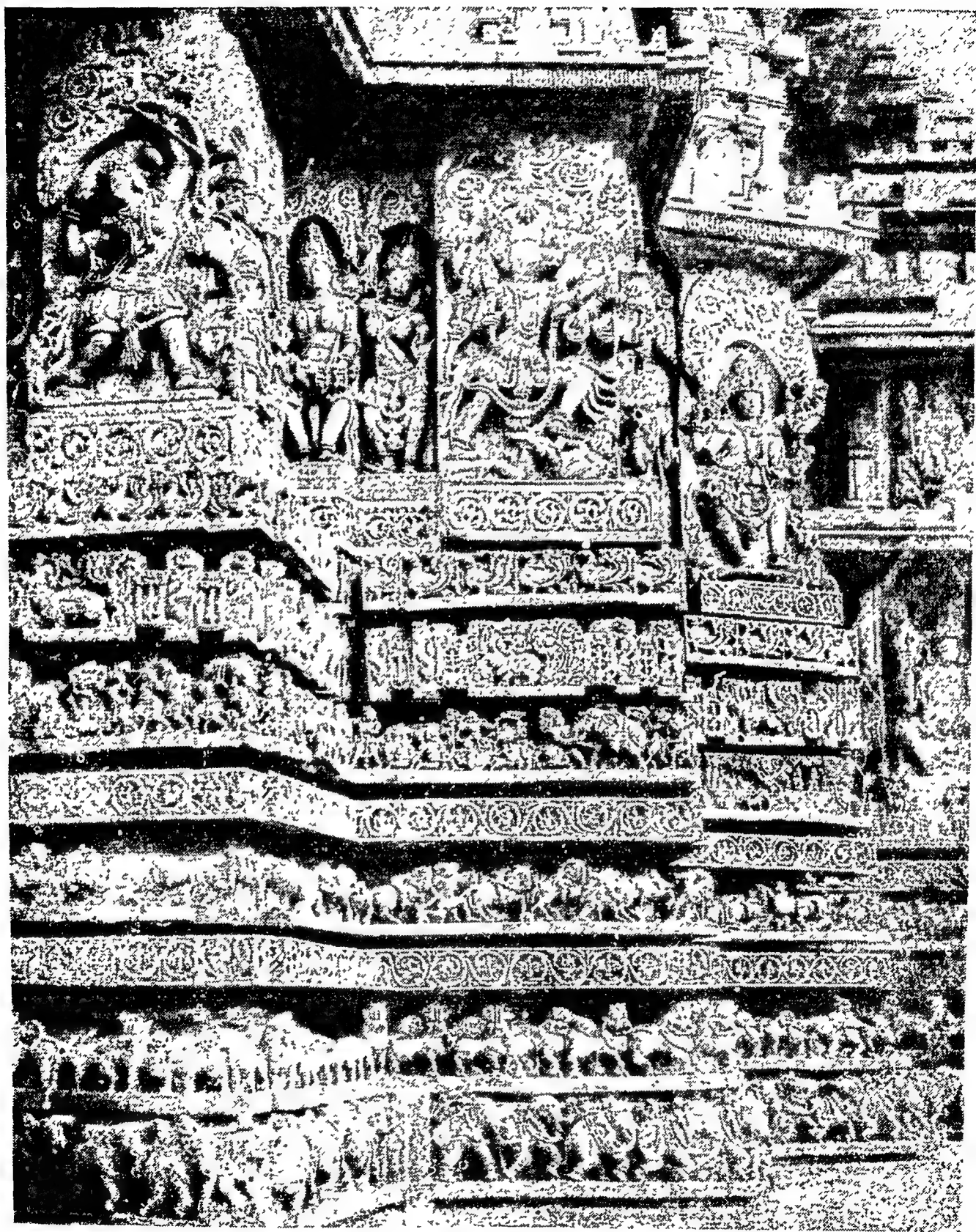
ELEVATION

भीष्ट-गज, अश्व, नरपीठ सायका अलङ्कृत महापीठ

प्रासादमे स्थापित देवका वाहन, शिवको वृषभ, मूर्यको अश्व, ब्रह्माको हंस, देवीको व्याघ्र या सिंह पीठमे करना । इस तरह अश्व या व्याघ्र के रूप पीठमे करना । राजाको अश्वयुक्त पीठ करना । पृथ्वीपति (चक्रवर्ती)को अश्वपीठ करना । दूसरे छोटे छोटे राजाको दसग कुठ भी नहीं करना । २४⁺

इति श्री विश्वकर्माकृते क्षीरार्णवे नारदपृच्छाया पीठथर विभाग नाम शताष्टेऽ
पष्ठमोऽध्यायः ॥ १०६ ॥ (क्रमांक अ० ८)

* દીપાણુવમા પીકના જુના જુના પ્રકારો બહુ અવિચ્છેદ કહેના છે અપરાજિત સૂત્ર



बेलूर-के-कलापूर्ण-मंदिर के हस्त-अश्वगज सिंहयुक्त और देवस्वरूपयुक्त मंडोवर की जंघा



सँध्युरी-रेयोन वीरलाजी कन्याण-मदिरकी चतुष्किर्कामें मदिर निर्माता श्री प्रभाशकरजी
श्रीमती और श्रीमान श्रीगोपाल नेवटीयाजी

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवे श्रीनारद मुनिश्वरे पूछेय पीठ थर विभाग लक्षणो
शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रभाशंकर ओषडभाई सोमपुराये रचेयी गुणरत्न लापानी सुप्रभा
नामनी टीकानो ऐकसो ७ द्वो अध्याय. १०६ क्रमांक अ० ८.

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवमें नारदमुनिश्वरके संवादरूप पीठ थर विभाग लक्षण
का शिल्पविशारद स्थपति श्री प्रभाशंकर ओषडभाई सोमपुरा रचिता सुप्रभा नामकी भाषाटीका
का १०६ वाँ अध्याय ॥ (क्रमांक अ० ८)



महापीठ साथप्रमाल और शिवनिर्माल्यका चंडनाथ

संतानतां इक्षत ऐक ७ महापीठ थर विभागनुं पीठ आपेला छे. वृक्षार्णवमां पीठ जुदां
जुदां दह्या छे. प्रासादना प्रमाणथी पीठ करवुं न्नेछे ते अरुं परंतु डेटडीक वभत स्थान
मान के द्रव्य लाव न्नेछे ने नानुं प्रमाण लेवामां दोष दह्यो नथी. पीठ मानथी अधुं के
त्रीन्ने लागे करी शक्य. वावन जनालय सस्त्रलिंग के चौसठ जोगणीनी देवकुलीकांनी
पंक्तिमां तेम ओछुं पीठ करवामां दोष नथी. वृक्षार्णव अ १४७ मां प्रासादस्य षडंशेन पीठं
कुर्याद्विचक्षण तुं प्रमाण भजे छे. ते कंभक आ मतने समर्थन आपे छे.

(१) दीपार्णवमें पीठके भिन्न भिन्न प्रकार बहुत विस्तार से कहे गए हैं । अपराजित
सूत्रसंतानमें सिर्फ एक ही महापीठके थर-विभागका आये हुए है । वृक्षार्णवमें पीठ अलग, अलग
कहे गए हैं । प्रासाद के प्रमाणसे पीठ करना चाहिए, यह ठीक है लेकिन कई बार स्थान
मान या द्रव्य भाव देखकर छोटा प्रमाण लेनेमें दोष नहीं कहा है । अर्ध भागे त्रिभागे वा
पीठचैव नियोजयेत् स्थान मानाश्रयं ज्ञात्वा तत्रदोषो न दीयते ।

आये या तीसरे भागमें पीठ हो सकती है । वावन जिनालय, सकस्त्रलिंगा या चौसठ
योगिनीकी देवकुलिका की पंक्तिमें कम पीठ करने में दोष नहीं है । वृक्षार्णव अ० १३७ में
प्रासादस्य षडंशेन पीठं कुर्याद्विचक्षण का प्रमाण है । यह इस मतको कुछ समर्थन देता है ।

॥ अथ मंडोवर थर विभाग ॥

क्षीगर्णव अ० १०७-क्रमांक अ० ९

चित्रकमां उवाच —

पूर्वोदयोक्ता अतः प्रपस्यामि मंडोवरम् ।
 रुक्कः पंच भागस्या द्विगतिकुंभकस्तथा ॥ १ ॥
 कलशाष्टौ द्विसाद्वं तु कर्तव्यमंतरालकम् ।
 कपोतिकाष्टौ मंची स्यात् कर्तव्य नवभागिकाः ॥ २ ॥
 पंच त्रिशत्पदा जघा तिथ्यंगैरुद्गमो भवेत् ।
 वसुभि भरणी कार्या शिरावटी दशाशीका ॥ ३ ॥
 अष्टांशोर्ध्वा कपोतालि द्विसाद्वं मन्तरालकम् ।
 छाद्य त्रयोदशांशोच्च दक्ष भार्गोविनिर्गमः ॥ ४ ॥

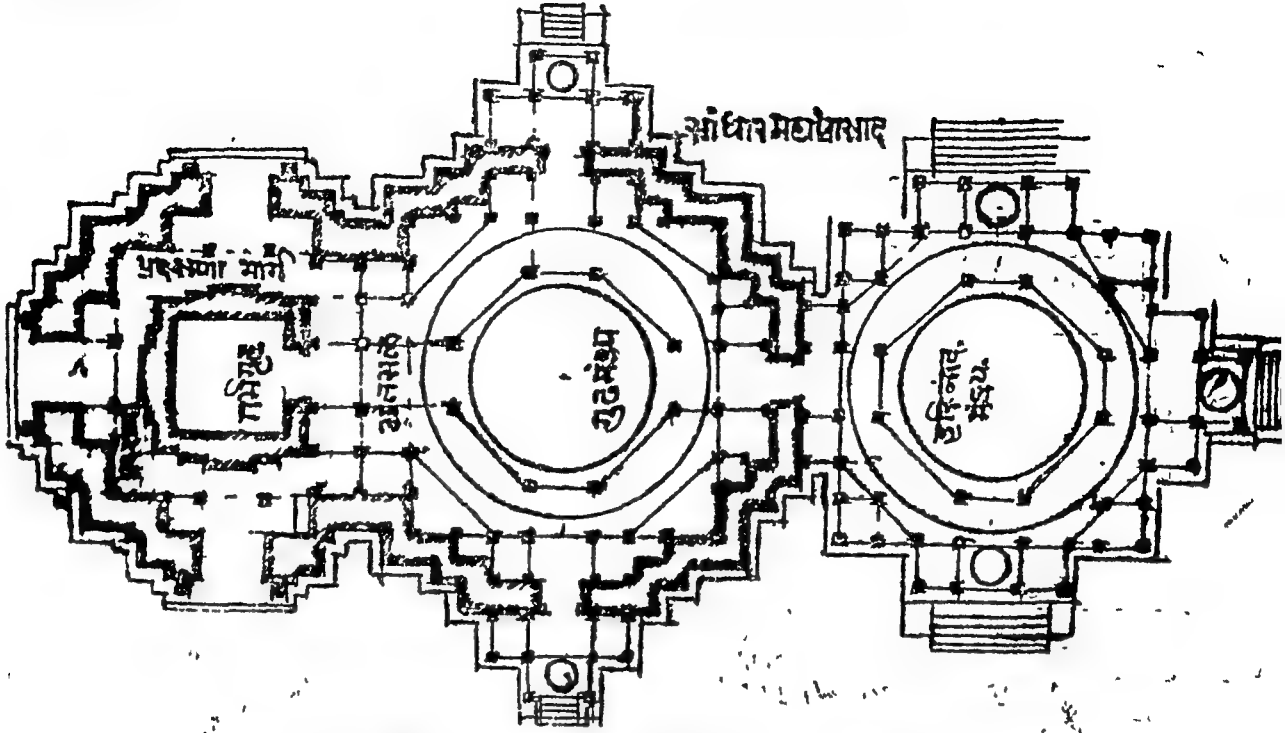
इति नागरादि मंडोवर भाग ॥१४४॥

प्रासादना डिदयतु प्रमाण आगण (अ० १०४ भा) कहुं डवे (ते १४४
 लागनो भागशदि) मंडोवर कहुं छु अश पाय लागनो, कुंलो वीम लागनो,
 कणशो आठ लागनो अ धारी अदी लागनी, डेवाण आठ लागनो, माची नव लागनी,
 जघा पानीस लागनी दोदीया पदर लागनी, लशुणी आठ लागनी, शिरावटी दश
 लागनी उपरनो मडा डेवाण आठ लागनो, अदी लागनी आतराण, अने छज्जा तेर
 भाग छेयु अने दश भाग नीकणतु करु ते रीते नागरादि मंडोवर १४४
 विलागनो नालुवो (डवे आधार प्रासादने योग्य छे त्रयु भूमिकानो मेइ मंडोवर
 ढडे छे) १ थी ४

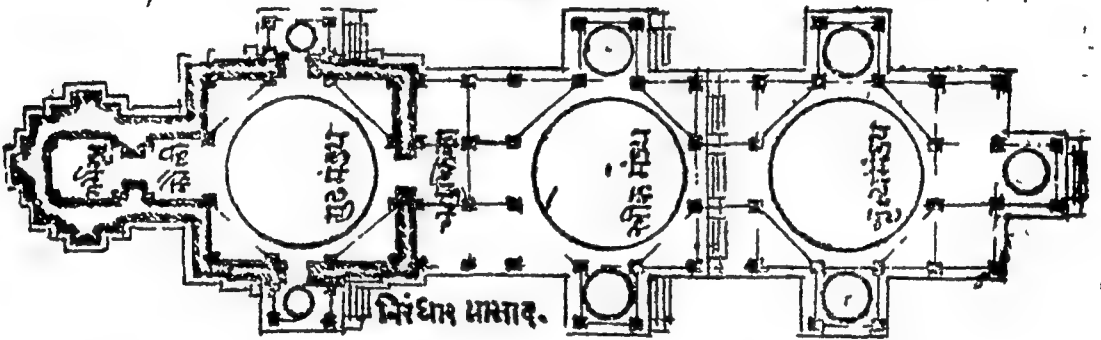
प्रासादके उदयका प्रमाण आगे (अ० १०४ मे) कहा । अब (यह १४४
 भागका नागरादि) मंडोवर कहता हूँ । गरा पाँच भागका, कुभा वीश भागका,
 कलशा आठ भागका, अंधारी ढाई भागकी, केजाल आठ भागका, माची नौ
 भागकी, जघा पैतीश भागकी, दोदिया पन्द्रह भागका, भरणी आठ भागकी,
 शिरावटी दस भागकी, ऊपरका महा केजाल आठ भागका, ढाई भागकी अतराल
 और छज्जा तेरह भागका ऊँचा जोर दस भाग नीकलता करना । इस तरह
 नागरादि मंडोवर १४४ विभागका जानना । (अब साधार प्रासादके योग्य दोतीन
 भूमिका का मेरुमंडोवर कहते हैं ।) १-२-३-४

इति नागरादि मंडोवर भाग ॥१४४॥

સાંધાર મહાપ્રાસાદ તલતરની



નિરંધાર પ્રાસાદ તલતરની

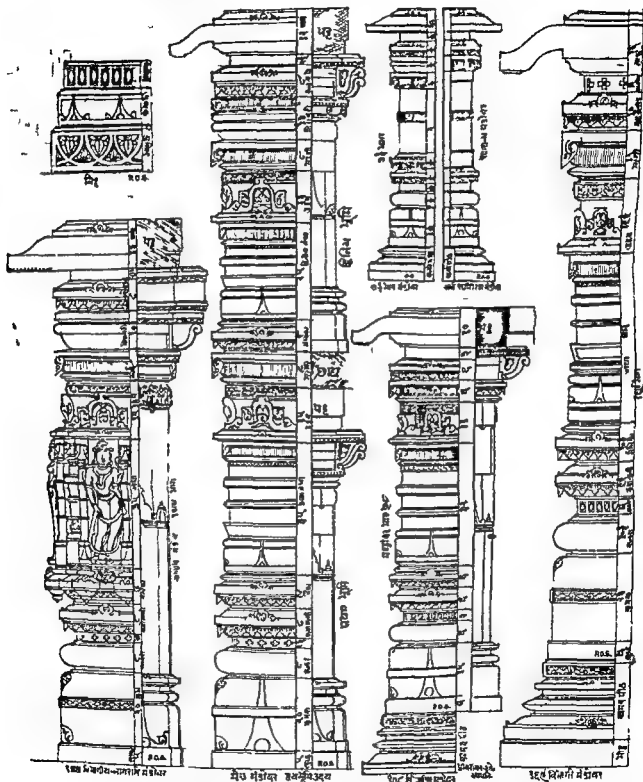


સાંધાર મહાપ્રાસાદ ઓર નિરંધાર પ્રાસાદકા સ્વરૂપ તલતરની
 મેરુમંડોવરે મંચી ભરણ્યુર્ધ્વેષ્ટ ભાગિકા ।
 પંચ વિંશતિકા જંઘા ઉદ્ગમંશ્ર ત્રયોદશઃ ॥ ૫ ॥
 અષ્ટાંશા ભરણી શેષં પૂર્વવત્કલ્પયેત્સુધીઃ ।
 સપ્ત ભાગા ભવેન્મંચી સ્વુટછાદ્યસ્ય મસ્તકે ॥ ૬ ॥
 પોઢશાંશા પુનર્જંઘા ભરણી સપ્ત ભાગિકા ।
 શિરાવટી ચતુર્ભાગા પટ્ટઃ સ્યાત્પંચભાગિકાઃ ॥ ૭ ॥
 સૂર્યાશૈ સ્વુટછાદ્યં ચ સર્વકામફલપ્રદમ્ ।

આગળ નાગરાદિ મંડોવર ૧૪૪ ભાગનો કહ્યો. પરંતુ જો તે ત્રણ ભૂમિના મેરુમંડોવરની રચના કરવી હોય તો આગળ કહેલા. ભરણી સુધીના નવ થરનાં વિભાગ ૧૧૦૧ ઉપર થીજ ભૂમિના થરવાળા કહે છે. ભરણી ઉપર આઠ ભાગની માચી પચ્ચીસ ભાગની જંઘા, તેર ભાગનો દોઢિયો, આઠ ભાગની ભરણી અને તે ઉપર આગળ શ્લોક ત્રીજાથી કહેલા થરો ફરી ચડાવવા એટલે દશભાર શિરાવટી, આઠ ભાગના મહાકેવાળા અઢી ભાગનો અંતરાળ અને તેર ભાગનું છબું એમ મળી તે ૮૭૧ ભાગ થયા. એટલે ૧૧૦૧ + ૮૭૧ = ૧૯૮ ભાગ થીજ ભૂમિ સુધીની ઉભણી બાંધવી.

પૃથક પૃથક મંડોવર-અંદરના-સ્તંભના કા ચમન્વચ સાથ

મીટ સાધાર પ્રમાદના મંડોવર ૧૦૮ ભાગના મંડોવર ૧૧૧ ભાગના મંડોવર
મેરુ મંડોવર ૭ ભાગના મંડોવર



મીટ-૧ ૧૧૪ ભાગના મંડોવર ૨ મેરુ મંડોવર ૧૦૮ ભાગના મંડોવર ૧૧૧ ભાગના મંડોવર

હવે ત્રીજી ભૂમિના ભાગ મહામંડોવરના કહે છે છતાં પર ફરી સાત ભાગની માયી, એળ ભાગની જ ઘા, સાત ભાગની ભગણી, આ ભાગની શિરાવટ

तथा पांच-भागनो पट्ट ते-उपर भार लागनुं छनुं करवुं. (अथैवा त्रण भूमि-
उदयनो जे छाववाणो) महामंडोवर सर्व कामनाने इणहाता जाणवो; ५-६-७

आगे नागरादि मंडोवर १४४ भागका कहा, लेकिन जो दो-तीन भूमिके
मेरु मंडोवर की रचना करनी हो तो आगे कहे हुये भरणी तक के नौ थरके
विभाग ११०॥ ऊपर दूसरी भूमिके थरवाले कहते हैं।

भरो	५
कुंभो	२०
इणशो	८
अंतराण	२॥
डेवाण	८
भंयिका	८
जंघा	३५
उद्गम	१५
भरणी	८

शिरावटी	१०	११०॥
महाडेवाल	८	८ भंयिका
अंतराण	२॥	२५ जंघा
छनु	१३	१३ उद्गम
		८ भरणी
	१४४	१० शिरावटी
		८ महाडेवाल
		२॥ अंतराण
		१३ छनु

१८८

७ भायी
१६ जंघा
७ भरणी
४ शिरावट
५ पट्ट
१२ छनु

महाभेड भं० २४८

भरणीके पर आठ भागकी माची, पच्चीस भाग
की जंघा तेरह भागका दोढिया, आठ भागकी भरणी,
और उसके पर आगे श्लोक तीसरसे कहे हुए थर फिर
चढ़ाना। अर्थात् दस भाग शिरावटी, आठ भागके महा-
केशल, ढाई भागका अंतराल और तेरह भागका छज्जा-
ये मिलकर ८७॥ भाग हुए। इससे ११०॥ + ८७॥ = १९८
भाग हुए। दूसरी भूमि तकका उदय जानना।

अब तीसरी भूमिके भाग महामंडोवर के कहते
हैं। छज्जे पर फिर सात भागकी माची, सोलह भागकी
जंघा, सात भागकी भरणी, चार भागकी शिरावट तथा
पाँच भागके पट्ट, उसके पर बारह भागका छज्जा करना।
ऐसे (तीन भूमि उदय के दो छाववाले) महा मंडोवरको
सर्वकामना और फलके दाता जानना। ५-६-७.

कुंभकस्य युगांशेन स्थावसणां प्रवेशकं ॥८॥

इति मेरु मंडोवर

मंडोवरना कुंभा आदि थरो (छज्जा सिवायना)
ओणले करवा. ते थरोना घाटनी उंठाई चार भाग
सुधी राखवी. ८

कुंभा आदि थर (छज्जेके सिवा) ओलंभे पर करना।
उन थरोंक घाटकी गहराई चार भाग तककी रखना ८.

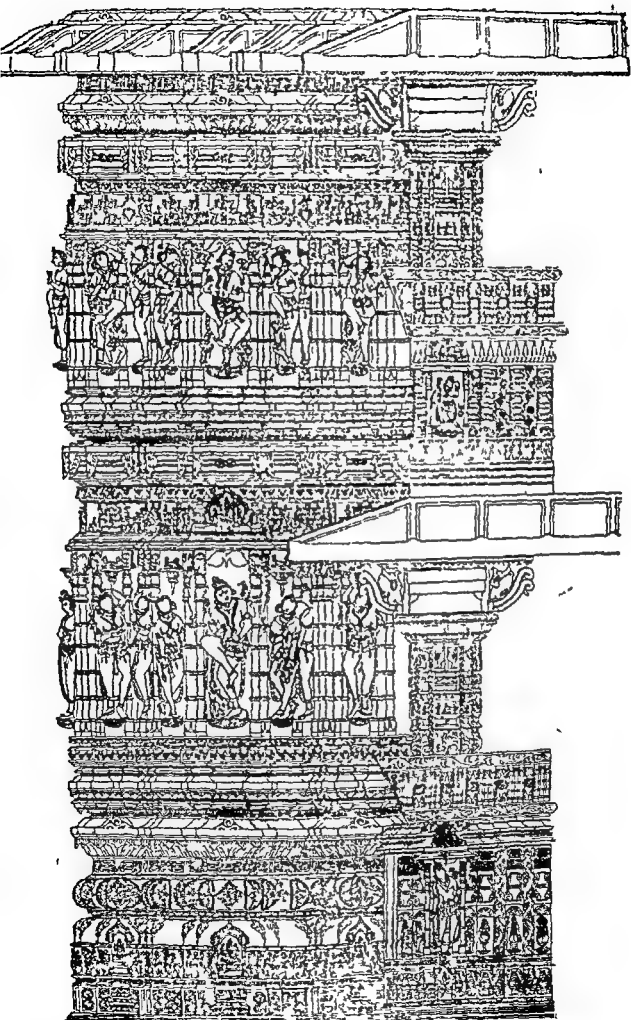
इति मेरु मंडोवर भाग २४९।

पुनः दद्यामवेत्तजंघामंन्विका स्वमानकधाः।

खुरकं स्थरखुटछाद्य निर्गमं पीठ मध्यतः ॥९॥

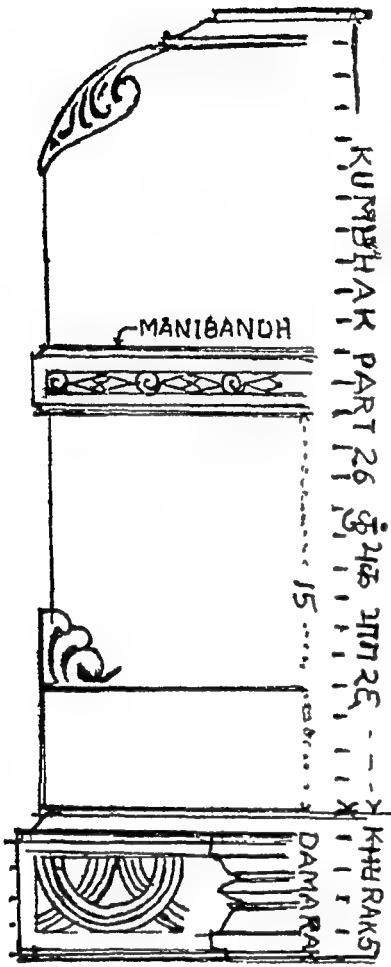
उपर भूमि करवाने इरी जंघा यडाववाने भायीनो थर पोताना मानथी
लागे यडाववा. भरो आदि थरो ओणले स्थिर अने उपरनुं छनु पीठथी
कांछि नीकणतुं करवुं. ६.

ऊपर भूमि करनेके लिये, फिर जंघा चढ़ाने के लिये, माचीका थर अपने
मानके भागमें चढ़ाना। खरा आदि थरोंको ओलंभेपर स्थिर रखना और ऊपरका
छज्जा पीठसे कुछ निकलता करना। ९.



साधार-महाप्रासाद का दो जघायुक्ता अलकृत-मेरुमण्डोवर

અવ ૨૦૬ ભાગકા મંડોવર કહતે હૈ—

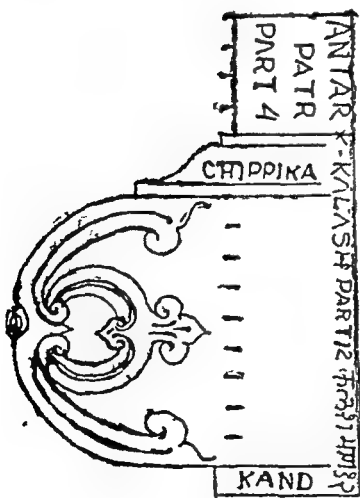


खुरक पाँच भाग
कुंभक भाग २६

खुरकं पंचभागस्यात् कुंभकं षट्विंशतिः ।
मणिबंध प्रकर्तव्या भागस्यादश पंचके ॥१०॥
त्रयोदश्यात्परे भागे विभागंच समो मुनि ।
खुरकंऽमराकारं कुंभांते पल्लवाकृति ॥११॥

હવે અન્ય મંડોવરના થરના ઘાટ સાથેનો ૨૦૬ ભાગનો કહે છે. ખરો પાંચ ભાગનો કુંભો છઠ્વીસ ભાગનો તેને મણીબંધ પંદરમે ભાગે કરવા તે હે મુનિ તેર ભાગ ઉપર કરવા (?) ખરામાં ડમરુની કે મરકત-મોતીની જાલરની આકૃતિ કરવી અને કુંભામાં ખૂણે ખૂણે પાંદડાની સુંદર આકૃતિ કરવી. ૧૦-૧૧.

અવ અન્ય મંડોવર કે થરકે ઘાટકે સાથ ૨૦૬ ભાગકા કહતે હૈં । ધરા પાંચ ભાગકા, કુંભા છઠ્વીસ ભાગકા, ડસકો મણિબંધ પન્દરહેવે ભાગમેં કરના । હે મુનિ, તેરહ ભાગ ડપર કરના । ધરેમેં ડમરુ કી યા મરકત કી જાલર કી આકૃતિ કરના । ઓર કુંભામેં ડપર કોને કોનેમેં પત્ર કી સુન્દર આકૃતિ કરના । ૧૦-૩૧.

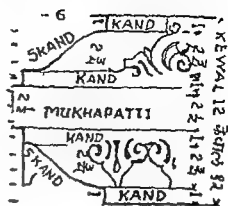


कलशा भाग १२ अंतरपत्र भाग

कलशं च द्वादश भागं अंतरपत्रतुवेदभिः ।
भागैकं प्रतिकंदश्च अधः कंदंच भागत् ॥१२॥
द्येक भागं तु षट्कार्य निर्गमपट्टमेवच ।
द्वादशश्च कपोताली गर्भकर्ण द्विसार्द्धकं ॥१३॥
कंदस्य भागमेकेन अधः चैतत्समं भवेत् ।
मुखपट्टि भवेद्विभिः शेषः स्कंधद्वयं भवेत् ॥१४॥

કળશો ખાર ભાગનો, અંતરાણ ચાર ભાગની, કળશાને એક ભાગનો પ્રતિકંદ ઉપર કરવો-અને નીચે એક ભાગનો કંદ કરવો. એક ભાગની ચિપ્પીકા ઉપર કરવી. કળશો નવ ભાગનો (કળશાને મણીબંધ મોતીની કરવી) અને કળશાનો નીકળો છ ભાગનો (અંતરાણથી) રાખવો.

કેવાળ ખાગ લાગનો તેમા વચલી મુખપટ્ટી
અટી લાગની, નીચે-ઉપરનો કદ એકેક લાગનો,
મધ્યની મુખપટ્ટી પામેના બેક કદ એકેક એમ
બે લાગના અને ખાકી પોણા ત્રણ પોણા ત્રણ
લાગના બે નીચે ઉપરના સ્કંધગલતા કરવા એ
ગીતે કેવાળનો ખાગ લાગનો ઘાટ બાણવો
૧૨-૧૩-૧૪



કેવાલ ભાગ ૧૦

કલશા વારહ ભાગકા, અતરાલ ચાર ભાગકી, કલશા કો એક ભાગકા
પ્રતિકૃત્ત ઉપર કરના ઔર નીચે એક ભાગકા કદ રરના । એક ભાગકી ચિપ્પિકા
ઉપર કરના । કલશા નો ભાગના કરના । (કલશેમે મણિવધ મોતીકી કરના) ઔર
કલશેકા નિકાલા છ ભાગકા (અતગલસે) રરના ।

કેશલ વારહ ભાગકા, હસમે મન્યકી મુખપટ્ટી ઢાઈ ભાગકી, નીચે ઉપરકા
કદ એક એક ભાગકા । મધ્યકી મુખપટ્ટી કો પામકે દોનો કદ એક એક ભાગ એસે
દો ભાગને ઔર વાકી પૌને ત્રીન ભાગકે દો નીચે ઉપરકે સ્કંધગલતે કરના ।
હમ તરહ કેશલકા ઘાટ ૧૦ ભાગકા મમહના । ૧૦-૧૩-૧૪

અંતરંચ દ્વિભાગંચ (૧) દ્વાદશમંચિરોત્તમા ।

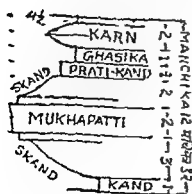
પ્રવેશંચ સાર્વશ્વતુર્ય સ્કંધ પરિમસ્તકે ॥૧૫॥

કર્ણ ચ દ્વય ભાગાનિ ઘસિકા પદપટ્ટિકા ।

તત્સમં પ્રતિકંધશ્ચ પદભાગં ચ પટ્ટિકા ॥૧૬॥

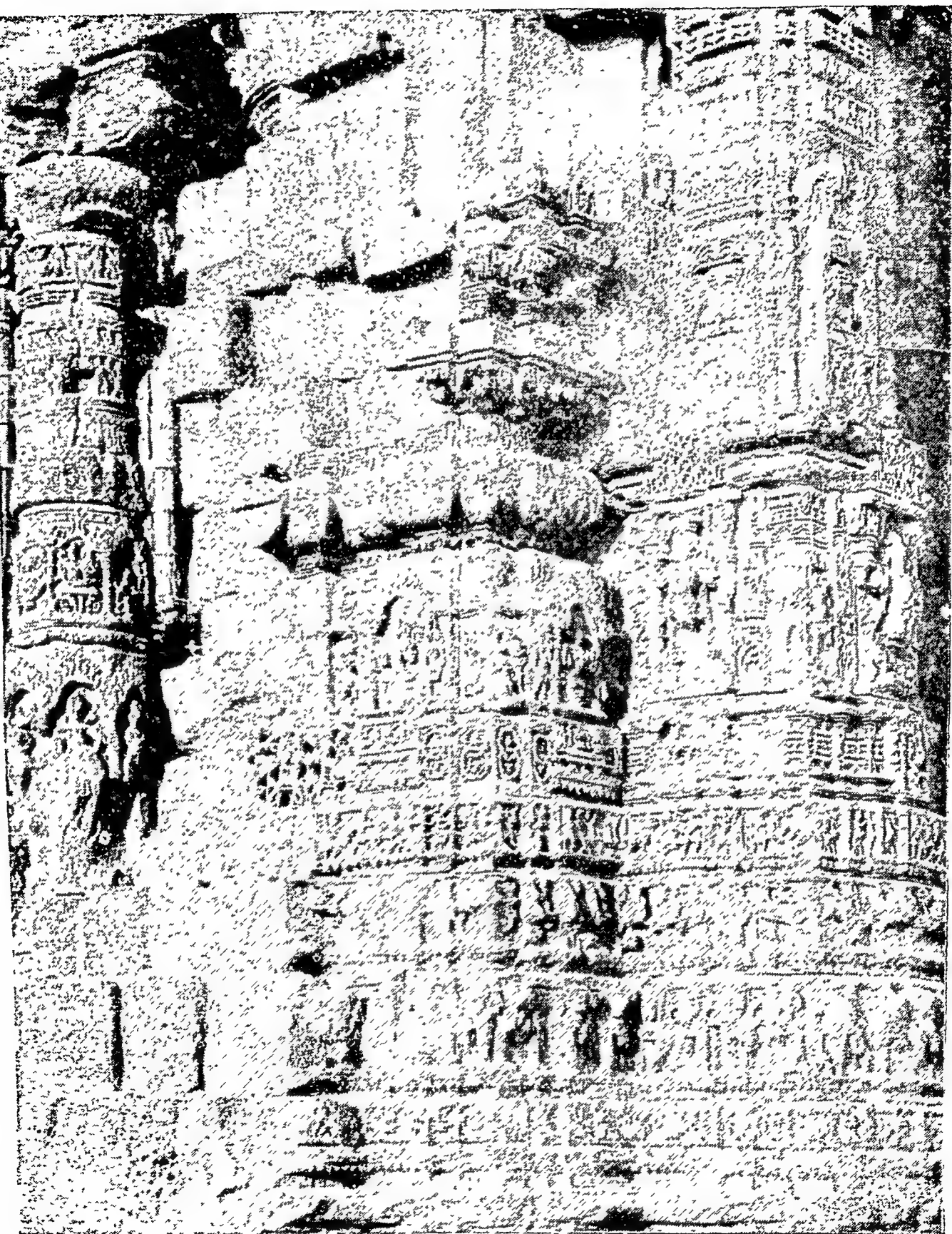
કર્ણ પટ્ટી દ્વયં ભાગ મુખપટ્ટિ પદં ભવેત્ ।

અથઃ કદં ભવેદ્ભાગ શેષેચ સ્કંધ દ્વયમ્ ॥૧૭॥

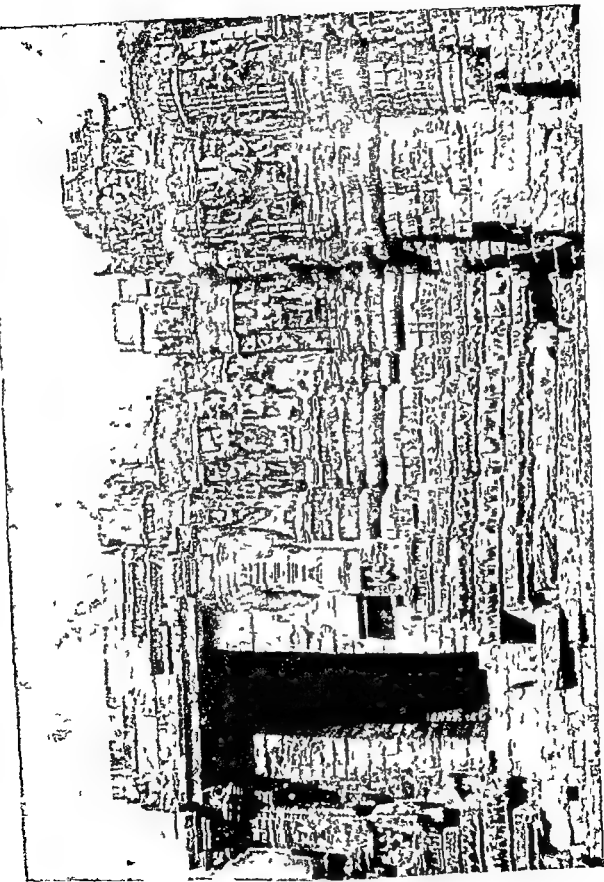


મચિકા ૧૦ ભાગ

ખાગ લાગની માચીના થગ્મા ઉપર કણીયેથી
સાડચાગ લાગ પ્રવેશ (ઘાટની ઊડાઈથી) નીકાળો
રાખવો કણી બે લાગની ઘગીકા-કદ પટ્ટી એક
ખાગની તેટલો પ્રતિકદ ઉપરનો એક લાગનો,
કણીપટ્ટી-મુખપટ્ટી બે લાગની કરવી મુખપટ્ટીની
ખાજુમા કદ અગ્ધા અરધા લાગના કરવા નીચેનો
કદ એક લાગનો ખાકીના સાડાપાચ લાગમા બે
સ્કંધ (ગલતા) નીચે ઉપરના કરવા (નીચેનો મોટા



सोमनाथ के प्रवित्र महाप्रासाद उत्तरभद्र महापीठ कक्षासन और स्तंभ



सोमनाथ के प्राचीन भव्यमहाप्रासाद के नर बाघ गज शयुक्त महापीठ और दृश्य-वायुत मंडावर

उपरनो नानो) ओ रीते थार लागना माचीना थरना घाटना विभाग न्णुपा.
१५-१६-१७.



त्रिपुरान्तक शिव जंघामें रूप

माचीना उपर साठ लागनी जंघा लोकपालादि रुपथी नीकणती करवी.
तेमां इरता प्रदक्षिणाओ दिग्पालनां स्वरूपो करवां. १८.

माचीके ऊपर साठ भागकी जंघा लोकपालादि रूपसे निकलती हुई करना।
उसमें फिरते प्रदक्षिणामें दिग्पाल देव स्वरूप करना। १८.

स्थउपरथश्चैव कुर्यादेवाङ्गना मुने !।

वारिमार्गे मुनींद्रश्च जटाधारी शिवालये ॥१९॥

सप्त भागयता कुंभि अष्टमध्येच पल्लवः ।

डमरकं नव भागं पट्टत्रिशे चतुर्कर्णिकाः ॥२०॥

वारह भागकी माचीके थर
में ऊपर कणीसे साठे चार भाग
प्रवेश (घाट की गहराई से),
निकाला रखना। कणी दो भाग
को, घसीका-कंदपट्टी एक भागकी,
उतना प्रतिकंद उपर का एक
भागका, कर्णपट्टी-मुखपट्टी दो
भागकी करना। मुखपट्टी को
बाजुमें कंद आवे आवे भागके
करना। नीचेका कंद एक भाग
का, बाकी साठे पाँच भागमें
दो स्कंध (गलते) नीचे ऊपरके
करना। (नीचेका मोटा, ऊपरका
छोटा) इस तरह वारह भागके
माचीके थरके घाट के विभाग
जानना। १५-१३-१७.

पदपष्टि भवेत्जंघा
लोकपालस्य निर्गतः ।

दिग्पालभ्रमंतस्य ततः

स्थाप्या प्रदक्षणे ॥१८॥

પ્રવેશ સપ્ત ભાગાની કર્તવ્યં ચ સદાચુપં ।

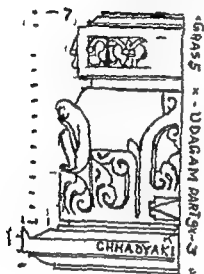
મરણીકા-ચ દ્વાદશમાગે ચિષ્ણિકા ભાગમેવચ ॥૨૪॥

કર્ણિકા સાર્ધભાગેન ઘસિકા -અર્ધમેવચ ।

ઉપર્યુપરિકરૈઃ સ્યાત્ સપ્તમાગ વિચક્ષણ ॥૨૫॥

કર્ણપટ્ટી દ્વયો ભાગ તદ્ધપલ્લવોર્યુત ।

અશોક પલ્લવાકારા કર્તવ્યા સર્વકામદાઃ ॥૨૬॥



-ઉદગમ ભાગ ૧૭

જ્યા જાધી ઉપર દોઢીયો મત્તર ભાગનો કરવો તેમાથી નીચે છાજલી ત્રણ ભાગની અને ત્રણ ભાગની કળતી તે પર નવ ભાગનો ઊંચો દોઢીયો કરવો તેમા વચ્ચે બહાર નીકળતુ મુખભદ્ર દોઢીયાનુ કામનાકારે કરવુ તે ઉપર પાચ ભાગ ઊંચાઈની ગોળાઈમા પટ્ટીમા ત્રણ ભાગમા ગ્રાસ કરવા આ બધા ઘાટની ઊંચાઈ મૂળથી સાત ભાગની બુદ્ધિમાન શિલ્પીએ રાખવી (ઉદગમના બુણે બુણે કપિ બેમાડવા) કુલ ૧૭ ભાગ દોઢીયાના બાણવા

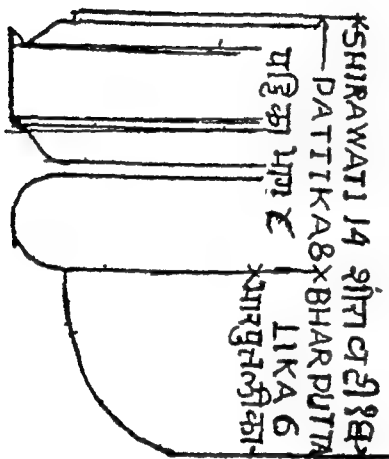
જ્યા-જધીકે પર દોઢિયા સત્રહ ભાગકા કરના । उसमेसे नीचे -छाजली तीन-भागकी और तीन भाग निकलती-उसके पर नौ भागका ऊँचा दौडिया करता । उसमे मध्यमे बाहर निकलता मुख भद्र, दौडियेका फासना फारमे करता । -उसके उपर पाँच भाग ऊँचाईके गालाकारमे पट्टीमे तीन भागमे ग्रास करना । ये सब घाटकी गहराई मूलसे सात भागकी बुद्धिमान शिल्पीको करता । (उदगमे कौते कौतेपर कपिको बिठाना ।) कुल १७ भाग दौडियेके जानना । २२-२३



મરણી ભાગ ૧૦

તેવા સ્વરૂપની બાર ભાગની ભરણીથી સર્વ કામનાનુ ક્ષણ મળે છે ૨૪-૨૫-૨૬

दोढियेके पर भरणी बारह भागकी करना । उसमें नीचेसे एक भागके कंद सहित चिपिका करना । उसके पर डेढ़ भागकी कणी करना । आधे भागकी घसी करना । उसके उपर परिकरकी तरह पल्लवोंको सात भागमें विचक्षण शिल्पी करें (नीचे कंद और उपरकी पट्टीके नीचे चिपली कणीके साथ) रखना । उपरकी मुखपट्टी दो भागकी पट्टी उसके नीचे लटकते अशोक पल्लव-पत्रोंके आकारका करना । वैसे स्वरूपकी बारह भागकी भरणीसे सर्वकामानका फल मिलता है । २४-२५-२६.



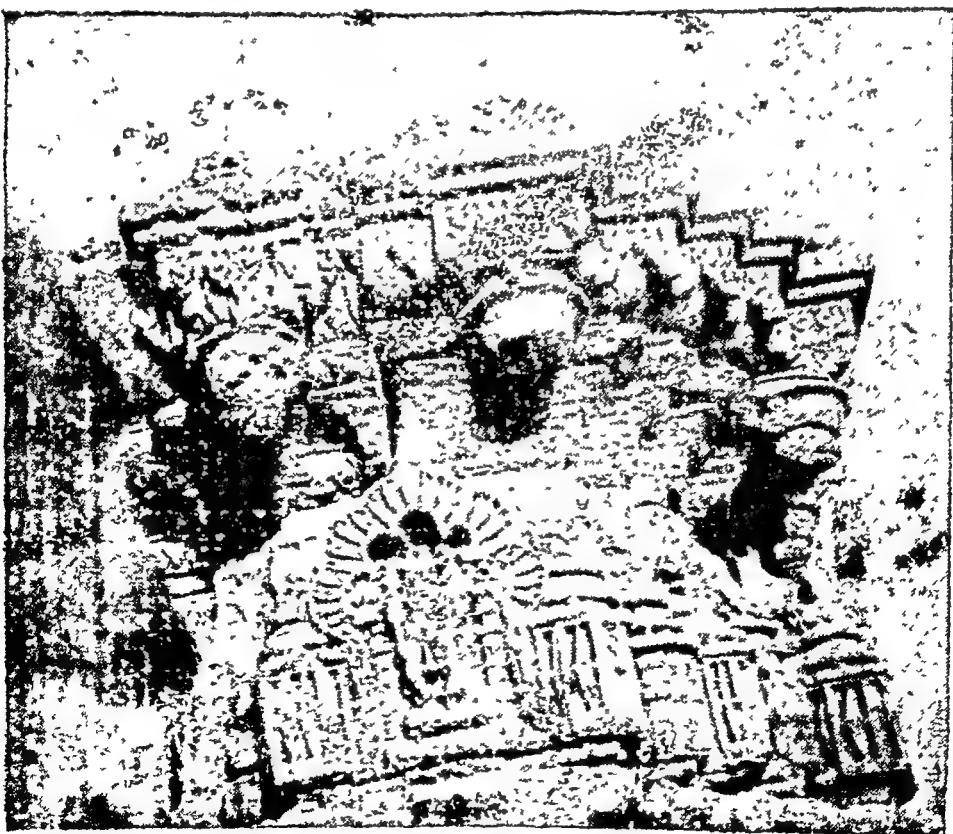
शिरावटी भाग १४

शिरावटी चतुर्दशा भागमुच्छ्रय उच्यते ।

भारपुत्तलि पडांशेन तदर्धे पट्टिका स्तथा ॥२७॥

लरणी उपर चौदह भागनी शिरावटी ७'ची डही छे. तेमां छ भागनी भारपुत्तलीका उपर पट्टीयो वगेरे डरवी. २७.

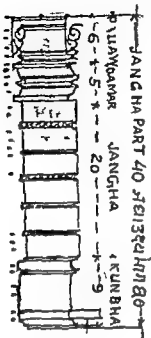
भरणीके उपर चौदह भागकी शिरावटी ऊँची कही है । उसमें छः भागकी भारपुत्तलिका और उपर पट्टियाँ वगैरह करना । २७.



सोमनाथजीका मंडोवरका उद्गम-और भरणी

॥ अथ मेरु मंडोवर ॥

क्षीरार्णव अ० ॥ १०८ ॥ (क्रमांक अ० १०)



जंघा भाग १०

श्री विश्वकर्मा उवाच—

१ स्तर ज्वश्रितपूर्व (?) नागरेमेरुमस्तके ।

२ मेरो मंडोवरे मंची भरण्योर्ध्वदश भागत ॥ १ ॥

चत्वारिंश स्थिता जंघा कुंभिका नवभागतः ।

उपरे पल्लवा कार्या भाग षट् विशेष च ॥ २ ॥

डमरक पंचभागानि मध्ये त्रीणि स्वरुणिका ।

(अर्धोऽंशे न स्तरो पाणी (?) जंघा कुर्यात्प्रदक्षिणं) ॥ ३ ॥

दिग्पालादि सस्थाप्य जेपे देवे च मनोत्तम ।

जलान्तर समस्थाने मुनीन्द्रा यदि सस्थिता ॥ ४ ॥

- ५ भुजे
- २६ कुम्भो
- १२ क्षणो
- ४ अंतराण
- १२ केवाण
- १२ भूमिका
- ६० न धा
- १७ उद्गम
- १२ अरणी

श्री विश्वकर्मा कहे छे (आगगना १०७ मा अध्यायमे २०६ लागने जे नागर म डोवर कह्यो ते पर मेड म डोवरना थर विलाग कह्य छु) मेड म डोवरमा गाग लागनी कहेली लागली उपर माथीना थर दम लागने करवो ते पर न धा आलीग लागनी करवी

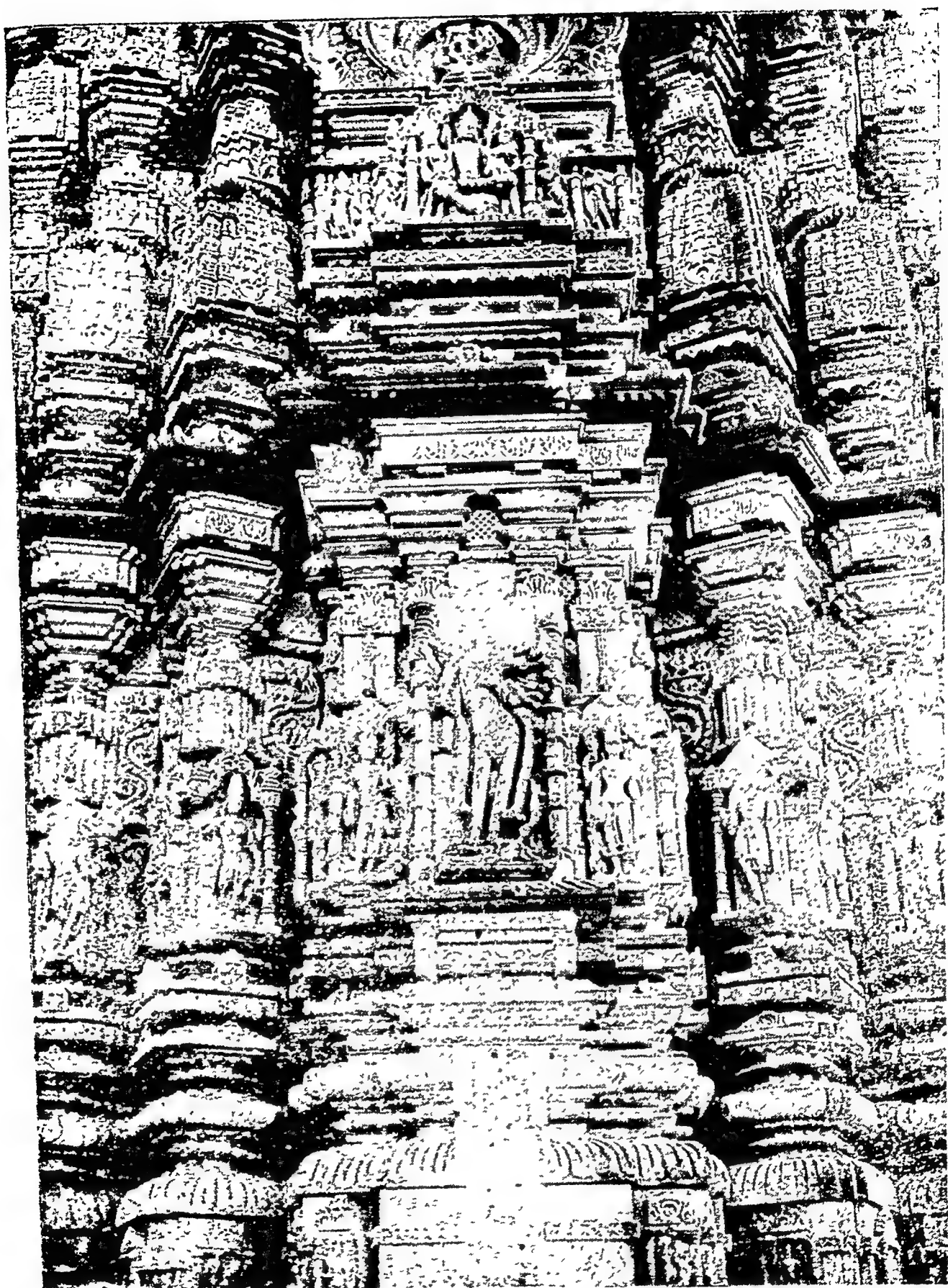
ते न धामा नीचे कुलिका नव लागनी उपर पल्लव = पाव छ लागमा ते नीचे उभर पाव लागमा तेमा वर्ये त्रय कलीयो अने पाधला पट्टीना घाट (वणी वीशे लागमा) करवो न धानी आलीश लागनी उवाधना अर्ध लागमा अट्टे वीश लागमा कली भ ध अने पट्टी आदि भ धो इरता करवा न धोमा इरता दिग्पाल आदि इपो अधापन करवा आडीना उत्तम देवोनी भूतिओ कवी पाणीतारमा मुनि तापमनी जेली भूतिओ करवी १-२-३-४

- १६०
- १० माथी
- ४० न धा
- १५ होदीयो
- १० लागली
- १४ शीरावटी
- १२ केवाण
- ४ अंतराण
- १६ जघ

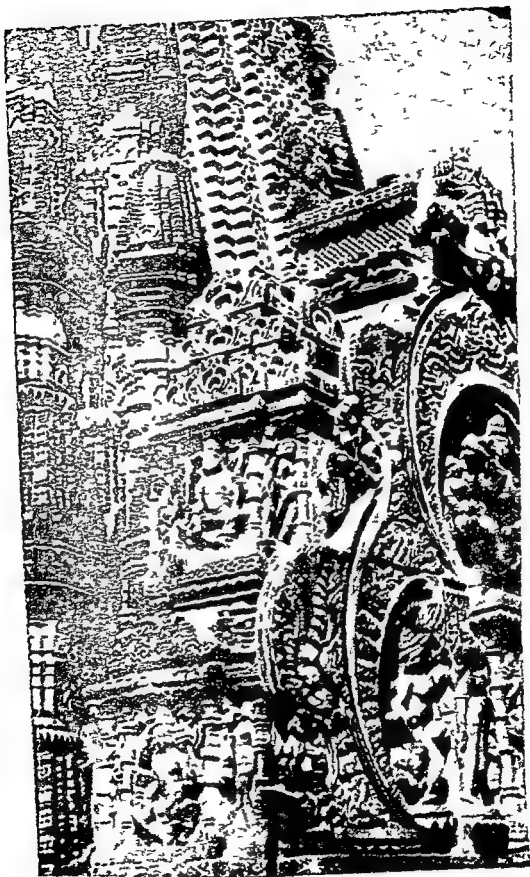
श्री विश्वकर्मा कहते है (आगेके एकसौ सातवें अध्यायमे) २०६ भागका जो नागर मंडोवर कहा है उसके उपर मेरु मंडोवरके थर विभाग कहता हैं । मेरु मंडोवरमे बारह भागकी

१२१
२८१

(१) पाठांतर—धमज्वाश्रितपूर्व—(२) अध्याय १०७ का श्लोक १० से २०६ विभागका मंडोवर कहा है उसमें भरणी तकका विभाग १६० कहा है—अब यहांसे मेरु मंडोवरका विभाग कहते हैं—



भूमिज शैलिका उदयेश्वरप्रासाद के मंडोवर और शिखर के आद्य भाग (उदयपुर मालवा)

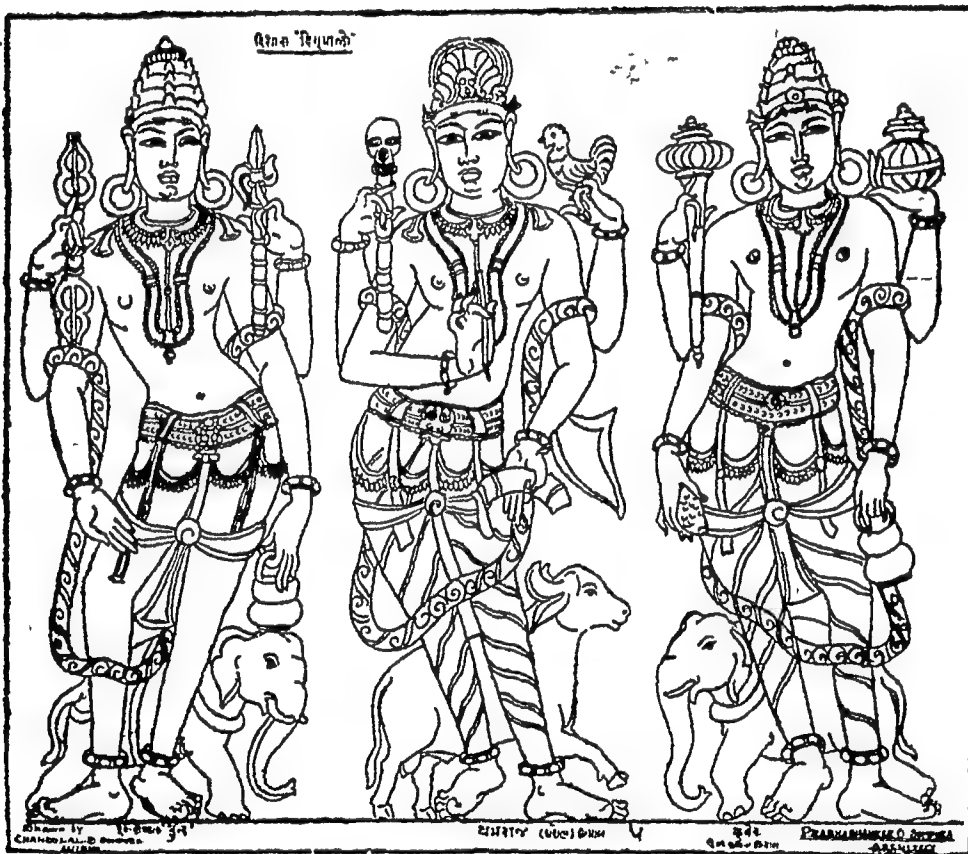


भूमिजगसाद के शिखर के शुरसेन (शुकनास) (उदयपुर मालवा)

कही हुअी भरणीके उपर माची का थर दस भागका करना । उसके उपर जंघा को चालीस भागकी करना । उस जंघामें नीचे कुंभीका नौ भागकी उपर पल्लव=पाल छः भागमें उसके नीचे डमरू पाँच भागमें, उसमें बीचमें तीन कणियाँ और बंधन पट्टीका घाट करना । जंघाकी चालीस भागकी ऊँचाईके अर्ध भागमें अर्थात् बीस भागमें कणी बंधको और पट्टी आदि बंधोंको फिरते करना । जंघामें फिरते दिग्पाल आदि दे० रूपांको स्थापित करना । बाकीके उत्तम देवोंकी मूर्तियाँ बनाना । पानीतारमें मुनि तापसकी खड़ी मूर्ति करना । १-२-३-४.

तस्योपरि संस्थाप्य च पंचदशोद्गमोभवेत् ।

दशांशा भरणी शेषं पूर्ववत् कलायेत्सुधी ॥ ५ ॥



दीग्पाल-पूर्व ईद्र दक्षिणे यम-धर्मराज उत्तरे कुबेर-सोम

जंघा उपर दोढीये पंद्रह लागने, ते पर दश लागनी लरणी करवी. आशीना लागो आगण (अध्याय १०७मां) क्हा ते प्रमाणे अटले १४ लाग शिरावटी महाकेवाण आर लाग, अंधारी चार लाग अने छणुं सोण लागनुं करवुं ते प्रमाणे थरवाणा करवा. ५.

जंघाके उपर दोढिया पन्द्रह भागका, उसके पर दस भागकी भरणी करना । बाकीके भाग आगे (अध्याय १०७ में) कहा है इस तरह अर्थात् चौदह भाग शिरावटी, महाकेवाल, बारह भाग, अंधारी चार भाग और छज्जा सोलह भागका करना । उसके अनुसार थरवाले करना । ५.



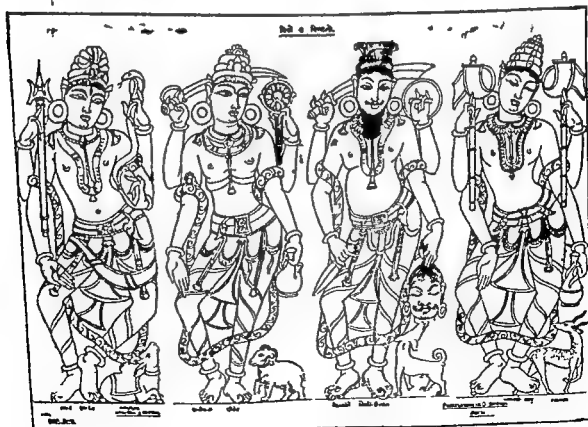
पश्चिमे वरुणदेव दीग्पाल



पतालमा दीग्पाल



जाकाशका नम दीग्पाल



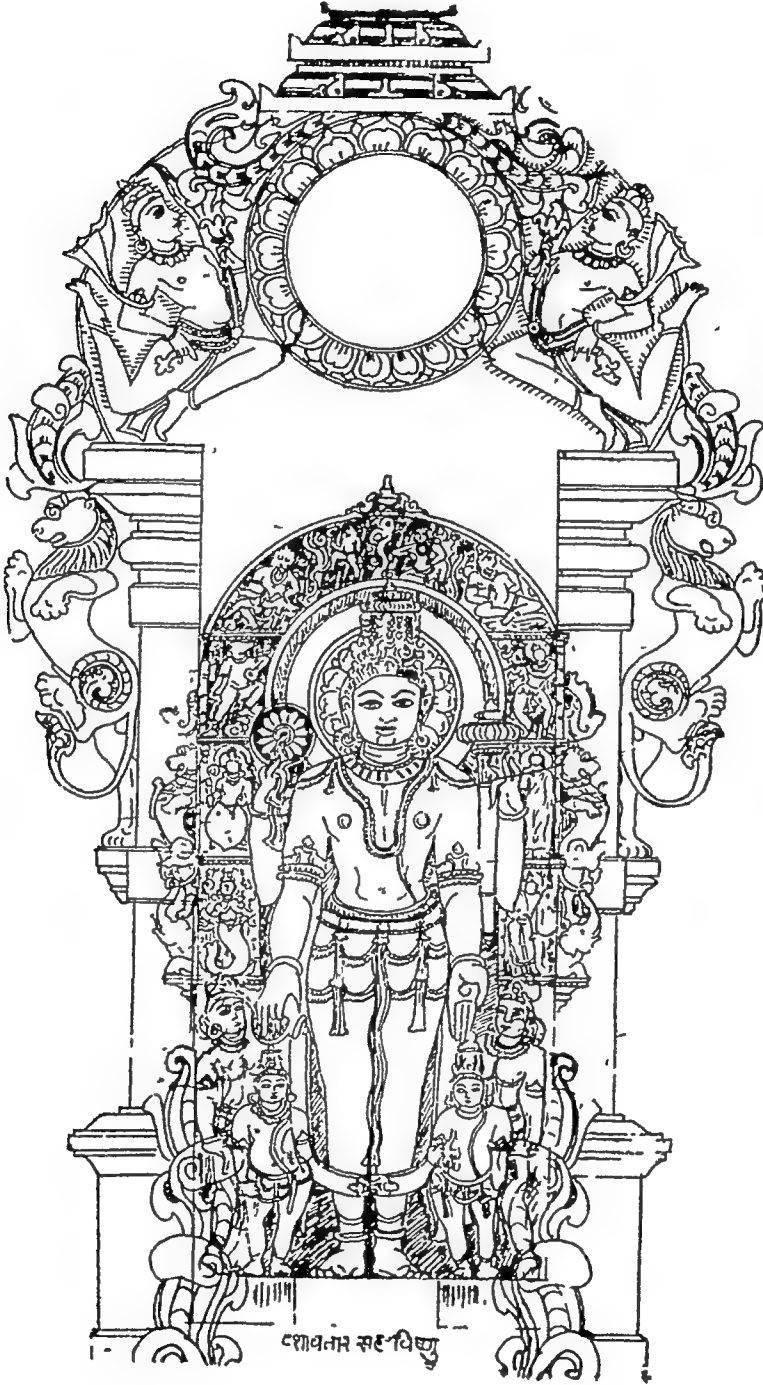
इशानकोणके ईश

अग्निकोणे-अग्नि

नैऋत्ये निरुती

वायव्ये वायुदेवता

खुट छाद्योमितं स्तेषां प्रहारं च तद्ध्वतः । भागमेकोनविंशत्यां तद्विचारमतः शृणु ॥६॥
अधश्चेदंतरं कार्यं भागार्धेन समन्वितं । पट्टिका सार्द्धं भागं च कर्णिकापदमेव च ॥७॥



दशावतार साथ विष्णु
उपर गंधर्व-बाजुमे विरालिका

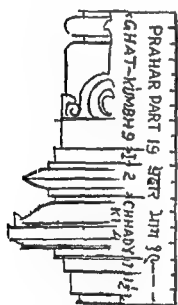
उपरि भाग चत्वारि छाद्यकि सर्वकामदः ।
कर्ण भाग द्वयं कार्यं शेषकंद च कंदयो ॥ ८ ॥
(कर्णउता यदा कार्या भागप्रतिश्च कर्णयो?) ।
घटंश नवमे प्रोक्त पल्लवेन समाकूले ॥ ९ ॥

दलस्यष्टमांशेन गर्भेक्याति भद्रकं ।

तत यदा व्यक्त वा मंचिका सर्वकामदं ॥१०॥

मे३ भडोवरना छन्न उपर (जे शिपर कण्वातु होय तो) प्रहार (पडाइ
प्रहार विभाग थर) नो थर ओगाछीश लाग उदयनो अडाववो तेना विभाग
०॥ अधारी दुवे सासणो नीचे अरधा लागनी अधारी पट्टीका होठ लागनी
१॥ पट्टीका कर्णीका ओक लागनी ते पर सर्व कामनाने देनारी चार लागनी
१ कर्णीका छाजली करवी कर्णी जे लागनी ओक लागनो कद, कर्णीने
४ छाजली करवी कर्णी जे लागनी ओक लागनो कद, कर्णीने
२ कर्णीका नानी प्रतिकर्ण करवी ते पर नव लागनो कुलक पटलव साथे
१ कद धट-उ नो करवो (२) उपागना दल विभागना आठमा लागे मध्य गले
६ १६ लद्र करवु नो आ प्रडाइ पर शिपर न करवु होय अने
उपर भूमि मजला करवो होय तो आ प्रडाइने थर तओ देवो अने छन्न थर
सर्व कामनाने देनारी ओवी (दश लागनी) मचिकानो थर करवो ६-६

मेरु भडोवरके छज्जेके उपर (जो शिपर करना हो तो) प्रहार (पहारुथर)



प्रहार भाग १९

का थर उन्नीस भाग उदयका चढाना । उसके विभाग
अव सुनो । नीचे आधे भागकी अधारी पट्टीका डेढ
भागकी, कर्णीका एक भागकी उसके उपर सर्व
कामनाको देनेवाली चार भागकी छाजली करना ।
कर्ण दो भागका, एक भागका कद-कर्ण और छोटा
प्रतिकर्ण करना । उसके पर नौ भागका कुलक पल्लवके
साथ करना । उपागके दल विभागके आठवें भागमे
मध्य गर्भमे भद्र करना । जो इस प्रहारके पर शिपर
न करना हो और उपर भूमि मजला करना हो तो
इस प्रहारका ८२ छोड देना और छज्जेके उपर
सर्वकामनाको देनेवाली ऐसी (दस भागकी) मचि-
काका थर करना । २ ६-५-८-९-१०

पूर्वोक्त विभाग च कर्तव्यं सर्वकामदाः ।

द्वेष्ट त्रिशोक्त ता जंघा पूर्वोक्तदशद्वयोद्गम ॥११॥

भरणी याचित्पूर्वेण कपोताली भवेत्ततः ।

॥ पूर्वोक्तं च यथा छाद्यं भाग एवं च कार्यता ॥१२॥

२ पट्टीकावमा प्रहारना पृथक् पृथक् वाटना ३ प्रहार सुदर दखा छे

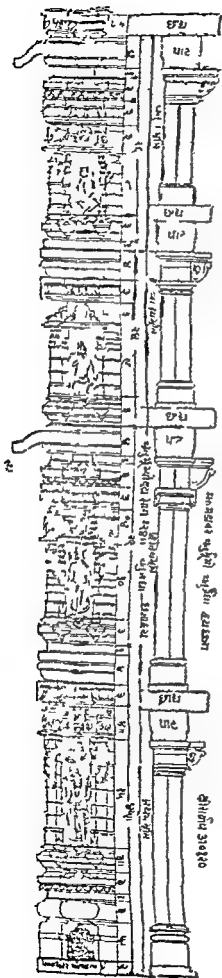
४ उक्षाण्णमे प्रहारके पृथक् पृथक् पाटके छ प्रहार सुदर रहे है ।

१० भायी	ये रीते सर्व कामनाने देनारा आगण कहेला थर विभाग
३२ जंघा	करवा. पत्रीश लागनी (त्रीश) जंघा पार लागनो दोढीयो,
१२ उद्गम	आगण कही तेटला दश लागनी लरणी, केवाण पार लागनो
१० लरणी	अंतराण पार लागनो अने छणुं सोण लागनुं करवुं. ये
१२ केवाड	प्रमाणे त्रणु भूमिनो त्रणु जंघायुक्त मंडोवर त्रीश हाथना
४ अंतराण	सांधार प्रासादने करवो. (पहेली भूमि १६० भाग + भीश
१६ छणु	भूमि १२१ + त्रीश भूमि ६६ = कुल ३७७ भाग). ११-१२.
६६	

इस तरह सर्व कामनाओंके देनेवाले आगे कहे हुए थर विभाग करना । वत्तीस भागकी (तीसरी) जंघा वारह भागका डेढ़िया, आगे कही है उतने दस भागकी भरणी, केवाल वारह भागका अंतशल चार भागका और छज्जा सोलह भागका करना । इस तरह तीन भूमिका तीन जंघासे युक्त मंडोवर तीस हाथके सांधार प्रासादको करना । (पहली भूमि १६० भाग+दूसरी भूमि १२१+तीसरी भूमि ९६ = कुल ३७७ भाग) - ११-१२

सद्यते तृतीया भूमि त्रिंश हस्तं च यदा भवेत् ।
 पंच त्रिंशत्भवेद्दहस्तं प्रासादं यदि कारयेत् ॥१३॥
 भूमि चत्वारि दातव्या शृणुत्वेकाग्रतो मुनेः ।
 कपोताली तथा छाद्यं पुनस्त्यक्ता प्रयत्नतः ॥१४॥
 मंचिका तत्र दातव्यं भरणीर्यावत्मस्तके ।
 भागहीना भवेद्जंघा भागहीना च उद्गमम् ॥१५॥
 स्तरशेषं भवेत्पूर्वं प्रहारांत यदा भवेत् ।
 अष्टत्रिंशत्करे यावत्प्रासादं कारयेद्बुधः ॥१६॥
 सर्वलक्षणं संयुक्तं पंचभूमीः प्रदीयते ।
 छाद्याद्वै भवेत्तमंची जंघा व्योम युगे भवेत् ॥१७॥

हे मुनी, हुवे पात्रीश हाथनो सांधार प्रासाद जे होय तो तेनी पार भूमि मज्जला करवा. ते तमो ओकाग्रताथी सांलणो. (प्रत्येक मज्जलाना अंते) उपरनी भूमि अडाववानी होय तो त्यारे ते केवाण छाद्यना थरो इरी इरी थरो प्रयत्नथी तल्ल दधने लरणीनी उपर भायी वगेरे (जंघा उद्गम लरणी) अडाववा. उत्तरेत्तर जंघा अने दोढीयाना थर विभाग जेम उपर जय तेम ओछा ओछा लागना करता जवुं. उपरना मज्जलाना शेष थर छज्जापट उपर



प्रसाद (पहाडने थग) यडावयो त्याथी शिभरने आरल करयो बुद्धिमान शिदपीओ आडनीश हाथना प्रासादने सर्वलक्षण स युक्त ओवी पाय भूमिका कवी छज उपा भूमि ओम ४० हाथना प्रासादने यडावता नुपु ओ रीते यडावता पडेला भाचीने थग यडावी ते पग नधा ओम भाग नधा मुधी यडावता नुपु १३ थी १७

हं मुनी, अव पैतीस हाथका माधार प्रासाद हो तो उसे चार भूमि मजले करना, यह बात एकाग्रतासे सुनो। (प्रत्येक मजलेके अतमे) केवाल और छाद्य चढाये हो और जो उपरकी भूमि चढानी हो तब उस केवाल पार छाद्यके थरोको बार बार छोडकर भरणीके उपर माची वगैरह (जघा उद्गम भरणी) चढाना। उत्तरोत्तर जघा और डेढियेके थग विभाग ज्यों ज्यों उपर जाय त्यों त्यों कम भागके करते जाना। उपरके मजलेके शेष थर छज्जा पर प्रहार (पहारका थर) का थर जढाना। (वहाँसे गिररका प्रारम्भ करना।) 'बुद्धिमान शिल्पीको अडतीस हाथके प्रासादको सर्व लक्षण सयुक्त ऐसी पाँच भूमिकाए बनाना। छज्जेके उपर भूमिको चढानेसे पहले माचीका थर चढाकर उसके पर जघा इस तरह बारह जघा तक चढाते जाना। चालीस हाथ उदयका प्रासादका १४-१५-१६-१७

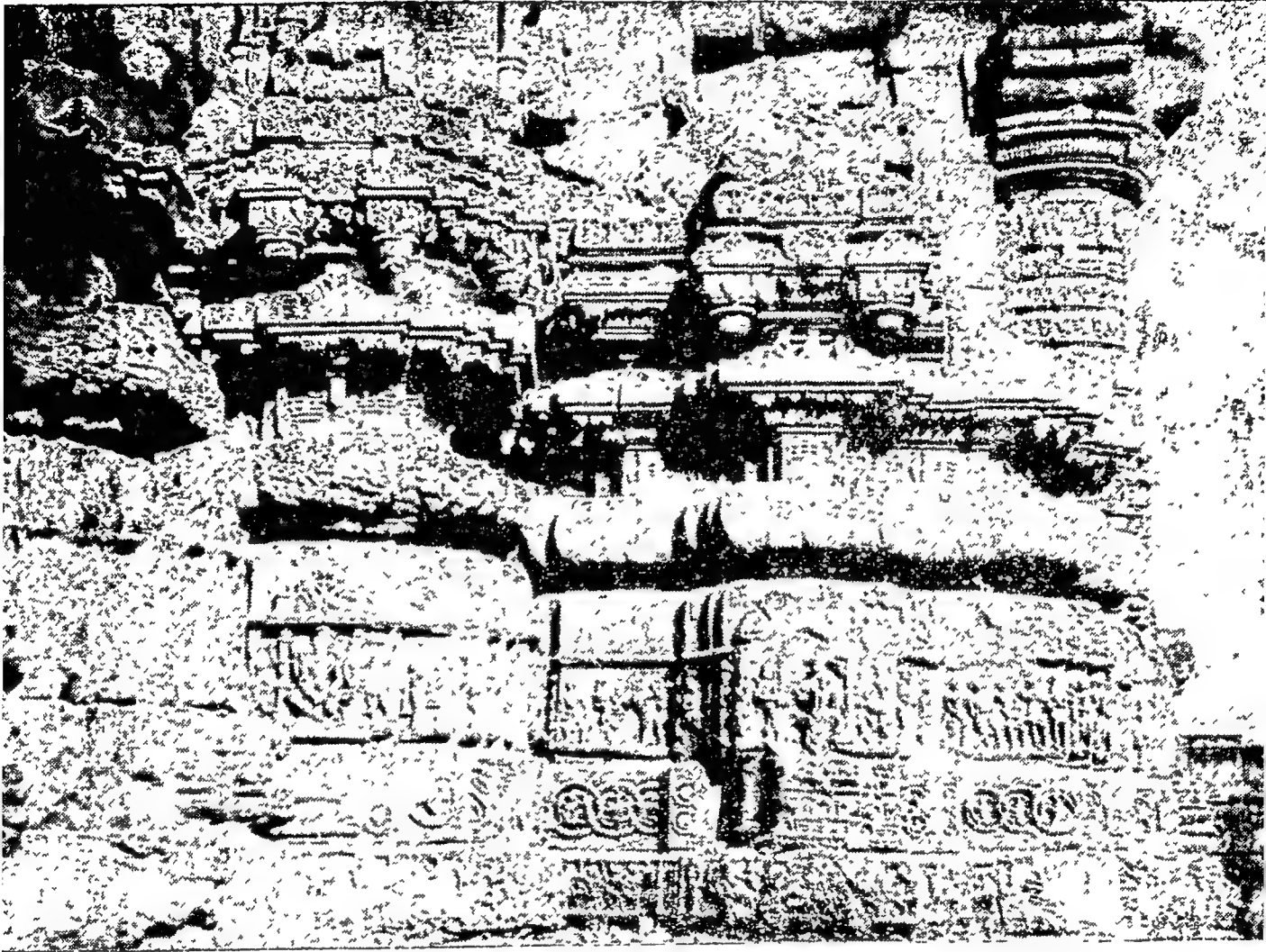
रंभते भूमिका क्रमात् ॥१८॥

कुमिकादि प्रहारातं विभाग तत्र निश्चलं।^३

यदि जंघा भवेत्थैरुं द्विदशयावत् तथा ॥१९॥

← महामंडोवर त्रय जघा त्रयभूमिद्वय छज्जा समस्त भाग ३७७

द्वयोर्जंघा विजानीयात्छाद्या...विराजिते ।
तत्रादेय विभागं च :चतुर्विंशति तत्र च ॥२०॥



सोमनाथजीका पुराणा मंडोवर

यादीश हाथना उदयना प्रासादने जंघा... ..उपरनी भूमिकाओ अनुक्रमे (१/१२ हीन हीन) करतां जवुं. कुंभाथी छज परना प्रहार सुधीना विलागो योछसपणे करवा. ओक जंघाथी बार जंघा सुधी सांधारे प्रासादने यडाववी. ओक छज नीचे जे जंघा यडाववी ते रीते प्रासाद विलाग योवीस हाथ भूमि सुधी जाणुवो. सर्व भूमि मजला भूष घाट नक्षीरूपथी अलंकृत करवाथी ते सर्व कामनाने क्षण आपनार जाणुवुं. १८-१९-२०.

उपरकी भूमिकाएं अनुक्रमसे (१/१२ हीन हीन) करते जाना । कुंभासे छज्जेके उपरके प्रहारतकके विभागोंको निश्चित रूपसे करना । एक जंघासे बारह जंघा तक सांधार प्रासादको चढाना । एक छज्जाके नीचे दो जंघा चढाना । इस तरह प्रासाद उदय विभाग चौवीस हाथ (भूमि तक जानना) सर्व भूमि

मजले बहुत घाट नकशी और रूपसे अलंकृत करनेसे उसको सर्व कामनाओंका फलदाता समझना । १९-२०-२१

सर्वलंकार संयुतं सर्वकामफलप्रद ।
त्रयोर्जंघा भवेत्यत्र द्वयो छाद्य विराजिते ॥२२॥
तत्रोदय विभाग च चतुर्विंशति तत्र यं ।
(उदय) चतुर्जंघा द्वयो छाद्यं तत्र भेद अतः शृणु ॥२३॥
प्रथमा पुत्रतीय जंघा द्वितीयं अपनी भवेत् ।
उन्ती आमनी चेत् पूर्णहीना च भागत् ॥२४॥
(आदि मध्या वसानेन जनीज्ञान महेतवे ।)

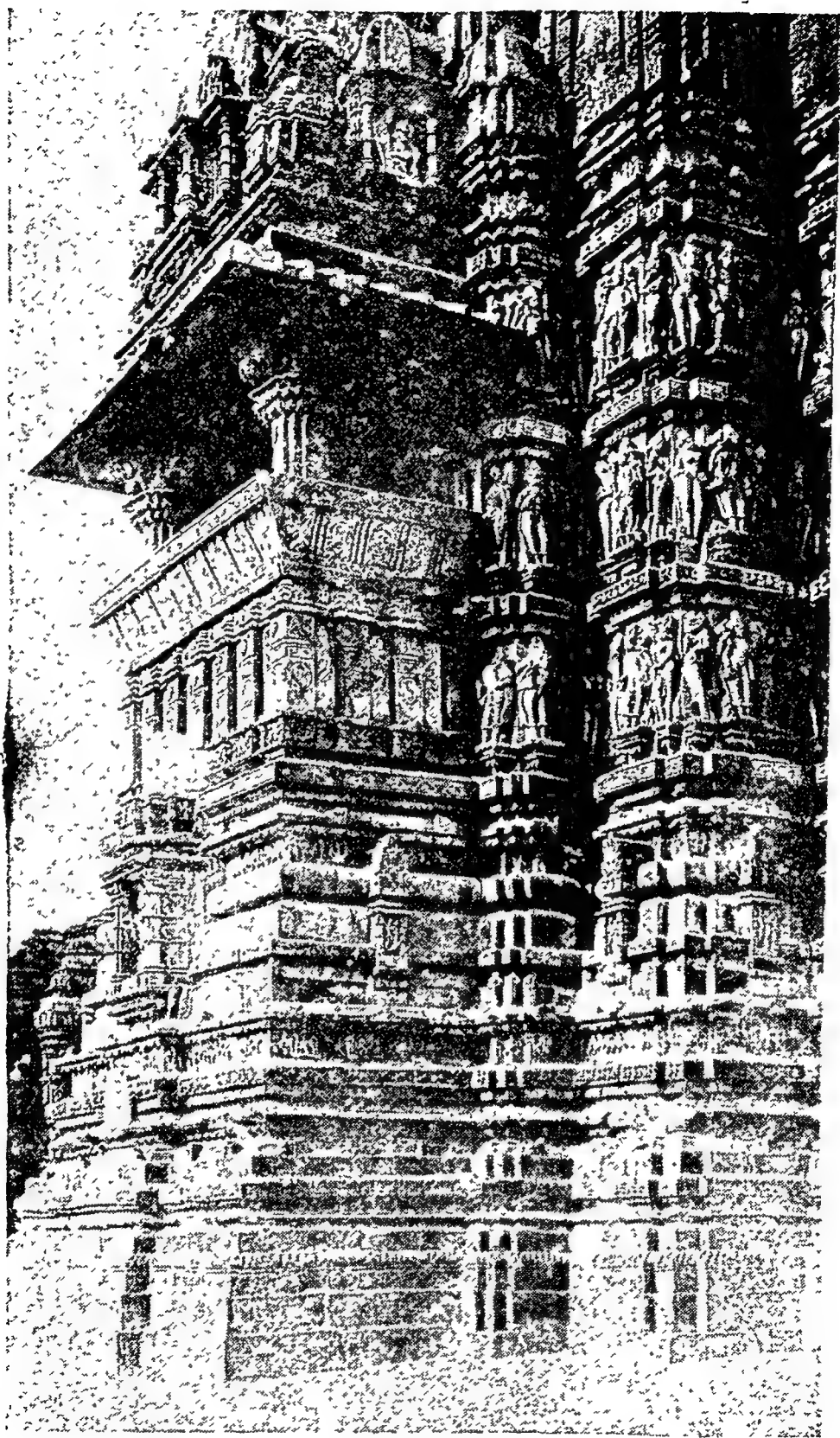
अनुक्रमेण समापृत्ता द्वादश जवाउत्तमा ॥२५॥
तेन (गद्रम्य (?) भूयं वा द्वादश च मुनीश्वर !
जघाया द्वादशप्रोव च छाद्य चाष्टमेव च ।
तत्रैवमभिधासूत्र वहर्कर्म समाकूल ॥२६॥

त्रयु लगी अने जे छत्र तेम तेना भूमि उदय विलाज बोवीश हाथ सुवी लखुवा आर १४धा अने जे छत्र तेना बोट हुवे मासणो पडेकी १४धा अने पुत्रतीय जीउने अपनी, अने त्रील जघाने इनती, बोथी आमनी, पाँचमी पूर्णहीना, छट्टी आदि, सातमी मध्याह्न, आठमी वसान, नवमी शनि को अने दशमी जघाने ज्ञानम् अजियात्री आठमी अष्ट अनुक्रमे उत्तम । आर जघाना नाम ते गीते छे मुनीवर आर भूमि पर जघाना नाम कह्यो आर जघाने आठ छत्र थाय ते रीते १४धाना नामालिधान ते सर्व कर्मना अनुक्रम सूत्रथी लखुवा २२-२३-२४-२५-२६

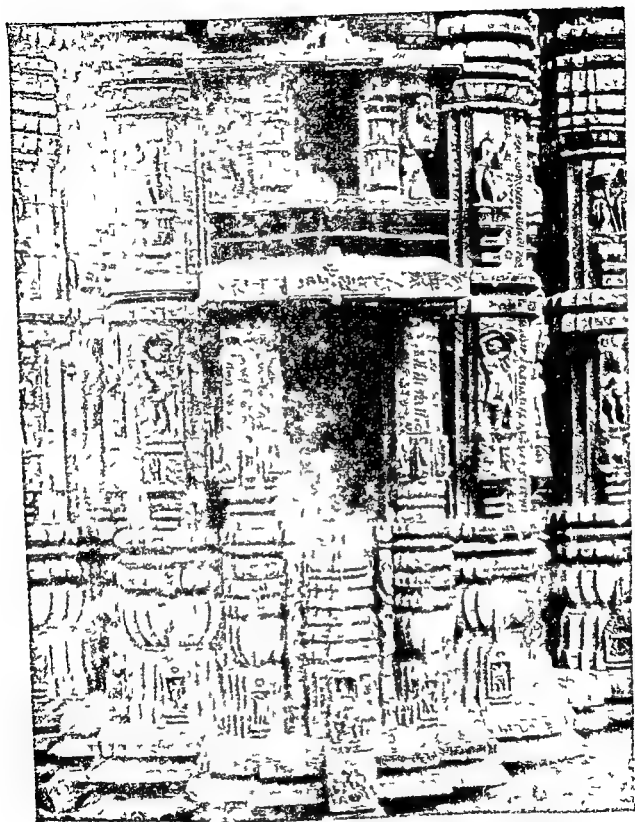
तीन जग और दो छज्जे इस तरह उनके भूमि उदय विभाग चौबीस (हाथ) तक जानना । चार जघाये और दो छज्जेका भेद अब सुनो । पहली जघाको पुत्रतीय, दूसरीको अपनी, और तीसरी जघाको इनती, चौथीको आसनी, पाँचवीको पूर्णहीना । छट्टीको आदि सातवीको मध्याह्न, आठवीको वसान, नौवीको शनि और दसवी जघाको ज्ञानम् इसी तरह अनुक्रमसे उत्तम बारह भूमिके जवाके नाम हे मुनि, कहे । बारह जघाको आठ छज्जे होवे इसी तरह जघाका नामामिधान सर्वकर्मके अनुक्रम सूत्रसे जानना । २२-२३-२४-२५-२६

प्रासादोदय भवे यत्र इदंमानं तु कथ्यते ।

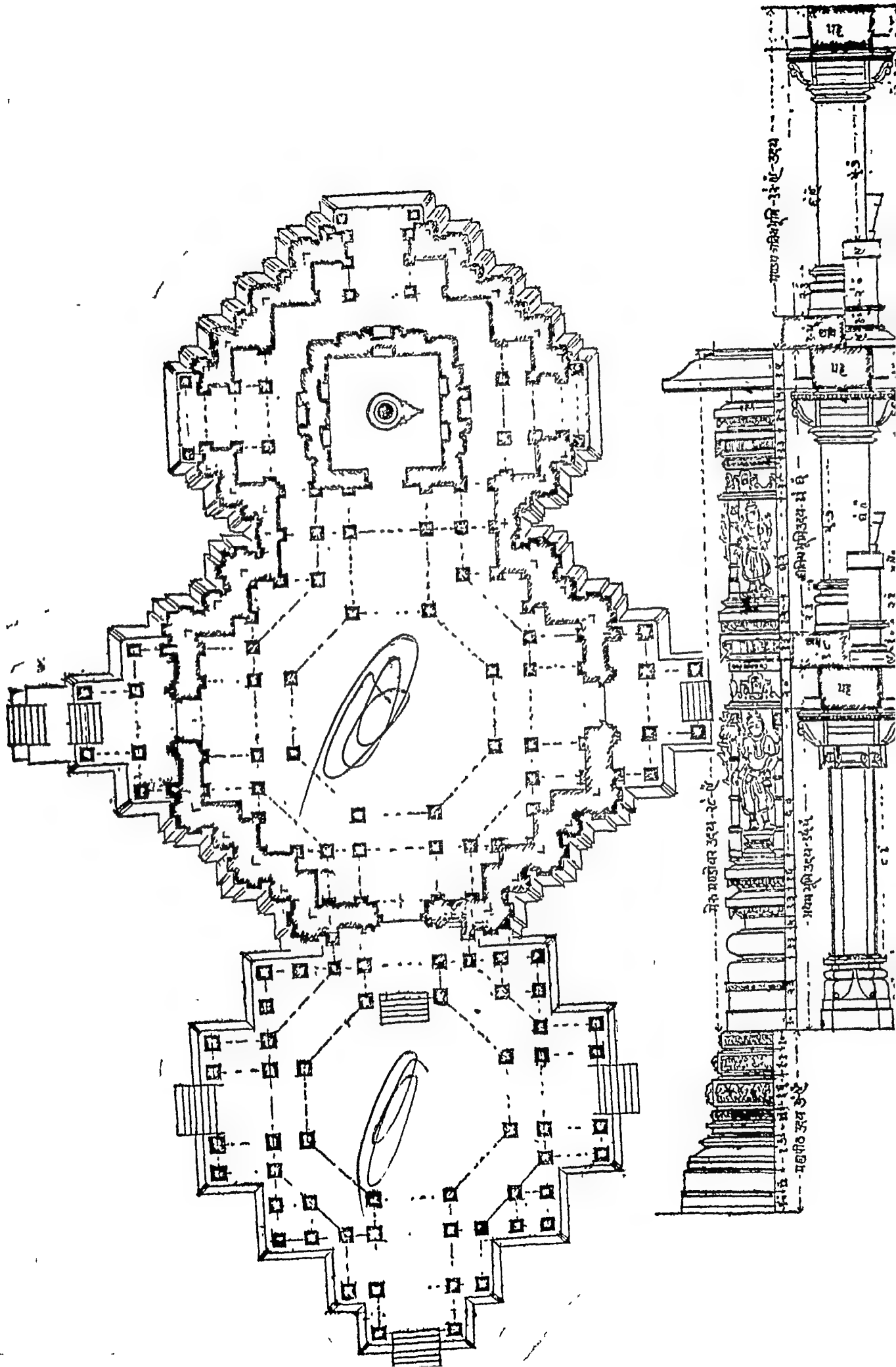
सभ्रमे महारिपि उदयं च अतः शृणु ॥२७॥



कंडर्यमहादेव (खजुराहो)के पीठ जोर त्रयजंघायुक्त मंडोवर और भद्रके गवाक्ष

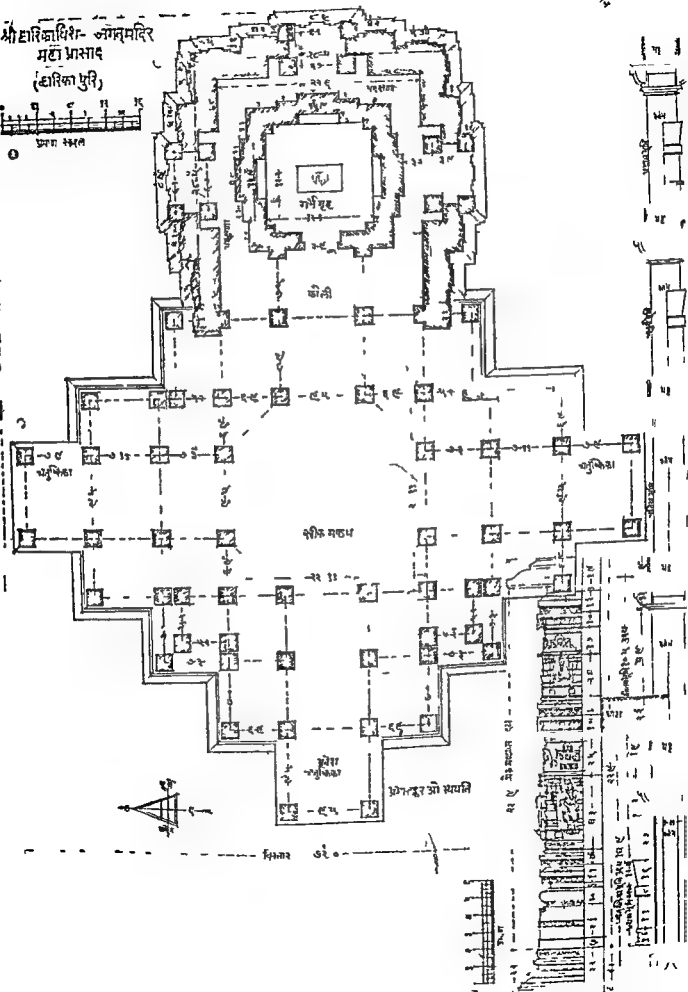


कलिंग ओरिसा के भुवनेश्वरमें राजरार्ण प्रासाद के पृष्ठभद्र के द्रश्य मंडोवर

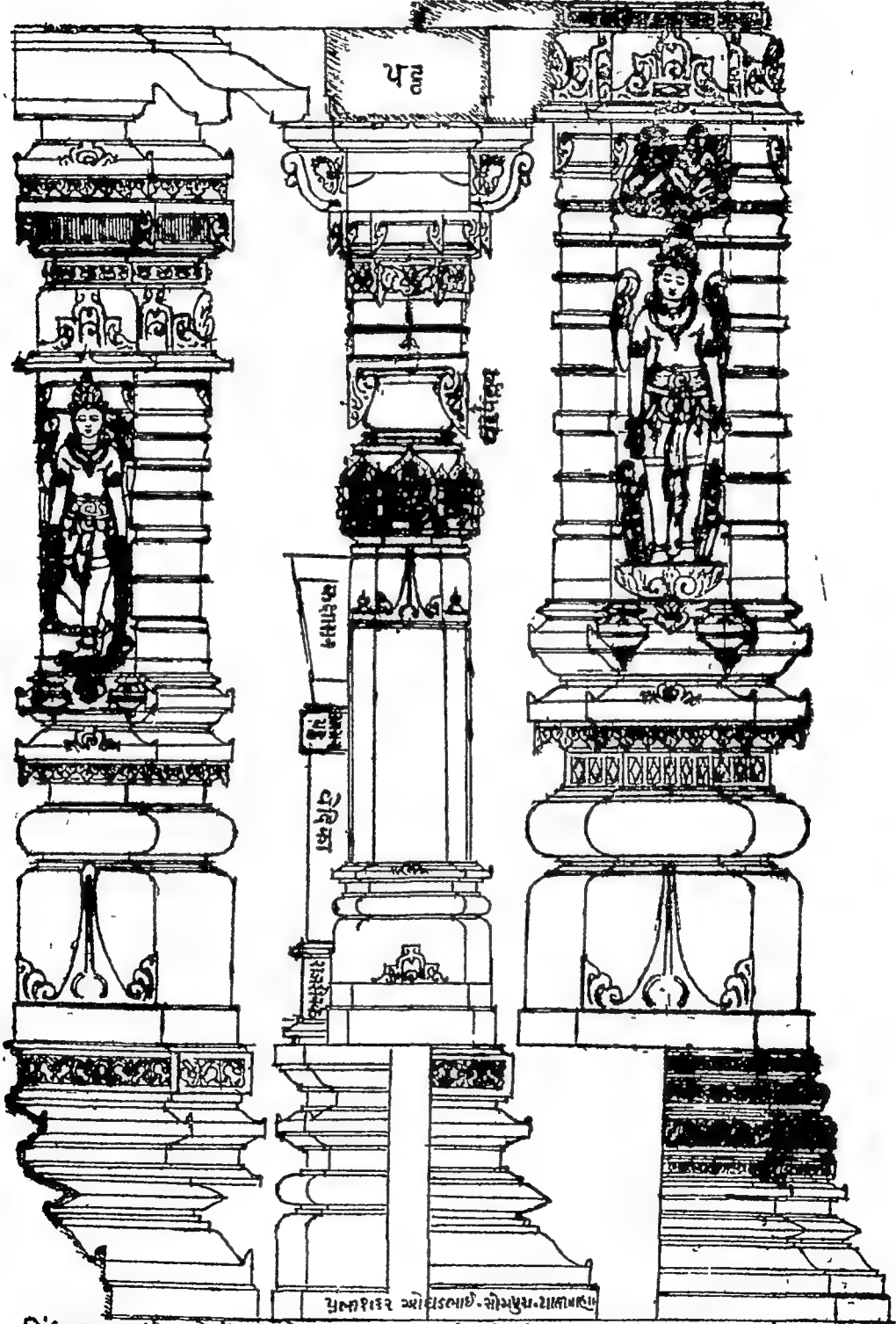


३

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय



कुंभि उदंबरांते च स्तंभं शिरं च जंघयोः ।
पट्टं च उद्गमांतेन शेषं भूमि विराजिते ॥२८॥
प्रथमं खुटछाद्यं च उद्गमं छाद्यकी समम् ।
द्वितिया तृतीया भूमिपट्टवै छाद्यकी समौ^ध ॥२९॥



निर्धार प्रासादमंडोवरसमन्वयं छोडको समन्वयं स्तम्भना छोडसमि सांधार प्रासादमंडोवरसमन्वयं साथे समन्वयं

सांधार-निर्धार प्रासादका मंडोवरके साथ स्तम्भका छोडका समन्वय
नीचे-कामदपीठ-और महापीठ-खुल्ला मंडपका पीठ प्रकार

छायात तेमादि पट्टउद्गमोदर समा ।

निर्दोषं तद्भवे वास्तु पाद पट्टच छाद्यके ॥३०॥

साधार प्रासादना उदयना मेरु मडोवगना थ मान अने भूमि विशेष छहु
मभ्रमप्रासादना मडोवगना थ साथे अद्वगना स्तलना छोटना उदय मेण
(मभन्वय) हे महाशक्ति! हुवे मालणो साधार प्रासादनी कुली अने उभरे
मभमूत्रे अने स्तल अने मगने जघामा ममान कवे पाटडा उद्गम
होदीयाभा मभाववो पाडी उपनी भूमि नलणुवी पडेलो भूटछाद्यने पाट
होदीयानी छाजलीना मभमूत्रे गणवा गीछ अने गीछ भूमिमा पछु पाट
होदीयानी-छाजलीना मभमूत्रे राणवा मथाणाना उपगना छन गणगण पाट अके
मूत्रमा राणवो परतु वयली भूमिमा पाटडा होदीयाना उद्गमा मभाववो पाडी पाट
अने छहु अके मूत्रमा ठवा तेषु वास्तु निर्दोष नलणु २७-२८-२९-३०

साधारप्रासादके उदयने मेरुमडोवगके थ मान ओर भूमिके वारेमे कहा ।
मभ्रम प्रासादके मडोवगके वरके साथ हे महाशक्ति, अद्वरके स्तमके छोडके उदय
समन्वयके वारेमे अय सुनो । साधार प्रासादकी कुभी ओर उग सममूत्रमे ओर
स्तम ओर सरेका जघामे ममास रगना । पाट उद्गम-डेदियेमे मिलाना । वाकी
उपरकी भूमि जानना । पहले खटछाद्यको पाट डेदियेकी छाजलीके सममूत्रमे
रगना । दुसरी ओर तीसरी भूमिमे भी पाट छाजलीके सममूत्रमे रगना । सिरके
उपरके छजे वगवर पाट एक सूत्रमे रगना, परतु विचकी भूमिमे पाट डेदियेके
उदरमे मिलाना । वाकी पाट ओर छजा एक सूत्रमे करना एसा वास्तु निर्दोष
जानना । २७-२८-२९-३०

पुन छाद्यं तथा छंदं पुन पट्ट च तत्समं ।

'यथोक्तं च विद्या छाद्यै पुन कुर्यात्पट्टमुत्तमं ॥३१॥

लावार्थ—साधार प्रासादने पडेली भूमि छन वग छट प्रभाणु अहर छाद्य
ढाडु इगी न्यारे छन छहु पाट आवे त्यागे ते प्रभाणु ढाडु ओ गीते
छन वग अद्व छाद्य ढाडु इगी वणी पट्ट पट्ट छाद्य-ढाडु छादीया नाभी ढाडु
ते उत्तम नलणु ३१

साधार प्रासादको पहलीभूमि विना गुजा छके अनुसार छाद्य ढाँकना ।
फिर जय छजापाट आवे तत्र उसने अनुसार ढकना । उम तरह छजे विना
छाद्य ढकना । फिर पादके उपर छाद्य ढकना-यह उत्तम जानना । ३१

इतिश्री विश्वकर्माकृते श्रीरामायणे नारद पृच्छाया मेरुमण्डोवराधिकारे
शताध्याये अष्टमोऽध्यायः ॥१०८॥ (क्रमांक अ० १०)

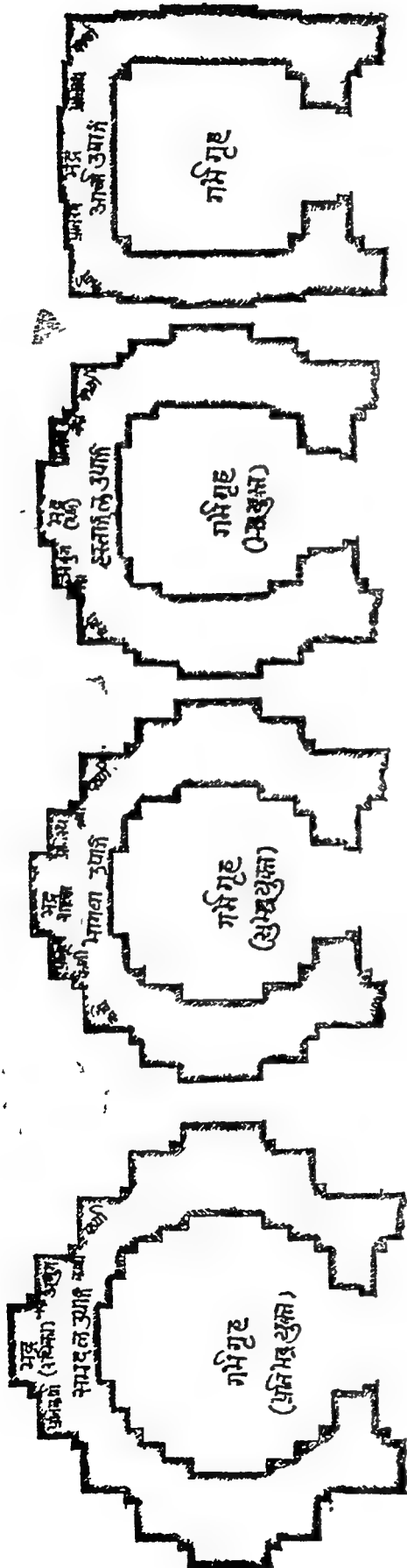
इति श्री विश्वकर्मा विरचित श्रीरामायणे नारद मुनीश्वरना नारद उप मेरु मडोवगधि
गगने विष्णु विनायक स्थपति श्री प्रसादकर ओषधमार्कंडेय ग्येन गुणो लापानी सुप्रभा
नामनी टीकाने ओम् ओ आम् ओ अध्याय-१०८

इतिश्री विश्वकर्मा विरचित श्रीरामायणे-नारदमुनीश्वरक सवाद्वप मेरुमण्डोवराधिकारका
शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रसादकर ओषधमार्कंडेय ग्येन हुडे सुप्रभा नामनी भाषा टीकाका
एसो आठवी अध्याय । ॥१०८॥ (क्रमांक अ० १०)

॥ अथ गर्भगृहोदय - द्वारशाखा विभाग ॥

क्षीरार्णव अ० १०९-(क्रमांक अ० ११)

श्री विश्वकर्मा उवाच -



गर्भगृह समचोरस द्रुत अष्टाश्रदि पांच प्रकार कहा है तथा सवाया-डेढा भी कहा है ऐसे अन्य ग्रंथोंमें उनका अंदरका चार और बाह्य चार स्वरूप भी कहा है = अंदरका १ चोरस २ भ्रयुक्त ३ सुभ्र घ प्रतिभ्रयुक्त-ऐसा चार प्रकार-बाह्य अंश निर्गमिका चार प्रकार कहा है १ आर्चा २ हस्तांशुलं ३ भागवा घ समदल उसका विवरण दीर्घार्णवग्रंथका पृष्ठ ५५-५६ पर दिया गया है ।

तस्याग्रे प्रवक्ष्यामि प्रमाणं
गर्भगृहोत्तम ।
चतुरस्रमथायतं वृत्तवृत्ता
याष्टकम् ॥१॥
गर्भव्यास षडांशस्य सपादो
सार्द्धमेव च ।
पादार्धे तु यदा चैव जेष्ट
मध्यकन्यस ॥२॥

श्री विश्वकर्मा कहे छे-
हुवे आगण हुं उत्तम अेवा
गर्भगृहना प्रमाणो कहुं छुं-
गर्भगृहु १ चोरस २ लंघ
चोरस ३ गोण ४ लंघगोण
अने ५ अष्टाश्र अेम पांच
प्रकारे थाय ते उपरांत तेनी
पडोणाधमां (१) छट्ठो भाग
उमेरीने (२) सवाया तथा (३)
होढो वधारी लांघो करवाथी
जेष्ठ मध्यम अने कनिष्ठ भान
गलारानुं जणुवुं. १-२.

श्री विश्वकर्मा कहते हैं-
'अब आगे मैं उत्तम ऐसे गर्भ-
गृहके' प्रमाण कहता हूँ ।
गर्भगृह चोरस, लम्बचोरस, गोल,
लम्बगोल, और अष्टाश्र इस
तरह पाँच प्रकारसे होता है,
इसके अतिरिक्त उसकी चौड़ाईमें
(१) छट्ठा भाग मिलाकर या
(२) सवाया (३) डेढा ऐसे

पद भागको वढाके लम्बा करके ज्येष्ठ मध्यम और कनिष्ठ मान गर्भगृहका जानना । १-७

स्ततो उदयअष्ट विभक्तं च भागमेकेन कुम्भिका ।
स्तम्भ च पंच सार्धेन भागार्धं भरणं भवेत् ॥३॥
शिङ्गं च भागमेकेन अयं भाग प्रासादयं ।
भागयर्द्धप्रयत्नेन कर्तव्यं च तयोपरि ॥४॥
पट्टसाद्धोदयं स्वस्थं एवं च कथितो मया ।

१ इभी
५॥ २तल
०॥ लक्ष्य
१ स३
८
१॥ पाट
८॥

गर्भगृहना उदयभा (पाट
सिवाय) आठ लाग करवा तेभा
ओक लागनी कुली-भाडा पाय
लागना २तल, अर्धा लागनु लरखु
अने ओक लागनु स३ ओभ
प्रासादना उदयभा (पाट सिवायना)

आठ लाग लायवा ते उपर ढोढ लागना पाट
मे छद्दी छे (ओटवे कुल साडा नव लागनी
उलखी थर्) ३-४

गर्भगृहके उदयमे (पाटके सिवा) आठ भाग
करना । उसमे एक भागकी कुम्भी-साढे पाँच भागका
स्तम्भ और आवे भागका भरना और एक भागका
सरा ऐसे प्रासादके (पाटके सिवा) ८ भाग समझना ।
उसके उपर डेढ भागका पाट मैने कहा है । (इससे
कुल माढे नौ भागका उदय हुआ ।) ३-४

वाह्यमान स्तोरिपि ! पदमानमन्यथा ॥ ५ ॥

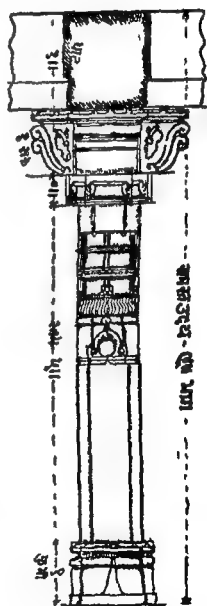
कुम्भे कुम्भि च ज्ञात्वा वा स्तम्भेचैवोद्गमम् ।

भरणी भरणयुक्ता कपोताली तथा शिरः ॥ ६ ॥

छाद्यं पट्टं सम दैव्यं पृथ्वे नैन कारयेत् ।

(सरसाले भेद् वेधं अधः उर्ध्वं न संशय) ।

प्रासादोदयमे यत्र-इदं मानंतु कथ्यते ॥ ७ ॥



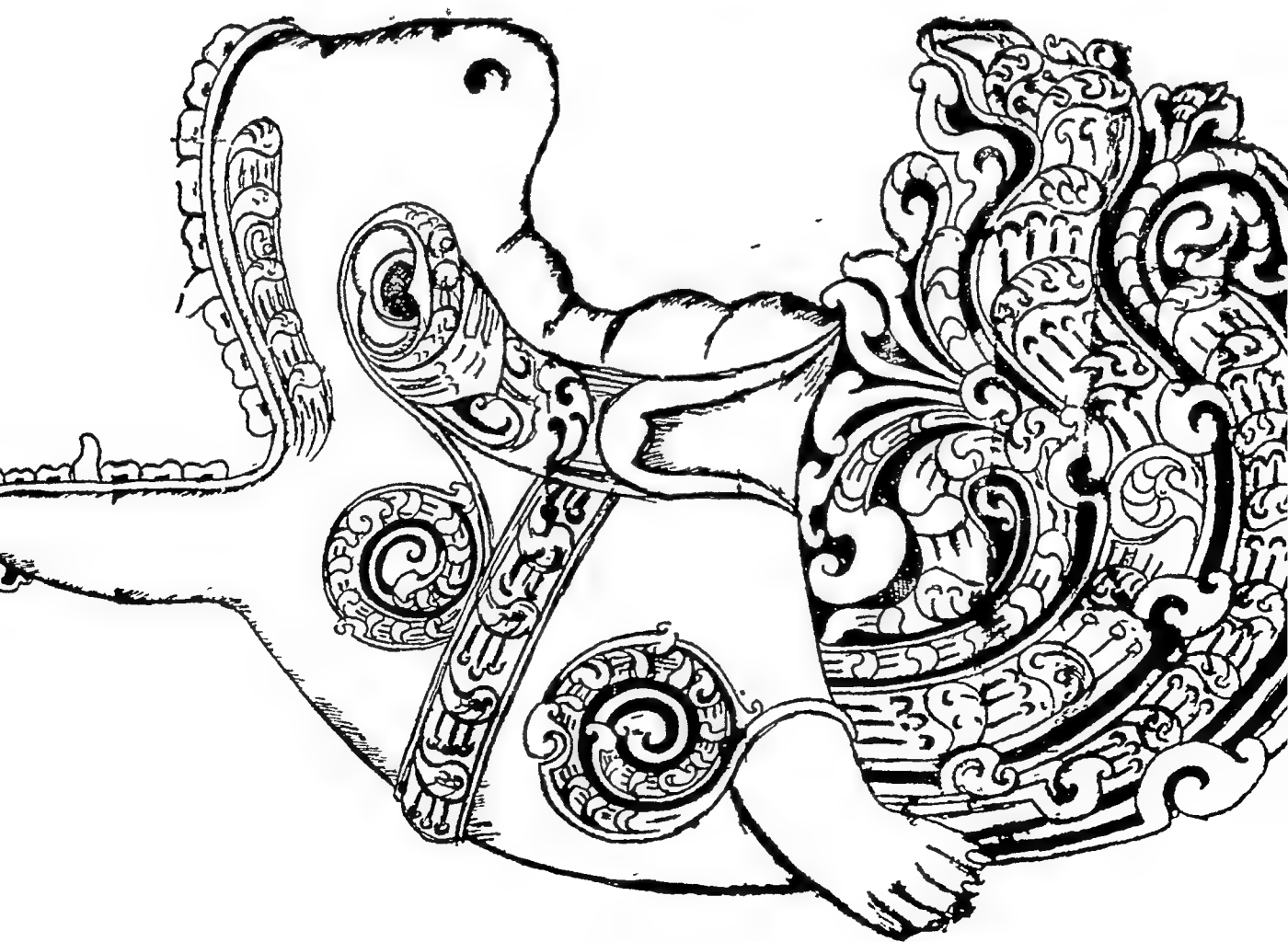
गर्भगृहोदय-स्तम्भोदय भाग
८ + १॥ पाट = ९॥ भाग ।

हे ऋषि, निरंधार प्रासादना अंदार मंडोवरना थरवाणा अने पहना स्तंभना छोडना समन्वय कहुं छुं. कुंभा, थराथर कुंभी, स्तंभ अने दोढियाना थर समसूत्रे लराणी थराथर लराणुं, केवाण अंतराण थराथर, शङ्ख अने पाट थराथर छज्जु ओम समसूत्रमां करवुं तेनाथी जिंथुं नीथुं न करवुं. जिंथुं नीथुं थाय तो वेध जाणवो. तेमां संशय नहि. (सांधार प्रासादनुं प्रमाण अ० १०८ मां श्लो. २८-३०मां आपेल छे.) ५-६-७

हे ऋषि, निरंधार प्रासादके वाहर मंडोवरके थरवाले और अंदर पंद के स्तंभके छोडका समन्वय कहता हूँ । कुंभा-वरावर कुंभी-स्तंभ और दोढियाका थर समसूत्रमें । भरणा वरावर भरणी और केवाल, अंतराल वरावर सरा और पाटके वरावर छजा इस तरह समसूत्रमें करना । उससे ऊँचा नीचा नहीं करना । ऊँचा नीचा हो तो वेध जानना, उसमें संशय नहीं । (शांधार प्रासादका प्रमाण अ० १० में श्लोक २८-३० में दिया है । ५-६-७.

प्रनाल विचार

पूर्वापरस्य प्रासादे प्रणालशुभमुत्तरे ।
दक्षोत्तर शुभं पूर्व चतुर्जगतीं मंडपे ॥ ८ ॥



प्रनालका मकरमुख ।

पूर्व અને પશ્ચિમ મુખના પ્રાસાદોને પ્રનાળ ઉત્તરે મૂકવી તે શુભ છે અને ઉત્તર દક્ષિણ મુખના પ્રાસાદોને પૂર્વમાં પરનાળ-ખાળ ગર્ભગૃહમાં મૂકવી જગતી અને મહાપને ચારે દિશામાં પ્રનાળ મૂકી શકાય-૮

पूर्व और पश्चिम मुखके प्रासादोंको प्रनाल उत्तरमें रखना शुभ है । और उत्तर दक्षिणके मुखके प्रासादोंको पूर्वमें परनाल-गर्भगृहमें रखना । जगती और महपको चारों दिशाओंमें प्रनाल रख सकते हैं । ८

नवशाखा महेशस्य देवानां सप्तशाखिकम् ।

पंच शाखं सार्व भौमे त्रिशाखं मंडलेश्वरे ॥९॥

શીવ-માહેશ્વરના દેવાલયને નવ શાખા, ખીજા સર્વ દેવો સપ્ત શાખા, સાર્વભૌમ-ચક્રવર્તી રાજના રાજમહેલમાં પચ શાખા અને માડલીક રાજને ત્રિશાખા કરવી-૯

शिव-माहेश्वरके देवालयको नौ शाखा, दूसरे सर्व देवोंको सप्तशाखा, सार्वभौम-चक्रवर्ती राजाके महलमें पाच शाखा और माडलिक राजाको त्रिशाखा करना । ९

अथ त्रिशाखा—

चतुर्भागांकित कृत्वा त्रिशाखो वर्तयेत्तम ।

मध्ये द्विभागिक रूप स्तंभ भागैकनिर्गमं ॥१०॥

पत्र खल्वद्विभाग कोणीका स्तंभ मध्यतः ।

चतुर्थાંશ સપાદેન દ્વારપાલ કૃતોદય ॥૧૧॥

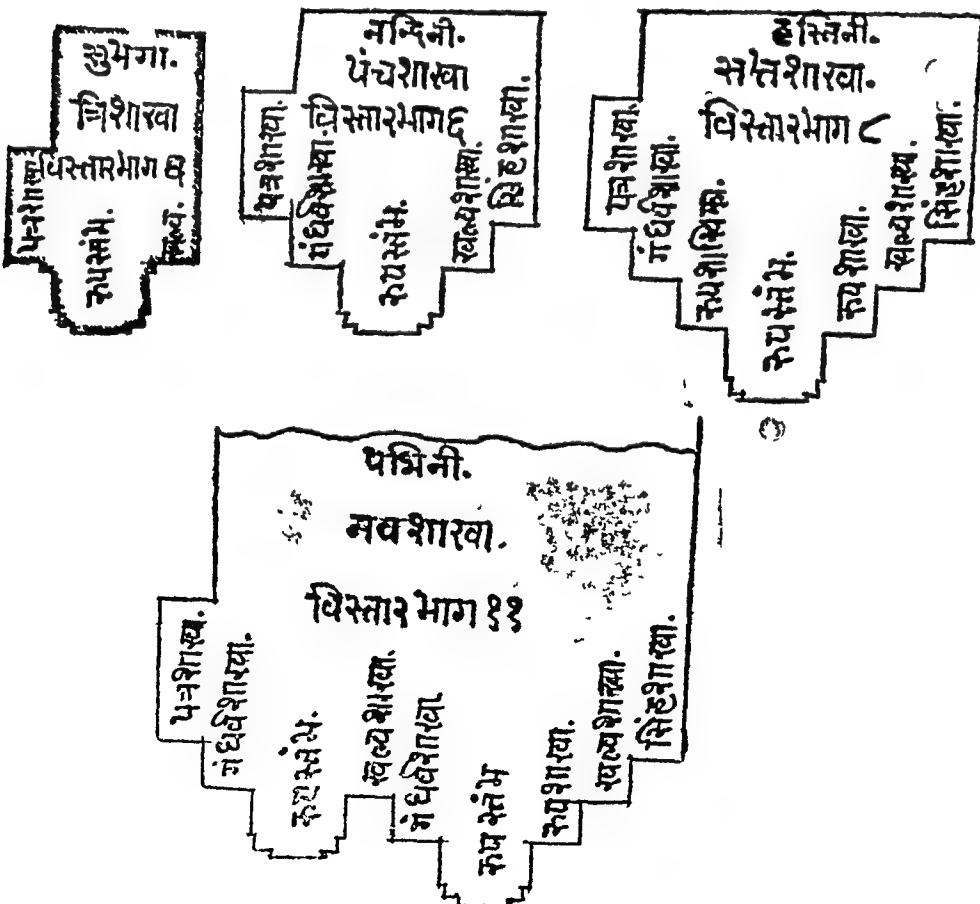
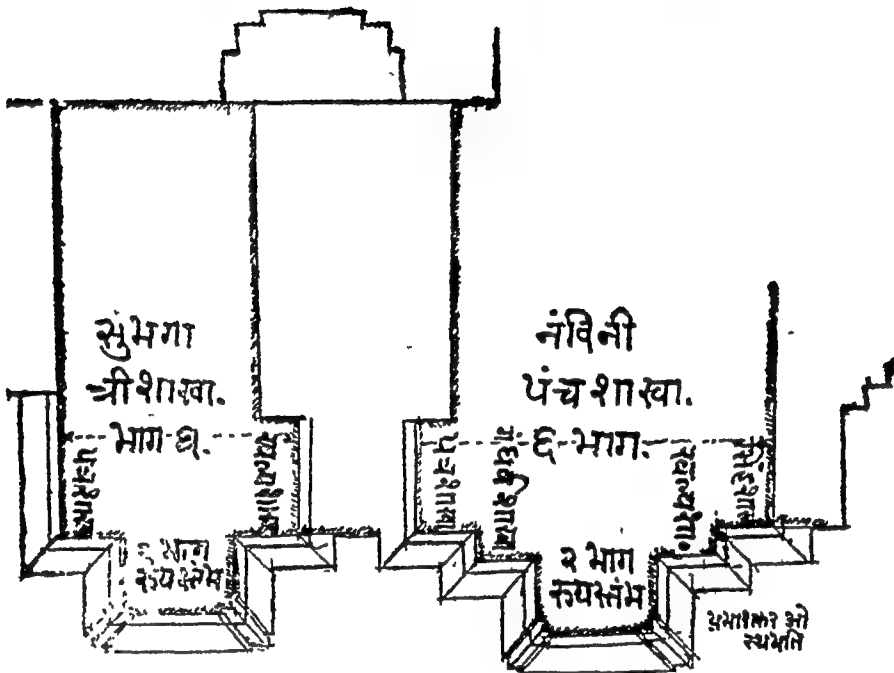
ત્રિશાખાના બહામાં ચાર ભાગ કરવા તેમાં વચ્ચે બે ભાગનો રૂપ સ્તંભ પહોળો અને એક ભાગ નીકળતો કરવો બાબુમાં એકેકે ભાગની પત્ર શાખા અને ખત્તવ શાખા (સિદ્ધ શાખા) કરવી (મધ્ય રૂપ સ્તંભને શાખા વચ્ચે એકેકે ખુણી શોભાને સારુ કરવી) દ્વારની બે ચાંદની ચોથા ભાગે કે તેની અવાઈનો દ્વારપાલ બે ચો કરવો ૧૦-૧૧

त्रिशाखाके जाद्वे चार भाग करना । उसमें विचमें दो भागका रूपस्तंभ चौड़ा और एक भाग निकाला करना । बाजुमें एक एक भागकी पत्र शाखा और खल्वशाखा करना । (मध्यरूप स्तंभको शाखाके विचमें एक एक कोना

शोभाके लिये करना ।) द्वारकी ऊँचाईके चौथे भागमें या सवाई ऊँचाईका द्वारपाल ऊँचा करना । १०-११.

अथ पंचशाखा-पंचशाखा च गंधर्वा रूपरतंभस्तृतियकं ।

पुनः गंधर्व खल्व शाखी पंचशाखा विधीयते ॥१२॥



त्रि पंच सप्त नव शाखा तल विभाग और शाखाका नाम ।

૫૨ શાખાની બહાઈમા છ ભાગ કરવા ૧ પત્ર શાખા ૨ ગંધર્વ શાખા
૩ મધ્યમા રૂપ સ્તભ ૪ ફિર ગંધર્વ શાખા ૫ ખલ્વ શાખા (સિંહ શાખા)
એમ ૫૨ શાખાનો વિધિ બાણુવો મધ્યનો રૂપસ્તભ બે ભાગ અને બીજી શાખા
ઓ એકેક ભાગની બાણુવી ૧૨

પૈંચ શાસ્ત્રાકે મોટેપનમે છ ભાગ કરના । ૧ પત્રશાસ્ત્રા ૨ ગંધર્વશાસ્ત્રા
૩ મધ્યમે રૂપસ્તભ ૪ ફિર ગંધર્વ શાસ્ત્રા ૫ સ્વ શાસ્ત્રા (મિહ શાખા) હસ
તરહ પૈંચ શાસ્ત્રાકા વિધિ સમગ્રના । મધ્યકા રૂપસ્તભ દો ભાગ ઓર દુસરી
શાસ્ત્રાઓ એક એક ભાગની જાનના । ૧૨

અથ સપ્તશાસ્ત્રા-પત્રશાસ્ત્રા ચ ગંધર્વા રૂપશાસ્ત્રાસ્તુતિયક્રમ્ ।

સ્તંભ શાસ્ત્રો મૈન્મધ્યં રૂપ શાસ્ત્રા તુ પંચમી ॥૧૩॥

પટાસ્યા સ્વલ્પ શાસ્ત્રા ચ સિંહશાસ્ત્રા ચ સપ્તકે ।

પ્રાસાદકર્ણ સંયુક્તા સિંહશાસ્ત્રાગ્ર સ્વતઃ ॥૧૪॥

અપ્ત શાખાની બહાઈમા આઠ ભાગ કરવા ૧ પત્ર શાખા ૨ ગંધર્વ
શાખા ૩ રૂપ શાખા ૪ મધ્યમા રૂપસ્તભ (બે ભાગનો) ૫ રૂપ શાખા ૬ ખલ્વ
શાખા ૭ સિંહ શાખા આતમી બાણુવી પ્રત્યેક શાખા એકેક ભાગની અને
મધ્યનો રૂપસ્તભ બે ભાગનો બાણુવો પ્રાસાદની રેખા બરાબર મિહ શાખા અને
પત્ર શાખાનું સૂત્ર એક ગણવું ૧૩-૧૪

સપ્તશાસ્ત્રાકે મોટેપનમે આઠ ભાગ કરના । ૧ પત્રશાસ્ત્રા ૨ ગંધર્વ શાસ્ત્રા
૩ રૂપ શાસ્ત્રા ૪ મધ્યમે રૂપ સ્તભ (દો ભાગકા) ૫ રૂપશાસ્ત્રા ૬ સ્વલ્પશાસ્ત્રા
મિહ શાસ્ત્રા જાનના । પ્રત્યેક શાસ્ત્રા એક એક ભાગની ઓર મધ્યકા રૂપસ્તભ દો
ભાગકા જાનના । પ્રાસાદની રેખાકે વરાવર સિંહ શાસ્ત્રા ઓર પત્રશાસ્ત્રાકા સૂત્ર
એક રચના । ૧૩-૧૪.

અથ નવશાસ્ત્રા-પત્રગંધર્વ સંજ્ઞા ચ રૂપસ્તમ્મસ્તુતીયક્રમ્ ।

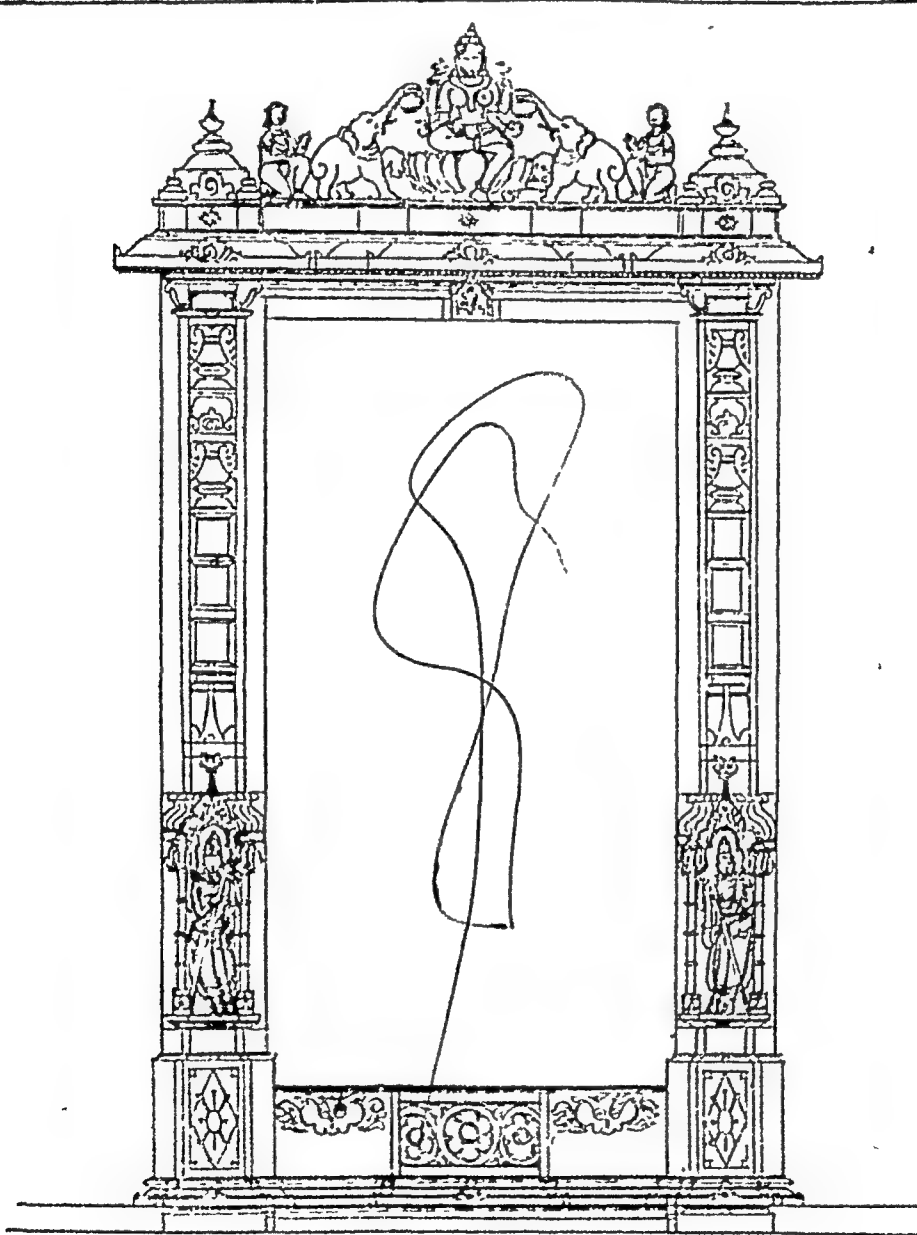
ચતુર્થી સ્વલ્પ શાસ્ત્રા ચ ગંધર્વા ચૈવ પંચમી ॥૧૫॥

રૂપસ્તમ્મ સ્તથા પટૌ રૂપ શાસ્ત્રા તત્ પરા ।

પત્રશાસ્ત્રા ચ સિંહસ્ય મૂલ કર્ણેન સંમિતા ॥૧૬॥

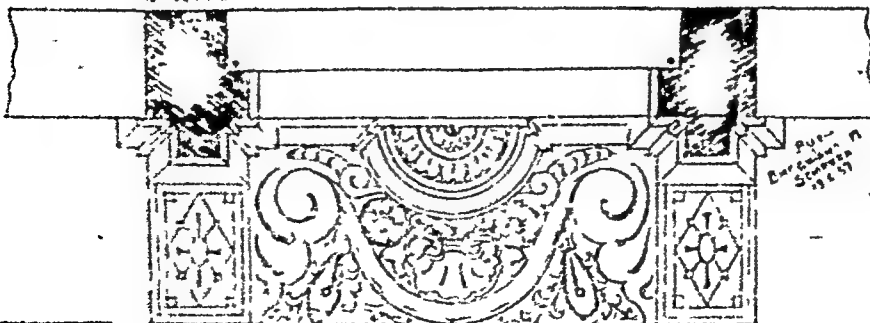
નવ શાખાની બહાઈમા અગ્યાર ભાગ કરવા તેમા બે રૂપ સ્તભો બાણુ
ભાગના અને બાકીની શાખાઓ એકેક ભાગની રાખવી ૧ પત્ર શાખા ૨ ગંધર્વ
શાખા ૩ રૂપસ્તભ મધ્ય ૪ ખલ્વ શાખા ૫-ગંધર્વ શાખા ૬ બીજો રૂપસ્તભ
મધ્ય ૭ રૂપ શાખા ૮ ખલ્વ શાખા અને નવમી મિહ શાખા બાણુવી સિંહ
શાખા અને પત્ર શાખા મૂળરેખાની ફરકે સમગ્રને ગણવી ૧૫-૧૬

नौ शाखाओंके मोटेपनमें ग्यारह विभाग करना । उसमें दो रूपस्तंभो दो दो भागके—और बाकी शाखाओंको एक एक भागकी रखना । १ पत्र शाखा २ गंधर्व शाखा ३ रूपस्तंभ ४ खल्वशाखा ५ गंधर्व शाखा ६ दूसरा रूपस्तंभ मध्यका ७ रूप शाखा ८ खल्व शाखा ९ सिंह शाखा जानना । सिंह शाखा और पत्र शाखा मूलरेखाके समसूत्रमें रखना । १५-१६.

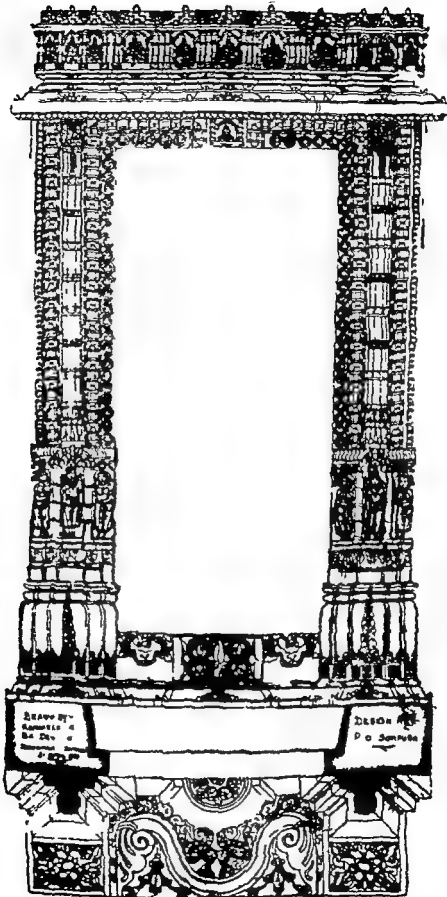


विशालाका द्वार

विशालाका द्वार



त्रिशाखाका द्वार उदम्बर और शंखोद्वार-अर्धचंद्र ।



पञ्च शाखा युक्त अलङ्कृत द्वार-तथा अर्धचन्द्र-उदम्बर

सप्त शाखा विना खल्वं शाखा त्रिशखा खल्व संयुतं ।

कर्णीकारंच शाखान्ते नव शाखा सिंहं भवेत् ॥१७॥

सप्त शाखाने अंते षट्त्व शाखा न करवी. त्रिशखा अंते षट्त्व शाखा युक्त करवी. पंच शाखा अने नव शाखा ओ सर्वनी शाखाने अंते सिंह शाखा आवे ते अंतनी शाखाभां कर्णीका-गलतनो घाट करवो-१७.

सप्त शाखाके अंतमें खल्व शाखा नहीं करना । त्रिशखा के अंतमें खल्व शाखासे युक्त करना । पंच शाखा और नौ शाखा जिन सर्व शाखाओंके अंतमें सिंह शाखा आती है । उस अंतकी शाखामें कर्णीका गलत का घाट करना । १७.

मूलकर्णस्य सूत्रेण कुम्भेनोदुम्बरं समम् ।

तदधः पंच रत्नानि स्थापयेत् शिल्पीपूजनात् ॥१८॥

प्रासादनी भूण रेणाना समसूत्र भराभर उंभरे नीकणतो अने कुंलीनी भराभर उंभर ओक सूत्रभां मुकवो शिल्पी अने उदंभरनुं विधिथी पूजन करी नीचे पंचरत्न स्थापन करवुं. १८. अने शिल्पी-स्थपतिनुं पूजन करवुं. १८.

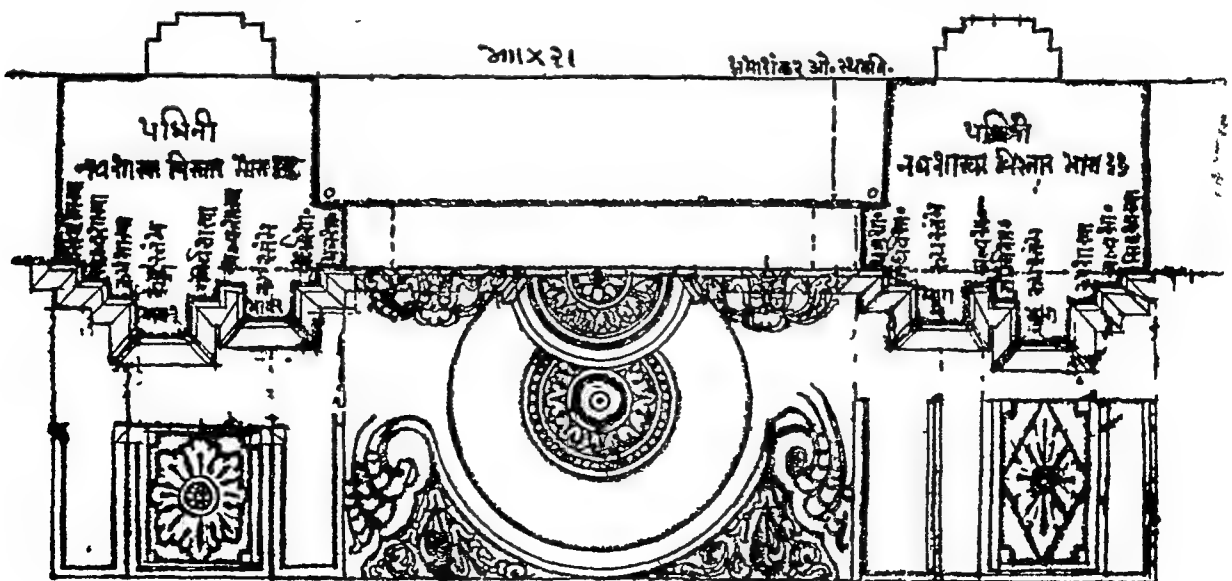
प्रासादकी मूल रेखाकी समसूत्र बराबर उदंवर नीर्गभ रखना और कुंभीकी बराबर ऊंचाई एक सूत्रमें रखना । शिल्पी और उदम्बरका विधिसे पूजन कर नीचे पंचरत्न स्थापन करना । उस समय शिल्पिका पूजन करना । १८.

द्वारविस्तार त्रिभागेन वृतमंदारकोस्तथा ।

वृतमंदारकं कुर्यात् मृणालपत्रसंयुतम् ॥१९॥

जाड्य कुंभ कणाली च कीर्तिर्वक्त्र्य द्वयंतथा ।

उदुम्बरस्य पाश्वे च शाखायां स्तरूपकम् ॥२०॥



द्वार स्तंभ युक्त नव शाखा का तल दर्शन और उदम्बर शंखोद्वार-अर्धचंद्र

उद्वगने द्वारनी पहोणाधना त्रीन लागे वर्ये गोण मदारक-भाणु करवु ते गोण भाणु कभणपत्रथी शोखतु करवु भाणुनी नीचे वरडयो अने कण्णिने घाट उभगनी उयाधना त्रीन लागे अथवा योथे लागे वरडो (उभरा तथा तलकडाने) करवो (भाणुनी अने तगई ओकेक भुण्णी करी) तेनी ये भाणु आस = कीर्तिपकना भुण्णे उरवा उभरानी अने भाणु शाणाओना तलरूप = तलकडा कप्पा

उद्वगको द्वारकी चौडाईके तीसरे भागमे विचमे गोल मदारक=माण्ड करना । वह गोल मदारक कमल पत्रसे सुशोभित करना । माण्डके नीचे जाडवा और कर्णिका घाट उद्वगकी ऊँचाईको तीसरे या चौथे भागमे मोटा (उद्वग तथा तलरूपको करना । बाणकी दोनों बाजु ग्रासका मुख करना शाखाओंके तलरूप तिलकडा करना । १९-२०

उद्वरं ततो वक्ष्ये कुंभतस्योदय भवेत् ।

तस्यार्धेन त्रिभागेन पादोनहतोत्तमं ॥२१॥

चतुर्विध तथा स्वस्य कुर्याच्चि व मुद्वगम् ।

उत्तमोत्तम चत्वारो न्यूनाधिकाश्च दोषदा ॥२२॥

इये उभरानी उयाधनु कहुं छु १ उभगनी उयाध कुला कुली गराभर राणवी २ कुलीथी अर्ध लागे, ३ त्रीन लागे के ४ योथा लागे उभरे नीचे उताणवे=गाणवे। ये रीते उभरे गाणवाना आठ प्रमाणो उत्तमोत्तम कहे छे ओछाथी वधु गाणवा ते दोष कारक छे २१-२२

अब मै उद्वगकी ऊँचाई कहता हूँ । १ उद्वगकी ऊँचाई कुम्भा कुम्भिके बराबर रखना । २ कुम्भसे आवे भागमे, ३ तीसरे भागमे या ४ चौथे भागमें उद्वग नीचे उतारना । भिन्न तरह उद्वग उतारनेके चार प्रमाण उत्तमोत्तम कहो हैं । उससे कम या ज्यादा उतारना दोषकारक है । २१-२२

उद्वराते हते कुंभीस्तमच पूर्ववत् ।

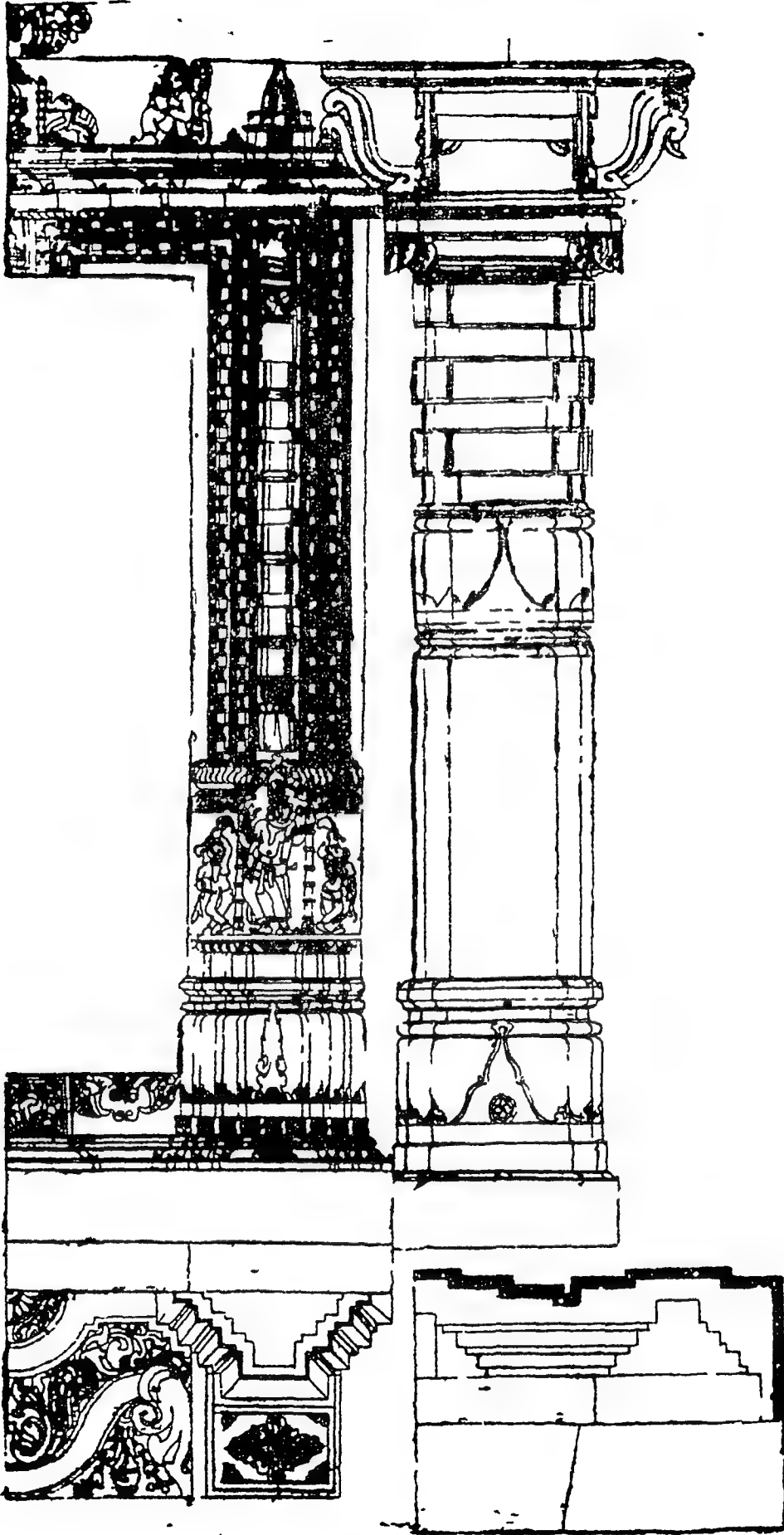
साधारस्य निरंधारे कुम्भि कृत्वा मुद्वगम् ॥२३॥

कुलीथी उभरे गाणवे (इत करवे) परतु कुली अने स्तल तो पूर्वनी जेम न गणवा साधार अने निरंधार आवाहोभा कुलीथी उभरे गाणवे २३

कुम्भसे उद्वग नीचाहल करना । परतु कुम्भ और स्तम तो पूर्ण अनुसार ही रखना । सागर और निरगर प्रासादोंमे कुम्भसे उद्वग हीन करना । २३

(१) गिन्पीओमा उध ओरी पणु भावता प्रनते छे डे जे उभरे गाणवाना आवे तो कुलीओ पणु गाणनी जेध ओ जे के अन्ने भतना दृष्टातो प्रायिन मदिगेना भगे छे

गिल्पीओमे वइ एसी भावता है के जब उद्वर हूत गालनका हो तब कुम्भी भी उतारना दोन प्रकारका द्रव्यत मीलता है

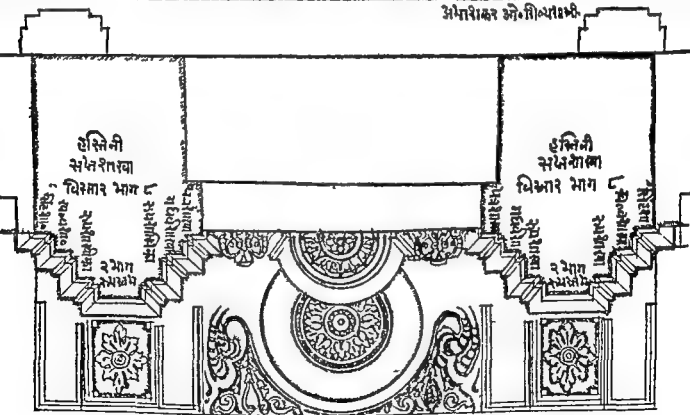


सप्त शाखा युक्त अलङ्कृत द्वार तथा स्तंभ उदंम्बर-अर्धचंद्र

ગુરુકેન સમં કુર્યાદર્ધચંદ્રસ્ય ચોચ્છ્રુતિ' ।
 દ્વારવ્યાસ સમં દૈર્ઘ્યં નિર્ગમંચ તદર્ધત' ॥૨૪॥
 દ્વિભાગમર્ધચંદ્રશ્ચ ભાગેન દ્વૌ ગગારકા ।
 શંસપત્ર સમાયુક્તં પદ્માઝારૈરલંકૃતમ્ ॥૨૫॥



અભયશંકર એ.સી.વત્સાબી.

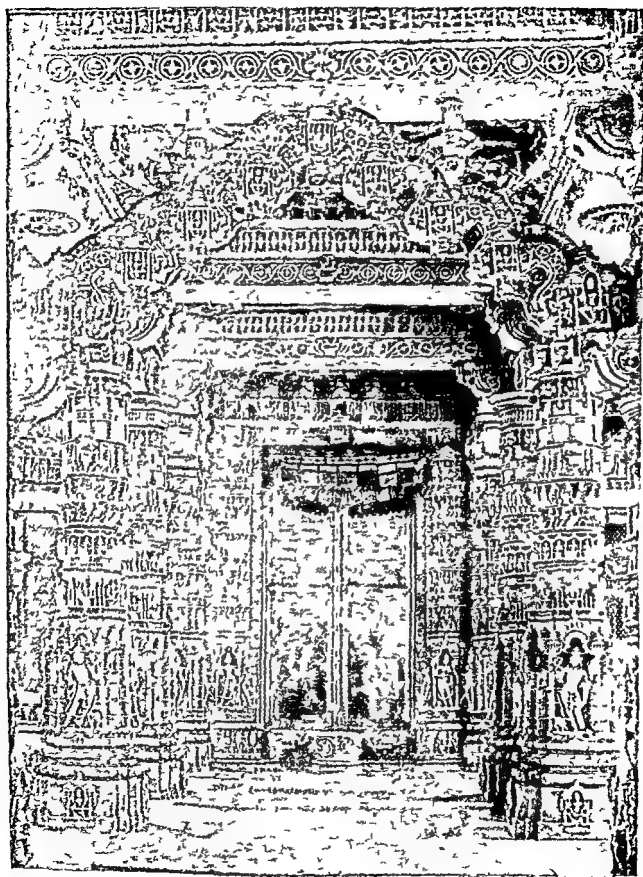


સપ્ત શાખામા ૧ સ્વર ૨ તિલ્લહા ૩ સપ્તોદાર અર્ધચંદ્ર

મ ડોવરના ખગના થરાના મથાળાના સૂત્રે અર્ધ ચંદ્ર (શ ખોદાર=શ ખાવટ) નો મથાળો રાખવો દ્વારની પહોળાઈ જેટલો લાંબો અને તેનાથી અર્ધ શ ખોદાર નીકળતો રાખવો અર્ધ ચંદ્ર લાંબા બે અને તેની બે તરફ અરધા અરધા લાગના બે ગગારા કળ્યા અર્ધ ચંદ્ર અને ગગારાના ગાળામા શંખ અને કમળની આકૃતિ પત્રોથી અલંકૃત શ ખોદાર કરવો



રુપશાખાયુક્ત પંચશાખા દ્વાર ઉદંમ્બર ઉત્તરજ્ઞ-આરાસણા (અંબાજી)

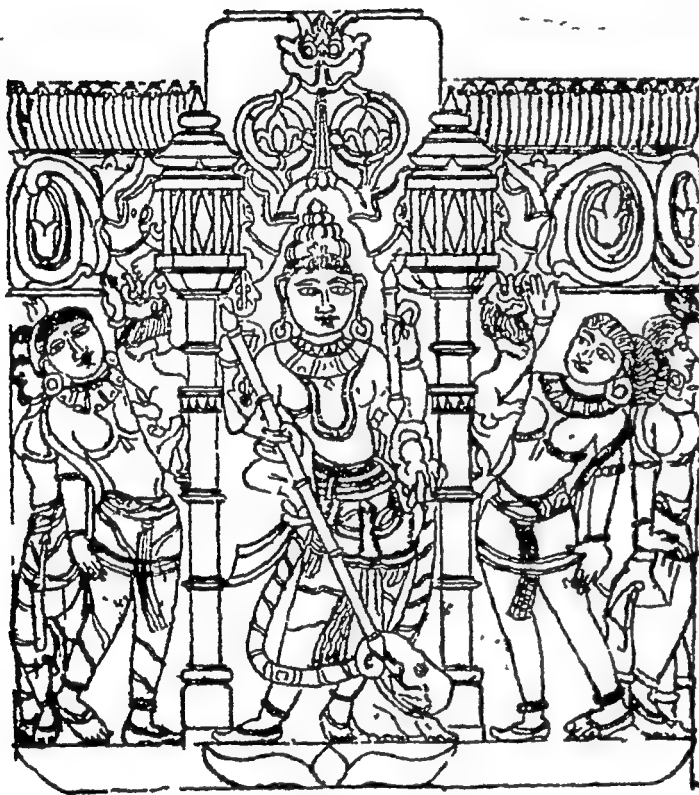


कृष्णमूर्ति ईश्वर-तोरण-कृष्णायुक्त द्वार, (आजंता गुफा)

खरेके शीर्षके सूत्रमें अर्धचन्द्र (शंखोद्वार=शंखावट) का शीर्षक रखना । द्वारकी चौड़ाईके जितना लम्बा और उससे अर्ध-शंखोद्वार निकलता रखना । अर्धचन्द्र भाग दो और उसकी दोनों तरफ आवे आवे भागके दो गगारक करना । अर्धचन्द्र और गगारकके गालेमें शंख और कमलके आकृति पत्रोंसे अलंकृत शंखोद्वार करना । २४-२५.

यस्य देवस्य या मूर्तिः सैवकार्यात्तरङ्गाके ।

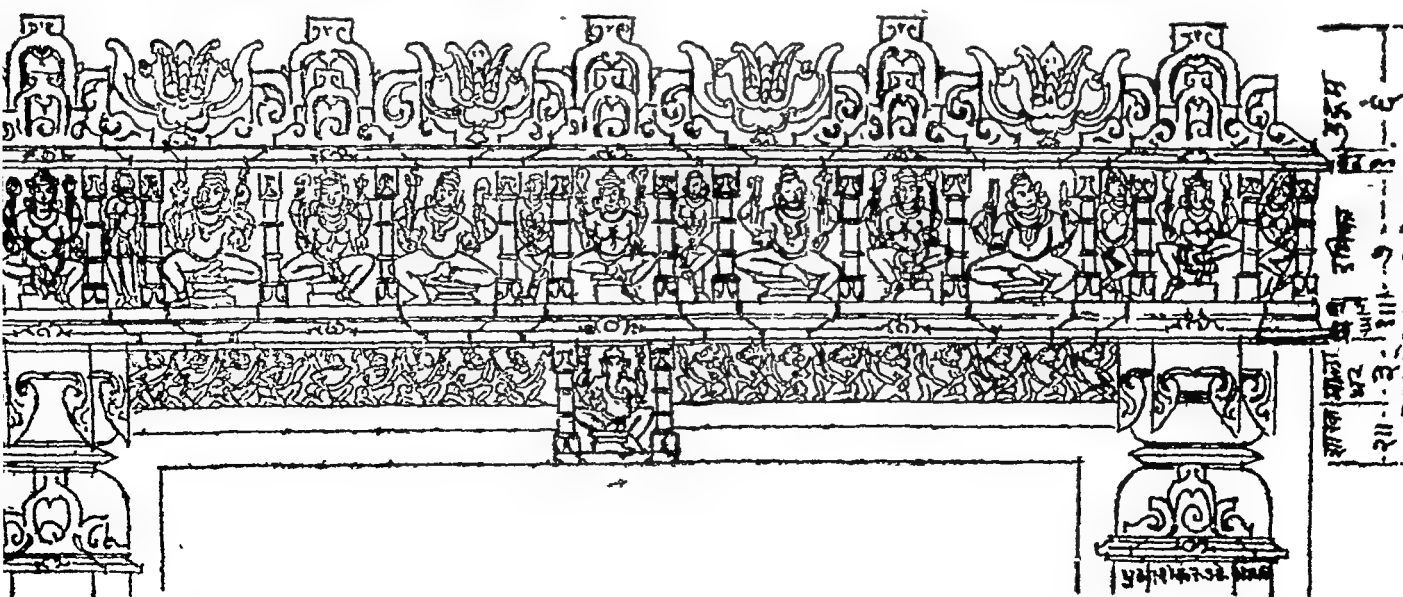
परिवारश्च शाखायां गणेशश्चोत्तरङ्गाके ॥२६॥



द्वारशाखाका ठेकामें देवप्रतिहार स्वरूप

देवालयमां ७ देव पधरावेला
छाय तेनी मूर्ति के सेवक
(ग३३) नी मूर्ति उत्तरंगमां
करवी अने शाखाओमां ते
देवना परिवारना पंक्तिबद्ध
स्वर्ूपो करवां. उत्तरंगमां विशेषे
करी गणेशनी मूर्ति पणु
मध्यमां करे छे. २६.

देवालयमें जो देव पधराये
हुए हो उसकी मूर्ति या सेवककी
(गरुड) मूर्ति उत्तरंगमें करना ।
और शाखाओंमें उस देवके परि-
वारके पंक्तिबद्ध स्वरूपों बनाना ।
उत्तरंगमें विशेषकर गणेशकी मूर्ति
भी मध्यमें करते हैं । २६.



इति श्री विश्वकर्मा कृते क्षीरार्णवे नारदपृच्छाया गर्भगृह द्वारशाखाधिका
शताग्रे नवमोऽध्याय ॥१०९॥ (क्रमांक अ० १९)

प्रतिश्री विश्वकर्मा विनियत क्षीरार्णवे नारदमुनी मवाहृष गर्भगृह अने द्वार शाखा
धिकाग्रे-शिष्य विनाग्रे श्री प्रभाकर ओषडभाडे सोमपुराकी रचिता सुप्रभा नाम्नी व्या
दीनो अक्षो नवमो अध्याय ॥१०९॥

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव नारदमुनिके मवाहृष गर्भगृह और द्वारशाखाधिका
शिष्य विनाग्रे स्थपति श्री प्रभाकर ओषडभाडे सोमपुराकी रचिता सुप्रभा नाम्नी
भापाटीनाका एकमौ नौवां अध्याय ॥१०९॥ (क्रमांक अ० ११)



महापीठ सायप्रमाल और शिवनिर्मात्यका चटनाथ

॥ अथ प्रतिमा पीठ लिङ्ग मान ॥

क्षीरार्णव अ० ११०—क्रमांक अ० १२

श्री विश्वकर्मा उवाच

देवता मुनिभिर्भाग पीठमान मथोच्यते ।

पीठभागमेकेन सार्द्धं भाग मध्यमम् ॥ १ ॥

द्विभागमुत्तमं चैव देवपीठं समुच्छ्रयं ।

यदि सम समात्किर्णः प्रतिमा लक्षणान्वितं ॥ २ ॥

महेश्वरस्य विष्णोश्च ब्रह्माचोश्चमं संभवेत् ।

इति रेषांतो देवानां कर्तव्यं धिमता ॥ ३ ॥

श्री विश्वकर्मा कहे छे. प्रासादना देव अने मुनिनी मूर्ति अने पीठ मान कहुं छुं. ओक लागनुं पीठ कनिष्ठामान, दोठ लागनुं पीठ मध्यमान, अने जे लागनुं देवपीठ जंयुं ओ उत्तम मान जाणवुं. कहीक प्रतिमा अने पीठ सम जंयाधना लक्षणना पाणु थाय. ते महेश्वर विष्णु अने ब्रह्मा जंयाधना रेखासूत्र मान प्रमाणे पीठ बुद्धिमाने जाणवुं.^१ १-२-३.

श्री विश्वकर्मा कहते हैं । प्रासादके देव और मुनिकी मूर्ति और पीठमान कहता हूँ । एक भागका पीठ कनिष्ठमान, दोठ भागका पीठ मध्यमान और दो भागका देवपीठका ऊँचा उत्तममान समझना । कभी प्रतिमा और पीठ समझना ऊँचाईके लक्षणके भी होते हैं । वह महेश्वर विष्णु ब्रह्मा ऊँचाईके रेखासूत्र मानके अनुसार पीठ बुद्धिमानको समझना ।^१ १-२-३.

द्वारमष्ट विभक्तं च त्रिधा भक्तं सप्तभिः

पीठं च भाग मेकं तु शेषं च प्रतिमा मुने ! ॥ ४ ॥

प्रासादना द्वारनी जंयाधना आठ लाग करी उपरनो ओक लाग तलने आधीनाना सात लाग करी तेमां त्रणु लाग करी ओक लागनुं पीठ अने आधी ना जे लागनी प्रतिमा छे मुनि, करवी. ४

प्रासादके द्वारकी ऊँचाईके आठ भागकर उपरका एक भाग तजकर बाकीके

(१) श्लोक १ थी ३ नी शुद्धि भाटे प्रयास करतां जे अर्थ निकले छे ते आपवा प्रयास करैल छे. छांतां पाठांतर अन्य भजे तो उत्तम.

(१) श्लोक एक से तीनकी शुद्धिके लिये प्रयास करते जो अर्थ निकलता है यह देनेके लिये प्रयास किया है फिर भी पाठांतर अन्य मिले तो उत्तम है ।

भागके सात भागका तीन भागकर एक भागका पीठ और बाकीके दो भागकी प्रतिमा करना । ४

सप्तभागं भवेत्द्वारं षड्भागं त्रिधाकृतम् ।

द्विभागं प्रतिमामानं शेष पीठस्यमुच्छ्रय ॥ ५ ॥

गर्भगृहना द्वारकी छिआछिना सात भाग करी उपरनो ओक भाग तल्लने
भाकीनाना छ भागना त्रयु भाग करवा तेना जे भागकी प्रतिमा अने भाकी
ओक भागनु पीठ छियु कछु छे ५

गर्भगृहके द्वारकी ऊँचाईके सात भागकर उपरका एक भाग छोडकर बाकीके
छ भागके तीन भाग करना । उसके दो भागकी प्रतिमा ओर बाकी एक भागका
पीठ ऊँचा कहा है । ५

द्वार षड् भागिक त्रैय त्रिधा पंच प्रकल्पयेत्

पीठे तु साग मेकेन द्विभागे प्रतिमा भवेत् ॥ ६ ॥

गर्भगृहना द्वारकी छिआछिना छ भाग करी उपरनो ओक भाग तल्ल भाकीना-
ना त्रयु भाग करी ओक भागनु पीठ छियु कछु अने जे भाग छिआछि प्रतिमा
जल्लवी ६

गर्भगृहके द्वारकी ऊँचाईके छ भागकर उपरके एक भागको छोडकर बाकीके
भाग तीन भागकर एक भागका पीठ ऊँचा करना । ओर दो भाग ऊँची प्रतिमा
जानना । ६

एवमुर्ध्वं प्रतिमा च अद्वे शयनासनं भवेत् ।

पीठमानच नान्यत्र शेष स्थाने च निष्कल्म् ॥ ७ ॥

जल ग्रन्था प्रमाणेन द्वार विस्तार साधितम्

अन्यथा च यदा अर्चा विस्तर नैव लङ्घयेत् ॥ ८ ॥

आ गीते छिली प्रतिमानु मान जल्लु शयनासन प्रतिमानु मान द्वारोदयना
अर्ध भागे राखनु जलशय्याना शेषशाछिना मान प्रमाणे द्वारनो विस्तार
साधवो=राखवो द्वार विस्तारथी शय्या भूतिना विस्तारनु लघन कछु नहि अर्थात्

(२) श्लोक = ना पीठ पद्मा पद्म ना स्थाने अन्य प्रमाण पच नो पाठ वतु भजे
छे परतु श्लोक ४-५ अने ६ ना क्रमथी जेना पद्म पाठ योग्य छे

(२) श्लोक = के दूसरे पदमे पदमे स्थानपर अन्य प्रमाण पचन पाठ ज्यादा मिलता
है, लेकिन श्लोक २, ५ और ६ के क्रमसे देगते पद्म पाठ योग्य है ।



गवाक्षमें वारह : पक्षमें विरालिका

द्वार विस्तार ढेटली शयन
प्रतिमा लांणी राखवी.
(अपराजित सूत्र भां
आपेला प्रमाणुथी आ
प्रमाणु नानुं छे.) ७-८.

इस प्रकार खडी
प्रतिमाका मान जानना ।
शयनासन प्रतिमाका मान
द्वारोदयके आवे भागमें
रखना । जलशय्याके मान
के अनुसार द्वारका विस्तार
रखना द्वार विस्तारसे
शय्या मूर्तिके विस्तारका
लंघन नहीं करना अर्थात्
द्वार विस्तारके बराबर
शयन प्रतिमा लम्बी रखना ।
७-८ (अपराजित सूत्रके
प्रमाणसे यह प्रमाण छोटा
है ।)

द्वारस्य विस्तराद्धेनि पादोनेवा विचक्षणं^३

दलौकृत्य तदस्थाने प्रमाण तु त्रिधा पुनः ॥ ९ ॥

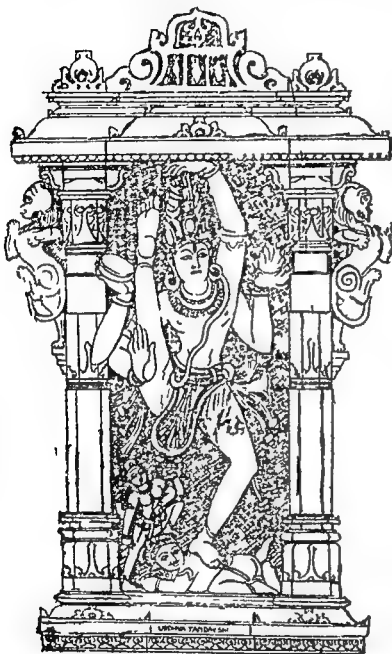
गर्भना द्वारनी पडोणाधना (१) अर्ध लागे (२) पोणु लागे (३) डे द्वार
विस्तार ढेटली अथ त्रण प्रकारे प्रतिमाना विस्तारनुं प्रमाणु जाणुवुं. ९.

गर्भगृहके द्वारकी चौचाईके (१) आवे भागमें (२) पौने भागमें (३) या द्वार
विस्तारके बराबर इस तरह तीन प्रकारसे प्रतिमाके विस्तारका प्रमाण जानना । ९

^३ तृतीयांशेन गर्भस्य प्रासादे प्रतिमोत्तमा ।

मध्यमा स्वदशांशेन पंचमांशेना कनीयसी ॥ ६१ ॥ दीपार्णव

अथ लिङ्गमान-प्रासाद पंचमाशेन लिङ्गाकूर्यात्प्रयत्नतः
वेदविज्ञादिस्पीठं भावाजपीठ मानकम् ॥१०॥



प्रासादना पाथभा लागे
राजलिगनी लभाई प्रयत्ने
करीने गभवी अने प्रासादना
योथा लागे जणाधारीने
विस्तार गभवे १०

प्रासादके पाँचवे भागमे
राजलिङ्गकी लम्बाई प्रयत्न
करके रखना और प्रासादके
चौथे भागमे जलधारीका
विस्तार रखना । १०

गर्भगृहना त्रीन भागनी
प्रतिभानु प्रभाषु उत्तम भान
जलधनु तेना द्दशमे भाग हीन
द्वे तो मध्य भान अने पाथमे
भाग हीन द्वे तो कनिष्ठ भान
प्रतिभानु जलधनु

गर्भगृहके तीसर भागकी
प्रतिमाका प्रमाण उत्तम मान
जानना । उसका दशवाँ भाग
हीन करे तो मध्यम मान और
पाँचवा भाग हीन करे तो कनिष्ठ
मान प्रतिमाका जानना ।

गयाक्षमे उर्ध्वे तिलक निव-पक्षमे विरालिमा

सप्तांशे गर्भगेहे तु द्वौ भागौ परिवर्जयेत् ।

पंचमाशो भवेद्देव शयनस्य सुखाचह ॥ अपराजित सूत्र

गर्भगृहना मात भाग द्वी तेना जे भाग तछने पाथ लागना जणनाथी सत्तेवी
भूतिनु प्रभाषु गभनु जे सुभने आपनार जलधनु ते अपराजितनु प्रभाषु छे

गर्भगृहके सात भाग कर उसने दो भाग छोडकर पाँच भागके जलशायी सुप्त मूर्तिका
प्रमाण रखना, यह सुगवना है । यह अपराजित ग्रन्थका प्रमाण है ।

उर्ध्व प्रतिमा मान-पक्ष हस्तेनु प्रासादे मूर्तिरेकादशाङ्गुला ।

दशाङ्गुल ततो वृद्धिः यावद् हस्त चतुष्टयत् ॥६६॥

द्वार विस्तार गृह्य अष्टमांशोनिमध्यत ।

ज्येष्ठ मध्याकनिष्ठं चा अर्चमानं चतुर्मुखं ॥११॥

आतुर्मुख प्रतिमानुं प्रमाणु कहे छे. द्वार विस्तारनी थराथर प्रतिमा राखवी ते मध्यमान, आठमो लाग हीन राखवी ते कनिष्ठ मान अने द्वार विस्तारथी आठमो लाग वधु राखवी ते ज्येष्ठ मान अे रीते आतुर्मुख प्रासादनी प्रतिमानुं प्रमाणु न्णवुं-११.

द्वयाङ्गुला दश हस्तान्ता शताङ्गुलाङ्गुलस्थ च ।

अतो विंशदशोना मध्यमाऽर्चा कनीयसी ॥६७॥ दीपार्णव

अेक हाथना प्रासादने अगियार अंगुलनी मान न्णवुं अे रीते चार हाथ सुधीना प्रासादने गणे दश अंगुलनी वृद्धि प्रत्येक गणे करवी. पाँचथी दश हाथ सुधीना प्रासादने प्रत्येक गणे अण्णवे अंगुलनी वृद्धि करता न्णवुं. दशथी पचास हाथ सुधीना प्रासादने प्रत्येक गणे अेकेक अंगुलनी वृद्धि करवी. ते उत्तम मान न्णवुं. तेनो वीशमो लाग हीन करवाथी मध्यमान अने दशमो लाग हीन करवाथी कनिष्ठ मान न्णवुं.

एक हाथके प्रासादको ग्यारह अंगुलकी खड़ी प्रतिमाका मान जानना । इस तरह चार हाथ तकके प्रासादके गज पर दस दस अंगुलकी वृद्धि प्रत्येक गज पर करना । पाँचसे दस हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक गज पर दो दो अंगुलकी वृद्धि करते जाना । दससे पचास हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक गज पर एक एक अंगुलकी वृद्धि करना । यह उत्तम मान जानना । उसके बीसवें भागको हीन करनेसे मध्यमान और दसवे भागको हीन करनेसे कनीष्ठमान जानना ।

आसनस्थ प्रतिमामान-हस्तादेर्वेद हस्तांते षड्वृद्धिः स्यात् पडाङ्गुला ।

तदूर्ध्वं दश हस्तान्ता त्र्यङ्गुला वृद्धिरिष्यते ॥६६॥

एकाङ्गुला भवेद् वृद्धि र्यावत् पंचाशद्धस्तकम् ।

विंशत्येकाधिका ज्येष्ठा विंशत्योन कनीयसी ॥६७॥

उपस्थिता प्रथमा प्रोक्ता आसनस्था द्वितीयका ।

अेठी प्रतिमानुं मान कहे छे. अेक हाथथी चार हाथ गणसुधीना प्रासादनुं प्रत्येक हाथे ७ ७ आंगणनी अेठी प्रतिमानुं मान न्णवुं. त्यार पछी ७ थी दश हाथ सुधीना प्रासादनुं प्रत्येक हाथे त्रणु त्रणु आंगण वधारता न्णवुं. अग्यारथी पचास हाथ सुधीना प्रासादने प्रत्येक गणे अेकेक आंगणनी वृद्धि करता न्णवुं ते मध्यमान आवेल माननो वीशमो लाग वधारवाथी ज्येष्ठमान अने वीसमो लाग हीन करवाथी कनिष्ठमान न्णवुं. अे रीते आगण ने पछेलुं अेली प्रतिमानुं मान कहुं अने आ णीनुं मान अेठी प्रतिमानुं न्णवुं.

अेठी हुई प्रतिमाका मान कहते हैं । एक हाथसे चार हाथ-गज तकके प्रासादका प्रत्येक हाथमें छः छः अंगुलकी अेठी प्रतिमाका मान जानना । बादमें छः से दस हाथ तकके प्रासादका प्रत्येक तीन तीन अंगुल बढ़ाते जाना । ग्यारहसे पचास हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक गज पर

चातुर्मुख प्रतिमाका पमाण कहते हैं। द्वार विस्तारके धरावर प्रतिमा रखना यह मध्यमान, आठवाँ भाग हीन रखना यह कनिष्ठमान, और विस्तारसे आठवाँ एक एक अंगुलीकी वृद्धि करते जाना। यह मध्यमान है। आये हुए मानका बीसवाँ भाग बढ़ानेसे ज्येष्ठमान और बीसवें भागको हीन करनेसे कनिष्ठमान जानना। इस तरह आगे जो पहला खड़ी प्रतिमाका मान कहा और यह दूसरा मान बैठी प्रतिमाका जानना।

प्रासाद गज	बैठी प्रतिमा मान अंगुल	खड़ी प्रतिमा मान अंगुल	प्रासाद गज	बैठी प्रतिमा मान अंगुल	खड़ी प्रतिमा मान अंगुल	प्रासाद गज	बैठी प्रतिमा मान अंगुल	खड़ी प्रतिमा मान अंगुल
१	६	११	६	३०	४५	२०	५०	६७
२	१२	२१	७	३३	४७	३०	६०	७३
३	१८	३१	८	३६	४९	४०	७३	८३
४	२४	४१	९	३९	५१	५०	८०	९३
५	३०	४२	१०	४२	५३			

गर्भे पचाशकेअंगुली ज्येष्ठे लिङ्ग तु मध्यमम् ।

नवांशे पंच भाग स्त्राष्टर्भांश्च कनिष्ठावेय ॥ अ० १३ ॥

गर्भगृहना पांच भाग की वृद्धि भागना राजनिगनी लम्बाई ज्येष्ठ माननी लक्ष्मी तेना नव भाग की पांच भाग लक्ष्मी लम्बाई विंग उदय मध्यमाननु अने गर्भगृहना अर्धभाग राजनिगनु उदय ते कनिष्ठमान लक्ष्मी

गर्भगृहके पाँच भाग कर तीन भागने राजलिङ्गकी लम्बाई ज्येष्ठमानकी जानना। उनके नौ भाग कर पाँच भागकी लम्बाईके लिङ्ग उदयको मध्यमानका और गर्भगृहके आधे भागमें जो राजलिङ्गका उदय है उसे कनिष्ठमान जानना।

गृहपूजा योग्य प्रतिमामान-आरभ्यादंगुल उर्ध्व पर्यन्ते द्वादशाङ्गुलम् ।

गृहेषु प्रतिमा पूज्या नाधिके शक्यते बुध ॥

अथ आगणथी पात्र आगण सुधीनी देवमूर्ति गृहपूजने योग्य लक्ष्मी तेथी अधिक मोटी मूर्ति सुद्धिमाने घरपूजना न राखनी (मत्स्य पुराणमा अंगुमाना पत्रथी नव आगण सुधीनु प्रभाष्य गृहपूजने भाटे आपेक्ष छे)

एक अंगुलसे बारह अंगुल तककी देवमूर्तिको गृहपूजाके योग्य जानना। उससे अधिक बड़ी मूर्तिको बुद्धिमानको द्वारपूजामें न रचना चाहिये। (मत्स्य पुराणमें अंगुलके पत्रसे नौ अंगुल तकका प्रमाण गृहपूजाके किये दिया है।)

भाग ज्यादा रखना, यह ज्येष्ठमान इस तरह चातुर्मुख प्रासादकी प्रतिमाका प्रमाण जानना । ११.

पदमांशनीषदार्चा द्वारविस्तार भाषितम् ।

वितराग यदा लक्ष्मी नीकुलीश बुध मेव च ॥१२॥

गर्भगृहना पदना विलागे के द्वारना विस्तार प्रमाणथी वितराग=७न लक्ष्मी७ के नकुलीश के बुद्धनी प्रतिमा राखवी-१२.

गर्भगृहके पदके विभागमें या द्वारके विस्तार प्रमाणसे वितराग-जीन लक्ष्मीजी या नकुलीश या बुद्धकी प्रतिमा रखना । १२.

उच्छ्रये यत्र पीठस्य त्रिंशता परिभाजिते ।

एकोशं भूगतं कार्यं त्रिभागः कण्ठपीठिका ॥१३॥

भागार्द्धं मुखपट्टं च स्कन्ध सार्द्धत्रयोन्नतः ।

स्कन्धस्य पट्टिकावैस्याद् भागैकं चान्तरपत्रिका ॥१४॥

कर्ण सार्द्धं द्वयं वैस्याद् भागैकं चिप्पिका मता ।

द्विभागं चान्तः पत्रकं कपोताली द्विसार्द्धिका ॥१५॥

सार्द्धं पंच ग्रासपट्टिः कर्तव्या विधिपूर्वकम् ।

अर्धे मुखपट्टिकाख्या त्रिभागं कर्णशोभनम् ॥१६॥

अर्धः स्कन्धपट्टिः कार्या चतुर्भागश्च स्कन्धकः ।

क्षोभणाश्चष्टभागैः कर्तव्यं तदंगकितैः ॥१७॥

पीठ विलाग.

१ नीमिनमां

३ कंठपट्टी

०॥ मुखपट्टी

३॥ स्कंधनडंभो

०॥ अंधारी

२॥ कर्णिका

१ यीष्पीका

२ अंतरपत्र

२॥ डेवाण

५॥ ग्रासपट्टी

०॥ मुखपट्टी

३ कर्णिका

०॥ स्कंधपट्टि

४ स्कंध

देवस्थापन नीचेनी पीठिका=पभासणु-सिंहासननी

जि'थार्ध (जे लागे आवती होय तेना) ना त्रीस भाग करवा.

तेमां ओक भाग भूमिमां-त्राणु भाग कंठपट्टी अर्धां लागनी

मुखपट्टी, साडात्राणु लागनो स्कंध (गलतो, नडंभो)

करवो (तेमांथो अरधा लागनो कंठ काढवो) ते पर अरधा

लागनी अंधारी-ते पर कर्णी अढी लागनी-ते पर ओक

लागनी यीष्पीका करवी-ते पर जे लागनुं अंतरपत्र-

डेवाण अढा लागनो-तेना पर ग्रासपट्टी साडापांय लागनी

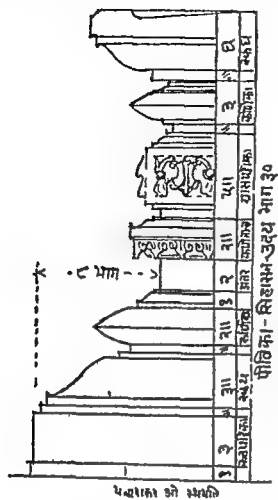
विधिथी करवी. अरधा लागनी मुखपट्टी-अंधारी करवी,

त्राणु लागनी कर्णी करवी. ते पर अरधा लागनी स्कंधपट्टी=कंठ

अने सौथी उपर स्कंधक. गलतो चार लागनो करवो. आ

अधा थरोमां अंतरपत्रथी कंठपट्टीनो घाट आठ भाग जे'डो

मेसाउये अे रीते सिंहामन अ कित करवु १३-१४-१५-१६-१७.



सिंहम-उदय भाग ३०

देवस्थापनकी नीचेकी पीठिका-
मिहामनकी उचाई (जिस भागमें
आवे उमके) के तीस भाग करना ।
इनमे एक भाग भूमिमे-तीन भाग
कण्टपट्टी, आधे भागकी मुगपट्टी,
माढे तीन भागका स्थध (गलता-
जाडना) करना (उममेसे आवे
भागका कद निकालना ।) उसके
पर जाये भागकी अधारी, उसके पर
कणी ढाढी भागकी, उसके पर
एक भागकी चिप्पिका करना । उसके
पर दो भागका अतरपत्र-करना
केवाल ढाढी भागका, उसके पर
ग्रासपट्टी माढे पाँच भागकी विधिसे
करना । आवे भागकी मुगपट्टी
अधारी करना । तीन भागकी कर्णी

देव मिहामन पीठ-उदय विभाग

करना, उसके पर आवे भागकी स्कधपट्टी-कद और सनसे उपर स्कधक गलता
चार भागका करना । इन सव स्तरोंमे अतरपत्रसे कंठपट्टीके घाटको आठ भाग
गहरा बिठाना इसीतरह सिंहामनको अकित करना । १३-१४-१५-१६-१७

इति श्री विश्वकर्मा कृते क्षीरार्णवे नारद पृच्छडीया प्रतिमा लिङ्गपीठ
मानधिकारे शताग्रे दशमोऽध्याय ॥११०॥ क्रमांक अ० १०

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवे नारदमुनिना सवादस्य प्रतिमा, निग अने
पीठना मानने अधिकार गिप निगारु अधपति श्री प्रभाशर ओगलान ओमपुगये
रयेयी सुप्रभा नामनी लापा टीकाने ओदसो दगमे अध्याय-११० कभाद अ० १२

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवमे नारदमुनिके सवादरूप प्रतिमा, लिङ्ग ओर पीठके
मानका अधिकार शिपविशारद स्थपति श्री प्रभाशर ओधडमाई गोमपुगकी रची हुआ सुप्रभा
नामकी भाषा टीका का अेकयी दसवाँ ज्ञाय । ॥११०॥ (क्रमांक अ० १०)

॥ अथ देवता दृष्टिपद स्थापन ॥

क्षीरार्णव अ० १११—क्रमांक अ० १३

उच्छ्रयं द्वात्रिंशत् भागं द्वार मान विशेषतः
(अधःतै अष्ट भागं च शिवस्थानं च निश्चलं ॥ १ ॥)
हरश्चदशमे भागे द्वादशे जलशायिते ।
मातरस्य द्वायाधिक्यै र्यक्ष षोडशान्विते ॥ २ ॥
अष्टादशैव कर्तव्यं उमारुद्राश्रिया हरिं ।
विंशमे ब्रह्मयुगमंच तत्र दुर्गाअगस्तादय ॥ ३ ॥
एवं विधेयप्रकर्तव्या नारदादि मुनीश्वराः ।

श्री विश्वकर्मा डहे छे. गर्भगृहना द्वारनी उंचाईना अत्रीश लाग करवा. नीचेना आठ भाग शिवस्थानना बाणुवा नीचेथी आठ भागमां शिवलिङ्ग पेसाउवा, दशमे लागे, दुरः शीवः, आरमा लागे शेष शायिनी दृष्टि राखवी; चौदहमा लागे मातृकाओंकी; सोणमा लागे यक्षनी दृष्टि राखवी. अठारमा लागे—उमा ३६-लक्ष्मी अने विष्णुनी अने ब्रह्मा-सावित्रीनुं वीशमा लागे तेमज दुर्गा अगस्तादय नारद आदि मुनिनी दृष्टिअे विधिथी अेटले वीशमे लागे राखवीः १-२-३-४.

विश्वकर्मा कहते हैं—गर्भगृहके द्वारकी ऊँचाईके वत्तीस भाग करना । नीचे का आठ भाग शिवलिङ्ग का स्थान का समझना उम्बरेसे दस भाग हर शिव बारहवें भागमें शेषशायीकी दृष्टि रखना । चौदहवें भागमें मातृकाओंकी । सोलहवें भागमें यक्षकी दृष्टि रखना । अठारहवें भागमें उमारुद्र-लक्ष्मी और विष्णु की । ब्रह्मा और सावित्रीका बीसवें भागमें और दुर्गा अगस्त्यादय नारद आदि मुनिकी दृष्टि इस विधिसे अर्थात् बीसवें भागमें रखना । १-२-३-४.

एकविंशे भवेत्लक्ष्मीश्चतुर्विंशे सरस्वती ॥ ४ ॥

पंच विंशे जिनस्थानं षड्विंशेचंद्रमेव च ।

ब्रह्मा विष्णुस्तथारुद्रः सूर्यश्च सप्तविंशतिः ॥ ५ ॥

भैरवश्चंडिकाश्चैव एकोनत्रिंशदेशके ।

तत्पदंच परेशून्यं भूतप्रेतादि राक्षसा ॥ ६ ॥

१ डोई प्रतोमां त्रिंशत्-त्रीश लाग डह्या छे. पणु ते डहाय अशुद्ध डोय-त्रिंशत् भाग कोइ प्रतमें कहा हे मगर वो अशुद्ध प्रत होगी

એકવીશમા ભાગે લક્ષ્મીની દષ્ટિ, ચોવીશમા ભાગે સરસ્વતી (અને ગણેશની) પચ્ચીશમા ભાગે જિન તીર્થ કર, છઠ્ઠીશમા ભાગે ચંદ્રની, સત્તાવીશમા ભાગે બ્રહ્મા વિષ્ણુ અને રૂદ્રની અને સૂર્યની મૂર્તિની, આગણત્રીસમા ભાગે ભૈરવ અને ચંડિકાની દષ્ટિ ગણવી તે ઉપરના ત્રણ ગ્રંથ ભાગમા ભૂત પ્રેત અને રાક્ષસની દષ્ટિ ગણવી

ફક્કીસવે ભાગમે લક્ષ્મીની દષ્ટિ, ચોવીસવે ભાગમે સરસ્વતી (ઓર ગણેશ કી) પચ્ચીસવે ભાગમે જિન તીર્થકર, છઠ્ઠીસવે ભાગમે ચંદ્રની સત્તાવીશવે ભાગમે બ્રહ્મા વિષ્ણુ ઓર રૂદ્રની ઓર સૂર્યની મૂર્તિની ઓર ઉત્તીસવે ભાગમે ભૈરવ ઓર ચંડિકાની દષ્ટિ રરના । ઉસકે ઉપરકે ત્રીન ગ્રંથ ભાગમે ભૂત પ્રેત ઓર રાક્ષસકી દષ્ટિ રરના । ૪-૧-૬

દ્વારોચ્ચયોઽષ્ટધામકંતં ઝર્ધ્વભાગં પરિત્યજેત્ ।

સપ્તમા સપ્તમે ભાગે તસ્મિન્ દષ્ટિસ્તુ ગોમના ॥૭॥

દ્વાગની ઉચાર્ધ- । આઠ ભાગ કરી ઉપરનો આઠમે ભાગ તણ દેવો અને સાતમા ભાગના કરી આઠ ભાગ કરી તેના માતમા ભાગે દેવોની દષ્ટિ રાખવી તે શુભ છે

દ્વારકી ઝંચાર્ધકે આઠ ભાગકર ઉપરકે આઠમે ભાગકો છોડ દેના । ઓર સાતવે ભાગકે ફિર આઠ ભાગકર ઉસકે સાતવે ભાગમે દેવોની દષ્ટિ રરના, યહ શુભ હૈ । ૭

લીંગણુની કેટલીક પ્રતોમા “ ઉચ્ચય ત્રિગતદ્વાર ” આવો ત્રિગ ભાગનો પાંઠ મળે છે પરંતુ એક જૂની આવગમ્ભૂત પ્રતમા ગુરુપાઃ અને વરના જે પદોની ત્રુટિ પણ મળી આની- ‘ ઉચ્ચય દ્વારિગત્ ભાગ ’ નો આવો પાંઠ મળે તે પહેલા નોડના પાડના જે પદો મળસે અષ્ટ ભાગ ચ દિવ સ્થાન ચ નિશ્ચય ॥૧॥ દોપાણુવ ગ્રથના દષ્ટિપદ વિભાગ આ ગ્રથના થોડા થોડા ફેરવાર સાથે મળે છે પરંતુ તે ફેરવાર વડુ ભાગે અશુદ્ધિના આભારી હોય । ૧૮ ભાગો બ્રહ્મા યુગ્મને લઈ ૧૯મા ભાગે શુધ ચિત્ર લેખને ૨૦મા ભાગે દુર્ગા નાગદાદિ મુનિ ત્રીપાણુવમા કહ્યા છે જિન તીર્થ કર ૨૧મા ભાગે લક્ષ્મી માથે લીધેલ છે અથારે આ ગ્રથમા ૨૫મા ભાગે જિનનુ સ્વતંત્ર દષ્ટિ ગ્રથાન ક્યું છે લીંગણુવની કેટલીક પ્રતોમા ‘ પચવિંશે ઘનસ્થાન ’ નો અશુદ્ધ પા- મળે છે પરંતુ ઉપરોક્ત આવગમ્ભૂત પ્રતમાથી ઘનસ્થાનને વદલે જિનસ્થાનનો પાંઠ મળી આવ્યો છે તે ને સાચો પાંઠ છે

દષ્ટિસૂત્ર વિષયમા અપગણિત મૂત્ર મતાન, કંકુરકે વાગ્મુમાર, અને આં વસુનદી કૃત પ્રતિષ્ઠામા ગાન ગ્લકોષ દેવનામૃતિ પ્રગ્ણમા મતગતાતમે છે અપરાજિત સુત્ર ૧૩૭મા ચોસક ભાગ દ્વારિગથના કહ્યા છે તેમા ત્રિગ ૧૮ ભાગ મુનીમા, ૨૨૭મા ભાગે જ્ઞાનાયિન ૩૭ ઉમાન્દ, ૪૯ ગણેશ સરસ્વતી અને ૫૫મા ભાગે બ્રહ્મા વિષ્ણુ રૂદ્ર અને જિનની દષ્ટિ રાખવાનુ ક્યું છે કંકુરકે વાગ્મુમારમા દ્વાગના ઉચ્ચના ફગભાગ કરી પહેલા ભાગમા

ઉર્ધ્વદૃષ્ટિ વિનાશાય અધો ચ ભોગ હાનિ ચ ।

સુખદા સર્વકાલેષુ સમદૃષ્ટિ ન સંશયઃ ॥ ૮ ॥

દૃષ્ટિ સ્થાનથી જો ઊંચી દૃષ્ટિ રાખે તો વિનાશ થાય અને નીચી દૃષ્ટિ રાખે તો સમૃદ્ધિનો નાશ થાય માટે સમસૂત્રમાં સરખી, વિભાગે સૂત્રે દૃષ્ટિ રાખવાથી સર્વ કાળમાં સુખ જ રહે તેમાં સંશય ન જાણવો. ૮.

દૃષ્ટિ સ્થાનસે જો ઊંચી દૃષ્ટિ રાખે તો વિનાશ હોતા હૈ, ઓર નીચી દૃષ્ટિ રાખે તો સમૃદ્ધિકા નાશ હોતા હૈ । इसलिये समसूत्रमें समान विभागमें सूत्रमें दृष्टि रखनेसे सर्वकालमें सुखही रहे उसमें जरा भी संशय न जानना । ८.

શિવલિંગ ત્રીજામાં શેષ શાયી, સાતમામાં શાસનદેવ (યક્ષયક્ષણી)ની રાખવી. હવે તે છ અને સાતમા ભાગ વચ્ચે દશભાગ કરી સાતમા ભાગે જિન તીર્થ કરની દૃષ્ટિ રાખવાનું કહે છે. આઠમા ભાગે ચંડી ભૈરવ અને નવમા ભાગે છત્ર ચામર ધારી ઇંદ્રાદિ દેવો, દીપાણ્વ અને ક્ષીરાણ્વના દૃષ્ટિ વિષયના પાઠોમાં નજીવો ફેરફાર છે. દંકુર ફેર વાસ્તુસાર દશભાગ કરી જિનદૃષ્ટિ સાતમાં ભાગથી પણ નીચે રાખવાનું કહે છે. તેના વિભાગ કોષ્ટકમાં આપેલ છે. દિગંબરાચાર્ય વસુનંદીકૃત પ્રતિષ્ઠાસારમાં કહે છે.

વિભજ્ય નવધા દ્વારં તત્ત્વ ષડ્ભાગાનધસ્ત્જેત્ ।

ઊર્ધ્વે દ્વૌ સપ્તમં તદ્વદ્ વિભજ્ય સ્થાપયેદ્ દશામ્ ॥

દ્વારની ઊંચાઈના નવ ભાગ કરી નીચેના છ ભાગ અને ઉપરના એ ભાગ છોડી દેવા, બાકીનો સાતમો ભાગ રહ્યા તેના નવ ભાગ કરી તેના સાતમે ભાગે જીન પ્રતિમાની દૃષ્ટિ રાખવી. આમ એક જૈન મત પણ દૃષ્ટિ વિષયમાં એકમત નથી. મતભેદ છે. આ મત મતાંતર જોતાં એક દૃષ્ટાંત રૂપે જો ૨ ગજ ૧૭ આંગળના દ્વારની ઊંચાઈ લઈ જિનદેવની દૃષ્ટિ દૃષ્ટાંત રૂપે ગણતાં—અપરાજિત સૂત્રની દૃષ્ટિ ઉત્તરંગથી ૯ આંગળ ૧૧ દો. નીચી

દંકુર ફેરવાસ્તુસારના મતે ૧૮ — ૦ ”

આઠ વસુનંદીના મતે ૧૬ — ૦૧૧ ”

દીપાણ્વ ૨૨ — ૨૧૧ ”

આ રીતે કોઈ જૂના સ્થળે દૃષ્ટિ નીચી જણાતી હોય તો દોષ જોતાં પહેલાં શાસ્ત્રોક્ત નિર્ણય કરવો. સર્વ સામાન્ય મત આઠમા ભાગના સાતમા ભાગના આઠ ભાગ કરી સાતમા ભાગનું દૃષ્ટિ સૂત્ર અપરાજિત સૂત્ર સંતાનના ૬૪ ભાગના મતને મળતું છે. અને તે વર્તમાનમાં વિશેષ વ્યવહારમાં છે. બીજો એક મતભેદ વર્તમાનમાં વિદ્વાનોમાં પ્રવર્તે છે.

દૃષ્ટિ સૂત્ર જે આવ્યું હોય તેના ખસરે જ આંખની કીકીના મધ્યનું સૂત્ર એકસૂત્ર માં રાખવું જોઈએ. અને તેને શિલ્પી વર્ગ અનુસરે છે. હમણાં જૈન વિદ્વાનો સપ્તમાસપ્તમે નો અર્થ સાતમામાં એટલે સાતમાની અંદર નીચે એવો અર્થ કરે છે, જ્યારે શિલ્પીઓ સાતમાના સાતમે જ જે વિભાગ આપ્યો ત્યાં જ દૃષ્ટિ રાખવાનું માને છે. જૈન વિદ્વાનો તેના સિંહધ્વજગજાયે દૃષ્ટિ રાખવા નીચે ઉતારવાનું કહે છે—પરંતુ તે આયમેળ મંડન સૂત્ર

अष्टाविंशतिर्भागानि गर्भगृहार्ध भागतः ।

प्रथमे च शिवस्थायं किञ्चिद्विज्ञानमाश्रितम् ॥ ९ ॥

कर्णपिप्पलिकासूत्रं भुजगर्भेतु संस्थितम् ।

पादगुल्फ गर्भसूत्रे पदगर्भेषु देवता ॥१०॥

धाग सिवायना कोर्ध नूना अथवा आधभेजे दृष्टि गणनानु कहेता नथी वृषार्णव अ० १२०
भा दृष्टिसन ओठ वाजाअपक्ष न दोषवानु कहे छे ते ते सूत्र यागवे तो दोष दखो छे
दार्पसिद्धि सभये निरपीओओ आया भनभतान्तगना वितजवाहभा न उतगता नन
विद्वानो पोताना भतनो आग्रह भेवे त्यागे तेन कणु

१ क्षीरार्णवकी कई प्रतीमें 'उच्छ्रय त्रिंशत् द्वार' ऐसा तीस भागका पाठ मिलता है।
परन्तु एक पुरानी आधारभूत प्रतीमें शुद्धपाठ और कम दो पदाङ्गी जुड़ी भी मिली है। उच्छ्रय
द्वात्रिंशत् भाग—यह सच्चा पाठ मिला, उसके पहले श्लोकके पिछले दो पदा अधस्ती अष्टभाग
च शिवस्थान च निश्चल ॥९॥

क्षीरार्णव प्रथके दृष्टिपद विभाग इस प्रथके बहुत थोड़े तफावतके साथ मिलता है परन्तु
यह तफावत ज्यादा भागमें अशुद्धिके आगारी है। १८ वे भागमें ब्रह्मा पुष्पके कारण १९ वे
भागमें बुध, चित्रलोपको भीमवे भागमें दुर्गाको नारदादि मुनि क्षीरार्णवमें करते हैं। जिन तीर्थकर
२१ वे भागमें लक्ष्मीके साथमें लिखे हुए हैं। इस प्रथमें २५ वे भागमें जिनका स्वतन्त्र दृष्टि
स्थान कहा है। क्षीरार्णवकी कई प्रतीमें "पञ्चविंश धनस्थान" का अशुद्ध पाठ मिलता
है। परन्तु उपरोक्त आधारभूत प्रतीमें धनस्थानके बदले 'जिन स्थान' का शुद्ध पाठ मिला
है। यह पाठ सच्चा है।

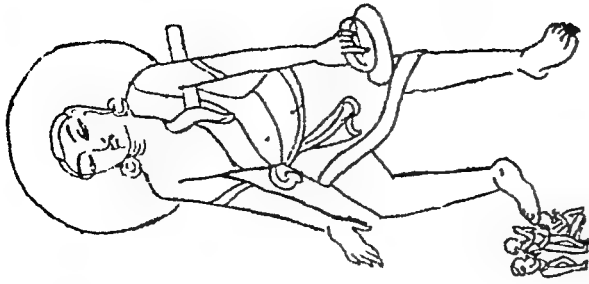
दृष्टि सूत्र विषयमें अपराजित, सूत्र सतान, ठन्कुरफेर वास्तुसार, आ० वसुनदी इन
प्रतिष्ठासार, ज्ञानरत्नकोश, देवता मूर्ति प्रकरणमें मतमतांतर है। अपराजित सूत्र १२७ म
द्वारोदयके चौसठ भाग कहे हैं। उसमें लिङ्ग अठारह (१८) भाग तरु २७ वें भागमें जलशायिन,
३७ उमाहृद, ४९ गणेश सरस्वती और ५५ वे भागमें ब्रह्मा विष्णु, रुद्र और जिनकी दृष्टि
रत्नके दिये कहा गया है।

ठन्कुर फेर वास्तुसारमें द्वारके उदयके दस भाग कर, पहले भागमें शिव लिङ्ग तीसरेमें
शेष शायी सातवेंमें शिवदेव = (यक्षयक्षिणी) की रचना। अत्र वह ॥ और सातवे भागके बिच
दस भागकर सातवे भागमें जिन तीर्थकरकी दृष्टि रत्नका कहा है। आठवें भागमें चंडी भैरव
और नौवें भागमें छत्र चामरधारी इन्द्रादि त्रयो क्षीरार्णव और क्षीरार्णवके दृष्टि विषयके पाठोंमें
नहिषत् तफावत है।

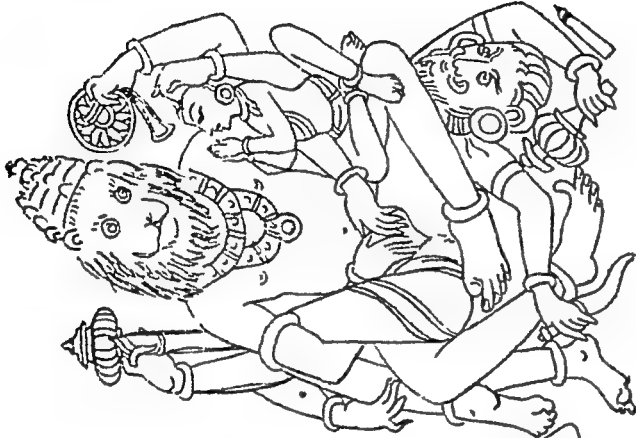
ठन्कुर फेर वास्तुसारमें दस भागकर जिन दृष्टिको सातव भागसे भी नीचे रत्नको
रहते हैं। उसके विभाग श्लोकमें दिये हुए हैं। दीगम्बरार्चय वसुनदी इन प्रतिष्ठासारमें
कहते हैं।—

"द्वारकी ऊँचाईके नौ भाग कर, नीचेके छ भाग और उपरके दो भाग छोट देना।
बाँकी सातवाँ भाग जो रहा, उसके नौ भाग कर उसके सातवें भागमें प्रतिमाकी दृष्टि
रचना।" इस तरह दोना जैन मत भी दृष्टि विषयमें एक सूत्रमें नहीं है, मतभेद हैं।

विष्णु-दशावतार-१



१ वामन



२ दशसिंह



३ बराह



४ कच्छ



५ मत्स्य

गर्भगृहमां देव स्थापन करवाना विभाग कहे छे. प्रासादना गर्भगृहना ये लाग करी द्वार तरफनो लाग छोडी मध्य-गर्भथी पाछण सिंत सुधीना अर्ध लागमां अट्ठावीश लाग करवा. तेमां मध्य गर्भना प्रथम लागमां शिवलिंग मध्ये स्थापन करवा. परंतु ते कंठके इशान तरफ (पा-अर्धो द्वारा बेटला) स्थापन करवा अन्य मूर्तियोंने कानना मध्य गर्भ के बाहुना गर्भ के पगनी घुंटीना गर्भ के अंभ कहेला पटना गर्भ देवोनी स्थापना करवी. ६-१०.

गर्भगृहमें देवस्थापन करनेके विभाग कहते हैं । प्रासादके गर्भगृहके दो भाग कर द्वारकी तरफके भागको छोड़कर मध्य-गर्भसे पीछे दिवार तकके अर्ध भागमें अट्ठाईस भाग करना । उसमें मध्यगर्भके प्रथम भागमें शिवलिङ्गको मध्यमें स्थापन करना । लेकिन उसे कुछ इशानकी तरफ (पा, आवे धागेके बराबर) स्थापन करना । अन्य मूर्तियोंको-कानके मध्यगर्भमें या बाहुके गर्भमें या पाँवकी घुंटीके गर्भमें इस तरह बताये हुए गर्भमें देवोंकी स्थापना करना । ९-१०.

यह मतमतांतर देखते, एक दृष्टांत रूपमें जो २-गज १७-आंगुलके द्वारकी ऊँचाई लेकर, जिनदेवकी दृष्टिको दृष्टांत रूपमें गिनते—

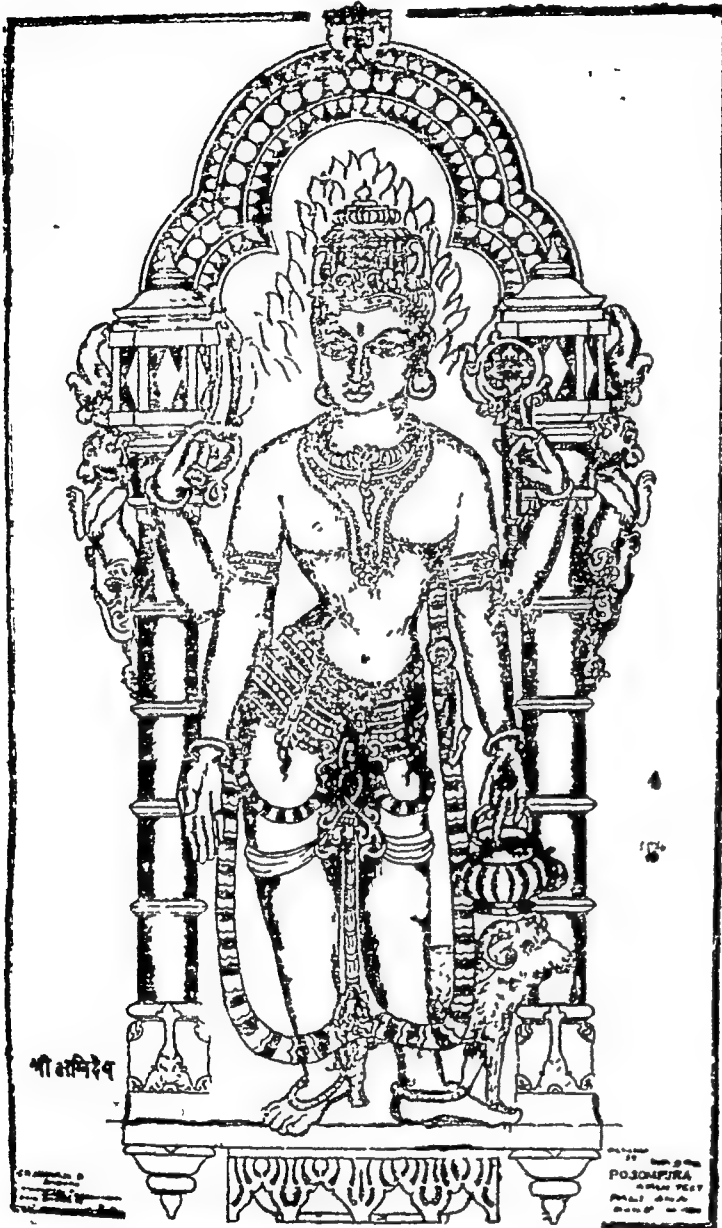
द्वितीये हेमगर्भस्तु नकुलीशस्तृतीयके ।
 चतुर्थे चैव सावित्री रुद्रः स्यात् पंचमे पदे ॥११॥
 षष्ठि स्यात् पद्मकस्तु सप्तमे च पितामहः ।
 अष्टमे वसुदेवश्च नवमे च जनार्दनः ॥१२॥
 दशमे विश्वरूपस्तु अग्निदेवं एकादशे ।
 द्वादशे भास्करश्चैव दुर्गास्याश्च त्रयोदशे ॥१३॥
 चतुर्दशे विघ्नराजो ग्रहाणां दशपंचके ।
 पौंड्र मातरो देवि गणसप्तदशै तथा ॥१४॥
 भैरवं च तदग्रे च क्षेत्रपाल तथापरे ।
 विंशति यक्षराज च हनुमत् पदाधिके ॥१५॥
 द्वाविंशे मृगधोरिंद्र ईश्वरं च पदाधिके ।
 [चतुर्विंशे भवेत् दैत्यो राक्षसश्च पदाधिके] ॥१६॥
 [पिशाचश्चैव पञ्चविंशे भूतश्चैव तथा परे] ।
 तस्याग्रे पदं गूढं क्रमेण स्थित देवता ॥१७॥

भीम लागे प्रह्ला सावित्री, त्रीन लागे नकुलीश (पाशुपत दैव) चैथा
 लागे सावित्री, पायभा लागे रुद्र, छक्का लागे कार्तिके स्वामी, मातभा लागे
 प्रह्ला, आठभा लागे वसुदेव, नवभा लागे जनार्दन, दशभा लागे विश्वरूप (ज्येष्ठ
 आठथी दश भागभा विष्णु स्वरूप) अग्यारभा लागे अग्निदेव, बारभे सूर्य,
 तेरभे लागे दुर्गा, चौदभे गणपति, पदरभे अहो, सोणभे लागे मातृकादेवीज्यो,
 सत्तरभे लागे गणेश-अठारभा लैरव, ओगण्डीशभा लागे क्षेत्रपाल, बीशभा लागे
 यक्षराज ज्येष्ठबीशभा लागे मृगधारेन्द्र, त्रेवीशभा लागे अधार शिव, चैवीशभा
 लागे दैत्य, पन्चीसभे राक्षस, छन्वीसभे पिशाच, सत्तावीशभे लागे भूतनी

	अगुल	धागा	नीची
अपराजित सूत्रकी दृष्टि उत्तरगते	९	१।	„
ठक्कुरफेर वास्तुसारके मतसे	१८	०	„
आ० वासुनदीके मतसे	१९	१।।	„
दीपार्णव ग्रन्थका मतसे	२२	२।।।	„

इस तरह कोई पुराने स्थल पर दृष्टि नीची दिखती हो तो दोष देखनेसे पहले शालोक
 निर्णय करना । सर्वसामान्य मत-आठवें भागभा-सातवें भागके मतको मिलता जुलता है ।
 और वह वर्तमानमें विशेष व्यवहारमें हैं ।

मूर्तिनी स्थापना करवी. ओथी भील पदो शुन्य ज्ञाणवा. आ रीते गर्भगृहना अठ्ठावीश भागना मंडणोमां मूर्ति स्थापनानो कम ज्ञाणवो. ११ थी १७. [] मां दीधेव १६मो श्लोक ओक शुद्ध प्रतिमां इक्त आपेव छे भील प्रतोमां नथी.



तोरण-गजसिंह विरालिका युक्त अग्निदेव ।

[.] कौसमें दीया हुआ १६ वे श्लोक शुद्ध प्रतिमें फक्त है ।

दूसरे भागमें ब्रह्मा, शालीग्राम, तीसरे भागमें नकुलीश (पाशुपत शिव) चाथे भागमें सावित्री, पाँचवें भागमें रुद्र, छठे भागमें कार्तिक स्वामी, सातवें भागमें ब्रह्मा, आठवें भागमें वासुदेव नवमें भागमें जनार्दन विष्णु स्वरूप, दशमा भागे विश्वरूप, ग्यारहवें भागमें अग्निदेव, बारहवें भागमें सूर्य, तेरहमें देवियाँ, चौदवें गणेश, पंदरमें ग्रहो, सोलहवें मातृकादेवी, सत्रहवें भागमें गणों, अठारहवें भागमें भैरव, उन्नीसवें भागमें क्षेत्रपाल, बीसवें भागमें यक्षराज, इक्कीसवें भागमें हनुमानजी, बाईसवें भागमें मृगधोरेन्द्र, तेईसवें भागमें अघोरशिव, चौबीसवें भागमें दैत्य, पच्चीसवें राक्षस, छत्तीसवें पिशाच, सत्तावीसवें भागमें भूतकी मूर्तिकी स्थापना करना । इससे दूसरे पदोंको शून्य जानना । इस तरह गर्भगृहके अठ्ठाईश भागके मंडलोंमें मूर्तिस्थापनाका क्रम जानना । ११ से १७

वर्तमान विद्वानोंमें एक मतभेद प्रवर्तता है, दृष्टिसूत्र जो आया हो उसके खसरेज आँखकी किकीके मध्यका सूत्र एक सूत्रमें रखना चाहिये । और उसे शिल्पी वर्ग अनुसरता है । अभी जैन विद्वानों “सप्तमा सप्तमें” का अर्थ सातवेंमें अर्थात् सातवेंकी अंदर नीचे ऐसा अर्थ करते हैं । जब शिल्पियों सातवेंका सा वें ही जो विभाग आया हो वहां ही दृष्टि रखनेका मानते हैं । जैन विद्वानों उसमें ध्वज, गज, सिंह आय मीलानकी व्यर्थ कोशिश करते हैं और दृष्टि निचा उतारनेके लिये कहते हैं । परंतु यह आयमेल मण्डन सूत्रधारके सिवा कीसी भी पुराने ग्रंथमें आय मीलानका कहा नहीं है । ब्रह्माण्व अ० १४७ में दृष्टिसूत्रको एक वालाग्र भी न लोपरेके लिये कहते हैं । जो उसका लोप करे तो दोष कहा है ।

कार्य सिद्धिके समय शिल्पियोंको ऐसे मत मतान्तरके वितंडावादमें न उतरके जैसै विद्वानों अपना मतका आग्रह करे तब वैसा करना ।

(પેજ ૧૦૦ કી ટીકા ચાલુ)



વિષ્ણુ

(ત્રીસમા આપેલા અને
૧૬ મા શ્લોકનો ઉત્તરાર્ધ અને
૧૭ મા શ્લોકનો પૂર્વાર્ધ શ્રીરા-
ણવની કેટલીક પ્રતોભા નથી)



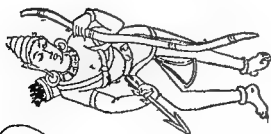
૧૦ કલ્પી



૬ લુહ



૮ કૂળ



૭ રામ



૬ પરશુરામ

દેવ પ્રતિમા આપન પદ
વિભાગ - સબધમા શ્રીરાણવ
દીપાણવ, રાન ગનકોશ, અને
મુગ સતાન અપગનિત-આ
મન અથમા એક મતે અકુનીશ
ભાગનો મત સ્વીકારે છે પરંતુ
વાસ્તુરાજ ગર્ભગૃહના દશ ભાગ
કહે છે, ૬૬કુટ ફેર વાસ્તુસાર
પાય ભાગ કહે છે દેવતામૂર્તિ
પ્રસ્થરણમ્ અને મયમતમ્ ૪૯ ભાગ
કહે છે સમરાક્ષણ સૂત્રધાર દશ
અને ૮ ભાગ કહે છે અને,
સૂત્રધાર નિરપાય વિરચિત પ્રાસાદ
તિલક પણ પાય ભાગ કહે છે

દેવના મૂર્તિ પ્રકરણમા-
ગર્ભ ગૃહાર્ધના ઓગણ પચાસ
ભાગ કરવા તેમા ગર્ભથી પહેલો
ભાગ બ્રહ્માશ-નન ભાગ દેવાગ,
તે પછીના સોળ ભાગ માનુષાશ
અને તે પછીના ચોવીસ ભાગ
પિશાચ (મળી કુલ ૪૯ ભાગ
થયા) બ્રહ્માશમા બિગ આપના
કરની, બ્રહ્મા વિષ્ણુ સ્થાપન
કરવા, માનુષાશમા સર્વ દેવ
અને પિશાચકમા માતર, યલ,
ગધર્ન રાક્ષસ, ભૂત આદિની
આપના કરવી આ ઓગણ
પચાસ વિભાગનુ દેવતાપદ સ્થા-
પન દ્રવિડ અથ મયમતમ્ મા
પણ આપેન છે

સમરાક્ષણ સૂત્રધાર અં ૭૦ મા મહારાજ ભોજન દેવ કહે છે કે

વિષ્ણુસ્થાને ઉમાદેવી બ્રહ્મસ્થાને સરસ્વતી ।
સાંવિત્રી મધ્યદેશે તુ લક્ષ્મી સર્વત્ર દાપયેત્ ॥૧૮॥

મર્કતે પ્રાસાદગર્ભર્થે દશઘા પૃષ્ઠ ભાગતઃ
પિશાચ રક્ષોદનુજાઃ સ્થાપ્યાગંધર્વગુહ્યકાઃ
આદિત્યશ્ચંડિકા વિષ્ણુ બ્રહ્મેશાનાઃ પદંક્રમાત્ ।

સમંતરાક્ષણ સૂત્રધોરં

પ્રાસાદના ગર્ભગૃહના અર્ધમાં પછીત તરફ ૧૦ ભાગ કરવા તેની પછીતથી પહેલા ભાગમાં પિશાચ, બીજામાં રાક્ષસ, ત્રીજામાં દૈત્ય, ચોથામાં ગંધર્વ પાંચમા યક્ષ છઠ્ઠામાં સૂર્ય, સાતમામાં ચંડી દેવી, આઠમામાં વિષ્ણુ, નવમામાં બ્રહ્મા અને દશમાંમાં મધ્યે શિવલિંગની સ્થાપના કરવી એમ અનુક્રમે પદ સ્થાપના બોલેલી. સૂત્રધાર રાજસિંહ કૃત વાસ્તુરાજ પણ દશભાગ બુદ્ધી રીતે કહે છે.

ગર્ભાર્ધે દશભિ મર્કતે મધ્યેલિઙ્ગન્યસેત્તતઃ
વિધિ હરિમુમા સૂર્ય બુધં શક્રં જિનં તથા ॥
માતૃગણેશ ગંધર્વાન્ યક્ષાન્ ક્ષેત્રેશદાનવાન્
રક્ષોઽગ્રહાન્ ક્રમાન્માતૃઃ પિશાચં મિત્તિકાવધિ ॥ વાસ્તુરાજ

ગર્ભગૃહના પાછળના અર્ધભાગના દશ ભાગ કરવા. તેમાં મધ્યે ગર્ભે શિવલિંગની સ્થાપના કરવી. ૧. બ્રહ્મા. ૨. વિષ્ણુ ૩. ઉમા ૪. સૂર્ય. ૫. બુધ. ૬. શનિ ૭. જિન ૮. માતૃ ગણેશ ૯ ગંધર્વ યક્ષ અને ક્ષેત્રપાળ અને ૧૦ દસમા ભાગમાં દાનવ રાક્ષસ ગ્રહ ચંડી અને પિશાચની મૂર્તિઓની સ્થાપના અનુક્રમે કરવી. શ્રી જિનદત્ત સૂરિજીના નીતિશાસ્ત્રના અર્થ વિવેક વિલાસ માં નીચે પ્રમાણે પાંચ ભાગ કહે છે.

પ્રાસાદગર્ભેગૃહાર્ધ મિત્તિતઃ પંચઘાકૃતે
યક્ષાઘાઃ પ્રથમે ભાગે દેવ્યઃ સર્વ દ્વિતીયકે ॥૧॥
જિનાર્ક સ્કંદ કૃષ્ણાનાં પ્રતિમાઃ સ્યુસ્તૃતીયકે
બ્રહ્મા ચતુર્થ ભાગે સ્યાલિંગમીશસ્ય પંચમે ॥૨॥

:વિવેકવિલાસ

પ્રાસાદના ગર્ભગૃહના અર્ધ ભાગના ભીત તરફના અર્ધમાં પાંચ ભાગ કરી પહેલામાં યક્ષ, બીજામાં સર્વ દેવદેવીઓ, ત્રીજામાં જિન, સૂર્ય, કાર્તિકેય સ્વામી અને કૃષ્ણ ચોથામાં બ્રહ્મા અને પાંચમા ભાગમાં બ્રહ્મા અને મધ્ય ગર્ભમાં શિવલિંગની સ્થાપના કરવી.

આ પ્રમાણે સમશબ્દના બીજા મતે પ્રાસાદ તિલક અને વિવેકવિલાસના મતે આસન એટલે પચાગણુ એવો અર્થ શિલ્પી વર્ગમાં પ્રવર્તે છે. પરંતુ ક્ષીરાણુવ દીપાણુવ અને અપરાજિત અને જ્ઞાનરત્નકોશ જેવા પ્રાચીન ગ્રંથો-પ્રતિમા સ્થાપનના વિભાગ કહે છે. તે દેવ પ્રતિમાનાં જ્ઞાનના ગર્ભે, આહુના ગર્ભે કે પગના ગર્ભે સ્થાપન કરવાનું સ્પષ્ટ કહે છે. બ્રહ્મા અને વિષ્ણુની મૂર્તિઓની સ્થાપના પ્રાચીન મદિરામાં તે રીતે જોઈએ છીએ તેમાં મૂર્તિ કરતી ગર્ભગૃહમાં પણ પ્રદક્ષિણા કરે તેટલી જગ્યા પાછળ રહે છે. પરંતુ જિન

वितरागो विघ्नराजे ये उक्ता जिनशासने ।
 मातृमंडलमध्ये तु देवीना समस्तके ॥१९॥
 पर्यंकासनोर्ध्वार्चा स्थान विष्णुरूपाणि यानिच ।
 विष्णुस्थाने जलशायी वराहस्तत्पदेस्थितः ॥२०॥

प्रतिमा पाछा आची जग्या हल्लु जेवाभा आनी नदी जिन प्रभुने आ सत्र पध-
 भेसतु उदाय न होय, तेम परतु पडितपद्ध जिनायतनगा के नाना गल गृहभा जे अर्धना
 पायभा लागना पायभा लागना त्रीज लागे प्रतिमाच पधगवनागा आवे तो पूजकेने
 हस्या हस्यानी जग्यानी भुशकेयी उली थाय आशी जिपी वगे जैन प्रतिमा स्थापन भाटे
 भउन सत्रधागने नीयेने भत वतु मीडागे छे

पदाधो यक्षभूताद्या पद्माग्रे सर्वदेवता ।
 तदग्रेवैष्णवं ब्रह्मा मध्येलिङ्गा शिवस्य च ॥७॥

प्रासाद मंडन ॥ अ० ६ ॥

गल गृहना पाछा पाट लागत नीये यक्ष भूतादि देवा भेसाउना पाट छोडीने आगण
 भीज देवा भेसाउना तेनाथी आगण ब्रह्मा अने विष्णु अने मध्यगले निवजिगनी स्थापना
 हरी पाट छोडीने जैन प्रतिमा पधरावनागा सत्रने जिपी वगे वधु प्रभाश्रिउ भाने छे
 अर्धना पाय लाग करी त्रीज लागे सिद्धायन पणायथु जग्यानु प्रभाश्रु मानी तेम हरे
 छे जे के भडागज भाजदेन समनगथु सत्रधागभा हरे छे के गलना च लाग करी पाछये
 लीत तगने छे लाग छोडी पायभा लागभा मर देवताओनी स्थापना हस्यानु स्थूण
 प्रभाश्रु आपे छे ते उष्ट भउनना भतने भगतु आवे व्यहगभा प्रासादभजनेने
 भत शिपी वगेभा अयनित छे पाट नीये प्रतिमाचनी मर श्रोटी गभी भीजे लाग
 पाटथी प्दार राभ्यानी प्रधाने आचार्य देव श्री जिजयनेमि भुगीश्वर अनुसंगाने जग्यावता

देव प्रतिमा स्थापन पर विभागके मध्यमे क्षारार्णव, दीपार्णव-ज्ञानरत्नकोश और सूत्र-
 सतान अपराजित इन सत्र ग्रंथोंमें जट्टाईम भागके मतम स्वीकार है। परंतु वास्तुराज गर्भगृहके
 दस भाग करता है। ठन्डुर फेर वास्तुमाग विवक विंश पौंच भाग कहता है। देवता
 मूर्ति प्रकरण और मयमतम् ४० भाग कहत है। समराक्षण सूत्रधार दस और छ भाग
 कहता है। और सूत्रधार विरपाल विरचित प्रासादतिलक भी पौंच भाग कहता है।

देवता मूर्ति प्रकरणमें-गर्भगृहार्थके उनचास भाग करना। उमम गर्भसे प्रथम भाग ब्रह्माश
 उसमे नौ भाग द्वादश वादके सोलह भाग मनुषाश और उसके बादके उपर चौबीस भाग
 पिशाचक (मिलनर कुठ ४० हुए) ब्रह्माशमे, लिङ्ग स्थापना करना। द्वादशमे ब्रह्मा विष्णुका
 स्थापन करना। मानुषाशमे सर्व देव और पिशाचकमे मातर यक्ष, गधर्व, राक्षस, भूत आदिकी
 स्थापना करना। इन उनचास विभागमा द्वादश पद स्थापन द्रविड ग्रंथ 'मयमतम्'में भी दिया
 हुआ है। "प्रासादके गर्भगृहकी दिवारके तरफके अर्ध भागमें दस भाग करना। उसकी दिवारसे
 पहले भागमें पिशाच, दूसरेमें राक्षस, तीसरेमें देव, चौथेमें गधर्व, पाँचवेंमें यक्ष, छठवेंमें
 सूर्य, सातवेंमें चंडी देवी, आठवेंमें विष्णु, नौवेंमें ब्रह्मा और दसवेंमें अर्थात् मध्यमें शिवलिङ्गकी
 स्थापना करना। इन तरह अनुक्रमसे पद स्थापनाका जानना" (समराक्षण सूत्रधार) सूत्रधार

विष्णुरूपाणि सर्वाणि मत्स्यादि नवमेपदे ।

हरि शंकरे वराह मूर्तिर्विष्णुस्थाने प्रदीयते ॥२१॥

अर्धनारीश्वरं देवं रुद्रस्थाने प्रकल्पयेत् ।

सप्तमे ब्रह्मसंस्थाने मिश्रमूर्ति संस्थापयेत् ॥२२॥

विष्णुना भागे उमादेवी. प्रह्लादा भागे सस्वती ने सावित्रीदेवी. प्रह्लादा मध्य

राजसिंह कृत 'वास्तुराज' भी दस भागका अलग रीतसे कहता है। "गर्भगृहके पीछे के अर्ध भागके दस भाग करना। उसमें मध्यमें, गर्भमें शिवलिङ्गकी स्थापना करना। पहलेके ब्रह्मा, २ विष्णुजी ३ उमा ४ सूर्य ५ बुध ६ इन्द्र ७ जिन ८ गणेश ९ गंधर्व यक्ष और क्षेत्रपाल और दसवे भागमें दानव राक्षस ग्रह चंडी और पिशाचकी मूर्तियोंकी स्थापना अनुक्रमसे करना।" ('वास्तुराज')

श्री जिनदत्त सूरिजीके नीतिशास्त्रके ग्रंथ 'विवेकविलास'में इस तरह पाँच भाग कहे हैं। "प्रासादके गर्भगृहके अर्ध भागकी दिवारकी तरफ अर्धमें पाँच भागकर पहलेमें यक्ष, दूसरेमें सर्व देव-देवियों, तीसरेमें जिन, सूर्य, कार्तिक स्वामी और कृष्ण, चौथेमें ब्रह्मा, और पाँचवे भागमें ब्रह्मा और मध्यगर्भमें शिवलिङ्गकी स्थापना करना।" (विवेक विलास)

इस तरह समराज्जणके दूसरे मतमें प्रासाद तिलक और विवेकविलासके मतमें आसन अर्थात् पद्मागण ऐसा अर्थ शिल्पी वर्गमें प्रवर्तता है, परंतु क्षीरार्णव, दीपार्णव और अपराजित और ज्ञानरत्नकोश जैसे प्राचीन ग्रंथों प्रतिमा स्थापनके विभाग कहते हैं। इस देव प्रतिमाके कानके गर्भमें, बाहुके गर्भमें, या पाँवके गर्भमें स्थापन करनेके लिये स्पष्ट कहा गया है। ब्रह्मा और विष्णुकी मूर्तियोंकी स्थापना प्राचीन मंदिरोंमें उसी तरह देखते हैं। उसमें मूर्तिके फिरते गर्भ गृहमें भी प्रदक्षिणा करे इतनी जगह पीछे रहती है। परंतु जैन प्रतिमाके पीछे ऐसी जगह अभी देखनेमें नहीं आती है। जिन प्रभुको यह सूत्र लागु हो या न भी हो, लेकिन पंक्ति बद्ध जिनायतनमें या छोटे गर्भगृहमें जो अर्धके पाँच भागके तीसरे भागमें प्रतिमाजीको बिठाया जाय तो पूजकोंको चलने फिरनेकी जगहकी मुश्किल होती है। इससे शिल्पी वर्ग जैन प्रतिमा स्थापनके लिये मंडन सूत्रधार नीचेका मत ज्यादा स्वीकारता है।

"गर्भगृहके पीछले पाट-भारवटके नीचे यक्ष भूतादि उग्र देवोंको बिठाना। पाटको छोड़ कर आगे दूसरे देवोंको बिठाना। उससे आगे ब्रह्मा और विष्णु और मध्य गर्भमें शिवलिङ्गकी स्थापना करना। (७ प्रासाद मंडन ॥ अ० ६ ॥)"

पाटको छोड़कर जैन प्रतिमाको बिठानेके सूत्रको शिल्पी वर्ग ज्यादा प्रामाणिक मानता है। अर्धके पाँच भागकर तीसरे भागमें सिंहासन-पवासण करनेका प्रमाण वैसा-शिल्पी वर्ग करता है। यद्यपि महाराज भोजदेव समराज्जण सूत्रधारमें कहते हैं कि "गर्भगृहके छः भागकर पीछले दिवारकी तरफके छठे भागको छोड़कर पाँचवे भागमें सर्व देवताओंकी स्थापना करनेका स्थूल प्रमाण देते हैं।" वह कुछ मंडनके मतसे मिलता जुलता है।

व्यवहारमें प्रासाद मंडनका मत शिल्पी वर्गमें प्रचलित है। पाटके नीचे प्रतिमाजीकी अर्ध चोटी रखकर दूसरे भागका पाटसे बाहर रखनेकी प्रथाको आचार्य देवश्री विजय नेमि-सूरीश्वरजी अनुसरनेके लिये कहते थे।

लागे अने लक्ष्मील (विष्णुना) डोहपणु लागे स्थापन करी शंकाय जिन तीर्थ कर वीतराज अने जिन शासनना देव देवीओ (यक्ष यक्षणी) ने विघ्नराज-गणेशना स्थाने यौहमा लागे स्थापन करवा यधी देवीओनी भूर्तिओ मातृका म उगमा स्थापनी विष्णुनी पद्मासने के जली के शेषशायी अने वराहादि, मत्स्यादि दशावतारनी भूर्तिओ विष्णुना नवमा लागमा स्थापनी विष्णु श कर उमानी युग्मभूर्तिओ विष्णुना स्थाने स्थापनी अर्धनारीश्वरनी भूर्ति इद्रना स्थाने पधरावनी प्रह्मना सातमा लागमा मिश्रभूर्ति, त्रिभूर्ति, युग्मभूर्ति (हरिहर, आदि प्रह्मा विष्णु के शिवनी मिश्रभूर्तिओ)नी स्थापना करवी १८ थी २२

विष्णुके भाग पर उमादेवी, ब्रह्माके भाग पर सरस्वती, सावित्री (ब्रह्माके) मध्य भाग पर और लक्ष्मीजी (विष्णुके) कोई भी भाग पर स्थापन हो सकते हैं। जिन तीर्थकर वितराग और जिन शासनके देव देवीओं (यक्षयक्षणी) को विघ्नराज-गणेशके स्थान पर चौदहवे भाग पर स्थापन करना। सब देवियोंकी भूर्तियाँ मातृकामण्डले स्थापना। विष्णुकी पद्मासनमे या रडो या शेषशायी और वराहादि मत्स्यादि दशावतारकी भूर्तिओ विष्णुके नौवें भागमे स्थापना। विष्णु, शंकर, उमाकी युग्मभूर्तियाँ विष्णुके स्थान पर स्थापना। अर्धनारीश्वरकी भूर्ति रुद्रके स्थान पर पधराना। ब्रह्माके सातवें भागमे मिश्रभूर्ति, त्रिभूर्ति, युग्मभूर्ति (हरिहर आदि ब्रह्मा विष्णु या शिवकी मिश्र भूर्तियों) की स्थापना करना। १८ से २२

त्रिदेव स्थानके चैत्र हरिहरपितामह।

पितामहंच चंद्राकां स्थापयेत्पद भास्करो।

वेदाश्च ब्रह्म संस्थाने ऋषिणां पद भास्करो ॥२३॥

हरिहर, पितामहनी त्रिदेवनी भूर्ति प्रह्मना पदे स्थापन करवी पितामह-प्रह्मा रुद्र ने सूर्य अने ऋषियोंनी भूर्तिने अने वेद भूर्तिओने प्रह्मानी साथे पधरावनी २३

हरिहर, पितामहकी त्रिदेवकी भूर्ति, ब्रह्माके पद पर स्थापन करना। पितामह-ब्रह्मा चंद्र और ऋषियोंकी भूर्तिको और वेदभूर्तिओको ब्रह्माके साथे पधराना। २३

इति श्री विश्वकर्मा कृताया क्षीरार्णवे नारद पृच्छायां देवता दृष्टिपद

स्थापनाधिकारे शताष्टमेकादशमोऽध्याय ॥११॥ क्रमांक अ० १३

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवे नारदपुत्रे पृच्छा देवता दृष्टिपद स्थापनाधिकारतो शिष्यविशारद स्वपति श्री प्रभाशंकर ओषधालाभके स्वेली गुणरत्न लापानी सुप्रभा नामनी टीकातो अष्टमो अध्याय १११

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवे नारदजीके सवादरूप देवता दृष्टि पद स्थापना-धिकारका शिल्प विशारद स्वपति श्री प्रभाशंकर ओषधभाई सोमपुरा रचित सुप्रभा नामका भाषा टीकाका अध्याय ॥१११॥ (क्रमांक अ० १३)

विविध ग्रंथसूते देवता दृष्टिस्थान विभाग दर्शावतुं कोष्टक

क्षीरार्णव दीपार्णव द्वारोदयका ३२ विभागे दृष्टिस्थान

क्षीरार्णव दीपार्णव मत	सूत्रसंतान अपराजित देवतामूर्ति प्रकरणका मत	ठक्कुरफेरु वास्तुसार मत
३२ ०	६४-०	१०-०
३१ भूतप्रेत राक्षस	६३-वैताल	
३० ०	६१-भैरव	
२९ भैरव चण्डि	५९ चण्डि	९-छत्र चामुण्डारी देवी
२८ ०	५७-अघोर रुद्र	
२७ ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, सूर्य	५५-ब्रह्मा-विष्णु, रुद्र-जिन	
२६ चन्द्र	५३-हरसिद्ध	
२५ जित्त	५१-पद्मासन त्रिमूर्ति	८-चण्डिका
२४ सरस्वती	४९-गणेश-शारदा	
२३ ०	४७ ब्रह्मा	
२२ ०	४५-लक्ष्मी नारायण	७-शासनदेव देवियाँ
२१ लक्ष्मी	४३-ऋषिमुनि नारद	६-जिन प्रभु
२० दुर्गा-नारदादि ऋषि ब्रह्मयुग्म	४१-ब्रह्मा सावित्री	दश भागमें सातवें भागे
१९ ०	३९-बुद्ध	६-चित्रलेप प्रतिमा
१८ उमा, रुद्र, विष्णु, लक्ष्मी	३७ उमा रुद्र	
१७ ०	३५-भृंगवराह	
१६ यक्षराज	३३-यक्ष कुबेर	६-वराह
१५ ०	३१-मातर	
१४ मातृकाओ	२९-गरुड	
१३ ०	२७-शेषशयिन	
१२ शेषशयिन	२५-शेष नाग	४-लक्ष्मी नारायण
११ ०	२३-व्यक्तशिव	
१० हर मूर्ति	२१-व्यक्ताव्यक्त लिङ्ग	
९ ०	१९-अव्यक्त लिङ्ग	३ शेषशयिन
८	१७-	
७	१५-	
६	१३-	२-शिवशक्ति
५	११-	
४	९-	
३	७-	१-शिवलिंग
२	५-	
१	३-	
	१-	

शिवलिङ्ग

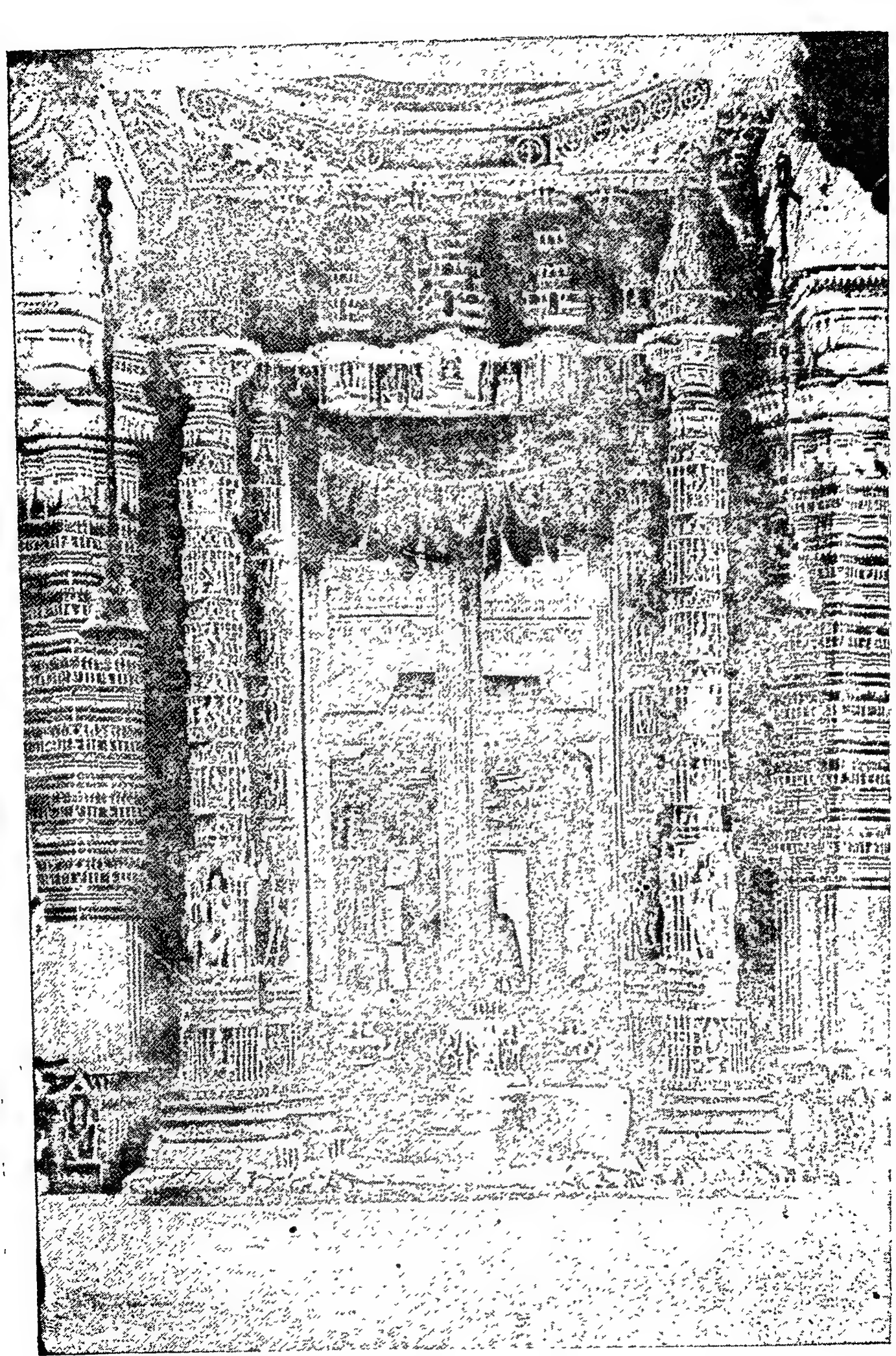
देवतामूर्ति प्रकरणम् तथा अपराजित-सूत्रसन्तान का मते द्वारोदयका ६४ विभागे दृष्टिस्थान

शिवलिङ्ग

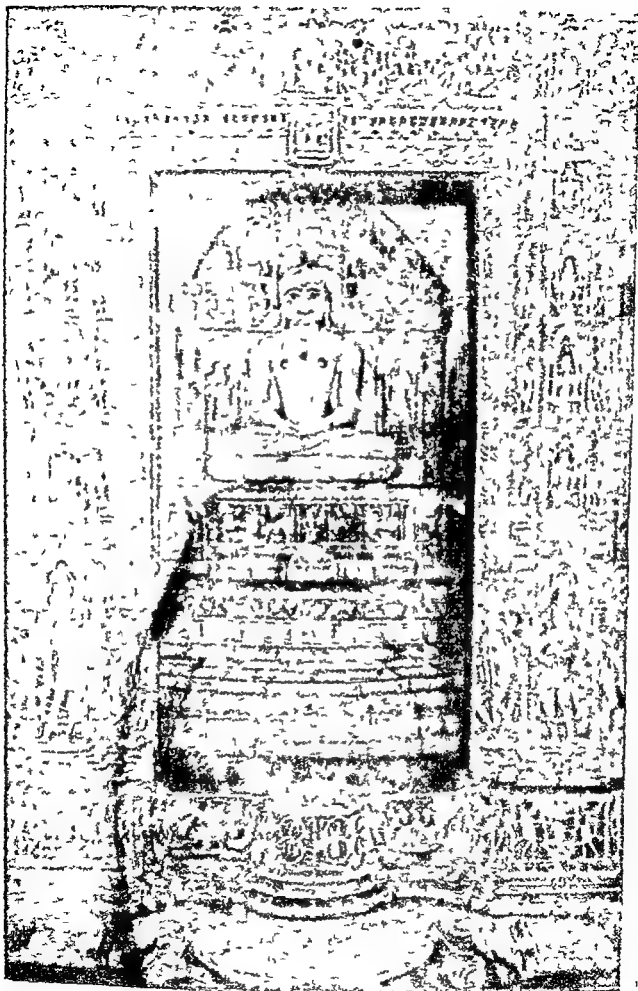
ठक्कुरफेरु वास्तुसार मते द्वारोदयका दश भागके सातमा भागे दश भाग करके इसके सातवा भागे जिनदृष्टिमान

देवता पद स्थापन विभाग पृथक् पृथक् ग्रंथो का मतमतान्तर का कोष्टक

क्रम क्रम	१ क्षीरार्णव २ टीपा- र्णव ३ ज्ञानरत्नकोश ४ अपराजित	समराङ्गण सूत्रधार का मत भातसे दश भाग	प्रासादतिलक वस्तुसार विवेक विलास भीतसे भाग पाच भाग	देवमामूर्ति प्रकरण मयमतम ४९ भाग
०८	०	१	०	
२७	पिशाच			
०६	भूत वैताल			
०५	राक्षस	२ राक्षस	१ यक्षगन्धर्व क्षेत्रपाल	— पिशाच— २६ पिशाच— मातृका यक्ष गन्धर्व राक्षस भूतादि
०४	दैत्य			
०३	अघोर			
२२	रुद्र घोर	३ दैत्य		
०१	हनुमान			
००	यक्षराज			
१९	क्षेत्रपाल	४ गन्धर्व	२ देव और देविका	
१८	भैरव			
१७	गण			
१६	मातृका लक्ष्मी सर्व देवीआ	५ यज्ञ		— २४ भाग मातृका— सर्वदेव स्थापन
१५	ग्रहो			
१४	गणेश लक्ष्मी वितराग जिन			
१३	दुर्गा लक्ष्मी	६ सूर्य	३ कृष्ण जीन सूर्य कार्तिक	
१२	सूर्य			
११	अग्नि			
१०	विश्वरूप, उमा, लक्ष्मी	७ चण्डि		
९	जनादेन पद्मासन की ऊर्मी			
८	विष्णु मूर्ति			
७	वायुदेव शेषशायी दशा- वतार शंकर उमा	८ विष्णु	४ ब्रह्मा	— ४ ब्रह्मा— विष्णु स्थापन
६	ब्रह्मा, सरस्वती, सावित्री			
५	हिरण्यगर्भ, मिश्र	९ ब्रह्मा		
४	युग्ममूर्ति			
३	कार्तिक स्वामी			
२	रुद्र अर्ध नारिश्वर	१० शिवलोक मध्यमें	५ शिवलिंग मध्यमें	
१	सावित्री			
	नवुलीश			
	हेमगर्भ शालिग्राम ब्रह्मा			
	शिवलिंग मध्यमें			



समदल स्तम्भ-रूपशाखायुक्त कलामयद्वार. उदम्बर-उत्तरंज लुणीग वसही-देलवाडा-आवुं



रघुनाथायुक्त द्वार उदम्बर-उत्तर-मध्यमें परिकर साथ प्रतिमा देवबाह्य आद्य

॥ अथ शिखर भद्र नासिकादि सर्वेधादि ॥

क्षीराण्व अ० ११२-क्रमांक अ० १४

विश्वकर्मा उवाच —

अतः परं प्रवक्ष्यामि भद्रार्थं शिखरं तथा ।
भद्रार्थं च ततो रिषि ज्ञातव्यं मूलनासिके ॥ १ ॥
भद्रार्थं च त्रिंशति भागं च कर्तव्यं च विचक्षणैः ।
मूल नाशिकं द्विभागं च द्विभागं द्वितीयके ॥ २ ॥
वेदभाग तृतीया तु चतुर्दशममेव च ।
पंचमी फालना कार्या उपागसद्वशा भवेत् ॥ ३ ॥

—इति पंचनाशिक

श्री विश्वकर्मा शिखरना लदना पंचनाशिक डवे डडे छे. डे ऋषि, शिखरना लदना लदना पुण्ड्र सुधीना त्रीश लाग विचक्षण शिल्पीओ करवा. मूल नाशिके डे लाग, गील डालना पणु डे लाग त्रील डालना चार लाग अने आभुं लद चौद लागनुं नाणवुं. पांचमी डालना उपांग प्रमाणे करवी. १-२-३.

श्री विश्वकर्मा शिखरके भद्रके पाँच नासक कहते हैं । हे ऋषि, शिखरके भद्रके भद्रके कोने तकके तीस भाग विचक्षण शिल्पीको करना चाहिये । मूल नाशिक दो भाग, दूसरी फालना भी दो भाग, तीसरी फालना चार भाग और सारा भद्र चौद भागका जानेंदा । पाँचवीं फालना उपांगके अनुसार करना । १-२-३.

यावद्वृस्त प्रमाणेन विस्तृता क्रियते कटिः ।

* तावद्गुल पादेन फालनानां च निर्गमम् ॥ ४ ॥

प्रासाद डेटला हाथनो पडोणो रेणाये डाय तेना प्रत्येक हाथ पापा आंगणी डालनाना नीडाला राखवा. ४.

जितने हाथका चौडा प्रासाद रखा गया हो उसके प्रत्येक हाथ पर १/४ अंगुलकी फालनाके निकाले रखना । ४.

* तावद्गुलमानेन पाठान्तरे ।

१. शिखरना लदमां आवी डालनाओनुं विधान रत्तडेश अने दीपालुध तथा क्षीराण्वमां आपेक्ष छे. अवरावितसत्रमां आ पाठो नथी. पंच सप्त अने नवनाशिक नूना प्रासादोमां करेला नेवामां आवे छे. डेटलाड छलपरथी लदमां आवां नाशिक डाले

चतुर्थ चाण भागं तु पंचमं वसु संयुतम् ।
 षष्ठं वाम पिभागं तु सप्तमे रस संयुतम् ॥८॥
 अष्टमं नवमं चैव फाल्गुना नाम नामतः ।
 अथ न लोपयेद् यस्तु न चाल्यं शिल्पिवुद्धिमान् ॥९॥

इसे छु गिष्मना लक्ष्मिना नव नाशिके छु छु रेखाधी अधालक्ष्मिना
 ऐकत्रीश लाज करवा तेमा पड़ेसी क्षलना ऐक लाज, गीष्म ये लाज, त्रीष्म
 चार लाज, योधी क्षलना पाच लाज, पाचमी क्षलना आठ लाज, छठी क्षलना
 पाच लाज, सातमी क्षलना लक्ष्मिना छ लाजनी नक्षत्री, आठमी अने नवमी
 क्षलना नाम मात्रनी करवी (रेखाये जेटला छथ छेथ तेमा पाया आगलना
 क्षलनाना नीर्गम राखवा) आ प्रभाषे बुद्धिमान शिल्पीये क्षलनायोना लाज
 दोपवा नहि ७-८-९

अब मे शिररके भद्रके नौ नाशक कहता हूँ । रेखासे आगे, भद्रके इक्कीस
 भाग करना । उसमे पहली फालना एक भाग, दूसरी दो भाग, तीसरी चार
 भाग, चौथी फालना पाँच भाग, सातवीं फालना, भद्रार्ध छ भागकी ज्ञानना ।
 आठवीं और नौवीं फालना नाम मात्रकी करना । (रेखाके पर जितने हाथ
 हो उनमे १, १ अंगुलके फालनाके निकाले रखना ।) इस तरह बुद्धिमान
 शिल्पीको चाहिये कि ये फालनाओंके भागको न लोपे । ७-८-९

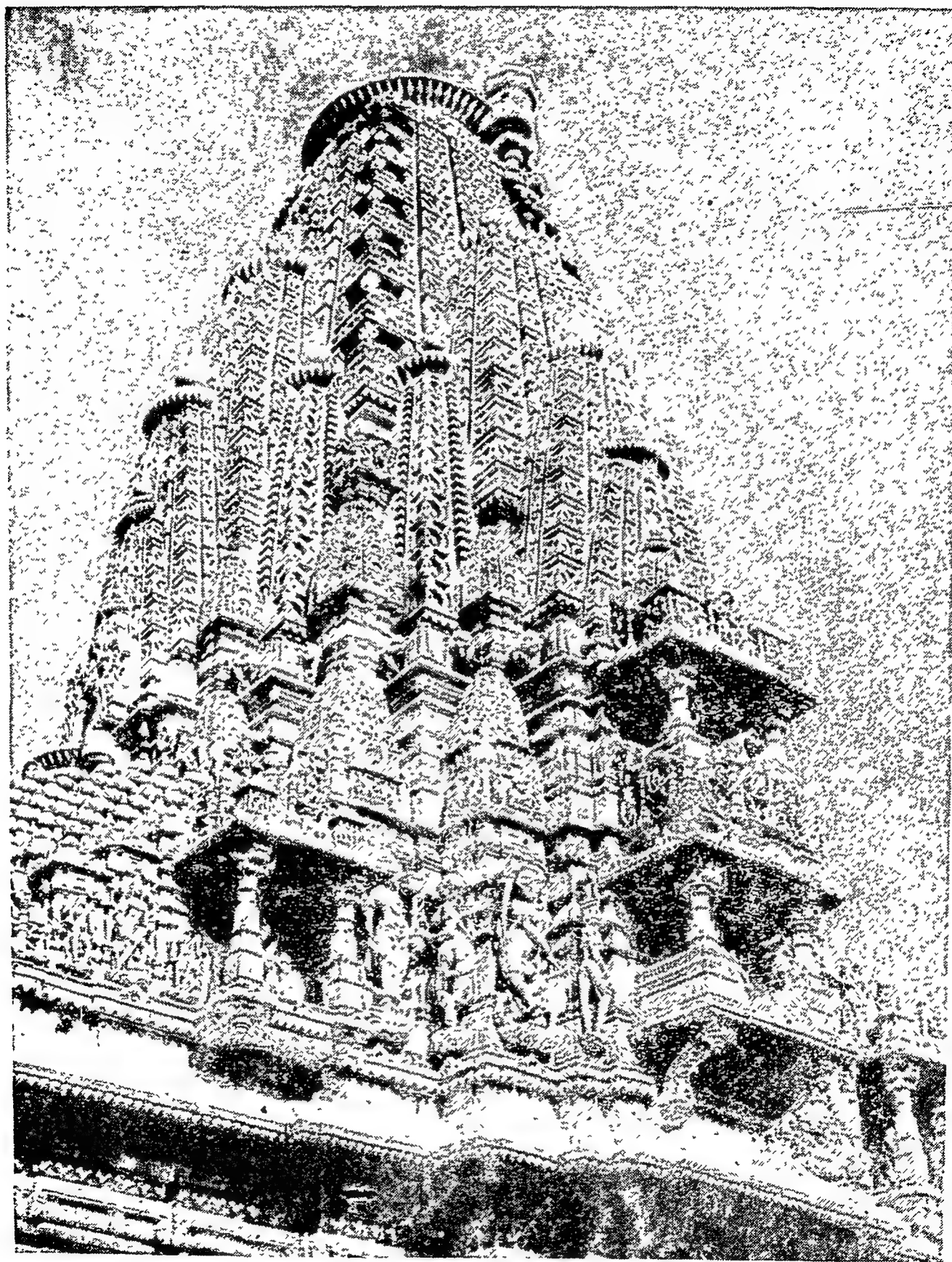
रेखा विस्तारमानेन सपादेतदुन्मयः ।
 त्रिभाग सहितं श्रैव सार्द्धं तु विचक्षणः ॥१०॥

छत्तर छेले शिष्यीये यथावी भूज रेखाधी (१) सवायु शिष्य
 आधुछे करवु (२) १/३ के (३) दोहु छेयु गिष्मरे ऐभ त्रयु प्रकारे बुद्धिमान
 शिल्पीये करवु १०

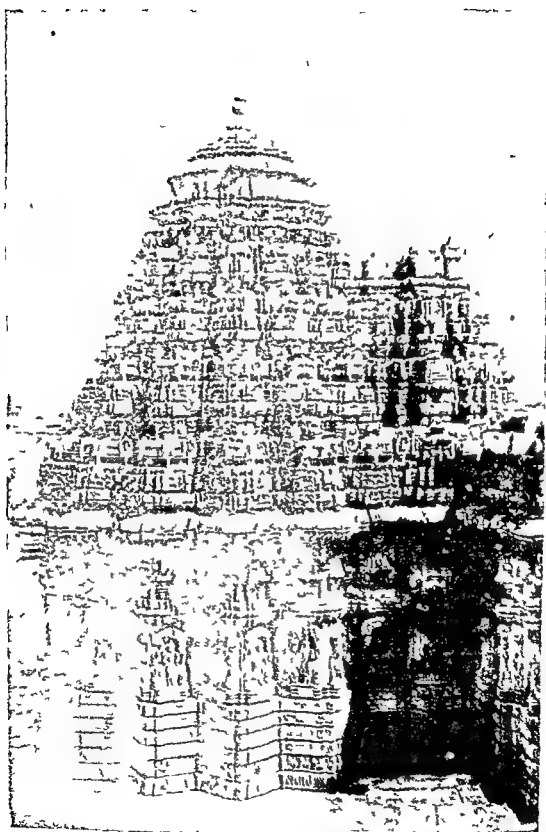
छजे पर कही हुई शिररियोंको चढ़ाना । मूलरेखासे सवा गुना ऊँचा
 शिरर स्के पर करना । १/३ या डेढ गुना ऊँचा शिरर तीन प्रकार बुद्धिमान
 शिल्पीको करना । १०

दशधा मूले पृथुत्वे षड्भागः स्कंध उच्यते ।
 षड्वाहो दोषदः प्रोक्तः पंचाघश्च न सख्यते ॥११॥

भूज शिष्यरना पाचये दश लाज करी छपर आधुछे छ लाज राखवातु



नागर शैलीका अलंकृत शिखर. तेरवीं शताब्दी की प्रतिकृति. पंचासरा पाटण.



बेदुर-हलेबिद (मैसूरराज्य) के कलामय प्रासाद के महापीठ मंदीर और शिखर

કહ્યું છે. છ ભાગથી વધુ રાખવું દોષકારક કહ્યું છે. અને પાંચ ભાગથી ઓછું ન કરવું. (એટલે સાડા પાંચ ભાગ બાંધણે રાખવાથી તે શોભે છે.)

મૂલ શિખરકે પાચે દશ ભાગ કર ઉપર સ્કંધકે પર છઃ ભાગ રચનેકે લિયે કહા હૈ । છઃ ભાગસે અધિક રચના દોષકારક હૈ । ઔર પાંચ ભાગસે કમ ન કરના । (અર્થાત્ સાઢે પાંચ સ્કંધકે પર રચનેસે વહ શોભતા હૈ ।)

ગ્રંથાન્તર—રેખાવિસ્તાર યન્માનં દશભાગ વિધીયતે ।

દ્વિભાગકોણ મિત્યુક્તં ભદ્ર ભાગત્રયં ભવેત્ ॥૧૨॥

પ્રતિરથઃ સાર્દ્ધ ભાગં તુ ઉભયો પરિપક્ષયોઃ ।

સ્કંધનવાંશે સાર્દ્ધદ્વૌ રથકોણો દ્વિભદ્રકમ્ ॥૧૩॥

શિખરના પાચે રેખા વિસ્તારનું જે માન હોય તેના દશ ભાગ કરવા. બે ભાગ રેખા, આખું ભદ્ર ત્રણ ભાગનું અને વચ્ચે પઢરા દોઢ ભાગનો બેઉ તરફનો કરવો (તે રીતે કુલ દશ ભાગ) તે રીતે નીચે દશ ભાગ અને ઉપર નવ ભાગ બાંધણે સ્કંધે કરવા તેના બે ભાગની રેખા. દોઢ ભાગનો પઢરા અને આખું ભદ્ર બે ભાગનું મળી કુલ નવ ભાગ બાળવા. ૧૨-૧૩.

શિખરકે પાચે પર રેખા વિસ્તારકા જો માન હોય ઉસકે દસ ભાગ કરના । દો ભાગ રેખા, સારા ભદ્ર ત્રીણ ભાગકા, ઔર વિચમે પઢરા-ડેઢ ભાગકા, દોનોં તરફકા કરના । (ઉસ તરહ કુલ દસ ભાગ) ઇસ તરહ નીચે દસ ભાગ ઔર ઉપર નૌ ભાગ સ્કંધકે પર કરના । ઉસકે દો દો ભાગકી રેખા ડેઢ ડેઢ ભાગકા પઢરા ઔર સારા ભદ્ર દો ભાગકા મિલકર કુલ નૌ ભાગ જાનના । ૧૨-૧૩.

^૧શરવેધ પ્રવક્ષ્યામિ જાયતે મૂલનાશકે ।

કક્ષાન્તરે પ્રમેદેચ મહા શેષ (ચ) રાજયેત્ ^૨ ॥૧૪॥

^૩પ્રથમેત્રયક્ષુદ્રાણાં ગૃહેપક્ષેચુગાનિ ^૪ ચ ।

^૫દ્વૌ સા શક્તિ સતુચાષ્ટોચ ષાડેશ્યમતુપંચમી ॥૧૫॥

^૬જંધિસશ્મ ત્રયોદશ ક્ષાણિષ્ઠેલનભધેતે સૂરાઃ ।

સરવેધે યદિ ચૈવ હન્યતે પશુવાધવાઃ ॥૧૬॥

સાનુકૂલપયં (કૃત) મબલે હન્યતે શત્રુ ।

.....સ્વરવેધં ન કારયેત્ ॥૧૭॥

(૧) સરવેધ સ્વરવેધ ? પાઠાન્તર (૨) મેરુ શેષ ચ રાજયેત્ (૩) પ્રથમં ત્રય રુદ્રાણાં (૪) ગુણાનિચ (૫) શિવશક્તિ શિવાષ્ટોચ (૬) જંધિપદ્મ ત્રયોદશ (૭) કલ્પતે ષડ્ ભાસિકા.

पट्टमासे भवेन्मृत्यु राजदंडस्तथैव च ।
 अथवा त्रीणि मरणं जं पट्टमासेन सशयः ॥१८॥
 स्वरवेध यदा चैव क्रियते पद्मभागिता ।
 तत्र नारी महाव्याधि राष्ट्रभंग प्रजायते ॥१९॥
 दुर्भिक्षश्चापि रुद्रं (स) राजमृत्यायने यथा ।
 यम शमाता निष्फलं यांति शिल्पीन मृत्युते ध्रुवा ॥२०॥
 अन्यथाकरणे कर्तुर्भोक्षोनास्ति युगान्तरे ।
 पूजाया न लभतेदेव सुमकीर्ति राक्षसः ॥२१॥
 शोकस्य यदातस्य विरोधः स्थात्परस्परम् ।
 गौ प्राणपीडास्यात् आतासगनिष्टरागर्भगृहावपुभवेत् ॥२२॥
 कीं अपोपांच राजनीक्य कुर्वातीम्यस्ते ।
 केटिरोधस्तत्र वराहा अकाले मृत्यु फलकम् ॥२३॥
 अहमद फलं याति कुरुस्तलोकपीड तु ।
 ॥२४॥

प्रासादस्य न सांगांयं विस्तारोग्रे स्तथैव च ।
 पड मध्येषु दातव्यो पोत्रिकाद्यं प्रदक्षिणे ॥२५॥
 मूलनाशक त्रिसाद्वं कर्तव्यंच तदाग्रतः ।
 नम नाशिक भवेतंश्च सार्द्धते भद्रसन्निधैः ॥२६॥

इति श्री विश्वकर्माकृताया क्षीरार्णवे नारद पृच्छते चिकारे शताग्रे
 द्वादशमोऽध्यायः ॥ ११२ ॥ (क्रमांक अ० १४)

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवे नारदजीके पृष्ठेन अधिहारने शिल्प
 विशारद स्थपति श्री प्रभाशकर ओघडमाई मोमपुरा रवि हुर्मा सुप्रभा नामनी
 भाषा टीकाते अक्षेसा भाग्ये अध्याय ११२ क्रमांक अ० १४

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवे नारदजीके सवादरूप अधिहार का शिल्प विशारद
 स्थपति श्री प्रभाशकर ओघडमाई सोमपुरा रवि हुर्मा सुप्रभा नामनी भाषाटीका का ११२
 एकसोवारहवां अध्याय । ११२ (क्रमांक अ० १४)

॥ अथ शिखराधिकार ॥

क्षीरार्णव अ० ॥ ११३ ॥ (क्रमांक अ० १५)

श्री नारदोवाच—

प्रणपत्यमिदं वक्ष्यामि धरणीमतः ।
कथयामि न संदेहो शिखरं सर्वकामदं ॥ १ ॥
कस्मिनाकार समुत्पन्ना प्रासाद शिखरोत्तमे ।
किं दलविभक्ते च कीमाश्रुगे विभागते ॥ २ ॥
किमे अष्टविभक्तं च स्तैषां स्कंधकीतो भवेत् ।
दशधा स्कंध रेखा च स्कंध मानोक्तताभवेत् ॥ ३ ॥
ममवालजरं श्रुत्वा सरतरंके न हेतवे ।
कं विभागमृतो तन्ना कथितो मम सांप्रतम् ॥ ४ ॥

महर्षि नारदजी श्री विश्वकर्माने पूछे छे के—

सर्वकामनाने आपनारी ओवी शिखरनी विधि संदेह वगरनी कहे, प्रासादना शिखरे देवी रीते उत्पन्न थाय, तेना लाग विलाग अने शृंग आदिना विलाग देवी रीते करवा ? वणी आठ लाग केम करवा ? शिखरनुं स्कंध आंधाणुं केटला लागे राखवुं दश लाग नीचे रेखा अने आंधाणुं केम करवुं ? मने वालंजरनी विधि तेमां लाग.....केटला लागे अंचाधमां केम करवुं ते मने उभणुं कहे। १-२-३-४.

महर्षि नारदजी श्री विश्वकर्माको पूछते हैं कि—

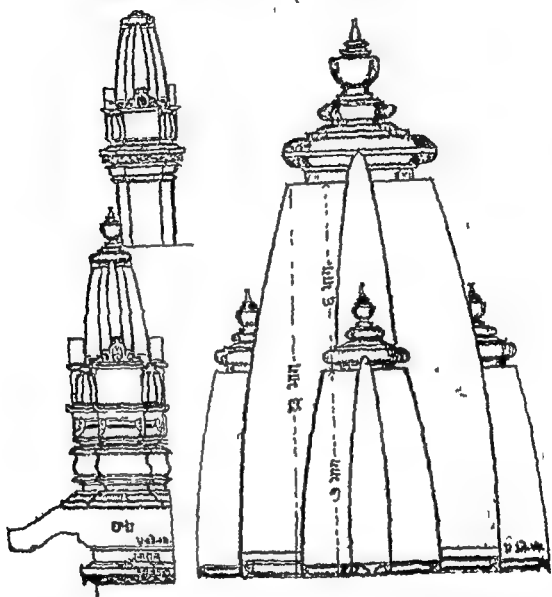
सर्वकामनाको देनेवाली ऐसी शिखरकी विधि संदेहके बिना बताओ । प्रासादके शिखरों कैसे उत्पन्न होते हैं, उनके भाग, विभाग, शृंग आदिके विभाग कैसे करें ? और आठ भाग कैसे कैसे करे ? शिखरका स्कंध कितने भागपर रखना ? दस भागके नीचे रेखा और स्कंधके पर किस तरह करें ? मुझे वालंजरकी विधि, उसके भाग और कितने भागमें ऊँचाईसे कैसे करना यह अभी कहो । १-२-३-४.

विश्वकर्मा उवाच —

यत्त्रया पृच्छते चैव शृणुत्वेकाग्रतो मुनिः ।
शिखराश्च विविधाकारा मनेकाकार मुद्रिता ॥ ५ ॥

एकस्यापि तलस्योर्ध्वे शिखराणि बहून्यपि ।

नामानि जातयस्तेषा मूर्ध्वमार्गानुसारतः ॥ ६ ॥



शिखरमे श्रुत्तोर्यं श्रुत्त श्लोक ७-८

ऊरु श्रुत्तोर्यं ऊरु श्रुत्त रत्ननेका विभाग श्लोक २१

श्री विश्वकर्मा कहे छे के मुनि, तरे पूछे छे तो ओकभनथी साक्षणी शिखर विधविध अने अनेक आकाशना थाय ओक न तथा उपर घण्टा प्रकारना शिखर यडे ते शिखरना उपरना भार्गथी प्रासादनी जाति अने ओणभाय छे ५-६

श्री विश्वकर्मा कहते हैं-हे मुनि, यदि तुम पूछने हो तो एकाग्र होकर सुनो। शिखरों विविध और अनेक प्रकारके होते हैं। एक ही तलके पर बहुत प्रकारके शिखर चढ़ते हैं। उनके ऊपरके मार्गसे प्रासादकी जाति और नाम पहचाने जाते हैं। ५-६

छाद्यार्धे प्रहारः स्यात् शृंगे शृंगे तथैव च ।

प्रहारांश पुनर्दद्यात् पुनः शृंगाणि कारयेत् ॥ ७ ॥

समस्तानां मधो भागे कुर्याच्छाद्यं विभूषितम् ।

अधः शृंगार्धं भागेन उर्ध्वं शृंगोर्वरोद्गमः ॥ ८ ॥

प्रासादना छज्ज पर प्रहार पडाइने थर करी ते पर उपरा पर शृंगो
उपर भीलुं शृंग अर्धभागो यडाववां प्रत्येक शृंग नीचे करी पडाइने थर करी
शृङ्ग यडाववा प्रत्येक शृंगना नीचेने भाग छाजलीथी विभूषि करवो। वणी
नीचेना शृंगना अर्धभागो उपरनुं शृंग यडाववा नवुं अने दोढीया करवा।^१

प्रासादके छज्जे पर प्रहार-पहारका थर कर उसकेपर उपरापर शृंगोंकेपर
दूसरे शृंगको अर्ध भागमें चढ़ाना। प्रत्येक शृंगके नीचे फिर पहारका थर करके
शृंग चढ़ाना। प्रत्येक शृंगका नीचेका भाग छाजली से विभूषित कंदनां। नीचेके
शृंगके आधे भागके उपरके शृङ्गको चढ़ाते जाना और दोढिये करना।^१ ७-८.

मूलकर्णरथादौ च एक द्वित्रिक्रमेन्यसेत् ।

निरंधारे मूलभित्तौ सांधाभ्रमभित्तिषु ॥ ९ ॥

प्रासादनी मूल रेखा अने प्रतिरथ आदि उपांगो पर ओक जे त्रणु ओम
कहेला कम प्रमाणे शृंगो यडाववा। परंतु निरंधार प्रासादनी मूल सीत उपर
(गलारानी अंदरनी इरकथी कंधक वधु) अने सांधार प्रासादने भ्रमनी सीते
शिखरने पाययो राखवो। (गणवा न देवो।)

प्रासादकी मूल रेखा और प्रतिरथ आदि उपांगोंके पर एक दो तीन इस
तरह कहे हुए क्रमके अनुसार शृंगोंको चढ़ाना। परंतु निरंधार प्रासादकी मूल
दिवारके पर (गर्भगृहके अंदरके फर्कसे कुछ ज्यादा) और सांधार प्रासादको
भ्रमकी दिवारके पर शिखरका पायचा रखना। (गलने नहीं देना।) ९.

(१) छज्ज पर पडाइने थर करी शृंग यडाववा। आधुनिक काणमां मंडपने धुमट
उंचो करे छे। तेथी शुक्रनाश भेजववा छज्ज पर नंगी जे त्रणु के चार दूटनी यडावे छे।
प्रहारनी विशेष प्रथा राजस्थानी सोमपुरा लार्थयोमां वधु छे। प्रहार अने मोरली पार
ओम तेयो कहे छे। वृक्षार्णव ग्रंथमां प्रहारना छ प्रकार दखा छे। तेना पृथक् पृथक् घाट
दखा छे। पडाइना धरना घाटने गुजरातमां “पाव” कहे छे।

(१) छज्जेके पर पहारके थर करके शृंग चढ़ाना। आधुनिक कालमें-मण्डपका गुंबज
ऊंचा किया जाता है, इससे शुकनास मिलाने के लिये छज्जेके पर जांगी दो तीन या चार
फूटकी चढ़ाते हैं। पहारके विशेष प्रथा राजस्थानी सोमपुरा भाइयोंमें विशेष है। पहार
और मुरलीपार, ऐसा वे लोग कहते हैं। वृक्षार्णव ग्रंथमें प्रहारके छः प्रकार कहे हैं। उनके
पृथक् पृथक् घाट कहे हैं। प्रहारके थरके घाटको गुजरातमे “पाल” कहते हैं।

રેલા વિસ્તારમાનેન સપાદેનતદુચ્ચયઃ ।

ત્રિભાગ સહિતથૈવ સાર્દ્ધ કૃત્વા વિચક્ષણૈ ॥૧૦॥

શિખરની મૂળ રેખા પાયથો બેટલો વિસ્તાર હોય તેનાથી (૧) મવાયુ ઉચ્ચ શિખર (બાધણે) કરવું (૨) મૂળ પાયથાથી તેના ત્રીજા ભાગ સહિતની ઊંચાઈ કરવી (૩) મૂળ પાયથાના વિસ્તારથી દોડુ ઊંચુ શિખર વિચક્ષણ શિલ્પીએ કરવું આ ત્રણ રીત શિખરની ઊંચાઈની (નાગરાદિ જાતિમા) બાણવી (૨) ૧૦

શિખરની મૂળરેખા-પાયચાકે વચ્ચે વિસ્તાર હો તો ઉમ્મસે (૧) સગા ગુના ઝૂંચા શિખર સ્કથકે પર કરના । (૨) મૂળ પાયચેસે ઉમ્મકે ત્રીસરે ભાગકે સહિતની ઝૂંચાઈ કરના । (૩) મૂળ પાયચેકે વિસ્તારસે હેડ ગુના ઝૂંચા શિખર વિચક્ષણ શિલ્પીકો વનાના । આ ત્રી રીતિયોકો શિખરની ઝૂંચાઈકે લિયે જાનના । (નાગરાદિ જાતિમે) ૧૦ (૨)

ઉરુશૃંગાણિ મદ્રેસ્યુ હૃયેકાદિ ગ્રહસરળયા ।

ત્રયાદેશ સમુર્ધ્વેઽધો લુપ્ત સપ્તોરુશૃંગકૈ ॥૧૧॥

શિખરના ભદ્રે ઉરુશૃંગો ચડાવવાનું વિધાન કહે છે ભદ્ર ઉપરથી એકથી નવ મુધી (કહેલા-કંમ પ્રમાણે) ઉરુશૃંગ ચડાવવા તેમા ઉપરના ઉરુશૃંગના બાધણથી નીચે પાયથાની ઊંચાઈના તેર ભાગ કરી નીચેના ઉરુશૃંગના બાધણે માતભાગ રાખી લુપ્ત દબાવું મોટું ઉરુશૃંગ કરવું એમ કહે ચડાવવા (આમ છ ભાગ ઉપરને માત ભાગ નીચે એમ બાધણથી બાધણ મુધીના બાણવા) ૧૧

શિખરકે મદ્રકે પર ઉક્ત શૃંગોકો ચડાવના વિધાન કહેતે હૈ । મદ્રકે ઉપરસે એક સે નો ત્રી ક્રમકે અનુસાર ઉરુશૃંગકો ચડાવના । ઉમ્મસે ઉરુશૃંગકે સ્કથકે નીચે પાયચેની ઝૂંચાઈકે તેરહ ભાગકર નીચેકે ઉરુશૃંગના સ્કથકે પર માત ભાગ રચકર લુપ્ત દબાવવા હુઆ વડા ઉરુશૃંગ કરના । આ તરહ ક્રમકે અનુસાર

(૨) નાગરાદિ જાતિમા આ ત્રણ પ્રકારો શિખરની ઊંચાઈના કહે છે પુરાણોમા શિલ્પનો વિષય સમાવિષ્ટ કરેલ છે તેમા શિખર બાધણ ઊંચુ કરવાનું કહે છે ઉત્તર ભારતમા તેમા શિખરો બોલા મળે છે ભારતના એક પ્રદેશમા અઢીગણી ઊંચાઈના શિખરો શાસ્ત્રોક્ત વિધિમા અમે જોયા છે તે પ્રાસાદની ચોદ જાતિમાની એક જાતિ હશે

(૨) નાગરાદિ જાતિમે આ ત્રી પ્રકારસે ઝૂંચાડ વતાયી હૈ । પુરાણોમે શિલ્પના વિષય સમાવિષ્ટ કિયા હુઆ હૈ । ઉમ્મસે શિખરનો દૂગુના ઝૂંચા કરનેકે લિયે વહા હૈ । ઉત્તર ભારતમે વેસે શિખર દેરાનેમે આતે હૈ । ભારતકે એક પ્રદેશમે ટાઈ ગુની ઝૂંચાઈકે શિખર શાસ્ત્રોક્ત વિધિમે હમને જોયે હૈ । આ પ્રાસાદની ચોદ જાતિયોમેસે એક જાતિ હોગી ।

चढ़ाना । (इस तरह छः भाग उपर और सात भाग नीचे, इस तरह स्कंधसे स्कंध तकके जानना ।) ११.

शृंगोरुशृंग प्रत्यङ्गारंडकान गणयेत्सुधी ।

तवङ्का तिलकं कर्णे कूर्याद् प्रासाद् भूषणाम् ॥१२॥

शिखरना शृंग-भीखरीओ उरुशृंग अने प्रत्यंग (चोथ गराशिया) ते अंडकनी गणुत्रीमां लेवषा भाडी तवंग तिलक कूर घंटा जे रेखा के पढरा आदि अंगो पर यडावेला होय ते प्रासादना आभूषण रूप जानना ते गणुत्रीमां न लेवा.

शिखरके शृंगको, उरुशृंगको और प्रत्यंगको (चोथ गराशिया) अंडककी गिनतीमें लेना । बाकी तवंग तिलक कूट घंटा जो रेखा या पढरा आदि अंगोंके पर चढ़ाये हुए हो उनको प्रासादके आभूषण रूप जानना । उनको गिनतीमें नहीं लेना । १२.

रेखामूलस्य दिग्भागे कुर्यादग्रे षडांशकाः ।

षड्बाह्वै दोषदं प्रोक्तं पंचमध्ये न शोभनम् ॥१३॥

शिखरनी मूल रेखा-पायच्याना विस्तारना दश भाग करी उपर आंधले-स्कंधे छ भाग पढोणुं राखवुं. छ भागथी वधु राखवाथी दोष कह्यो छे. अने पांच भागथी ओष्ठुं शोभतुं नथी. (तेथी साडा पांच भाग आंधले राखतुं.) १३

शिखरकी मूल रेखा = पायचेके विस्तारके दस भागकर उपर स्कंधके उपर छ भाग चौडा रखना । छः भागसे ज्यादा रखनेसे दोष कहा है, और पांच भागसे कम शोभायमान नहीं होता है । इससे साढ़े पांच भाग स्कंधके पर रखना ।) १३

रेखामूलस्य विस्तारात् पञ्चकोश समालिखेत् ।

चतुर्गुणेन सूत्रेण सपाद शिखरोदयः ॥१४॥

सवाया शिखरने पायच्यामा विस्तारथी चारगणुं वृत सूत्र ईरवाथी वगर भीलेला उभग पुष्पना आकारना जेवी शिखरनी नमण रेखा थशे. १४

सवागुने शिखरको पायचेके विस्तारसे चार गुना वृत सूत्र फिरानेसे अविकसित कमलपुष्पके आकारके जैसी शिखरकी नमण रेखा होगी । १४

(३) १३ शिखरोदयना पायच्याथी साडाचार गणुं सूत्रथी वृत रेखा दोरवी अने दोढा उदयवाणा शिखरना पायच्या विस्तारथी पांचगणुं सूत्र वृत रेखा दोरवाथी आंधले साडा पांच भागना हिसाभे परापर मणी रहे छे. आ स्थूल सामान्य नीयम कह्यो.

रेखा दोरवाना अनेक प्रकार-बेहो प्रासाद शिल्पग्रंथोमां कछां छे. तेमां प्रासादनी नति छंद ग्रंथो मुख्य त्रय प्रकार कछा छे. १ शिखांत २ घंटात ३ स्कंधात १ शिखांत

દશઘાતલરેલા ચ દિગ્માગ દ્વૌ કર્ણ વિસ્તર ।

સ્થ સાર્ઘ વિસ્તાર મદ્યાર્ધ તત્ર નિર્ચમ્ ॥૧૫॥

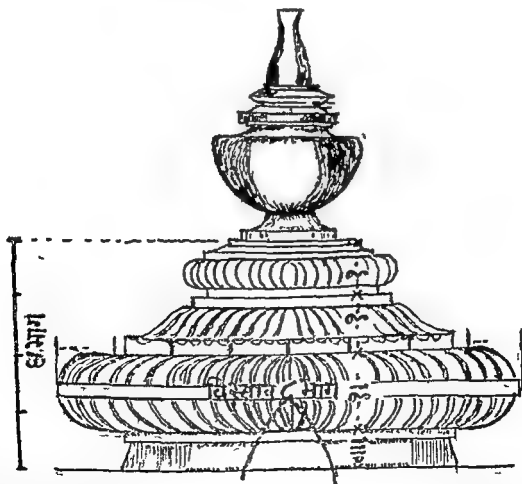
હસ્તમાનાર્ધાન્ગુલેન ફાલનાનિર્ગવિચક્ષણ ।

દક્ષાગા શિખરે મૂલે ચાગ્રે તત્રનવાંશક્રાઃ ॥૧૬॥

સાર્ઘાંશકો સ્થૌ ક્રોળો દ્વૌ શેપંમદ્ર મિપ્યતે ।

દ્વૌ મતિસ્થૌ મધ્યે વૃત્તમામલ સાગ્રમ્ ॥૧૭॥

શિખરના નીચે મૂળ રેખા-પાયચે દશ લાગ કરવા તેમા બે લાગની રેખા
-દોઢ દોઢ લાગનો પઢગ અને બાકી અર્ધુ લદ્ર પછુ તેટલુ જ એટલે દોઢ લાગનુ
આ ફાલનાઓના નિકાળા-પાયચે જેટલા જજ હોય તેના જજે રાખવા જેમ દશ
લાગ નીચે કદ્દા તેની ઉપર ઝકધ બાધણુ નવ લાગ કરવા તેમા બે લાગની રેખા
અને દોઢ દોઢ લાગના પઢરા અને બાકી આખુ લદ્ર બે લાગનુ કરવુ (કુલ
નવલાગ) આ ઝકધના ખુણાખુણુ પ્રતિગ્ધની મધ્યમા ગોળ આમલ સારે
પહોળો રાખવો ૧૫-૧૬-૧૭



જેટલે નીચે પાયાચાથી ઠેઠ કળથ સુધીની સળગ વૃત રેખા દોરાય તે તેમા બાધણુ અને
આમનસારા સાઢથ થાય ૨ નટાત-નીચે પાયચાથી આમનસાગ સુધી વૃત રેખા દોરાય તે



शिखरमें नीचे मूलरेखाके पर-पायचेके पर दस भाग करना । उनमें दो भागकी रेखा-डेढ़ डेढ़ भागका पढरा और बाकी आधा भद्र भी उत्तना ही अर्थात् डेढ़ भागका-इन फालनाओंके निकाले-पायचेके बराबर जितने गज हो उसके आधे अंगुल गजके पर रखना । जिस तरह दस भाग नीचे कहे उस तरह स्कंधके पर नौ भाग करना । उनमें दो भागकी रेखा और डेढ़ भागके पढ़रे और बाकी पूरा भद्र दो भागका करना । (कुल नौ भाग) इस स्कंधके कोनेके सामने कोनेमें प्रतिरथकी मध्यमें गोल आमल सारा चौड़ा रखना । १५-१६-१७.

आ प्रकार विराट भूमि न अने वल्लभी नतिना प्रासाद भाटे छे. (३) स्कंधात शेटले नीचे पाययाथी आधला सुधी गोण वृत्त रेखा छुटे (उपर आमलसारे तेनाथी आहार रूडी नय छे ते स्कंधात रेखावाणु शिखर नागरादि नतिना छंदता सांधार के निरधार प्रासादने प्रशस्त छलुं छे.

(३) १३ शिखरोदयके पायचेसे साढ़ेचार गुने सूत्रसे वृत्त रेखा दोरना और डेढ़ गुने उदयवाले शिखरके पायचेके विस्तारसे पाँच गुनी सूत्र वृत्त रेखा दोरनेसे स्कंध के पर साढ़ेपाँच भागके हिसाबसे बराबर मिल रहता है ।

रेखा दोरनेके अनेक प्रकार भेदों प्रासाद शिल्प ग्रंथोंमें कहे हैं । उसमें प्रासादकी जाति छंदके अनुसार मुख्य तीन प्रकार कहे हैं । १ शिखांतर २ घंटांत ३ स्कंधांत

अथवालंजर—तथा वालंजर प्राज्ञ भागभेद विशेषतः ।

द्वाविंशश्च पदं कार्यं चतुर्भिर्मूलनासिकं ॥१८॥

प्रतिरथेत्रयं भागं द्वितीये द्वयमेव च ।

द्विभागार्चं भद्रार्द्धभागभागश्च निर्गमम् ॥१९॥

त्रयादेशांश्च स्फुंधोर्ध्वे कर्तव्यं च प्रयत्नतः ।

त्रिधाकर्णं विभक्तं च द्विभागउर्ध्वकर्णकं ॥२०॥

तथारथप्रभेदेन शेषं भद्रं प्रकीर्तितम् ।

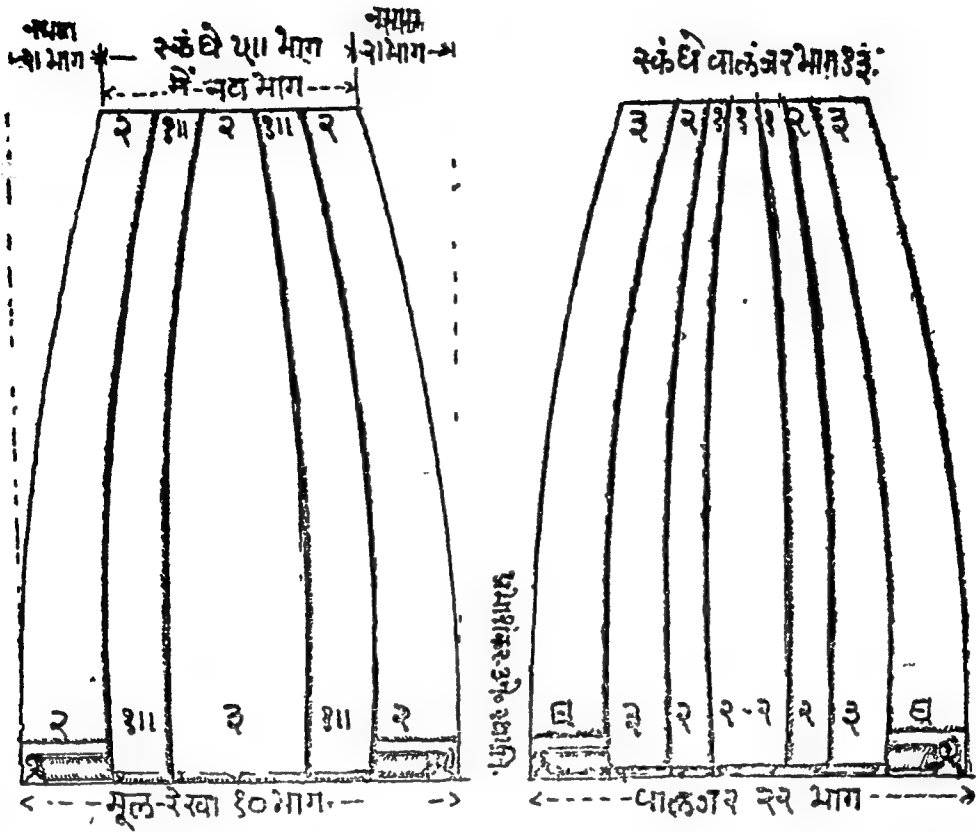
वालंजरे च विज्ञेया रेखा भेदस्यकस्तथा ॥२१॥

हे सुत पुत्र, हुवे (साधार प्रासादना) शिखरना वालंजरना लागना लेह विशेष करीने कहु छु शिखरना पायचे पावीश लाग करवा तेभा रेभा आर लागनी, प्रतिरथ त्रयु लागनो पीले उपरथ ये लागनो अने अरधु भद्र ये लागनु तेना निकाणा लाग लागना राधवा हुवे तेना उपर स्कंध पाधले तेर लाग करवा त्रयु लागनी रेभा-कधु ये लागना प्रतिरथ, अेक लागनो रथ अने पाडी अरधु भद्र, अरधा लागनु अेम कुल तेर लाग साधार प्रासादना शिखरना पाधले नधुवा अे रीते शिखरनी रेभाना वालंजरना लेह नधुवा ४
१८ १९-२०-२१

हे सुज्ञपुरुष, अब (साधारप्रासादके) शिखरके वालंजरके भागके भेद विशेषतया मं कहता हूँ । शिखरके पायचे पर बाईस भाग करना । उसमे रेखा चार भागकी प्रतिरथ तीन भागका दूसरा उपरथ दो भागका और आधा भद्र दो भागका, उनके निकाले भाग भागके रखना । अब उसके उपर स्कंधके पर तेरह भाग करना । तीन भागकी-रेखा-कर्ण दो भागका दूसरा प्रतिरथ, एक भागका रथ और बाकी आधा भद्र आधे भागका, इस तरह कुल तेरह भाग साधार प्रासादके शिखरके स्कंध पर जानना । इस तरह शिखरकी रेखाके वालंजरके भेद जानना । ४ १८-१९-२०-२१

(१) पिपात अर्थात् नीचे पायचेसे ऋक्षतककी सलग त्रतरेखा आँकी जाती है वह, उसमें स्कंध और आमलसारे सँकरे होते हैं । (२) घटात-नीचे पायचेसे आमलसारा तक त्रतरेखा आँकी जाती है वह, ये प्रकार विराट भूमिज और वल्लभी जातिके प्रासादके लिये हैं । (३) स्कधात अर्थात् नीचे पायचेसे स्कंध तक गोल त्रतरेखा छुटे (उपर आमलसारा उससे बाहर रह जाता है वह) स्कधात रेखावाला शिखर नागरादि जातिके छत्रके साधार या निरधार प्रासादको प्रशस्त है ।

(४) आगण अेक १५थीरज्ज्मा शिखरना उपागोना लाग कल्हा छे ते निरधार



निर्धार-और साधार प्रासादका मूल शिखरका उपाङ्ग-वालंजर वालपंजर

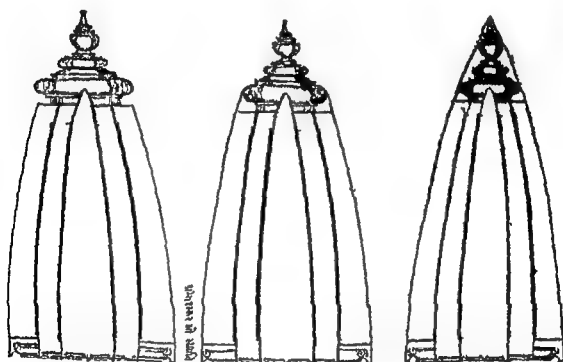
स्कंधहीनं न कर्तव्यं नाधिक किंच कारयेत् ।
 स्कंध हीने कुलोच्छेदो मृत्युरोग भयावहम् ॥२२॥
 आयुरारोग्य सौभाग्यं लभते नात्र संशयः ।
 मूलकन्द प्रविष्टे तु स्कंधवेध इति स्मृतः ॥२३॥
 शिल्पी स्वामी नौ हन्यते स्कंधवेधेन संशयः ।
 निर्गमे हस्त संख्यैर्वाधागुलैरुपमादितः ॥२४॥

मान प्रमाण्थी ओछा स्कंधवाणुं के अधिक मानना स्कंधवाणुं शिखर न करवुं. शिखर स्कंधः पांधणु भापथी ओछुं थाय तो कुणनो नाश मृत्यु अन्ये रोगनो लय उपजे. मान प्रमाणे करवाथी आयुष्य आरोग्यने सौभाग्यनी प्राप्ति थाय छे. तेमां जरा पणु शंका न करवी. जे स्कंधना मूणमां (ध्वजदंड) प्रविष्ट थाय तो ते स्कंधवेध जाणुवो. ते वेधथी शिल्पी अन्ये स्वामीनो नाश थाय ते प्रासादने योग्य छे अन्ये श्लोक १८थीरचना वालंजर कछा ते साधार प्रासादना शिखरना छे सांधाराभां जे प्रतिरथ कछा छे वालंजरने समरांगण सूत्रधारमां जालपंजर कहेल छे.

(४) आगे श्लोक १५ से १७ मे शिखरके उपागोंके भाग कहे थे निर्धार प्रासादके शिखरके योग्य है। और श्लोक १८ से २१ -मे वालंजर कहे है सांधार प्रासादके शिखरके लिये कहे है। सांधारमें दो प्रतिरथ कहा है। वालंजरको समराङ्गण सूत्रधारमें जाल पंजर कहा है।

स शय वगर न्नाणु पाधे वादजरना सर्व नाशिकना भिकाणा केटला गले पायथो के पाधणु डेय तेटला गले अर्धा आगण प्रमाणे राणवा

मान प्रमाणसे कम स्कंधवाला या अधिक मानके स्कंधवाला शिरर नहीं करना । शिरर जो स्कंधक मापसे कम हो तो कुलका नाश, मृत्यु और रोगका भय उत्पन्न होता है । मानके अनुमार करनेसे आयुष्य आरोग्य और सौभाग्यकी प्राप्ति होती है । उसमें जग भी शंका न रखना । जो स्कंधके मूलमें (ध्वजादह) प्रविष्ट हो तो उसे स्कंध वेध समझना । इस वेधसे शिल्ली और स्वामिका नाश होता है । यह बात नि संशन जानना । स्कंधके पर बालजरके सर्व नाशिकके निकाल जितने गज पर पायचा या स्कंध हो उतने गज पर आवे आगुल प्रमाणमें रखना । २२-२३-२४



स्कंधान्त रेखा (नागरी)

घटान्त रेखा --- विष्ट वल्लभी --- शिखान्त रेखा

रेखाका सामान्य स्वरूप—१ स्कंधान्त (नागरी)—२ घटान्त—३ शिखान्त रेखा (विराटे वल्लभी)

अन्योन्ये कथिताश्चैव शुक्रनाशः मतः मृणु ।

छार्धोर्ध्वे स्कंध पर्यंत मेरुविंशति भाजितम् ॥२५॥

नंद त्रयोदश मध्ये प्रमाणं पंचधामतं ।

कुमारं कपिलं च निर्धटा हि निशाचर ॥२६॥

चंद्रघोषश्च विज्ञेयं शुक्रनाशपंचधामत ।

पणमेकं कुमारं च त्रिपणं कपिलं च ॥२७॥

शिखरनु अन्ये अन्य कहु हुवे शुक्रनाशना लक्षण साक्षिणे छन उपरथी

शिखरना स्कंध आधारणा सुधीनी अंचाईना ओकवीस लाग करी. तेमांना नव दश अग्यार आठ अने तेर लागे शुक्रनासनी अंचाईना पांच प्रकारे स्थान विलाग केल्या. कुमार कपिर्द्र, निर्धन्त निशाचर अने चंद्रघोष अमे पांच नामो अनुक्रमे शुक्रनासना ज्ञाणवा. २५-२६-२७

शिखरका अन्योन्य कहा । अब शुक्रनासके लक्षण सुनो । छज्जेके उपरसे शिखरके स्कंध तक ऊँचाईके इक्कीस भागकर उनके नव, दस, ग्यारह, बारह और तेरह भाग पर शुक्रनासकी ऊँचाईके पाँच प्रकार कहे । कुमार, कपिरुद्र, निर्धन्त, निशाचर और चंद्रघोष इस तरह पाँच नामों अनुक्रमसे शुक्रनासके जानना । २५-२६-२७

पंचसप्त नवश्चैव द्विषणांतं प्रकीर्तितं ।

विमानाकार वर्तते कक्षेमुखे च नासिकम् ॥२८॥

(५) शिखरना शुक्रनास परापर मंडपनी घंटा समान राखवी. तेवुं विधान छे. पणु शुक्रनासे समाघंटा: न न्यूनान न ततोऽधिका अणु अपराजितसूत्र १८५मां कहेलुं छे. वणी दीपार्णव अने अन्य शिल्पग्रंथो तेमज अपराजितमां जीजे स्थले तदूर्ध्वेन प्रकर्तव्यं अधः स्थं नैव दूषयेत् ” आभ पणु कहेल छे. तेथी शुक्रनासथी मंडपनी घंटा नीचे राखवी. तेमां दोष नथी. शुक्रनासे समाघंटा कहे छे. पणु आमलसारा मंडप परतो कहे नथी. तेनुं कारण तेरही चौदही सदीमां मंडप पर घुमट नही परंतु शामरण करता अने तेनी सर्वोपरि मूलघंटा आवे तेथी घंटा कहेल छे. संवरणा पाछवा काणमां ओधी थवा मांडी तेथी घुमट करी चंद्रस मुडी आमलसारा पर कणश मुकुवानी प्रथा शर थर.

(५) शिखरके शुक्रनासके बराबर मंडपकी घंटाको समान रखना, वैसा विधान है । लेकिन “शुक्रनासे समाघंटा नन्यूनान न ततोऽधिका ” ऐसा “अपराजित सूत्र ” १८५ में कहा है, और दीपार्णव ओर अन्य शिल्प ग्रंथों ओर अपराजितमें दूसरे स्थल पर ” तदूर्ध्वे न प्रकर्तव्यं अधः स्थे नैव दूषयेत् ” ऐसा भी कहा है । इससे शुक्रनाससे मंडपकी घंटाको नीची रखना, इसमें दोष नहीं है । शुक्रनास समाघंटा कहते हैं, लेकिन आमलसारा मंडपके उपरका नहीं कहा है । इसका कारण तेरहवीं सदीमें मंडपके पर घुमट गुँवज नहीं लेकिन शामरण करते थे और उसकी सर्वोपरि मूलघंटा आवे इसीलिये घंटा कहा है । संवरणा पीछले कालमें कम होने लगी इससे गुँवजकर चंद्रस रखकर आमलसारा के पर कलश रखनेकी प्रथा शुरू हुई ।

(६) श्लोक २७थी३१नां भूजपाठज अमे मुकुल छे. तेनी अशुद्धिना कारणे अनुवाद करवामां गैरसमजना लये अमे तेम क्युं नथी. शुक्रनासमां ओक त्रणु पांच के सात उपरापर दोडिया करी उपर सिंह स्थापन थाय छे.

(६) श्लोक २७ से ३१ के मूल पाठ ही हमने रखे हैं । उनकी अशुद्धिके कारण अनुवाद करनेमें गैरसमज के संभवसे हमने वैसा रखा है । शुक्रनासमें एक तीन पाँच या सात उपरापर दोडिये बनाकर उर सिंहका स्थापन होता है ।

अष्टधादश चैवोक्त नटकणीं विशेषतः ?
 नटकणीं यदामूर्ध्वे निर्गद परिभूमिकैः ॥२९॥
 सर्वेसिंह समायुक्ता कलगग्रे विशेषतः ।
 तथा भद्र विचारेण शृंगस्य शृङ्गमेव च ॥३०॥
 शृङ्गाद्वयं प्रयत्नेन शृङ्गमेके विचक्षणः

॥३१॥

लावार्थ—એક ખડ કુમાર, ત્રણ ખડ કપિરૂદ્ર, પાંચ ખડ નિધદુ, સાત
 ખડ નિશાચર અને નવખડ ચંદ્રધોપ એમ ઉત્તરોત્તર બળે ખડના અતે
 વિમાનકાન્તુ શુકનામ કરવો તે પર બાલુ અને ઉપર નામિકા કન્વી અઠાઈ
 કે દશાઈ ખુણી વગરના વિશેષ કરી ઉપર કળગના આગળ સિંહો કરવા
 ૨૭-૨૮-૨૯-૩૦-૩૧

एक रड कुमार, तीन रड कपिरूद्र, पाँच रड निधदु, सात रड निशाचर
 और नौ रड चंद्रधोप इस तरह उत्तरोत्तर दो दो रडके अतमे विमाना-
 फारका शुकनास करना । उसने पर बाजु और उपर नामिका करना । सट्टाई या
 दसाई कोनेके बिना विशेष कर उपर कलगके आगे सिंहो करना

२७-२८-२९-३०-३१

अथ कोकिला लक्षण—'अथातः सप्रनक्ष्यामि कोकिला लक्षणं परम् ।

स्थान प्रमाणमे तेषां शुभं वा यदिवाऽशुभम् ॥३१॥

कोण विस्तार विस्तीर्णा कोकिला शुभलक्षणम् ।

उभयो पार्श्वयोरेव एकैका च प्रशस्यते ॥३२॥

कोणार्द्धं च यमदृष्ट्वा भित्तिश्चैव शुभप्रदा ।

सर्वलक्षणसमुक्ता कोकिला सुफलप्रदा ॥३३॥

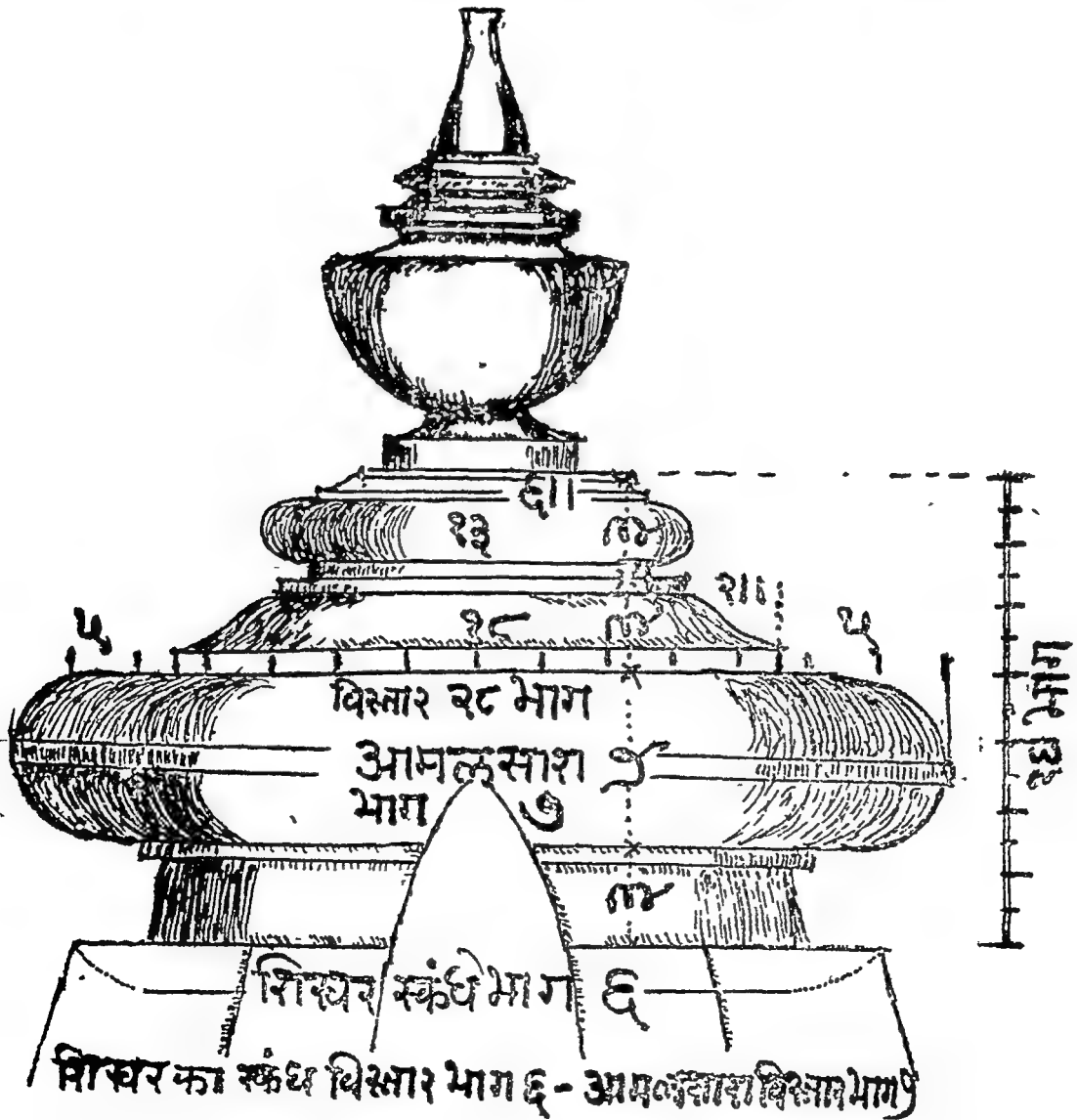
હવે હું કોકિલાના સ્થાન પ્રમાણ અને શુભાશુભ લક્ષણો કહું છું પ્રાસાદની
 રેખા કોણ જેટલી પહોળી કોકિલા કન્વી તે શુભ લક્ષણ બાણુવ કોલીના ખેડ
 પડખે એકેક કોકિલા-પ્રાસાદપુત્ર કરવા તે પ્રશસનીય છે રેખા જેટલા લાગની
 હોય તેનાથી ઓછી કે અર્ધા લાગની કોકિલા કરે તે ચમ દદા વેધરૂપ બાણુવી
 પણ તે પ્રાસાદની ભિતની બહાર જેટલી કોકિલા શુભ કહી છે અર્વા લક્ષણ
 યુક્ત કોકિલા (પ્રાસાદપુત્ર) કરવાથી શુભ ફળને આપે છે ૩૧-૩૨-૩૩

-- अथ मैं कोकिलाके स्थान प्रमाण और शुभ अशुभ लक्षणोंके बारेमें कहता

७ कोकिला लक्षणना पाठ केटलीन त्रयोभा नथी तेथी आ प्रया पाठगथी प्रविष्ट यष्ट होय
 ७ कोकिला लक्षणके पाठ कई ग्रथोंमें नहीं है, समग्र है उसमा प्रचार पीछेसे हुआ हो ।

हूँ । प्रासादकी रेखाके कोनेके बराबर चौड़ी कोकिला । यह शुभ लक्षण समझना । कोलीका दोनों तरफ एक एक कोकिला (प्रासादपुत्र) बनाना, यह प्रशंसनीय है । रेखासे कम भागकी कोकिलाकी जाय, यह यमदंष्ट्रावेधरूप जानना । लेकिन वह प्रासादकी दिवारके मोटेपनके बराबर कोकिला शुभ कही है । सर्व लक्षण युक्त कोकिला (प्रासादपुत्र) करनेसे शुभफलको देती है । ३१-३२-३३.

षड्भागैस्कंध विस्तारं सप्तभिः आमलसारकं ।
अर्धोदयं कर्तव्यं तदूर्ध्वे कलशोत्तमा ॥३४॥
तथामलसारि च विस्तारं च अतःशृणु ।
सप्तभागमध्ये च चतुषष्टि विभाजितम् ॥३५॥
द्वात्रिंशोदयं कार्यं ग्रीवा भागं षडंमवेत् ।
अंडकं भास्करं विद्यात्-अष्ट चंद्रा विलोकित ॥३६॥



આમલસારા વિસ્તારનું બીજું પ્રમાણ કહે છે સ્કંધ-બાધણે ૭ ભાગ હોય તો આમલસારા સાત ભાગ વિસ્તારનો કરવો અને તેનું અર્ધ ઉચ્ચ કરી તે પર ઉત્તમ એવો કળશ (ઈંડું) મૂકવો, હવે આમલસારાની પહોળાઈના ભાગ કહે હું ૭ ભાગ બાધણે અને માત્ર ભાગ આમલસારા વિસ્તારમા કહ્યો તે માત્ર ભાગમા ચોસઠ ભાગ પહોળાઈના અને બત્રીશ ભાગ ઉચ્ચાઈના કરવા ગળુ ૭ ભાગ-અડક (મોટો ગોળો) બાર ભાગનો, તે પર ચદ્રના આઠ ભાગનો અને ઉપર બજરી (ગોળો) ૭ ભાગનો કરવો એ રીતે ઉચ્ચાઈના બત્રીશ ભાગ બાધવા હવે તેના નીકાળાના ભાગ માલળો ૩૪-૩૫-૩૬

આમલસારા વિસ્તારકા દ્વસરા પ્રમાણ કહેતે હૈ । સ્કંધ છ. ભાગ હો તો આમલસારા સાત ભાગ વિસ્તારકા કરના । ઓર ઉમકા અર્ધ ડુંચા કરકે ઉસકે પર ઉત્તમ ઐસા કલશ (અળ્હા રરના । અવ આમલસારાની ચોઢાઈકે ભાગ કહતા હૂં । છ ભાગ સ્કંધપર ઓર સાત ભાગ જો આમલસારા જો વિસ્તારમે કહા વહ સાત ભાગમે ચોસઠ ભાગ ચોઢાઈમે ઓર છત્તીસ ભાગ ડુંચાઈમે કરના । ગલા છ ભાગ-અડક (વઢા ગોળા) વારહ ભાગકા, ઉસકેપર ચદ્રસ આઠ ભાગકા ઓર ઉપર કી જાજરી (ગોળા) છ. ભાગકી કરના । ઇસ તરહ ડુંચાઈમે વત્તીસ ભાગ જાનના । અવ ઉસકે નિકાલેકે ભાગકો સુનો । ૩૪-૩૫-૩૬

પદ્મભાગ વામલસારિ ચ નિષ્કાત ચ અત શ્રુણુ ।

અંકકં દ્વાદશં ભાગં ચ સપ્તમિ ચંદ્રકોધિરુમ્ ॥૩૭॥

પદ્મિઃ રામલસારિ ચ ચતુર્દશોર્ધ્વકલશાસનમ્ ।

તપસા સ્કંધ સસ્થાને અંકકૌપર્યકાદિપુ ॥૩૮॥

હવે આમલસારાના વિસ્તાર-પહોળાઈના ભાગ કહે છે અડક નીકાળો (ચદ્રસની પટ્ટીથી) બાર ભાગનો ચદ્રસનો નીકાળો (બજરીના ગોળાના પેટાથી) માત્ર ભાગનો, અને બજરીનો નીકાળો તેના કદથી ૭ ભાગનો ગણવો કળશાસન કળશને સ્થાપન કરવાની પહોળાઈના ચૌદ ભાગ ગણવા એ રીતે કુલ ચોસઠ ભાગ વિસ્તારના બાધવા સ્કંધના બાધણાના કોણે તાપસના ૩૫ કરવા અને અડકમા પ્રામાદનો સુવર્ણ પુરુષ પર્યંક-દોઢીથી સાથે પધરાવવો ૮ ૩૭-૩૮

(૮) આમનસાગના પૃથક્ પૃથક્ વિભાગ જુદા જુદા પ્રથેમા કહ્યા છે દીપાલુંવિમા ચૌદ ભાગ ઉચ્ચાઈમા ગળુ ત્રણ ભાગ અડક પાંચ ભાગ ચદ્રસ અને બજરી ત્રણ ત્રણ ભાગની એમ કુલ ચૌદ ભાગ ઉચ્ચ અને અક્ષત્રીય ભાગ વિસ્તાર બીજા પ્રકારે ઉચ્ચાઈમા ચાર ભાગ કરી પોણા ભાગનું ગળુ મના ભાગનો અડક ચદ્રક અને બજરી એકેક ભાગની રૂની કુલ ૮ ભાગ વિસ્તારમાન બાધવા

(૮) પાઠાન્તરે નવચન્દ્રાવિલોકિન ।

अब आमलसाराके विस्तार-चौडाईके भाग कहते हैं । अंडक निकाला (चंद्रसकी पट्टीसे) बारह भागका निकाला (जांजरीके गोलेके पेटेसे) सात भागका, और जांजरीका निकाला उसके कंदसे छः भाग का रखना । कलशासन-कलशको स्थापन करनेकी चौडाईके चौदह भाग रखना । इस तरह कुल चौसठ भाग विस्तारके जानना । स्कंध के कोंणेंपर तापसके रूप करना और अंडकमें प्रासादके सुवर्णपुरुष पर्यंकके साथ पधराना । ३७-३८

शिवेश्वररूपं तु ध्यानमूर्तिं विचक्षणः ।

शिखरकर्णे प्रस्थाप्यं जिनेकुर्याज्जिनेश्वरः ॥ ३९ ॥

शिखरना स्कंधे-आंधणाना भुण्णे आमलसाराना गणामां शिव-ईश्वरनुं ध्यानमग्न स्वरूपं विचक्षणं शिल्पी ये करवुं. परंतु जे जैन प्रासाद होय तो जिनेश्वरनी भेटी मूर्ति करी भूकवी. ८ ३६.

शिखरके स्कंधपर बांधणेके कोनेपर आमलसाराके गलेमें शिव-ईश्वरका ध्यान मग्न स्वरूप विचक्षण शिल्पीको करना । लेकिन जो जैन प्रासाद हो तो जीनेश्वरकी बैठी मूर्ति कर रखना । ८ ३९

ध्वजादंडकास्थान-प्रासादपृष्ठि देशे तु दक्षिणे प्रतिरथके ।

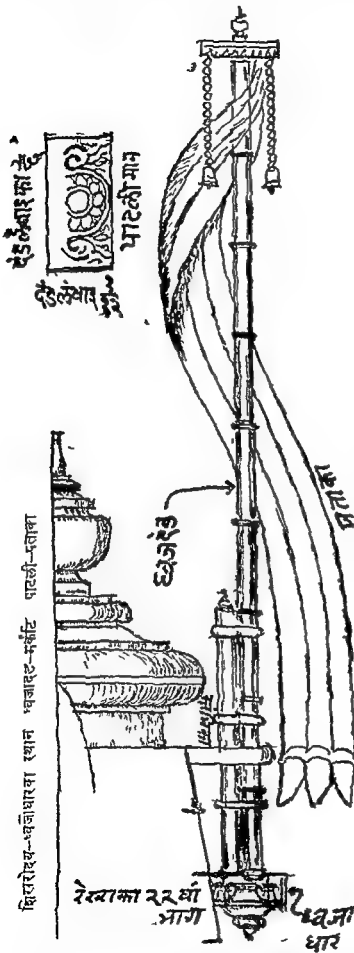
ध्वजाधारस्तु कर्तव्य ईशाने नैरुतेऽथवा ॥ ४० ॥

८. आमलसाराके पृथक् पृथक् विभाग भिन्न भिन्न ग्रंथोंमें है । दीपार्णव में चौदह भाग ऊँचाईमें गला तीन भाग, अंडक पाँच भाग, चन्द्रस और जांजरी तीन तीन भागकी इस तरह कुल चौदह भाग उदय और अठ्ठाईस भाग विस्तार, दूसरे प्रकारसे-ऊँचाई में चार भाग कर पौने भागका गला, सवा भागका अंडक चन्द्रस और जांजरी एक एक भागकी करना । उस तरह ८ विस्तारमान है ।

(६) भूण शिखरना आमलसाराना मध्यगर्भे श्रुतीरूपे (कुंडयतोथी अलंकृत करेली होय छे.) परंतु पाछसा डालमां आमलसारना यारे गर्भे योगिनीना भुण्णे अने स्कंध पर भुण्णे तापसनां रूपे करवानी प्रथा प्रविष्ट थई होय तेम लागे छे. लद्रे योगिनी भुण्ण करवाने कोई ग्रंथमां पाठ नथी. भारतना अन्य प्रदेशोना शिखरोमां श्रुतीना स्थाने श्रुता कामोमां रूपती आकृति करेल जेवामां आवे छे. उडीया प्रदेशमां उलउक पगे भेठेल हाथ जेउतो पुरुष जेवामां आवे छे.

भीष्म अथ प्रथा शिखरना आंधणामां ७ आठ दश आंगुलनो आंधणानो पट्टो गलार डाढवानी प्रथा शिल्पीओमां असोड वपथी नवीन पेठी छे. नूना कोठपिण्ड काममां आंधणानो उपउतो पट्टो जेवामां आवतो नथी. आरभी सदीना सोमनाथश्रुता प्राचीन मंदिरना शिखरने आवो पट्टानो थर नरथर जेवो तेना अवशेषोमां जेवा भजे छे.

९. मूल शिखरके आमलसाराके मध्य गर्भमें जीभी के रूपमें (कुडचलोसे अलंकृत की हुई होती है) परन्तु पीछले कालमें आमलसाराके चारों गर्भोंमें योगिनीके मुखों और स्कन्ध के पर



प्रासादना शिखरने ध्वजदंड
 रोपवानु स्थान-पाछला लागभा
 जमणी तरङ्गना पढरे ध्वजधार
 पूर्वमुपना प्रासादने नैऋत्य
 भुज्जे के पश्चिम मुपना प्रासादने
 ध्यानकोले राखवो ४०

प्रासादके शिखरको ध्वजादंड
 रखनेका स्थान पिछले भागमे
 वहिनी तरफ के पढरेपर ध्वजा-
 धार पूर्वमुखके प्रासादको नैऋत्य
 कोनेमे या पश्चिम मुखके प्रासाद-
 को ईशानकोनेमे रखना । ४०

ध्वजाधार-स्तम्भवेध स्थान प्रमाण-
 रेखोर्ध्वे पट्टके भागे
 सत्रांशपाद वर्जितम् ।
 ध्वजाधारस्तु कर्तव्या
 दक्षिणे च प्रतिस्थे ॥४१॥

प्रासादना शिखरनी भूज
 रेणाना उदय पायथाथी
 पाधज्वा सुधीनी जियाधना छ
 लाग करी तेभा उपरना छडा
 लागभा योथो लाग डीन करी
 तेडलाभा लागे पाधज्वाथी नीचे
 ध्वजधार (भोटु लाभसु कलाजो)
 शिखरनी पाछला जमणी तरङ्गना
 प्रतिस्थभा करवो आ ध्वज
 धारने-स्तम्भवेध-पछु कडे छे
 (पाछला असेक वर्षमा ज्या
 ध्वजपुरुषनी भूति करवानी
 प्रथा शुश्रूषतमां आहु, यध छे

परंतु त्यां लाभसा जेवो ध्वजधर करवो ४१.

प्रासादके शिखरकी मूलरेखाके उदय-पायचेसे स्कंध तककी ऊँचाईके छः भागकर उसमें उपरके छठे भागमें चौथे भागको हीनकर, उतनेही भागमें स्कंधसे नीचे ध्वजा धार (बड़ा लाभसा, कलाबा) शिखरके पीछे दाहिनी तरफके प्रतिरथमें करंना । यह ध्वजाधारको=स्तम्भवेध भी कहते हैं । (पीछले करीब दोसौ वर्षमें यहाँ ध्वजापुरुषकी मूर्ति करनेकी प्रथा गुजरातमें चालु हुई है, परंतु वहाँ लाभसाके जैसा ध्वजाधार करना । ४१

प्रासादस्य पृष्ठभागे दक्षिणादिशि चानुगे ।

स्तम्भवेधस्तु कर्तव्यो भित्तिश्च षण्कांशकः ॥ ४२ ॥

ध्वजावती स्तम्बिका च चाष्टांश्रवा वृत्तास्तथा ।

तदूर्ध्वकलशं कुर्यात् वंश बंध प्रतिहस्तके ॥ ४३ ॥

प्रासादना शिखरना पाछला लागमां जमणा प्रतिरथमां स्तम्भवेध (ध्वज दंडने उभा राखवानो लाभसा जेवो कलाबा) करवो ते प्रासादनी भीतनी नडा-धना छठ्ठा लाग जेटवो करवो. ध्वजदंड साथे उभी करवानी स्तम्बिका (ध्वज-धारथी ते आभलसारा मथाणा सुधीनी उंचाधनी) करवी ते स्तम्बिका अष्टांश अथवा गोण (ध्वजदंडथी थोडी पातणी) करी ते उपर कणश करवो ध्वजदंडअने ते स्तम्बिकाने मज्जुत (त्रांणाना पाटाना) अंधो गजे गजे जडवा. १० ४२-४३.

कोनेमें तापसके रूपों करने की प्रथा प्रविष्ट हुई हो ऐसा लगका है । भद्रमें मुख करने का किसी ग्रंथमें पाठ नहीं है ।

भारतके अन्य प्रदेशोंके शिखरोंमें जीभीके स्थानपर पुराने कामोंसे रूपकी आकृति की हुई दिखती है । उड़ीया प्रदेशमें खड़े पाँव पर बैठा हुआ हाथ जोडना पुरुष देखनेमें आता है ।

दूसरी एक प्रथा शिखरके स्कंधमें छः आठ दस अँगुलके स्कंधके पट्टेको बाहर निकालनेकी प्रथा शिल्पियोंमें करीब दोसों वर्षोंसे प्रविष्ट हुई है । पुराने कोई भी काममें स्कंधका उठता पट्टा दिखता नहीं है । बारहवीं सदीके सोमनाथजीके प्राचीन मंदिरके शिखरको ऐसा पट्टा-थर नरथर जैसा उसके अवशेषोंसे देखनेको मिलता है ।

(१०) ध्वजदंड स्थापननी प्राचीन प्रथा श्लोक ४१ थी ४३मां अताव्या प्रमाणे स्कंध आंधणा नीचे ध्वजधर स्तम्भवेध के कलाया करी त्यांथी ध्वजदंड उभो करवामां आवे छे. वणी आंधणाना लागमां पणु पापाणुनो निडाणो राभी तेमां काणु—(डोअ) पाडी ध्वजदंडने परोवी स्थिर मज्जुत करवामां आवे छे ते स्तम्भवेध कलायामां आंगण अरधा आंगुल जेटवुं नीचे दंड उतारी स्थिर करवो. अने दंड साथे स्तम्बिका जरा पातणी आभलसारा जेटवी उंची आंधवी.

असोड वर्षोथी गुजरातनी वर्तमान प्रथा आभलसारामां साल जोही त्यांथी ध्वजदंड उभो करवाथी ध्वजदंडनी लंपाधना मानथी ओ साल जेटवो दंडनो लाग वधु राखवो

प्रासादके शिखरके पीछले भागमें दाहिने प्रतिरथमें स्तम्भवेध, (ध्वजा दडको खड़ा रखनेका लामसा जैसा कलापा) करना। उसको प्रासादकी दिवारके मोटेपनके छूटे भागके बराबर करना। ध्वजादडके साथ खड़ी करनेकी स्तम्भिका (ध्वजाधारसे आमलसाराके शीर्षक तककी ऊँचाईकी) करना। उसको अठाश अथवा गोल (ध्वजादडसे थोड़ी पतली) कर उसके ऊपर कलश करना। ध्वजदड और स्तम्भिकाको मजबूत (ताँबेके पाटेकी घघ गज गज पर जड देना। १० ४२-४३

पडे छे अने ते उये। जलुय छे प्राचीन प्रथा आधुनायी अहार अने आधुनायी नीये ध्वजधार करीने ते प ६३ जेभो कवाथी ते प्रमाण ६३ उये। देभाय छे राजस्थानना सोमपुरा शिपीओ वलाभग आ नूनी प्रथाने अनुसरे छे

आमलसाराभा ध्वजदडने दाखन करे। ते वेध छे

उपर दखी ते ध्वजधारने अध्ये ध्वज धारण करे। पुरुष शिखरनी पाछा करवाभा आवे छे आ प्रथा भाटे मतभेद छे डेटलाक नूना नामा जेवामा आवे छे प ७ तु शास्त्र पाठ ध्वजधार लामसानो अर्थ वधु अथ जेमे छे

ध्वजदड साथे जेभी करवाभा आवती दडीका भाटे वादविवाद छे शास्त्राधाने वधु मान आपनु ते योग्य छे

(१०) ध्वजादड स्थापनकी प्राचीन प्रथा श्लोक ४१ है ४३ में जो बताया है। उसी अनुसार स्तम्भके नीचे ध्वजाधार स्तम्भवेध या कलापा करके वहाँसे ध्वजादडको खड़ा किया जाता है, और स्तम्भके भागमें भा पापाणन मिशला रखर उसमें छिद्र रखके ध्वजा दडको पिरोकर स्थिर-मजबूत किया जाता है, वह स्तम्भवेध-कलावेमें अगुल अर्थ अगुल जितना नीचे उतारकर दडको स्थिर करना। और दडके साथ स्तम्भका जरा पतली आमलसाराके बराबर ऊँची बाँधना।

करीन दो सौ वर्षसे गुजरातकी वर्तमान प्रथा आमलसारेने सालने गाइकर वहाँसे ध्वजा दडको खड़ा करनेसे ध्वजा दडनी लम्बाईके मानसे उस सालके बराबर दडका भाग ज्यादा रखना पडता है। और वह ऊँचा दिखता है। प्राचीन प्रथा स्कंधसे बाहर और स्कंधसे नीचे ध्वजाधार कर उसके उतर खड़ा करनेसे वह प्रमाणसर ऊँचा दिखता है। राजस्थानके सोमपुरा जिलपीयो बहुत करके पुरानी प्रथाको अनुसरते हैं।

आमलसारेमें ध्वजादडको दाखिल करना यह वेध है।

उपरोक्त ध्वजाधारके बदले ध्वजाधारी पुरुष शिखरके पीछे किया जाता है। इस प्रथाके लिये मतभेद है। कई पुराने नाममें दिखाता है। परंतु शास्त्र पाठ ध्वजाधार लामसाका अर्थ ज्यादा बैठना है।

ध्वजा दडके साथ खड़ी की जानी दडिकाके लिये बाद विवाद है। शास्त्राधारको ज्यादा मान देना चाहिये।

अथकलश—यथाकलशस्य यत् द्रव्यं प्रासादाष्टमांशकम् ।

विस्तारंकृते प्राज्ञ उदयं च सार्द्धं संगुणम् ॥४४॥

ततो नवधा विभक्तं च पडघीभागमेवच ।

अण्डकं च त्रयो भाग ग्रीवायां भागएवच ॥४५॥

पनडी कंकणीयुक्तं भागमेकं च कारयेन् ।

अंडकोच्च त्रयो भागे भागैकं मस्तको परि ॥४६॥

ये द्रव्येना प्रासाद होय ते द्रव्य (पाषाण के धातु के काष्ठ)ने कणश, प्रासाद ढेठलो रेखाये होय तेना आठभा भागे पडोणो करवो अने पडोणाधरी होढो उंचो उद्या शिखीये करवो नीचेनी पडघी पीठ ओक लागनी, अंडक त्रय लागनो, गणुं छलने कणी ओकेक कुल ये लागनी अने होडलो = ग्रीवपुर त्रय लाग उंचो अने ते मथाणे ओक लागनो पडोणो उडलो करवो ये रीति नव भाग उंचाईना न्णुवा. ४४-४५-४६.

जिस द्रव्यका प्रासाद हो उस द्रव्य (पाषाण या धातु या काष्ठ) का कलश, प्रासादको वह जितना रेखाके पर हो उसके आठवें भागमें चौड़ा करना । और चौड़ाईसे डेढ़गुना ऊँचा करना । नीचेकी पडदा पीठ एक भागकी, अंडक तीन भागका, गला, छजी और कणी एक एक कुल दो भागकी और दोडला = ग्रीवपुर, तीन भाग ऊँचा और उस शीर्षककेपर एक भागका चौड़ा दोडला करना । इस तरह नौ भाग ऊँचाईके जानना । ४४-४५-४६

(११) प्रासादनी रेखाणा आठमांश कणश ये कनिष्ठमान इहेव छे. तेना साणभो लाग वधारवाधी श्रेष्ठमान अने अत्रीशभो लाग वधारवाधी मध्यमान कणशनी पडोणाईना न्णुवा.

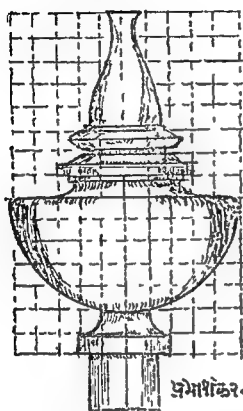
वैराट, द्राविड, भूमिज, विमान अने वल्लभादि नतिना प्रासादोने प्रासादना छटा भागे विस्तारनो कणश इहो छे.

कणशनां ग्रीव ये प्रमाणो इहां छे. शिखरना पायव्यानी पडोणाईना पांचभा भागे कणश पडोणो करवानुं इहो छे तेमज आमलसाराणा सोण लाग करी तेना पांचभा भागे कणश पडोणो राखवानुं त्रीनुं प्रमाण छे.

(११) प्रासादको रेखाके अष्टमांश कलश यह कनिष्ठमान कहा है । उसके सोलहवें भागका बढ़ानेसे श्रेष्ठमान और वत्तीसवाँ भाग बढ़ानेसे मध्यमान कलशकी चौड़ाईके जानना ।

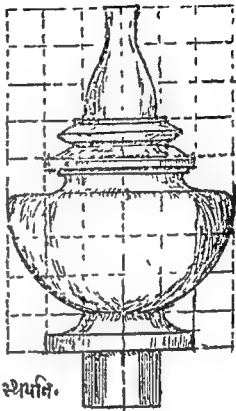
वैराट, द्रविड, भूमिज, विमान और वल्लभादि जातिके प्रासादोंको प्रासादके छठे भागमें विस्तारका कलश कहा है । कलशके दूसरे दो प्रमाण कहे हैं । शिखरके पायचेकी चौड़ाईके पाँचवें भागमें कलशको चौड़ा रखनेके लिये कहा है । और आमलसारेके विस्तारके सोलह भाग कर उसके पाँचवें भागमें कलशको चौड़ा रखनेका तीसरा प्रमाण है ।

ગ્રીનાયાશ્વોમયેત્રાજાં દ્વિભાગં ચ વિચક્ષણમ્ ।
 પદ્મંદકં પનડી ચૈવ ચતુર્ભાગાનિ મધ્યતઃ ॥ ૪૭ ॥
 અગ્રેકાંગમ્લે દ્વૌ વહ્ની વેદાંશ કર્ણિકે ।
 શ્રેષ્ઠ ચ સર્વ શ્રેષ્ઠાના સુવર્ણફલગં ધ્વજમ્ ॥ ૪૮ ॥



કલશ માન

પ્રભાશંકર.ઓ.સ્થપતિ.



વિભાગ ૧૫ x ૧૦

વિભાગ ૯ x ૬

હવે કળશના વિસ્તાર ભાગ કહે છે નીચેની પડધી પીઠ ચાર ભાગ પહોળી તેનું ગળુ બે ભાગનું વિચક્ષણ ગીતે ડાહ્યા શિલ્પીએ કરવા મોટો અડક છ ભાગ પહોળો છાજલી ચાર ભાગની અને કણી ત્રણ ભાગ વિસ્તારની બીજપુર ડોડલા અગ્રે એક ભાગ અને નીચે મૂળમા બે ભાગ કણી ત્રણ ભાગ અને છાજલી ચાર ભાગની કરવી શ્રેષ્ઠમા શ્રેષ્ઠ અને સર્વશ્રેષ્ઠ સુવર્ણનો કળશ ધ્વજદંડ પ્રાસાદને બાણવે ૪૭-૪૮

અવ કલશકે વિસ્તાર ભાગ કહતે હૈં । નીચેની પીઠ ચાર ભાગ ચોડી ઉસકા ગળાં બે ભાગકા વિચક્ષણ રીતસે સયાને ઝિલીકો કરના । વડા અડક છ ભાગ ચોડા-છાજલી ચાર ભાગની ઔર કણી ત્રીન ભાગ વિસ્તારની-બીજપુર ડોડલા અગ્રે એક ભાગ ઔર નીચે મૂળમેં બે ભાગ-કણી ત્રીન ભાગ ઔર છાજલી ચાર ભાગની કરના । શ્રેષ્ઠમેં શ્રેષ્ઠ ઔર સર્વશ્રેષ્ઠ સુવર્ણકે ફલગકો ધ્વજદંડ પ્રાસાદકો જાનના । ૪૭-૪૮

અથ પ્રાસાદપુરુષઃ—અથાતઃ સંપ્રવક્ષ્યામિ પુરુષસ્ય પ્રવેશનમ્ ।

ન્યસેદ્ દેવાલયપ્યેવં જીવ સ્થાન ફલં ભવેત્ ॥૪૯॥

સ્કંધોર્ધ્વં તત સ્થાપ્ય તામ્ર પર્યંક સંસ્થિતામ્ ।

શયનં ચાપિ નિર્દિષ્ટં પદ્મં વૈ દક્ષિણ કરે ॥૫૦॥

^{૧૨}ત્રિપતાકં કરં વામે કાર્યે હૃદિ સંસ્થિતમ્ ।

ધૃતપાત્રં સ્યો પરિ પર્યંકે સુવર્ણપુરુષે ॥૫૧॥

પ્રમાણં તસ્ય વક્ષ્યામિ અર્ધાંગુલે ચૈક હસ્તકમ્ ।

અર્ધાંગુલા ભવેદ્ વૃદ્ધિર્વાવત્પંચાશ હસ્તકમ્ ॥૫૨॥

હવે હું સુવર્ણના પ્રાસાદ પુરુષ જે જીવ સ્થાન રૂપ છે તે આમલ સારામાં પધરાવવાનો વિધિ જે કળ રૂપ છે તે કહું છું. આંધણના મથાળે આમલસારામાં ત્રાંબાકે આંદીનો ઢોલીઓ (રેશમના દોરાની પાટી કરી) ગાદલી ઓશીકું રેશમનું કરી તે પર સુવર્ણનો પ્રાસાદ પુરુષ જેના જમણા હાથમાં કમળ અને ડાબા હાથ ત્રણ શિખાવાળી પતાકા ધારણ કરેલ હાથ હૃદયે છાતીએ રાખેલો હોય તેવી આકૃતિવાળી પધરાવવી (સુવરાવવી.) આમલસારમાં ત્રાંબાનો ધી ભરેલ કળશ પાત્ર ઉપર ઢોલીઓ મૂકી તે પર સુવર્ણની પ્રાસાદ પુરુષની મૂર્તિ સંપૂર્ણ રૂપે રાખી સુવરાવવી. તેનું પ્રમાણ કહું છું. પ્રત્યેક ગળે અર્ધા અર્ધા આંગળની તેમ પચાસ હાથ સુધીના પ્રાસાદનું પ્રમાણ પ્રાસાદ પુરુષનું બાણવું.^{૧૩} ૪૯-૫૦-૫૧-૫૨.

(૧૨) સુવર્ણ પ્રાસાદ પુરુષના ડાબા હાથમાં ત્રણ શીર્ષકવાળી પતાકા દેવાનું કહ્યું છે અને તે પ્રથા શિખરમાં ધ્વજપુરુષનું પણ કરે છે. ત્રિપતાકનો અર્થ તેવી ધ્વજને બદલે હસ્તમુદ્રા એમ કેટલાક માને છે. ધ્વજને બદલે ત્રિપતાક હસ્તમુદ્રા કરવાનું કહે છે.

(૧૨) સુવર્ણ પ્રાસાદ પુરુષને વાંચે હાથમાં ત્રણ શીર્ષકવાળી પતાકા દેનેકે લિયે કહા હૈ । ઓર યહ પ્રથા શિખરમાં ધ્વજા પુરુષ મી કરતે હૈ । ત્રિપતાકના અર્થ વૈસી ધ્વજાકે વદલે હસ્તમુદ્રા કઈ લોગ કરતે હૈ । ધ્વજાકે વદલે ત્રિપતાક હસ્તમુદ્રા કહતે હૈ ।

(૧૩) આમલસારમાં મધ્યમાં ઉંડું ગોળ સાલ ખોદી તેમાં પ્રથમ ગાયનું ધી ભરેલ શેર સવાશેરના કળશ ઢાંકણું બંધ કરી કપડું આંધી મૂકવો તે પર પાતળું આરસનું પાટિયું ઢાંકી તેના પર સુવર્ણ પુરુષની ગાદીવાળો ઢોલીઓ આંદીનો મૂકી તેમાં પ્રાસાદ પુરુષની મૂર્તિ સુવરાવવી તે પર બે ત્રણ કે ચાર આંગળ જેટલી ખાલી જગ્યા રહે તેમ આરસનું પાતળું પાટિયું સંપૂર્ણની જેમ ઢાંકી દેવું. તે પછી પ્રતિષ્ઠા સમયે કળશ સ્થાપન કરવાને કળશના સાત જેટલી ઉંઝાઈ રાખી આમલસારાનું વચ્ચું સાલ વધારાનું પૂરી દેવું. સુવર્ણનો પ્રાસાદ પુરુષ દયાય નહીં તેમ ઢાંકવું સંપૂર્ણની જેમ ખાલી જગ્યા રાખી સુવર્ણના પ્રાસાદ પુરુષને પધરાવવો સુવર્ણપુરુષને પ્રાસાદમાં છાતીયા ઉપર શિખરીના થરોમાં કે શુકનાશ ઉપર પધરાવી શકાય એમ કહ્યું છે.

अब मैं सुवर्णके-प्रासादपुरुष जीवस्थानरूप आमलसारेमे पधरानेका विधि जो फलरूप है, वह कहता हूँ । स्कन्धके शीर्षरूप पर आमलसारेमे तावे या रूपके पर्यंकपर (रेशमके धोंगेकी पाटी करना ।) विछौना और तक्रिया कर सुवर्णका प्रासाद-पुरुष जिसके दाहिने हाथमे कमल और बायाँ हाथ तीन शिरावाली पताका लिया हुआ हाथ हृदयपर रखा हुआ हो, वैसी आकृतिको पधराकर सपूट रूप रखके (सुलाकर) आमलसारेमे त्रावेके-धीके भरे हुए कलश पात्रके ऊपर पर्यंकको रखकर उसके-ऊपर सुवर्णकी, प्रासाद पुरुषकी मूर्ति को सपूट जैसे रखके सुलाना । इसका प्रमाण कहता हूँ । प्रत्येक गजपर आठ आठ अंगुलका और पचास हाथ तकका प्रासादका प्रमाण-प्रासाद पुरुषका जानना । १३



प्रासाद सुवर्णपुरुष

अथ च जेदंड—

तथा चानन्तरं त्रक्षये दंडमान अतः शृणु ।

एक इस्ते तु प्रासादे दंडपादुन

मंडगुल ॥ ५३ ॥

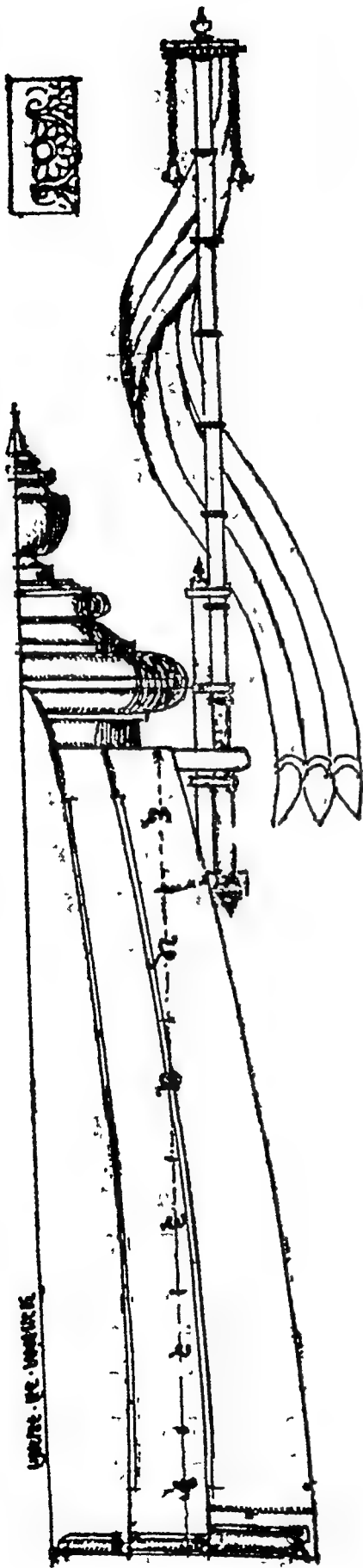
अर्धाङ्गुल भवेद् वृद्धिः पञ्चविंशति हस्तके ।

अतोर्धपादवृद्धिप्रयत्नेन शतार्द्धमानके ॥ ५४ ॥

सुवर्ण प्रासाद पुरुष

छेदे छे ६३ मान छे छे ते मागणे। ओक हाथना प्रानाहने पोथु।
आगणने लडो ध्वज ६३ उरवे, ओथी पञ्चीस हाथ मुधीनाने प्रत्येक हाथे अर्धा

(१३) आमलसारमे मध्यमे गहरा, गोलमालको गढकर उसमे पथम गायके धीसे भरे हुए शेर शवाशेरके कलश दमना बंधकर, कपड़ा बांधकर रगना । उसके पर पतली आत्मकी पट्टी ढँककर उसके पर सुवर्ण पुरुषकी गद्दीवाला चाँदीका पर्यंक रखकर उसमे प्रासाद पुरुषकी मूर्ति को सुलाना । उसके पर दो तीन या चार अंगुल जितनी खाली जगह रहे । इस तरह आरसकी पतली पट्टी सपूटकी तरह ढँकना । उसके प्राद प्रतिष्ठाके समय कलश स्थापन करनेके लिये कलशके सालके बराबर गहराई रखकर आमलसागके त्रिचके सालको पूरा देना । सुवर्णका प्रासाद पुरुष इन न जाय इस तरह ढँकना । सपूटकी तरह खाली जगह रगना । सुवर्णके प्रासाद पुरुषको पधरानेके स्थान प्रासादमे छतीयाके उपर शिखरी के बरामे शुक्रनासके उपर ऐसा भी कहा है



शिखरपर ध्वजादंड स्थापनका विभाग ओर ध्वजादंड मर्कटी= पाटली ओर पताका-ध्वजा

अर्धा आंगुलनी वृद्धि करवी. तेथी वधु पचास हाथ सुधीना प्रासादने प्रत्येक गजे प्रापा $\frac{1}{8}$ आंगुलनी वृद्धि करता जवी. हे ऋषिराज, ये रीते ध्वजदंडनी लडाई कडी. हुवे ध्वजदंडनी लांबाईनुं उंचाईनुं मान सांभणो. ५३-५४.

अब मैं दंडमान कहता हूँ, उसे सुनो । एक हाथके प्रासादको पौने अंगुलका मोटा ध्वजदण्ड करना । दोसे पच्चीस हाथ तकके प्रत्येक हाथपर आधे आधे अंगुलकी वृद्धि करना । उससे ज्यादा पचास हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक गजपर पा पा $\frac{1}{8}$ अंगुलकी वृद्धि करते जाना । हे ऋषिराज, इस तरह ध्वजादण्डका मोटापन कहा । अब ध्वजादण्डकी लम्बाईका-ऊँचाई का मान सुनो । ५३-५४

पीडंच कथितं वत्स उदयंच अतः शृणु ।

प्रासादकोण मर्यादा सप्तहस्ता न मध्यतः ॥ ५५ ॥

गर्भमाने च कर्तव्यं हस्तस्यात्पंच विंशतिः ।

रेखामानं च कर्तव्यं यावत्पंचाश हस्तकम् ॥ ५६ ॥

हुवे ध्वजदंडनी लांबाईनुं मान प्रमाण कडुं छुं. ओकथी सात सुधीना प्रासादने गडार रेखाये होथ तेठलो दंड लांभो राखवो. आठथी पच्चीस हाथना प्रासादने गलाराना मान जेठलो अने छवीशथी पचास हाथ सुधीना प्रासादने शिखरनी रेखा= पायच्याना विस्तार जेठलो ध्वजदंड लांभो राखवो. ५५-५६.

अब ध्वजादण्डकी लम्बाईका मान प्रमाण कहता हूँ । एकसे सात हाथ तकके प्रासादको बाहर रेखापर हो उतना दण्ड लम्बा रखना । आठसे पच्चीस हाथके प्रासादोंको गर्भगृहके मानके बराबर और छवीससे पचास हाथ तकके प्रासादोंको शिखरकी रेखा-पायचे विस्तारके बराबर ध्वजदण्ड लम्बा रखना । ५५-५६

अष्टमाशयदाहीनं कन्यसं शुभ लक्षणम् ।

ज्येष्ठ तत्प्रायेत् ढंड अष्टमाश तथाधिकम् ॥ ५७ ॥

आवेष्ट मानथी आठभो लाग हीन करवाथी शुभ ज्येष्ठ कनिष्ठमान नालुवु
अने ने आठभो लाग वधारवाथी ज्येष्ठमान दंडु नालुवु १४

आये हुए मानसे आठवाँ भाग हीन करनेसे शुभ ऐसा कनिष्ठमान जानना ।
और जो आठवाँ भाग बढ़ाया जाय तो ज्येष्ठमान ढण्डका जानना । १४ ५७

(१४) दीपार्णव भा धनदंडना पाय लुफ लुफ प्रभाषो आपेना छे धनदंडनी
लयाधना विधि प्रभाषो छे छे १ प्रासादनी जग्यामे मिताग जेटयो २ योधीना
पटना ये नलना मितागना गाणा जेटयो ३ गजगुह जेटयो ४ रेभाये होय तेदो
५ प्रासादना शिखरना पाययाना जेटयो धनदंड लाभो ज्येष्ठ ये पाय प्रदाना छे
छे भत भतातरे मे (विश्वकर्मां) छे छे

प्रासादकटिविस्तार चतुष्कि स्तम्भ विस्तरात् ।

गर्भमिति सम दैव्य क्वचित् कर्णस्य विस्तरम् ॥ ९२ ॥

विभक्तं चैव प्रासादे शिखर विस्तृते समम् ।

ध्वजवशास्य दीर्घत्व मया प्रोक्त मतान्तरे ॥ ९६ ॥

१५ वजादण्डनी लम्बाईके मित्र मित्र प्रमाण-दीपार्णवमे ध्वजाण्ड के कहे हैं ।
१ प्रासादकी जघावे पर विस्तारके बराबर २ नौरीके पदके दो स्तम्भ के विस्तारके अंतरके
बराबर गर्भगृहके बराबर ४ रेखाके पर जितना हो उतना ५ प्रासाद के शिखरके पायचेके
बराबर ध्वजदण्ड लम्बा करना । ये पांच प्रकारके मित्र मित्र मतमतान्तर में (विश्वकर्माने)
कहा है ।

ढंडकार्यस्तृतीयांशे शिलान्त कलशान्तकम् ।

मध्यश्चाष्टाशहीनोऽसौ ज्येष्ठ पादोन कन्यस ॥ अपराजित सूत्र

नीचे भराथी धडा-लगा मुधीनी गिराना नीला लागना जेटयो लाभो धनदंड
ज्येष्ठ माननो नालुवो तेभाथी आठभो लाग हीन छे तो मध्यमान अने योथो लाग
हीन छे तो कनिष्ठमान दंडु नालुवु धीन पलु प्रभाषो छे छे अथोभा छे छे

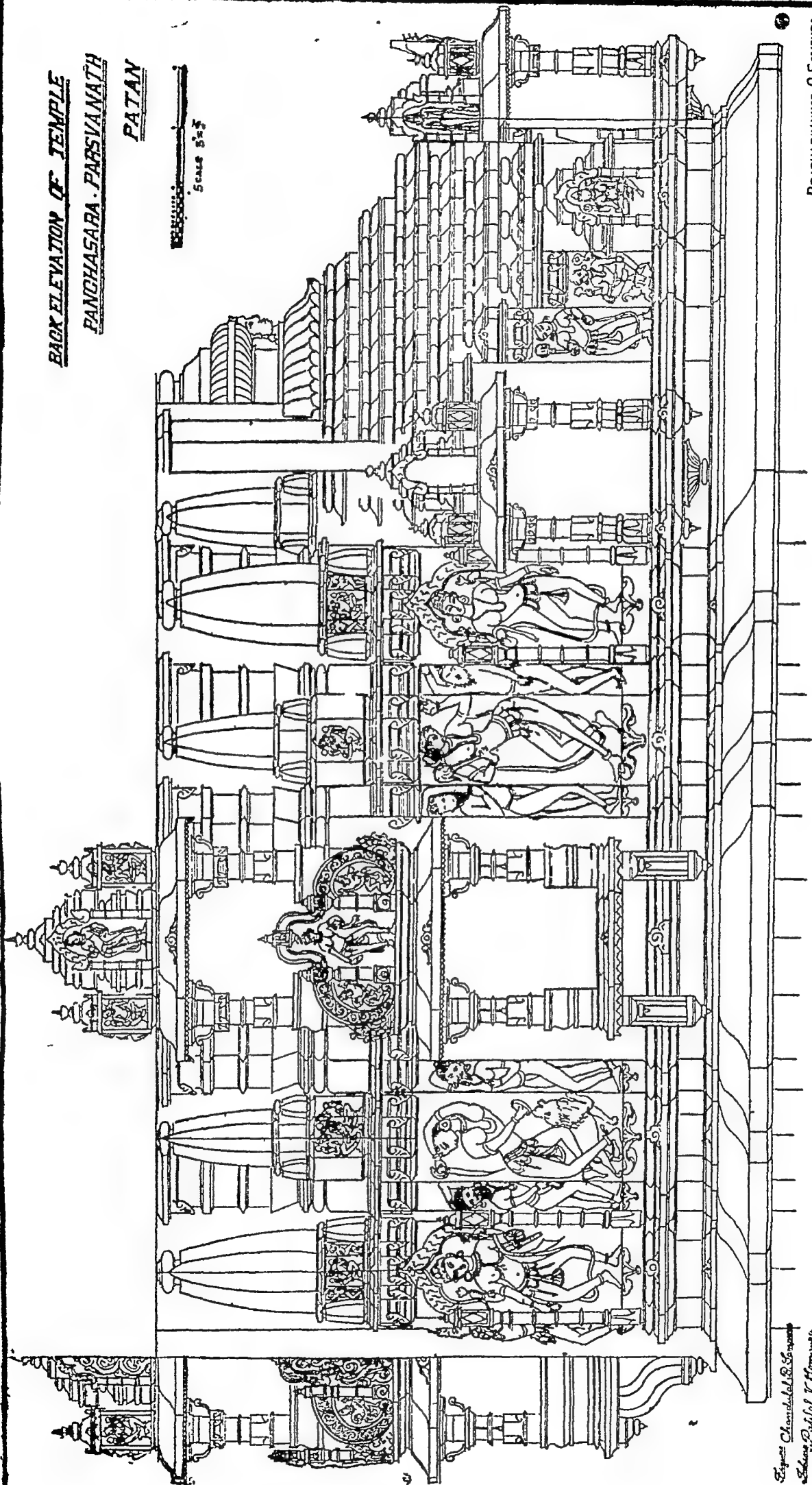
नीचे परसे जण्डे (कन्य) तरुनी ऊँचाई के तीसरे भाग के बराबर लम्बा वजादण्ड
ज्येष्ठमानना जानना । उसमेमे आठवाँ भाग हान कर तो मध्यमान और चौथा भाग हीन
करे तो कनिष्ठमान ढण्डका जानना । दूसरे भी प्रमाण मित्र मित्र प्रयोगे हैं । १ प्रासादरेखा
के पर हो इतना वजादण्ड लम्बा, वह ज्येष्ठमान उसका दसवाँ भाग हान करे तो
मध्यमान और जो पाँचवा भाग हीन कर तो कनिष्ठमान जानना । (२) शिखरको पायचेके
बराबर ध्वजदण्ड कनिष्ठमान का जानना । उसमे बारहवाँ भाग बढ़ानेसे मध्यमान और छठा
भाग बढ़ानेसे ज्येष्ठमान जानना ।

(१) प्रासाद रेभाये होय तेदो धनदंड लाभो ते ज्येष्ठमान-तेनो दशमे लाग
हीन छे तो मध्यमान अने ने पायमे लाग हीन छे तो कनिष्ठ मान नालुवु

(२) शिखरना पाययाना जेटयो धनदंड नीष्ठ माननो नालुवो तेभा यानो
लाग वधारवाथी मध्यमान अने छठे लाग वधारवाथी ज्येष्ठ मान नालुवु

BACK ELEVATION OF TEMPLE
PANCHASARA PARSHVANATH
PATAN

Scale 5" = 1'



Engineers Chandra Lal & Co. Patan
 Lahore P.O. 101 P.O. 101

PRABHASANKER Q. SONPURA
 ARCHITECT

छाद्योर्ध्व शिखर जंघा देवस्वरूप और भद्रमें अलंकृत गवाक्ष सन्मुख और पक्षदर्शन गवाक्ष और संवरणा

तथा पंचप्रमाण तु शृणुत्वेकाग्रतो मुनिः॥

समपर्वे यदादृढ तत्र शक्तिमय प्रभुः॥५८॥

समं च विपमं प्रोक्तं श्रुमतेद्भवेद्वयं॥

हे मुनि ! हुवे तमे पात्र प्रभाषु अकाग्रताथी साधनो भेदी पर्व (गाला) वालो ध्यानादृढ तेम शक्ति देवी उभिया अने शिवने करवो अेदी अने भेदी पर्वना ओम भेद प्रकाशना दंडो राजभवनने विशेष करवानु कहुं छे ५८

हे मुनि, अब तुम पाँच प्रमाण एकाग्रतासे सुनो । वेसी पर्व (गाला) वाला ध्यानादृढ तन्त्र शक्ति देवी उभिया और शिवको करना । सम और विपमपर्वके इस तरहके दोनों प्रकारके दण्ड राजभवनके बारेमे करनेके लिये कहा है । ५९

वैश्वोवाच-कथंदंड समुत्पन्ना कथ पर्वप्रमाणतः ।

कथ शिरोमया प्रोक्ता कथं शक्तिं विनिर्दिशेत् ॥५९॥

वैश्य कहे छे-६३ केवी रीते उत्पन्न थयो तेना पर्वनु प्रभाषु शिवे उभि याओने कहेहुं तो शक्तिना दंडना पर्वनु भने कहुं ५९

वैश्य कहते हैं । दंड कैसे उत्पन्न हुआ ? उसके पर्वका प्रमाण शिवने उभियाजीको कहा था वह शक्तिके दंडको पर्वका प्रमाण मुझे कहो । ५९

श्री विश्वकर्मा उवाच—

कृत्वा योगेश्वरी पूजा दंड दारवं संश्रये ।

महामहोत्सवार्थेन शिवशक्ति समागतः ॥६०॥

चतुषष्टि योगिन्या दंड हस्ते समागतः ।

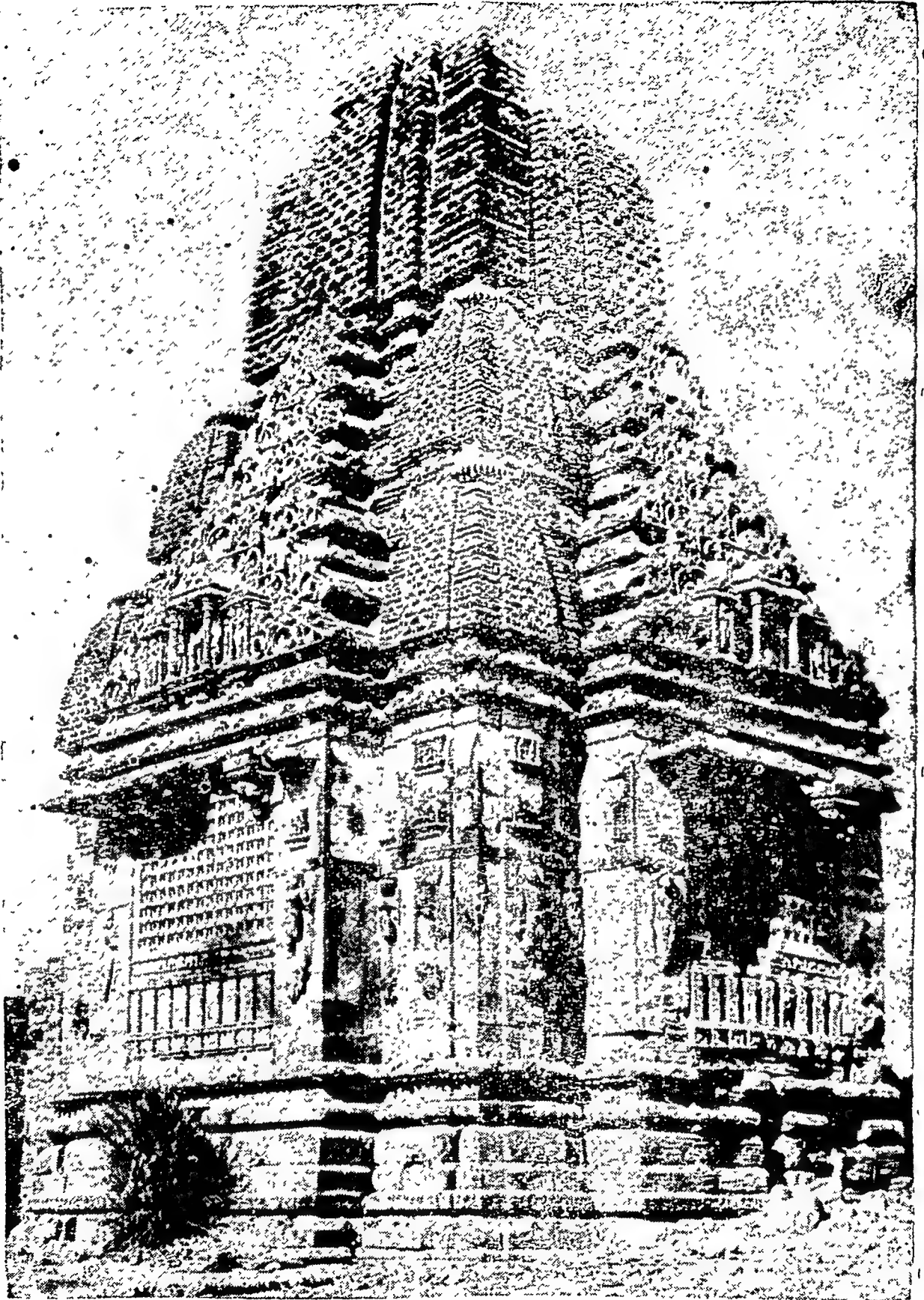
नखुल्लिङ्गाद्यो च योगिन्या दंडकलशमुत्तमम् ॥६१॥

कृत्वा प्रासादमयी पूजा दंडकलशं दीयते ।

पुनरपि पुनरपि पुनरपि दंड वंशमघोत्तमा ॥६२॥

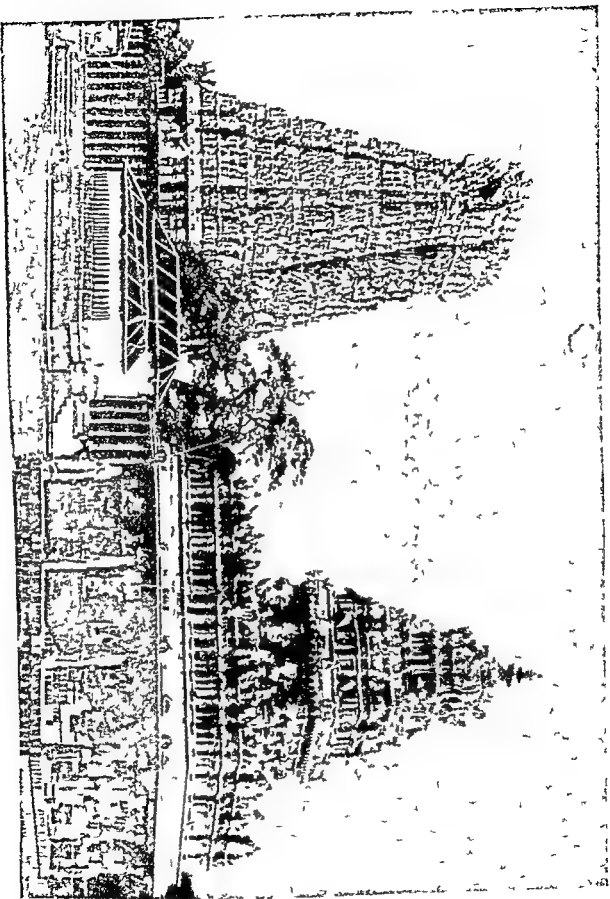
श्री विश्वकर्मा कहे छे देवदारुवनमा आवीने खुलेला शिव शक्तिनी योगेश्वरी पूजा कवा महामहोत्साह कवा भाटे चौसठ योगिनीओ हाथमा दंड लधने तथा नखुल्लिङ्गादि देवो अने योगिन्यादि उत्तम दंड कणश लधने आव्या प्राप्ता हनी अर्चना करी ने दंड अने कणश अडाव्या पुनरपि पुनरपि उत्पन्न थयेला वान-मोथी गनावेल उत्तम ओवा दंडनी उत्पत्ति अर्थ ६०-६१-६२

श्री विश्वकर्मा कहते हैं । देवदारुवनमे आकर वसे हुए शिवशक्तिकी योगेश्वरी पूजा करनेके लिये, महामहोत्साह करनेके लिये चौसठ योगिनियाँ हाथमे दण्ड लेकर तथा नखुल्लिङ्गादि देवों और योगिन्यानि उत्तम दण्ड कलश लेकर



नवमी-दशमी शताब्दीका छजा विहीन (कच्छ) केशकोटा का सर्वतोभद्र शिवप्रासाद

द्रविड शिखरों के दो प्रमाण—गोपुरम् और शिखर



आये । प्रासादकी रचना कर दण्ड और कलश चढ़ाये । पुनः गिरिमें उत्पन्न हुये बाँसमें बनाये हुए उत्तम ऐसे दण्डकी उत्पत्ति हुई । ६०-६१-६२

तस्यार्धे पर्वमादाय विषमक्रमानोत्तमा ।

अधोमुख शिवदण्ड सन्मुखं शक्तिमेव च ॥ ६३ ॥

मध्यपर्व भवेज्ज्येष्ठं अधोऽर्ध्वं च कन्यस ।

वंशा न क्रम भवैतं च समपर्व शक्तिमार्चित ॥ ६४ ॥

भावार्थ—पड़ेला जे पढ़ेला त्रण प्रकारे अर्थ धटावी शक्य। (१) तेनाथी अर्धमां पर्व दंडमां कुमथी विषम करवा ते ज्येष्ठ (२) तेना उपरना पर्व जे विषमकुमथी होय तो ज्येष्ठ (३) तेमांथी अर्धा विषम पर्वने कुमथी त्रण करवा ते उत्तम ज्येष्ठ शक्तिनी सामे शिवदंड अधोमुख जिलो करवो ते अधो मुख ओटले वृक्षनुं थड भूण उपर अने टोचनेला लाग नीचे राणी जिलो करवो। शक्तिने दंड तेथी जलटी रीते वृक्षकाष्ठने दंड जिलो करवो ओटले वृक्षकाष्ठनुं थडभूण नीचे अने टोचनेला लाग जियो राणवो (वांसने पर्व अने गांठो होय छे तेनां पर्व सरणा नथी होतां वांसने नीचेनां पर्व नानां होय छे अने उपरनां पर्व मोटां होय छे आ अपेक्षा ओ काष्ठना दंडने अधोऽर्ध्वं कह्युं) ६३.

(दंडनी जियाधना त्रण लागमां) मध्यमां पर्व करवां ते ज्येष्ठ मान अने नीचे उपर कनिष्ठ मान दंडना वंशना पर्वकुमथी शक्तिने समपर्वने दंड ओटले वर्ये कांक्रणी = ग्रंथीवाणो तेवो दंड पूज्य छे. ६४

भावार्थ—प्रथम दो पदोंके अर्थ तीन प्रकारसे हो सकते हैं । (१) उससे अर्धमें पर्वदण्डमें क्रमसे विषम करना यह ज्येष्ठ (२) उसके उपरके पर्व जो विषम क्रमसे हो तो ज्येष्ठ (३) उसमेंसे आवे विषमपर्वके क्रमसे ग्रहण करना, यह उत्तम ज्येष्ठ । शक्तिके सामने शिवदण्ड अधोमुख खड़ा करना । वह अधोमुख अर्थात् वृक्षके खम्भेको मूलके उपर और रोचके भागको नीचे रखकर खड़ा करना । शक्तिका दण्ड इससे उतरी तरह वृक्षकाष्ठका दण्ड खड़ा करना अर्थात् वृक्षकाष्ठका थडमूल नीचे और टोचका भाग ऊँचा रखना (बाँसको पर्व और गाँठ होते हैं । उसके पर्व समान नहीं होते हैं । बाँसको नीचेके पर्व छोटे होते हैं । और उपरके पर्व चड़े होते हैं । इस अपेक्षासे काष्ठके दण्डको अधोऽर्ध्व करना) । ६३

(दण्डकी ऊँचाईके तीन भागमें) मध्यमें पर्व करना यह ज्येष्ठमान और नीचे उपर कनिष्ठ मान दण्डके पर्वक्रमसे शक्तिको समपर्वका दण्ड अर्थात् विचमें कांक्रणी=ग्रंथीवाला वैसा दण्ड पूजा जाता है । ६४

સમપર્વે યદાદંડં મધ્યં કુર્યાત્તુ કિંકિણિ ।

જ્યેષ્ઠ પર્વે ચ મૂર્ધ્વે વા અઘર્ઘ્યે ન કન્યમ ॥ ૬૫ ॥

વિપમ પર્વે જ્યેષ્ઠ દંડ મધ્ય પર્વેસુ જ્યેષ્ઠકં ।

અંકાન ક્રમતો યાનિ વ્યૂપક્ષે ન કન્યસ ॥ ૬૬ ॥

ભાવાર્થ-જ્યેષ્ઠ પર્વ ઉપર હોય અથવા નીચે ઉપર કનિષ્ઠ પર્વ વિપમ પર્વના જ્યેષ્ઠ દંડને મધ્યનુ પર્વ જ્યેષ્ઠ કરવુ આ અંકના ક્રમ હોવાથી બેઉ બાજુ એટલે ઉપર નીચે કનિષ્ઠ ન કરવા ૬૫-૬૬

માર્વાર્થ-જ્યેષ્ઠપર્વ ઉપર હોતા હૈ અથવા નીચે ઉપર કનિષ્ઠપર્વ વિપમપર્વ કે જ્યેષ્ઠ વળકો મધ્યકા પર્વ જ્યેષ્ઠ કરના । એ અંકને ક્રમ હોનેસે બેનો તરફ અર્થાત ઉપર નીચે કનિષ્ઠ ન કરના । ૬૫-૬૬

દ્વિત્રિમેકે ચ રૂપે ચ ચતુર્થે ચ દ્વિતીયકં ।

પટમપ્તમ કૂર્યાત્ત ચતુર્થેષ્ટ નંદકે ॥ ૬૭ ॥

અથવાદિ ક્રમાત્યુક્તિઃ પદૈર્ સર્વકામદમ્ ।

તથા ચ મુકુટમાનં ॥ ૬૮ ॥

હવે દંડને મુકુટ અને પાટલીનુ માન કહું છું ૬૭-૬૮

અથ વળકા મુકુટ ઓર પાટલીકા માન કહતા હું । ૬૭-૬૮

મર્કટીમાન-દંડદીર્ઘપટ્ટમાંગેન તદર્ધ વિસ્તરૈ મર્કટિ ।

વિસ્તરસ્ય તૃતીયાંશેન પીઠં કૂર્યાદ્વિચક્ષણ ॥ ૬૯ ॥

ત્રિમાર્ગ ભાગમિત્યુક્તં તતો વૃત્તં ચ ભૂપિત ।

શઙ્ખ ચક્ર કરોક્ત ચ કમલાના મતઃ મૃણુ ॥ ૭૦ ॥

મધ્યે કલશં ચ કર્તવ્યં દંડોદયાત્ પોઢશ ।

પ્રાશકં તૃતીયાંશેન ઉભયો વામદક્ષિણે ॥ ૭૧ ॥

ધ્વજદંડની લાખાઈના છઠ્ઠાભાગની મર્કટી = પાટલી લાખી કરવી લાખાઈના અર્ધ પહોળી અને પહોળાઈના ત્રીજા ભાગે બાકી પાટલી કંઠવી ૬૯ પાટલીના નીચે ત્રીજા ભાગે ગોળ વૃત કંઠી (જે બાજુ ગંગાગની આકૃતિ કરવી) વિષ્ણુના મંદિરના દંડની પાટલી પર શંખ અને ચક્ર કમળ કરવા (શીવ-હોય તો ઉમરૂ ત્રિશૂલ) પાટલી ઉપર ધ્વજદંડની ઉચાઈના ઓળખા ભાગે હથોડીગણ કરવો તે

કળશના ત્રીજા ભાગે ઉંચા ભાલા (પક્ષી ન બેસે તેવા) પાટલીના કળશની બે બાજુએ કરવા.

ધ્વજદંડકી લમ્બાઈકે છઠ્ઠેભાગકી મર્કટી=પાટલી લમ્બી કરના । લમ્બાઈસે આધી चौडी और चौडाईके तीसरे भाग पर मोटी पाटली करना । ૬૯

પાટલીકે નીચે ત્રીસરે ભાગપર ગોલવૃત્ત કરકે (દો તરફ ગગારેકો આકૃતિ કરના) વિષ્ણુકે મંદિરકે દંડકી પાટલીકે ઉપર શંખ ઓર ચક્ર કમલ કરના । (શિવ હો તો હમરૂ ત્રિશૂલ) પાટલીકે ઉપર ધ્વજદંડકી ઝૂંચાઈકે સોલહવેં ભાગ પર ઝૂંચા કલશ કરના । उस कलशके तीसरे भाग पर ऊंचे भाले (पक्षी बैठ न सके वैसे) पाटलीके कलशकी दो बाजुपर करना । ૭૦-૭૧

वंशमयोऽपि कर्तव्यो दृढदारुमयोऽपि च ।

शिशपः खदिरश्चैव अर्जुनो मधुकस्तथा ॥ ૭૨ ॥

सुवृतः सारदारुश्च ग्रंथीकोटिरवर्जितः ।

पंचदंड-ऊर्ध्वोरुशृंगे तूर्य शिखरोर्ध्व पंचदंडकम् ॥ ૭૩ ॥

ધ્વજદંડ વાસ-મજબૂત કાષ્ટનો શીશમ ખેર મહુડેકા સારા કઠણને મજબૂત જેમાં ગાંઠો-કોતર કે કાણા વગરના કાષ્ટના ધ્વજદંડ માટે લેવો. પંચદંડ=ચતુર્મુખ, જિન, શિવ કે બ્રહ્માના મહાપ્રાસાદને શિખરના ઉપલા ઉરુશૃંગ ચારેમાં ધ્વજદંડ સ્થાપન કરી એક મધ્યનો ઉપરનો મળી પાંચ ધ્વજદંડ સ્થાપન કરવા. ૭૨-૭૩

ધ્વજદંડ વાંસ મજબૂત કાષ્ટકા શીશમ ખેર મહુડેકા અછછા પક્ષા કઠિન ઓર મજબૂત जिसमें गाँठे कोतर या छिद्रके बिनाके काष्ठके ध्वजादण्डके लिये योग्य जानना । पंचदण्ड-चतुर्मुख-जिन शिव या ब्रह्माके महाप्रासादको शिखर के उपरके उरुशृंग चारोंमें ध्वजादण्ड स्थापनकर करके मध्यका उपरका मिलकर पाँच ध्वजदण्ड स्थापन करना । ૭૨-૭૩

अथ पताकाप्रमाण—ध्वजदंडप्रमाणेन विस्तरे मर्कटिसमम् ।

त्रिपंचाग्र शीर्षमा च मणिबंध च शोभितम् ॥ ૭૪ ॥

स्वर्णरेखा यदाकारं सूर्यरश्मिनि रक्षत ।

प्रलयंति सर्वपापानि यत्रै लोकेच मध्यतां ॥ ૭૫ ॥

ધ્વજદંડની જેટલી લાંબી અને પાટલીની પહોળાઈ જેટલી પતાકા-ધ્વજ પહોળી કરવી. ધ્વજ ત્રણ પાંચ સાત શિખાત્ર છેડા પર કરી તેને મણિબંધથી શોભતી કરવી. તેવી ધ્વજપતાકાથી સૂર્યના કિરણોમાં સુવર્ણરેખા જેવી તે દૃશ્ય-

मान थाय आवी पताका चडाववाथी आ लोकभा न सर्व पापोना नाश थाय छे १५ ७४-७५

ध्वजादण्डके बराबर लम्बी और पाटलीके बराबर पताका-ध्वजा चौड़ी करना । ध्वजा तीन पाँच सात शिराग्र छेडेके पर करके उसे मणिघसे शोभायमान करना । वैसे ध्वजा पताकासे सूर्यकी किरनोमे सुवर्णरेखा जैसी वह दृश्यमान होती है । वैसे पताका चढानेसे हम लोकमे ही सर्व पापोंका नाश होता है । १५

निष्पन्नं शिखरं द्रष्टु ध्वजहीन न कारयेत् ।

असुरावासमिच्छन्ति ध्वजहीने सुरालये ॥ ७६ ॥

तैयार करेला शिखरने ध्वज वगैरा राखवु नहि काखु के ध्वजगडित शिखरने (छमाय) जेहने भूतादि राक्षसो तेभा वास कग्वा छुछे तेथी देवालय ध्वजगडित राखवु नहि ७६

तैयार किये हुए शिखरको ध्वजाके बिना नहीं रखना । क्योंकि ध्वजारहित शिखरको (छ मास तक) देखकर भूतादि राक्षसों उसमें वास करनेकी इच्छा करते हैं । इससे देवालयको ध्वजारहित नहीं रखना । ७६

१५ ध्वज अने पताकाको डेटनाऽ पृथक् पृथक् अर्थ छे आमान्नी पताका लय योगस कराना शिपत्रयोभा छे त्रिकोण पताका क्वानो डेटनाऽ यन्मानो आग्रह सेवे छे पत्र शिपत्रयोभा त्रिकोण पताकाको गोर्ध्र प्रभाषु हनु मुरी नेमाना आवेन नथी आग्रह अयोभा छे तेभ दहे छे पशु ते किया दाऽना अयोभा यज्ञयाग प्रतिष्ठा विधि निधानमा पताका निगे अर्था छे तेभा त्रिकोण पताकाको क्यु छे पत्र पत्र ते तो यज्ञ यागना मडपोभा कग्ती पताका-ध्वजयोभा वर्णनमा छे आभ जता त्रिकोण पताकाको निगे पशु अर्था कग्वाते अने ते निपयनु साहित्य जेनाने उमुस्ता छे

जे त्रिकोण पताका करवातु प्रभाषु होय तो शिपत्रय लययोगम पताका करी तेने निपयनिआग्रनु नु करवा दहेत ?

(१५) ध्वजा और पताका का अर्थ कई लोग पृथक् पृथक् करते हैं । प्रासादकी पताका लय चोरस करनेमा शिष्य ग्रथोंमें है । त्रिगोण पताका करनेका आग्रह कई यजमानों करते हैं । परंतु शिष्य ग्रथोंमें त्रिगोण पताकाका कोई प्रमाण अबतक देखनेमें आया नहीं है । ग्राह्यण ग्रथोंमें तै वैया कहते हैं । मगर क्रियाशास्त्रके ग्रथोंमें यज्ञ याग प्रतिष्ठा विधि विधानमें पताकाके बारेमें चर्चा है, उसमें त्रिकोण पताकाके लिये कहा है, यह सही लेकिन यह तो यज्ञयागके मडपोंमें फिरती पताका-ध्वजाओंके वर्णनमें है । असा होते हुए भी त्रिगोण पताकाके बारेमें ज्यादा चर्चा करनेके लिये और उस विषयमा साहित्य देखनेके लिये उत्सुकता है । जो त्रिगोण पताका करनेका प्रमाण हो तो शिल्प ग्रंथ लघुचोरस पताका कर उमें त्रिपच शिखाग्रका तिस लिये कहते ?

इदं कुरुतेयश्च लभते चाक्षयंपदम् ।

दिव्यदेहो भवेत्तस्य सूरैः सहस्रैः क्रीडति ॥ ७७ ॥

उपर प्रमाणे ध्वजायुक्त प्रासाद करावनारने अक्षय सुखनी प्राप्ति थाय छे. तेम न दिव्य देह धारण करी उन्नरे वर्षों देवोनी साथे क्रीडा करे छे. ७७

उपरके अनुसार ध्वजायुक्त प्रासादको बनानेवालेको अक्षय सुखकी प्राप्ति होती है । और दिव्य देह धारणकर हजारों वर्षों तक वह देवोंके साथ क्रीडा करता है । ७७

पुण्यं प्रासादं स्वामी प्रार्थयेत् सूत्रधारतः ।

सूत्रधारो वदेत् स्वामिन् अक्षय भवतात् तव ॥ ७८ ॥

देवालय अंघावनार स्वामि स्थपति सूत्रधार पासे प्रासाद अंघाववाना पुण्यनी प्रार्थना करी आशिर्वचन मागवा. त्थारे स्थपति सूत्रधारे आशिर्वाद आपवों के छे स्वांमिन् ! मंदिर अंघाववानुं तमाइं पुण्य अक्षय थायो. ७८

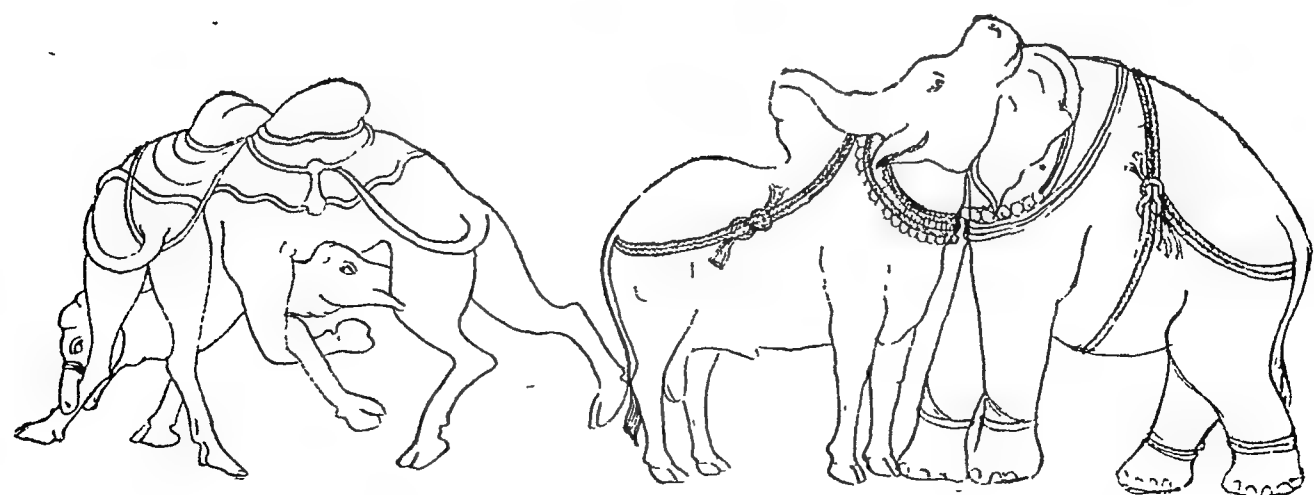
मंदिर बंधानेवाला स्वामी-स्थपतिको पुण्यकी प्रार्थना और आशिर्वाद मांगना जब स्थपति आशिर्वचन देना स्वामिन् ! मंदिर बंधानेका आपका पुण्य अक्षय हो । ७८

इति श्री विश्वकर्मा कृतायां क्षीरार्णवे नारदपृच्छाया शिखराधिकारे शताग्रेत्रयो दश अध्याय ॥ ११३ ॥ (क्रमांक अ० १५)

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव नारदजीके पूछेले शिखराधिकारको शिल्प विशारद श्री प्रभाशंकर ओषडभाई सोमपुराके रयेली सुप्रभा नामनी टीकाको अक्षे तेरमे अध्याय. ११३.

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव नारदजीके संवादरूप शिखराधिकारका-शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रभाशंकर ओषडभाईकी रची हुई सुप्रभा नामकी भाषा टीकाका एकसौ तेरहवाँ अध्याय ॥ ११३ ॥ (क्रमांक अ० १५)

कुतूहल



दो सांड युद्ध

वृषभ और हस्तियुद्ध एकमें दूसरे का मुख प्रदर्शित होता है ।

॥ अथ रेखाविचार ॥

क्षीरार्णव अ० ११४—क्रमांक अ० १६

श्री विश्वकर्मा उवाच

तथा रेखा विचारेण रिपिराज शृणोत्तमा ।
 पंचखंडादौ खंडवृद्ध्या एकोनत्रिंशकाविधि ॥१॥
 खंडचारि कलाज्ञात्वा अंकवृद्धि क्रमेणतु ।
 एकद्वित्री चतुः पंच षड् सप्ताष्ट क्रमोद्धता ॥२॥
 अनेन क्रमयोगेन एकोनत्रिंशकाविधि ।
 पंचखंडे कलाश्चैव खंडख्य या दशपंच च ॥३॥
 एकोनत्रिंशे पंचत्रिंशदुत्तरे चतुशतम् ।
 कला रेखा समाख्याताः सर्वकामफलप्रदाः ॥४॥

—इति कलामेदोद्भवा रेखा ।

श्री विश्वकर्मा कहे छे

हे ऋषिगण, हुये शिपरनी देधाने विद्या साधने पाय भउथी
 ऐकेक भउ वृद्धि ओगखुत्रीश भउ सुधीनी ऐ भउ चारी अनुक्रमे अक
 वृद्धिथी कगी कणा देभा नखुवी ऐक छे त्रय चार पाय छ सात अने आठ
 ऐभ कभना योगथी ओगखुत्रीश सुधी वृद्धि करता नखु पाय भउनी कणा
 दशभउ ऐभ ओगखुत्रीश भउ सुधीनी चारमे पात्रीश कणा खेदनी देभा
 सधाय ते सर्व कामने क्षणदाता नखुवी. १-२-३-४

श्री विश्वकर्मा कहते हैं—ऋषिराज, अब शिपरकी रेखाका विचार सुनो ।
 पाँच खंडसे एक एक खंडकी वृद्धि, उनतीस खंडतककी वह खंडचारी अनुक्रमसे
 अकवृद्धिसे कर कला रेखा जानना । एक दो तीन चार पाँच छ सात और
 आठ इस तरह क्रमके योगसे उनतीस तककी वृद्धि करते जाना । पाँच खंडकी
 कला दस खंड इस तरह उनतीस खंड तककी चारसौ पैतीस कला भेदकी
 रेखा सधाती हो उसे सर्वकार्यकी फलदाता जानना । १-२-३-४

तथा रेखा द्वयं गृहं त्रय सार्द्धं गुणकृतं ।

ततो वृत्तं च भ्रामयेन रेखा सर्वकामाय ॥५॥

वृत्तस्थ (स्वष्ट) विमुच्यते रथमध्ये (भद्रे) च भ्रामितं ।

शिपरना पायथानी छे देभा वच्चीना अतथी साअत्रयु गखुी कामडी
 करी ईरववाथी सर्व कामनाने देनारी खेवी देभा थरो प

शिखरके पायचेकी दो रेखाके विचके अंतरसे साढ़े तीन गुनी कामडी कर फेरनेसे सर्वकामना को देनेवाली ऐसी रेखा होगी । ५.

दशधा तल रेखायां द्विभाग कर्ण विस्तरं ॥६॥

रथसार्द्धं च विस्तारा भद्रत्रय निर्यमं ।

निर्गमं हस्तमानेन अंगुलैकं विचक्षणं ॥७॥

शिखरना पायचे रेखाये दशभाग करी तेमां जे लागनी रेखा पढोणी होठ लागनो पढरे, अने लद्गार्ध पाणु होठ लागनुं (आधुं लद्ग त्रणु लागनुं) भाणुं तेनो निकाणो गळे आंगणना हिसाजे चतुर शिल्पीजे राखवो. ६-७.

शिखरके पायचेपर रेखाकेपर दस भागकर उसमें दो भागकी रेखा चौडी डेढ़ भागका पढ़रा, और भद्रार्ध भी डेढ़ भागका (सारा भद्र तीन भागका) - जानना । उसका निकाला गजपर अंगुलके हिसावसे चतुर शिल्पीको रखना । ६-७.

षट् भाग स्कंध विस्तारे सप्तभिरामलसारकं ।

अर्धोदयं च कर्तव्यं तदुर्ध्वं कलशोपमा ॥८॥

शिखरना स्कंध आंधणु छ लाग करी सात लागनो आभलसारे विस्तार राभी तेनुं अर्ध आंधो करी ते पर शोभतो कणश स्थापन करवो. ८

शिखरके स्कंधकेपर छः भागकर सात भागका आमल सारा विस्तार रखकर उसका अर्ध भाग ऊँचा कर उसकेपर शोभायमान कलश स्थापन करना । ८.

स्कंधार्धे नवभागेन कर्णभाग चतुर्भवेत् ।

प्रतिरथ त्रयं कार्यं शेष भद्रे निष्कलं ॥९॥

शिखरना आंधणु नवभाग करी जे रेखा भणजे लागनी अने जे पढ़रा होठ होठ लागना भाडीनुं आधुं लद्ग जे लागनुं करवुं. तेनो निकाणो आंगण कछो (तेम गळे आंगण) राखवो. ९

शिखरके स्कंधपर नौ भागकर दो रेखायें दो दो भागकी और दो पढ़रे डेढ़ डेढ़ भागके, बाकीका सारा भद्र दो भागका करना । उसका निकाला, आगे कहा । (इस तरह गजपर अंगुल) ९.

अजिता इतिरङ्गा च संहिता च सागरा तथा ।

कालिका कुंडलिकाश्च स्वरूपा रूपसुंदरी ॥१०॥

चित्रा विचित्रा चैव स्यात्तारुण तरुणी स्तथा ।

निशाचरा सर्वरेषां शरच्चंद्रार्चिताउलि ॥११॥

मंजिरा वर्धिरा दुर्गा रिद्धिदा सिद्धिदायका ।

धनदा च वरदा मोक्षदा पंचविंशति ॥१२॥

पञ्चीश देवाना नाम कहे छे १ अजिता २ इतिरंगा ३ सहिता ४ सागरा ५ कलिका ६ कुडलिका ७ स्वरुपा ८ रूपसुंदरी ९ चित्रा १० विचित्रा ११ तारुणी १२ तर्पणी, १३ निशाचरा, १४ सर्वदेया, १५ शरच्चंद्रा, १६ चर्चिता १७ उली, १८ मजरी, १९ वर्धिरा, २० दुर्गा, २१ रिद्धिदा, २२ सिद्धिदायका, २३ धनदा २४ वरदा अने २५ मोक्षदा ओ पञ्चीशना नामो वृत्तिका काथी २६ अडे देवाना नालुवा तेना अरुपो हुवे कहे छे १० थी १२

पञ्चीम रेखाके नाम कहते हैं । १ अजिता २ इतिरङ्गा ३ सहिता ४ सागरा ५ कलिका ६ कुडलिका ७ स्वरूपा ८ रूपसुंदरी ९ चित्रा १० विचित्रा ११ तारुणी १२ तर्पणी १३ निशाचरा १४ सर्वदेया १५ शरच्चन्द्रा १६ चर्चिता १७ उली १८ मजरी १९ वर्धिरा २० दुर्गा २१ रिद्धिदा २२ सिद्धिदायका २३ धनदा २४ वरदा २५ मोक्षदा-ये पञ्चीशके नाम वृत्तिकाकार से २९ खंडों रेखाके जानना । उसने स्वरूप अब कहते हैं । १० से १२

अजिता वृत्तिकाकारा त्रिखंडा इतिरंगिणी ।

संहिता चतुः खंडा पाखंडा चैव सागरा ॥१३॥

खंडे खंडे भवेन्नाम उच्छया युस्त संकुला ।

संयुक्ता स्कंध संकीर्णा संख्याय पंचविंशति ॥१४॥

अजिता गोलाकारे, इतिरंगा त्रिषडा, सहिता चतुषडा, सागरा पञ्चषडा ओम अडे अडे पञ्चीश नामो नालुवा ते उलखी उयाधमा तेम गाधुवाना नभलुभा ओम पञ्चीश लेदो नालुवा १३-१४

अजिता गोलाकारे, इतिरंगा त्रिषडा, सहिता चतुःखंडा, सागरा पञ्चखंडा इस तरह खंडे खंडे पञ्चीश नाम जानना । वह ऊँचाईमे उस तरह स्कंधकी स्कंधकी नमणके पञ्चीश भेद जानना । १३-१४

त्रिखंडे तु कलाअष्ट चतु खंडेदक स्तथा ।

तिथिकला पचखंडे पइखंडै विंशति ॥१५॥

तथामये प्रकारेण तत्रभेद अतः शृणु ।

त्रिखंडादिकृत पूर्वं अर्ध भाग बतादिकं ॥१६॥

त्रिखंडे न चतु सार्द्ध चतुखंडे प्रति स्तथा ।

पंचखंडे द्विभागे च पट्टेसिद्धे त्रयोदशे ॥ १७ ॥

तथा ते (त्रि) प्रकारेण आदि मध्यवसानके ।

तद्विचार प्रयत्नेन संख्या या पंचविंशति ॥ १८ ॥

पहेला त्रिषं'डनी कला आठ, चतुर्षं'डनी दश-पंचषं'डनी पंद्रहकला
षट्षं'डनी ऐकवीश कला (१५) ऐ प्रकारे तेना लेह सांलणो, त्रिषं'डाथी आगण
करवा.....(१६) त्रिषं'डे साडाचार, चतुर्षं'ड....पंचषं'ड ऐ.....तेर ऐम १७
ऐम त्रणु प्रकारे आदि मध्य अने अंत ऐ विचारना प्रयत्नथी पच्चीश
लेह जाणुवा. १८ (१५ थी १८)

पहले त्रिखंडकी कला आठ चतुखंडकी.....पंचखंडकी पंद्रह कला, षड्खंडकी
एकवीश कला (१५) इस प्रकार उसके भेद सुनो । त्रिखंडासे आगे करना ।
त्रिखंडकेपर साढ़ेचार, चतुखंड पर.....पंचखंड पर दो.....तेरह इस तरह
तीन प्रकारसे आदि मध्य और अंत इस विचारके प्रयत्नसे पच्चीस भेद जानना ।
(१५ से १८)

पुनः स्तेनाविभक्तेनं नामनाशृणुतोऋषि ।

जयो विजय येकैकं नाम पूर्वं त्रि भाषित ॥ १९ ॥

जय अजितादिपूर्वं इतिरङ्गा विजयः स्मृता ।

जय संहिता त्रतिया च चतुर्था विजय सागरा ॥ २० ॥

जय विजय प्रकारेण संख्यायां पंचविंशति ।

इरी ते विभक्तितना नामो हे ऋषि ! सांलणो. जय विजयना ऐकेक नामो
आगण कला छे. जय अजितादि पूर्व अने विजय-इतिरङ्गा पूर्व, त्रीणुंजय
संहिता, चौथु विजय सागरा ऐम जय विजयना प्रकारेथी पच्चीश संख्या
ना नामो षं'डनी रेखाना जाणुवा. १९-२०.

फिर उस विभक्तिके नाम हे ऋषि, सुनो । जय विजयके एक एक नाम
आगे कहते हैं । जय-अजितादि पूर्व और विजय-इतिरङ्ग पूर्व-तीसरा जय-
संहिता, चौथा विजय-सागरा इस तरह जय विजयके प्रकारसे पच्चीस संख्याके
नाम खंडकी रेखाके जानना । १९-२०.

... ..

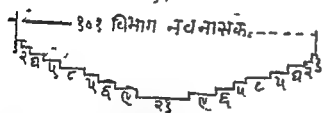
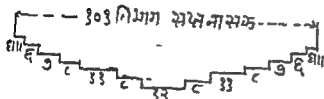
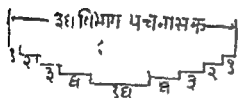
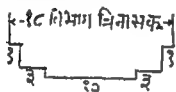
त्रिनासंपंचकं प्रोक्तं सप्तानं च अतः शृणु ॥ २१ ॥

अष्टमांशेन नवमांशं दशमांशे विशेषत् ।

कृत्वा त्रिनाशकं रिषि चतुर्थांशे च निर्गमं ॥ २२ ॥

आगण त्रिनासक पचनासक कहा हुये मप्तनासक कहु धु ते जाबणो। (२१)
ते नासके आठभा, नवभा के दशभा लागे नीकणता विशेष करीने करवा डे ऋषि,
त्रिनासकनो नीकाणो अतुथांश गणवो। (२२) ओक शृगना उपर जे मान हुये
साबणो। २१-२२

अब त्रिनासक-पचनासक कहा और मप्तनासक कहता हूँ वह सुनो।
२१ खन नासकोंको आठवें नौवें या दसवें भागपर निकलते विशेषकर करना।
हे ऋषि, त्रिनासकका निकाला चतुर्थांश रखना। (२२) एक शृगके उपर दो
मान अब सुनो। २१-२२



शृङ्गमेकं च तदूर्ध्वं च
द्वयोमानं अतः शृणु।
द्वात्रिंशपदेकृत्वा द्विभागं
मूलनासकं ॥२३॥
त्रिभागं द्वितीयं चैव तृतीयं
युग संख्यया।
शेष भद्रस्य विस्तारं निर्गमं
च पदार्धत ॥२४॥
उक्तं द्विधाकाय
रथिकामध्यदाययेत्।
तथा सर्वप्रमाणं च विभागं
च अतः शृणु ॥२५॥

त्रि-पच-सप्त-और नवनासक करवा भूण नासक जे लाग=भील
त्रिणु लाग त्रीलु याग लाग अने षाडी चौद लागतु लङ पडोणु नानुषु तेनो
नीकाणो अर्धा लागनो राखवो २३ २४

त्रिनासकके बत्तीस भाग करना। मूलनासक दो भाग-दूसरी तीन-भाग-
तीसरी चार भाग और चौकी चौदा भागका भद्र चौडा जानना। उसका निकाला
आधे भागका रखना। २३-२४

द्व्यालिशं च भागानि द्विभागं मूलनासक।

त्रिभाग द्वितीय चैव तृतीयं द्वयमेव च-॥२६॥

चतुर्थं त्रिभागानि पंचमं चतुमेव च ।

शेषंभद्रस्य विस्तार निर्गमं च पदार्धतः ॥ २७ ॥

सिद्धति सप्तनाशिन ऊरु स्त्रीणि मस्तके ।

रथिका = लट्नी मध्यमां उरुशृंग ये प्रकारे करवा. सर्व प्रमाणुना विभाग सांलणो. सप्तनासकना जेतालीश भागमां जे भागनुं भूणनासक, त्रीणुं त्रणु भागनुं, त्रीणुं जे भाग, चोथुं त्रणु भाग, पांचमुं चार भाग. बाकी लट् चोद भाग पडोणुं जणुवुं. ते सर्वना नीकाणा अर्धा भागना राखवा ते रीते सप्तनाशक सिद्ध थयुं जणुवुं ते उरुशृंग उपर.... २५-२६-२७.

रथिका-भद्रकी मध्यमें उरुशृंग दो प्रकारसे करना । सर्व प्रमाणके-विभाग सुनो । सप्त नासकके वेतालीश भागमें दो भागका मूलनासक, दूसरा तीन भागका, तीसरा दो भाग, चौथा तीन भाग, पाँचवा चार भाग, बाकी भद्र चौद भाग चौडा जानना । उन सर्वके निकाले अर्ध भागके रखना, इस तरह सप्तनासक सिद्ध हुआ समझना । उस उरु शृंगके उपर..... २५-२६-२७.

तथैव सरतर ज्ञात्वा छंदमंगोन त्रिद्यते ॥ २८ ॥

उपर शृङ्गकूटं च मेकछन्दं मुनिश्वरः ।

फलस्थाने ततो शृङ्ग तिलक कस्यमेलय ॥ २९ ॥

पत्रेमयूरे तथाकूटं वृत्तसूत्रं मुनिश्वरं ।

जगतीपीठकं ज्ञात्वा प्रासाद लिङ्गमुत्तमात् ॥ ३० ॥

मुगदेशे शिरोरम्यं कर्तव्यं च विचक्षण ।

लभ्यते स्वर्ग संस्थाने जीव चंद्रार्कमेदिनी ॥ ३१ ॥

ये रीते शीघ्ररमां पाणीताट जणुवा. २८. छंद लंग न करवो. हे मुनीश्वर ! येकछंदमां शृंग उपर कूट करवा योग्यस्थाने शृंग अने तिलक करवा. (२९) गोल सूत्रमां पत्र मयुरना कूट हे मुनीश्वर करवा. २८-२९.

यह रीतसे शिखरमें पाणीतार जानना । छंदका भंग न करना । हे मुनीश्वर ! एक छंदमें शृंगके उपर कूट करना । योग्य स्थान पर शृंग और तिलक करना । गोल सूत्रमें पत्र मयुरके कूट हे मुनीश्वर, करना । २८-२९.

शिवलिङ्गने जणाधारी ३५-येम प्रासादने जगती अने पीठ जणुवा. (३०) मुगदेशना उपर (!) रम्य जेवा जगती पीठ विचक्षण शिखरीजे करवा थी. सूर्य अने चंद्र रहे त्यां सुधी ते यजमानने स्वर्गना स्थाननी प्राप्ति थाय. (३१) रम्य जेवा मेइ शिखरना मर्म हुवे सांलवो. ३०-३१.

शिवलिङ्गको जलाधारी रूप इस तरह प्रासादको जगती और पीठ जानना। मुगदेशके उपर (१) रम्य ऐसे जगती पीठ विचक्षण शिल्पीके करनेसे सूर्य और चन्द्र रहे तब तक उस यजमानको स्वर्गके स्थानकी प्राप्ति होती है। रम्य ऐसे मेरु शिखरका मर्म अब सुनो। ३०-३१

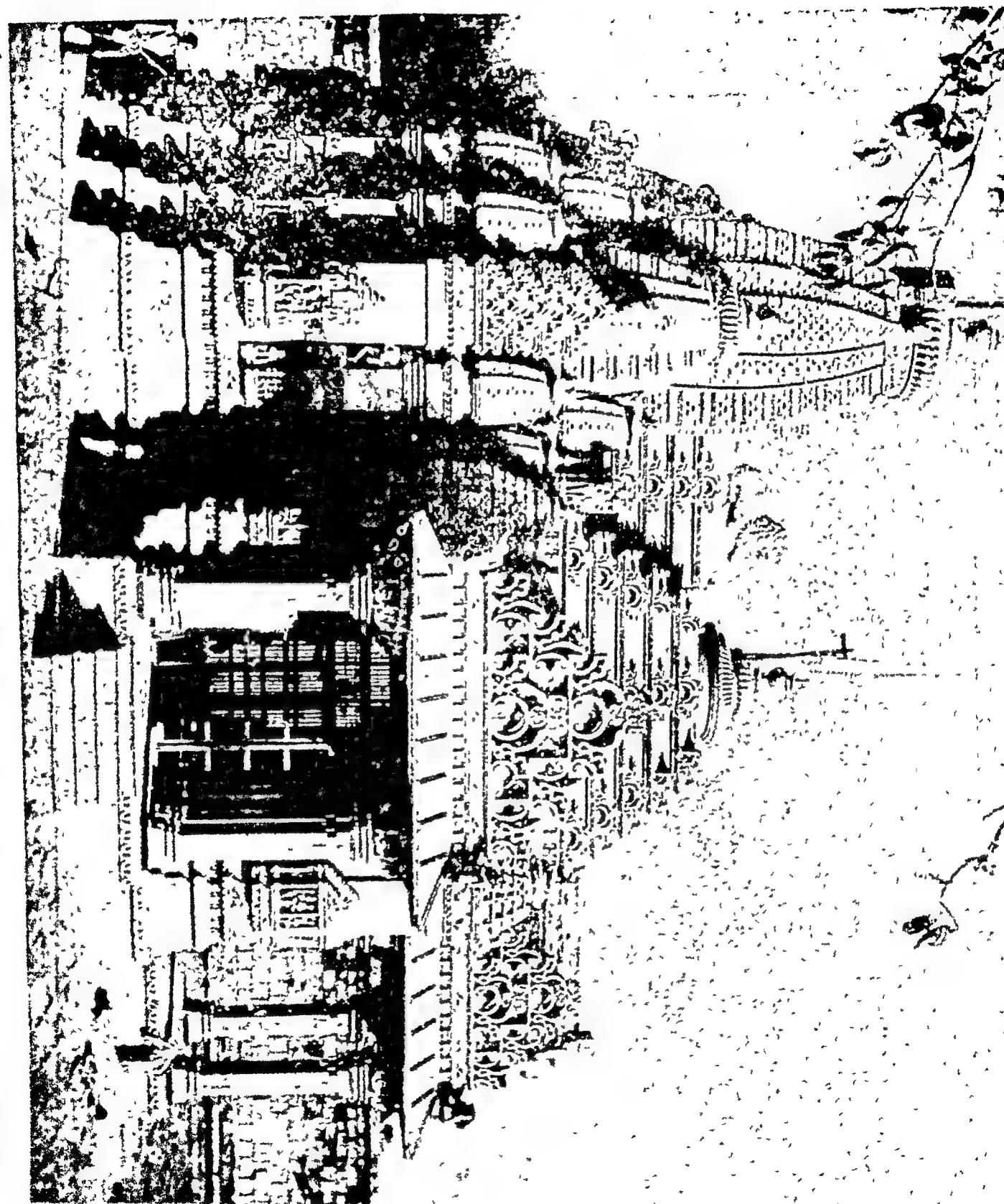
मेरुशिखर सदारम्यं महामर्म अत भृणु।
 पंकजे कोमलाकारे अधमाध्यवमूर्ध्वन् ॥३२॥
 अधस्ते मुधिरुं कार्यं हस्ते हस्ते द्वि अगुलम्।
 अर्ध भागे सप्तमांशे गृहीत्वा तत्र स्रक्के ॥३३॥
 तेन मूर्ध्वे परिस्थाने कलार्चा यत्र सादयेत्।
 तत्शिखरं द्वयं भाग शेषं च मानसाधकम् ॥३४॥
 स्कंध स्थाने यदामूर्द्धिकराक्षसं तद्रवक्षते।
 तानि सर्वाणि दूर्वाति अशुभ कारक स्तदा ॥३५॥

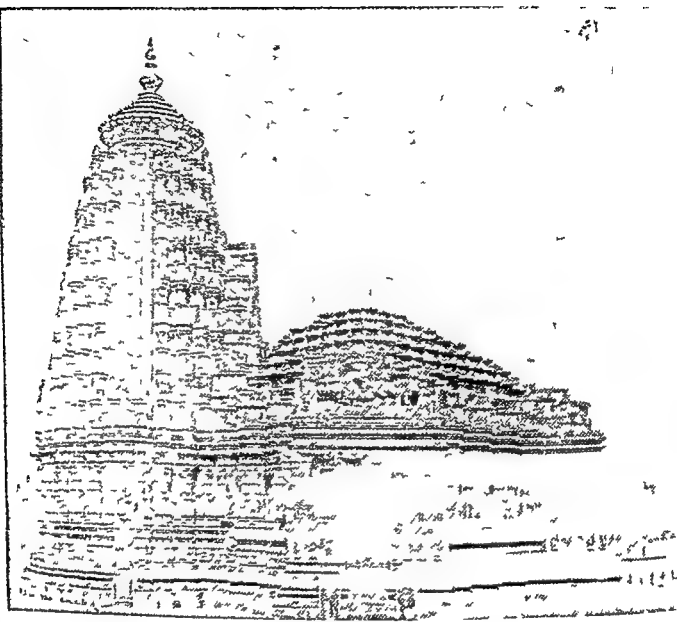
(१) देखा विचारना आ अध्याय बीछ अशुद्ध प्रतीभा स्वतंत्र अध्याय नहीं परतु मिश्र छे तथी विषयातर होई ते अध्याय ११४ तरीके भूकेन छे आगगा अधा वगरना तथेक श्लोकना सान अशुद्ध निरर्थक पाठोना ओम्मे पारमे अध्याय अशुद्ध प्रतीभा गल्ल वेन छे आ ग्रथना सशोधननु कार्य करीन छे वारणु के गुजरात सौराष्ट्र के राजस्थान भाथी हुनु अमने तेनी कोई शुद्ध प्रती प्राप्त थयेन नथी आथी सशोधनना कार्यमा अमोअे गमे ते ओक विषयने सणग सज्जित करन

अध्यायो कभार भूत्वानी धृष्टता दु अ साथे नाष्टताके करनी पड़ी छे ते सुरु विचारन विद्वानो परिस्थितिना विचार करी अमने क्षमा करशे ओनी आशा राखु छु आ ओक सो औफ्मा अध्यायमा केटनीक अपूर्णता नल्लुआथी के स्थितिमा पाठो भग्या ते न स्थितिमा प्रकाशन करवा पडेव छे लविष्यमा कोई सारी शुद्ध प्रतीनी प्राप्ति थयेथी कोछपल्लु विद्वान सशोधन करी प्रकाश पाडने तो शिपीअनु नल्लु अदा धुं गल्लारो तेवा विद्वानो अमे आलार भानीनु

आ क्षीणव ग्रथमा न्या न्या अमोने अनुवाद करामा असफलता के अशुद्धि नल्लुअि अने ते पूर्ण करानु न्या न्या शक्य न-नु नथी त्या त्या अमोअे अनुवाद कथा सिवाय भूण पाठो न आपेला छे

(१) रेखाविचारमा यह अध्याय दूसरी अशुद्ध प्रतीमें स्वतंत्र अध्याय नहीं है, परतु मिश्र है। जिससे विषयातर होनेसे उसे अयाय ११४ के नामसे रखा गया है। आगे निरर्थक तीनों श्लोकके विलकुल अशुद्ध पाठोंका जेकरी वारहवाँ अध्याय अशुद्ध प्रतीमें गिना गया है। जिस ग्रन्थके सशोधनका कार्य करीन है। क्योंकि गुजरात सौराष्ट्र या राजस्थानमेंसे अभी तक हमको वैसी शुद्ध प्रत प्राप्त नहीं हुई है। जिससे सशोधन कार्यमें हमने इच्छित





भूमिज प्रवार-शैलीका उदयपुर (मालवा) के उदयेश्वरका कल्पमयप्रासाद मंडप पर सवरणा

लावार्थ—जेम कमण कोमण आकारनु नीचे मध्य अने उपर विकसिक थाय छे. (३२) तेम नीचेथी अधिक अण्ठे आंगण....अर्ध लागमां....सातमो लाग अङ्गुल करवा. ते सूत्र....(३३) ओ रीते उपर परिस्थाने कलार्चा साधवी....तेपुं शिखर मे लाग....बाकी मान साधक.... (३४) शिखरना स्कंध आंधाणाना स्थानेते सर्व दुर्भाग्यी ते सदा अशुभकारक जाणुवुं. ३२-३३-३४-३५.

जिस तरह कमल कोमल आकारका नीचे मध्य और उपर विकसित होता है, ३२-इस तरह नीचेसे अधिक दो दो अंगुल...अर्ध भागमें...सातवें भागको ग्रहण करने-उस सूत्र...(३३) इस तरह उपर परिस्थानपर कलार्चा साधना...वैसा शिखर दो भाग...बाकी मान साधक...(३४) शिखरके स्कंधके स्थान पर...उसको सर्व दुर्भाग्यसे उसको सदा अशुभकारक जानना । ३५.

इति श्री विश्वकर्मा कृतायां क्षीरार्णवे नारद पृच्छते रेखा विचार
शताग्रे चतुर्दशमोऽध्याय ॥११४॥ क्रमांक अ० १६

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवे नारदजीके पूछेले शिखर रेखा विचार लक्षणपर शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुराके रचिये सुप्रभा नाम्नी भाषा टीकाके अंकसो अङ्कसो अध्याय ११४. क्रमांक अध्याय १६.

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव श्री नारदजीके संवाद रूप शिखर रेखा विचार लक्षणपर शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुराकी रचि हुआ सुप्रभा नाम्नी भाषाटीकाका एकसौ चौदहवाँ अध्याय ॥११४॥ क्रमांक अ० १६

अेक विषयको सांगोपांग संकलितकर अध्यायोंको क्रमशः रखनेकी धृष्टता दुःखके साथ निरुपाय करनी पडी है । तों सुज्ञ विचारक विद्वानों परिस्थितिका विचारकर हमें क्षमा करेंगे ऐसी आशा रखते हैं । अिस अेकसीचौदहवें अध्यायमें कुछ अपूर्णता दिखनेसे जिस स्थितिमें पाठों मिळे अिस स्थितिमें उनका प्रकाशन करना पडा है । भविष्यमें कोई अच्छी शुद्ध प्रतोंकी प्राप्ति होनेसे कोइ भी विद्वान संशोधन कर प्रकाश डालेगा तो शिल्प वर्गका ऋण चूकानेका कार्य माना जायगा । वैसे विद्वानोंके हम आभारी होंगे ।

जिस क्षीरार्णव ग्रंथमें जहां जहां हमें अनुवाद करनेमें असंबद्धता या अशुद्धि देखनेमें आयी और उसे पूर्ण करनेका काम जहां जहां शक्य नहीं हुआ हमने अनुवाद किये विना मूल पाठ ही दिये हैं ।

॥ अथ स्तंभ लक्षणाधिकार ॥

क्षीरार्णव अ० ॥ ११५ ॥ (क्रमांक अ० १७)

विश्वकर्मा उवाच—

एक हस्ते तु प्रासादे स्तंभ वा चतुरं गुल्मम् ।
 द्वि हस्ते अङ्गुलसप्तं त्रिहस्ते नममेन च ॥१॥
 ततो द्वादश हस्तांत हस्तेहस्ते द्विरङ्गुलम् ।
 सपादाङ्गुल वृद्धि स्यात् यावत्पौडशहस्तके ॥२॥
 अङ्गुलीकास्ततो वृद्धिश्चत्वारिंशहस्तके ।
 तस्योर्ध्वे च शतार्द्धे च पादुनं मङ्गुलं भवेत् ॥३॥

स्तंभपृथुमात्र

आगुल

१	गते	४
२	"	७
३	"	६
४	"	११
५	"	१३
६	"	१५
७	"	१७
८	"	१६
९	"	२१
१०	"	२३
११	"	२५
१२	"	२७
१६	"	३२
४०	"	५६
५०	"	६३॥

श्री विश्वकर्मा कहे छे—अेक हाथना प्रासादने चार आगण नडो स्तंभ गणवो छे हाथनाने सात आगण त्रय हाथनाने नव आगण, चारथी बार हाथ सुधीना प्रासादने प्रत्येक हुत्ते गणजे आगणनी वृद्धि, ४२वी तेरथी सोण हाथना, प्रासादने प्रत्येक हाथे सवा सवा आगणनी वृद्धि ४२वी सत्तरथी आलीश हाथ सुधीना प्रासादने प्रत्येक हाथे अेकडे आगणनी, अने अेकतालीशथी पचास हाथ सुधीना प्रासादने प्रत्येक हाथे पोण्ण पोण्ण आगणनी वृद्धि ४२वी १-२-३

श्री विश्वकर्मा कहते हैं—एक हाथके प्रासादको चार अगुल मोटा स्तंभ रखना । दो हाथके प्रासादको सात अगुल, तीन हाथके प्रासादको नौ अगुल, चारसे बारह हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक हाथ पर दो दो अगुलकी वृद्धि करना । तेरहसे सोलह हाथके प्रासादको प्रत्येक हाथपर सवा सवा अगुलकी वृद्धि करना । सत्रहसे चालीश हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक हाथ पर एक, एक एक अगुलकी वृद्धि करना । एकतालिस से पचास हाथ तक का प्रासादको प्रत्येक हाथ, पर-पोने पौने अगुलकी वृद्धि करना । १-२-३

प्रक्रान्तर—प्रासाद दशांश स्तंभ शस्यते शुभकर्मसु ।

एकादशै तु कर्तव्या द्वादशै च विशेषत् ॥४॥

त्रयोदशांशे प्रकृतव्य शक्रांश तथोच्यते ।

एतन्मानं पंचधा च स्तमान्त विस्तरे पृथक् ॥५॥

प्रासादना (१) दशमा लागेना नडो स्तंभ, (२) अथारमा लागे, (३)

आरमा लागे (४) तेरमा लागे, अने (५) चौदमा लागनी नडाधनी स्तंभ करवो अमे पांच प्रकार स्तंभनी नडाधनी बुदा बुदा नालुवा. ४-५.

प्रासादके (१) दसवें भागका मोटा स्तंभ, (२) ग्यारहवें भागमें, (३) बारहवें भागमें (४) तेरहवें भागमें और (५) चौदहवें भागके मोटेपनका स्तंभ करना । इस तरह पाँच प्रकार स्तंभके मोटेपनके अलग अलग समझना । ४-५.

सभामंडप स्तंभानां प्रमाणं च अतः शृणु ।

दशमांश द्वादशांश चतुर्दश्या विशेषत् ॥६॥

प्रमाणं तद्विज्ञेयं पश्चात् बुद्धिः पुनः कृमात् ।

ज्येष्ठ कन्यस मध्ये च कन्यसे ज्येष्ठमेव च ॥७॥

सभा मंडपयो र्यत्र वेदिका च विशेषत् ।

स्तंभ वा कन्यसो मानं कर्तव्यं शास्त्रपारगै ॥८॥

प्रासाद वगरना बुद्धि मंडपो वेदी मंडप तेवा चारस कार्यनी कल्पना हे मुनि! उवे तेवा सभा मंडपना स्तंभानुं प्रमाण सांभलो. मंडपना? के

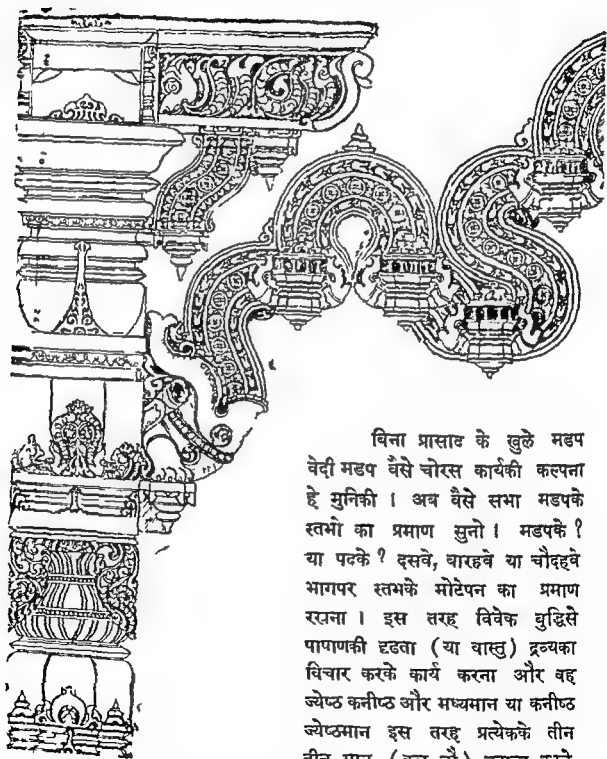
(१) अपराजितसत्रसंतान-अ० १८५मां प्रासादना प्रमाणथी स्तंभनी नडाध १०, ११, १२, १३ अने १४ अमे पांचविध प्रमाण कलां छे. स्तंभनी नडाधनुं प्रमाण तो शिल्पीके विवेकबुद्धिथी कार्यना वास्तुद्रव्यना आधारे तेनी दढताना प्रमाणमां ते जेठलुं वजन अभी शके ते पर विचार करीने राखुं. श्यामपाषाण आरस जेधपुरी आरे पत्थरके पोरबंदरी पत्थरे अे अेकेकेथी उत्तरोत्तर दढ छे. पोरबंदरथी आरे मजबूत आरथी जेधपुर वधु दढ छे. तेथी ते पातलो रहेज लघु शक्य.

दीर्घाण्व मां अेक सामान्य लक्षण नडाधनुं प्रमाण आपे छे. “चतुर्गुणोच्छ्रायं प्रोक्तं-मते त्स्तंभस्य लक्षणम् ।” थांभलानी पढोणाधथी आरगणी अंथाध राखी अे सामान्य लक्षण धटना, युनाना के पोरबंदरी पत्थर जेवाना वास्तु द्रव्यना गणी शक्य.

(१) अपराजित सत्र संतान अ. १८५वे प्रासादके प्रमाणसे स्तंभका मोटापन १०-११-१२-१३ और १४ अिस तरह पंचविध प्रमाण कहे हैं । स्तंभके मोटेपनका प्रमाण तो शिल्पीको विवेक बुद्धिसे कार्यके वास्तु द्रव्यके आधार पर उसकी दढताके प्रमाणमें वह जितना वजन अेलसके उसपर विचार करके रखना । श्यामपाषाण आरस जोधपुरी खारा मजबूत खारेसे जोधपुरी ज्यादा दढ है । अिससे जरा पतला ले सकते हैं ।

दीर्घाण्वमें अेक सामान्य लक्षण मोटेपनका प्रमाण देते हैं । चतुर्गुणोच्छ्रायं प्रोक्तामत त्स्तंभस्य लक्षणम् । स्तंभके मोटेपनसे चारगुनी ऊँचाई रखना । यह स्थूलमान ईंट खडीके या पोरबंदरी पत्थरके द्रव्यका गिना जा सकता है ।

पहना ? दृशमा, जाग्मा के यौद्धमा लागे स्तलानी नडाधनु प्रभाषु राभुवु ते प्रभाषु विवेकबुद्धिथी पापाषुनी दृढता के वास्तु द्रव्यनो विचार करीने कार्य करवु तेम ते ज्येष्ठ कनीष्ठने मध्यमान के कनीष्ठ ज्येष्ठमान ओम प्रत्येकना त्रषु त्रषु मान (कुल नव) उपलववा मलाम उप अने वेदिका म उपना स्तलोना प्रभाषु कनीष्ठमानना शिल्पशास्त्रना पारगतोअे राभवा ६-७-८



विना प्रासाद के खुले मंडप वेदी मंडप वैसे चोरस कार्यकी कल्पना हे मुनिकी । अब वैसे सभा मंडपके स्तभो का प्रमाण सुनो । मंडपके ? या पदके ? दसवे, बारहवे या चौदहवे भागपर स्तभके मोटेपन का प्रमाण रखना । इस तरह विवेक बुद्धिसे पाषाणकी दृढता (या वास्तु) द्रव्यका विचार करके कार्य करना और वह ज्येष्ठ कनीष्ठ और मध्यमान या कनीष्ठ ज्येष्ठमान इस तरह प्रत्येकके तीन तीन मान (कुल नौ) उत्पन्न करने

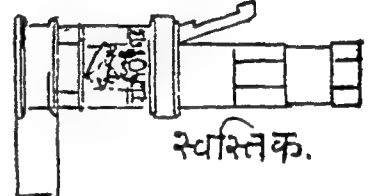
के लिये सभामंडप और वेदिका मंडपके स्तंभोंके प्रमाण कनीष्ठमान के शिल्प शास्त्रके पारंगतोंको रखना । ६-७-८.

रुचकाश्च चतुरस्रास्युभद्रेका भद्र संयुता ।

वर्धमानो प्रभद्राः स्युरष्टास्त्राश्चाष्टका मता ॥९॥

आसनोर्ध्व भवेद् भद्रं स्वस्तिकाश्चाष्टकर्णकै ।

पंच विधाश्च कर्तव्या स्तंभा प्रासाद रूपिणः ॥१०॥



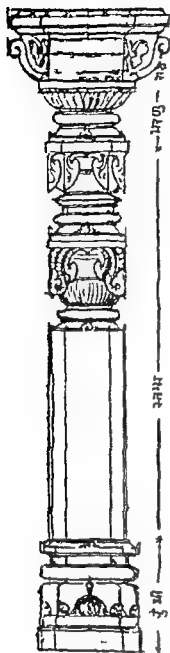
स्तंभोका पंच स्वरूप तलदर्शन

स्तंभोंकी आकृतिपरसे उसका नामाभिधान कहते हैं । (१) चोरस स्तंभको रुचक (२) भद्रवाले (त्रिनाश) को भद्रक (३) प्रति भद्रवाले स्तंभको वर्धमान (४) अष्टांशके स्तंभको अष्टक और वेदिका-आसनके उपरकी भद्र अष्टांश और आठ कर्णीवाले स्तंभको (५) स्वस्तिक नाम जानना । इस तरह पाँच प्रकारके स्तंभोंके नाम जानना । प्रासादके स्वरूप प्रमाण स्तंभोंका रूप होता है । ९-१०.

स्तंभोनी आकृति परथी तेनुं नामाभिधान कहे छे. १. चोरस स्तंभने इयक २. लद्रवाणा (त्रिनाश)ने लद्रक ३. प्रतिभद्रवाणा स्तंभने वर्धमान ४. अष्टांसना स्तंभने अष्टक अने वेदिका आसनपट परनी लद्र अष्टांश अने आठ कर्णीवाणा स्तंभनुं (५) स्वस्तिक नाम ज्ञाणुवुं. ओ रीते पांच प्रकारना स्तंभोनां नाम ज्ञाणुवां. प्रासादना स्वरूप प्रमाण स्तंभोनुं इय थाय. (२) ९-१०.

(२) अपराजितसूत्र १८४ मां स्तंभोनी आकृति स्वरूप आ प्रमाणे आपेक्षा मत्स्य-पुराण अ० २५५ अने मानसार अ० १५ मां पृथक् पृथक् नामो अने स्वरूपो आपेक्षा छे.

चोरस	अष्टांश	सोणांश	अत्रीशालुंश	गोण	} आभ पृथक् पृथक् ग्रंथोमां नाम अने स्वरूप शुद्ध शुद्ध आपेक्षां छे.	
मत्स्यपुराण	इयक	वज्र	द्विवज्रक	प्रक्षीनक		वृत्
मानसार	अष्टक	विष्णुक	इद्रक	स्वस्तिक		(पांच के
						७ हांशनाने)



કુમ્ભી ઘટપલ્લવ યુક્ત
સ્તંભ મરણ સરા

મદ્રૈરલંકૃતા કુમ્ભી સ્તંભો મદ્રાપ્તસવૃતઃ ।
મરણ્યા પલ્લવાટૃતા શીર્ષાગ્ર, વાય કિન્નરાઃ ॥૧૧॥

પ્રાસાદના મડપ ચોટીના સ્તંભના છેડતુ વર્ણન કરે છે કુભી અલંકૃત નકળીવાળી ભદ્રયુક્ત કરવી એક સ્તંભમા જુદા જુદા સ્વરૂપ કહ્યા છે પરંતુ એક સ્તંભમા નીચે ભદ્ર વચ્ચે અષ્ટાશ્ર અને ઉપર વૃત્ત=ગોળ ઘટ પલ્લવયુક્ત પણ કંઠવા ભગલાના ભદ્ર કે પત્ર પાદડા ખુદ્દા કરી નીચે ગોળ કર્ણિકા કરવી મરૂ એક યા બે શુડાવાળુ ઠરણુ અગર કિન્નર (કીચક) ના રૂપથી અલંકૃત કરવું ૧૧

પ્રાસાદની મડપ ચોટીકે સ્તંભકે પોવેલા વર્ણન કહેતે હૈ । કુમ્ભી અલંકૃત નકળીવાળી ભદ્રયુક્ત કરના । ણક સ્તંભમે મિત્ર મિત્ર સ્વરૂપ કહે હૈ । પરંતુ ણક સ્તંભમે નીચે ભદ્ર વિષમે અષ્ટાશ્ર ઓર ઉપરવૃત્ત=ગોળ ઘટપલ્લવયુક્ત કરના । મરણકે ભદ્રકે ઉપર પત્ર પાન સુલે કરકે નીચે ગોળ કર્ણિકા કરના । સરા ણક યા મો ગુણેવાલા કરના અગર કિન્નર (કીચક) કે રૂપમે અલંકૃત કરના । ૧૧

ઘટપલ્લવ કુંભીભિઃ સ્તંભાઃ કાર્યાસ્વલંકૃતા ।
ઈલિકાતોરૈર્યુક્તા મદલૈર્મંડિતાઃ શુભાઃ ॥૧૨॥
દેવાજ્ઞના શ્રુ દ્વાદશ પોદગ જિન દ્વાત્રિજા ।
ચતુષ્પદિ કલા યુક્તા સ્તંભે સ્તંભે વિરાજિતે ॥૧૩॥

સ્તંભના ઘાટ અનેક પ્રકારના વાય કે સાદા, નકળીવાળા, રૂપવાળા પણ થાય એક સ્તંભમા નીચે ભદ્ર તે ઉપર અષ્ટાશ્ર અને તે પર ગોળ વળી ઉપર જ એક ઇચનો પદ્મ અમાશનો કરી તેમા ગ્રામયુગ્મ કે ફૂલો કરે છે નીચે ગોળ ભાગમા કુભી બાવલાના બધો કરી બીબી સાકળી ટોકરી કે પુ'પનો તોરણ કરે છે સાકળી ટોકરી એ આધ્યાત્મિકદર્શને મુચક તેના વાટ કહે છે એવા એના યાદના સ્તંભોની સુદૃઢ રચના કુશળ શિલ્પીઓ પોતાના ભેદભાષી ઉપનયની વાટે કે તે કે તે અશાસ્ત્રીય તો નથી જ મારમી તેમથી સદીના આપલોમા અનુગોષ્ઠમા યદ્યપ નયુક્ત કળામય સ્તંભો સુદૃઢ ભાગે કે ચારે ખુણે કળામય પત્રો કરી વચ્ચે ઘટપલ્લવની આકૃતિ સ્તંભના મધ્યમા કરેલી તેવામા આવે છે દક્ષિણપથ પ્રવેશમા કુભીનો યાટ ખુણે પત્રો કરી મધ્યમા સ્તંભની આકૃતિ કરી કુભીના નામને આશરે રચે તેવામા આવે છે,

महाप्रासादना कुंभी अने स्तंभो घटपटलवोथी अलंकृत शोभित करवा
धलिका तोरण युक्त के^३ भट्टोवाणा सुंदर स्तंभो करवा. देवांगनाओ=देवकन्या

अपराजित सूत्र १८४में स्तंभोंकी आकृतिके स्वरूप जिस प्रकार दिये हैं। अ० १५ में
पृथक् पृथक् नामों और स्वरूपों दिये हैं।

आकृति	— चोरस — अष्टांश — सोलांश — वत्तीसांश — गोल
मत्स्य पुराण	— रुचक — वज्र — द्विवज्रक — प्रलीनक — वृत्
मानसार	— ब्रह्मकांत — विष्णुकांत — रुद्रकांत — स्कंधकांत — पंच-छांश



पृथक् पृथक् ग्रंथों में नाम
और स्वरूप भिन्न भिन्न दिये हैं।
स्तंभ के घाट अनेक प्रकारके
होते हैं। साद-नकशीवाले रूपवाले
भी होते हैं। अेक स्तंभमें नीचे
भद्रक उसके उपर अठांश और उपर
गोलवलीके उपर छः ईचका लगभग
पट्टा अठांशका कर उसमें ग्रास मुख
या फूलों करते हैं। नीचे गोल भागमें
कणी स्तंभके वंधकों कर खडी सांकल
टोकनी या पुष्पका तोरा बनाते हैं।
सांकली, टोकरी, आध्यात्मिक रूपसे
सुचक उसके घाट कहते हैं। ऐसे
ऐसे घाटके स्तंभोंकी सुंदरत रचना
कुशल शिल्पीयों अपने दिमागमेंसे
उत्पन्न करते हैं। यद्यपि वह अशास्त्रीय
तो नहीं है।

बारहवीं तरहवीं सदीके स्थापत्यों
में अवशेषोंमें घटपटलवयुक्त कलामय
स्तंभों सुंदर लगते हैं। चारों कोनेमें
कलामय पत्रोंका विचमें घटकुंभकी
आकृति कर कुंभीके नामको सार्थक
किया हुआ देखनेमें आता है।

कर्णाटक शैलीकी दर्पणयुक्त विधिचिता देवाङ्गना
आवे छे. ते कमान जेवुं सुंदर देभाय छे. तोरण के डायलावाणा तोरण करता भट्टोनी
भट्टोनीविशेष रहे छे. तोरणनी पुराणी शैलीनु स्थान डायलावाणी पडदीवाणी
कमाने दीधु. ते पाछवा डाननी इति छे. ध्रुव सूत्रमा सादी कमानो पंढरमी सदी पछी

(३) जे स्तंभो वय्येना

दांगनागाना पाटनी मण्णुताठ

शोभा साथे करवाने भट्टो करवाभां

आठ आठ मोण चोवीश हे णत्रीश नृत्यादि चेष्टा करती चोमठ कणायुक्त जेवा लक्षणेवाणी थालले थालले भूकवी ४ १२-१३

महाप्रासादके कुम्भी और स्तभों घट्टपट्टोंसे अलंकृत करना । ईलिका वृल-युक्त मंदलेजाले सुंदर स्तभों करना । देवाङ्गनाओं-देवकन्या आठ बारह सोलह चौबीस या बत्तीस नृत्यादि चेष्टा करती चौसठ कलायुक्त ऐसे लक्षणोंवाली प्रत्येक स्तभ पर रखना । ४ १०-१३

आद्यथरजाङ्गकुम्भ कर्णिका ग्रास एव च ।

इत्येवं पीठ बन्धस्य भ्रमतश्च प्रदक्षिणे ॥ १४ ॥

कुम्भ कलश कपोताल्या वा राजसेन वेदिका ।

आसन्न पट्टश्च कार्यं कक्षासन विभूषितं ॥ १५ ॥

पुढला भडपने (१) पडेल्ला थरभा लिट्ट जडपो उणी अने आसपट्टीनु पीठ भध इरतु प्रदक्षिणायें करवु अगर (२) कुलो कणशे देवाण ने पुप्पकठना थरे अगर (३) पीठ पर गजमेवक वेदिकाने आसनपट्ट भूझी ते पर कक्षासनथी शोभते। भडप करवो (आवा त्रणु प्रकाशना जुदा जुदा कक्षासनना नामो वृक्षा पुंभमा आपेला छे) १४-१४

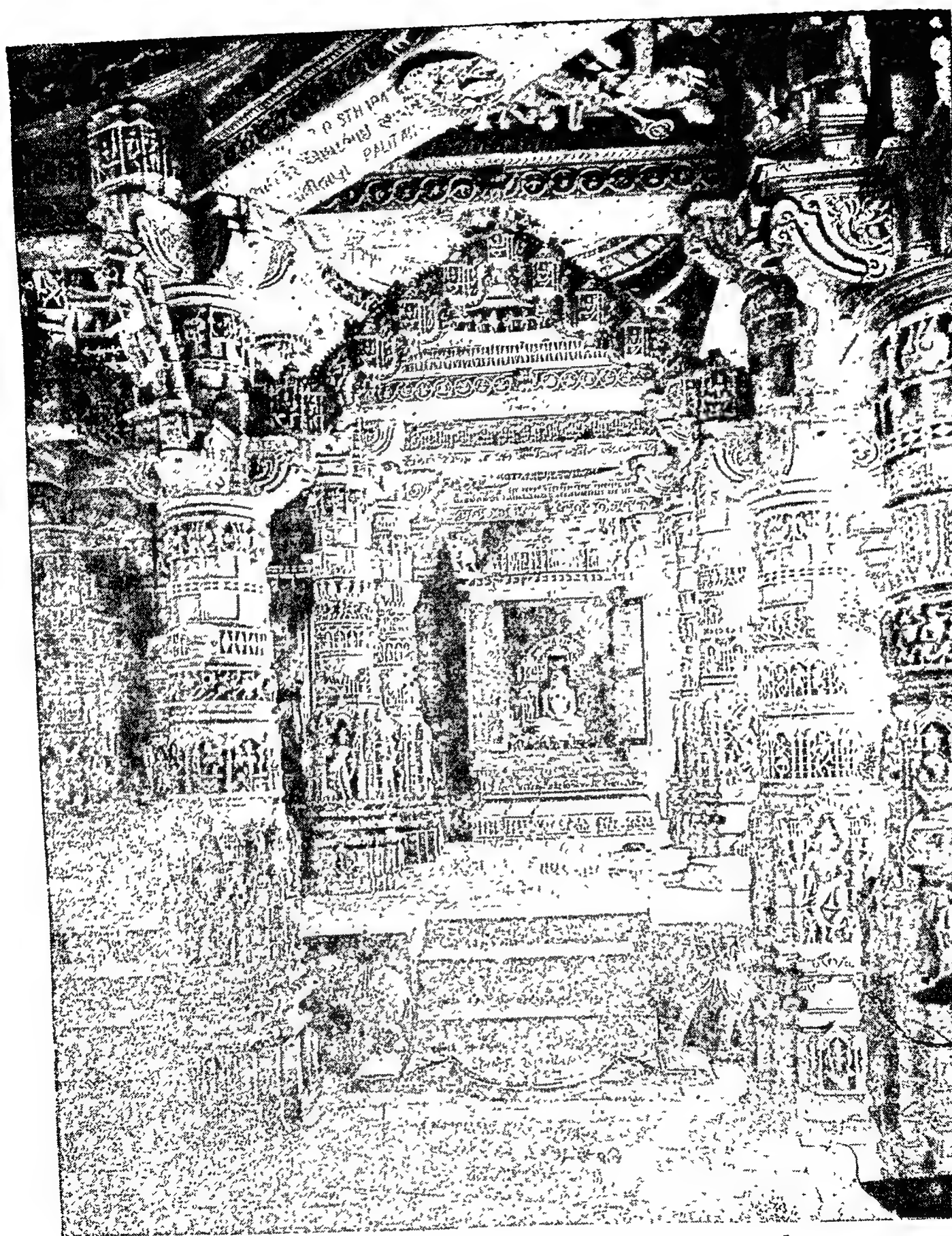
आसत्तमा प्रविष्टं धर्षं जेके कमान पीण उपे आसत्तमा जोद्ध काननी आसत्तमा जेवाभा आवे छे कमाननी जेभ जुमट पणु सादाउपे पाळणथी पट्टभी सोणभी सदीभा आसत्तमा आसत्तमा दाभत थया

(३) दो स्तभोंके पिचकं लम्बे अंतरके पाटकी मजबूतीने शोभाके साथ करनके लिये मंदल किया जाता है । यह कमानकी तरह सुंदर दिखता है । तोरणके काचलेवाली कमान मंदलोंकी मजबूती विशेष रहती है । झलझी पुरानी शैलीका स्थान काचलेवाली पडदीवाली कमानने लिया । यह पीछले कालकी कृति है । ध्रुव सूत्रमें सादी कमानों सोलहवीं सदीके बाद भारतमें प्रविष्ट हुई । यद्यपि कमान दूसरे रूपमें भारतमें बौद्धकालकी देरानमें आती है ।

। कमानकी तरह गुंज भी साडे रूपमें पीछेसे पदहवीं सोलहवीं सदीमें भारतीय स्थापत्यमें प्रविष्ट हुआ ।

(४) देवागना=देवकन्याना स्वरूपो अने नाम लक्षणे णत्रीश कडेवा छे शरीरना अग मरोड अने चेष्टापरथी तेना लक्षणे अने नामो जुदा जुदा सविस्तर अडुसुदर रीते वृक्षाण्वना, १४०भा अध्यायमा आपेना छे कल्पित देवागनानु २३३५ करवु नहि तेभ शास्त्रोक्त पाठ साथे तेना आलेखन सहित आ अथ अध्याय १२०भा सचित्र आपेला छे ते जेवु

(२) देवागना-देवकन्याके स्वरूपो और नाम लक्षण बत्तीस रहे हैं । शरीरके अग मरोड और चेष्टा परसे लक्षण और नाम भिन्न भिन्न सविस्तर बहुत सुंदर ढंगसे वृक्षाण्वक अ १४०में दिये हैं । कल्पित देवागनामा स्वरूप नहीं कत्ना । उनके शास्त्रोक्त पाठके साथ उसके आलेखन सहित यह क्षीराण्व ग्रन्थमें अ १२०में सचित्र दीया है सो देखना ।



सुंदर कलामय स्तम्भके छोड़, गवाक्ष और ईलिका तोरण (आबु देलवाडा)

आठ भाग भोग्योवाशी के पन्नीश नृत्यादि चेष्टा करती चोमठ कलायुक्त ज्येष्ठा लक्ष्मणोवाणी थाबले थाबले भूषणी ४ १२-१३

महाप्रासादके कुम्भी और स्तम्भों घट्टपल्लवोंसे अलंकृत करना । ईलिका जूल-युक्त मटलेपाछे सुंदर स्तम्भों करना । देवाङ्गनाओं-देवकन्या आठ बारह सोलह चौबीस या बत्तीस नृत्यादि चेष्टा करती चोमठ कलायुक्त गेमे लक्ष्मणोवाली प्रत्येक स्तम्भ पर रचना । ४ १२-१३

आद्यथरजात्यकुंभ कर्णिका ग्रास एव च ।

इत्येवं पीठ बन्धस्य भ्रमतश्च प्रदक्षिणे ॥ १४ ॥

कुंभ कलश कपोताल्या वा राजसेन वेदिका ।

आसन्न पट्टश्च कार्यः कक्षासन विभूषितः ॥ १५ ॥

जुड़ला भउपने (१) पड़ेला थरभा भिड़ नडयो कछी अने आसपट्टीनु पीठ अथ इस्तु प्रदक्षिणायो करु अंग (२) कुलो कण्ठो देवाण ने पुपकठना थगे अंग (३) पीठ पठ अन्वेक वेदिकाने आभनपट्ट भूझी ते पर कक्षासनथी शोभतो भउप करवो (आवा वणु अङ्गना जुड़ा जुड़ा कक्षासनना नामो वृक्षा धुवभा आपेला छे) १४-१४

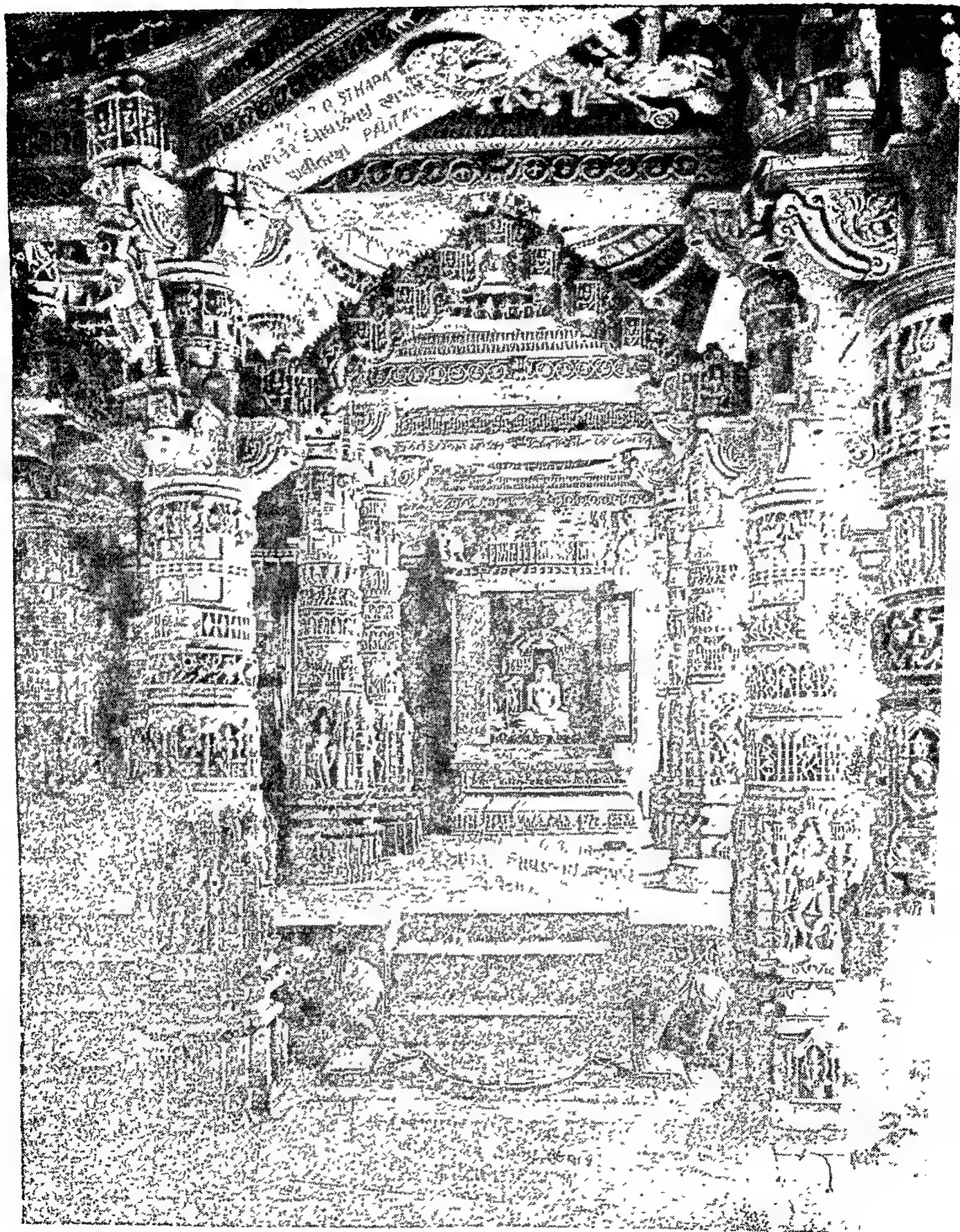
भारतभा प्रविष्ट थर्ध जेके कमान नील उपे लागतभा जोड़ कान्नी स्थापत्योभा नेनाभा आवे छे कमाननी जेम पुमठ पणु भादाउपे पाछगथी पट्टभी सोजभी सदीभा भारतीय स्थापत्यभा दायन थया

(३) दो स्तम्भोंके पिचके लम्बे नारके पाटकी मजबूतीको क्षोभाके साथ करनेके लिये बदल किया जाता है । यह कमानकी तरह सुंदर दिगता है । नोरणके काचलेवाली कमान बदलाकी मजबूती विशेष रहती है । झलझी पुरानी शैलीका स्थान काचलेवाली पड़दीवाली कमानन लिया । यह पीछले सालकी कृति है । ध्रुव सूत्रमें मादी कमानों सोलहवीं सदीके बाद भारतमें प्रविष्ट हुईं यद्यपि कमान दूसरे रूपमें भारतमें बीड़कालकी देरतमें आती है ।

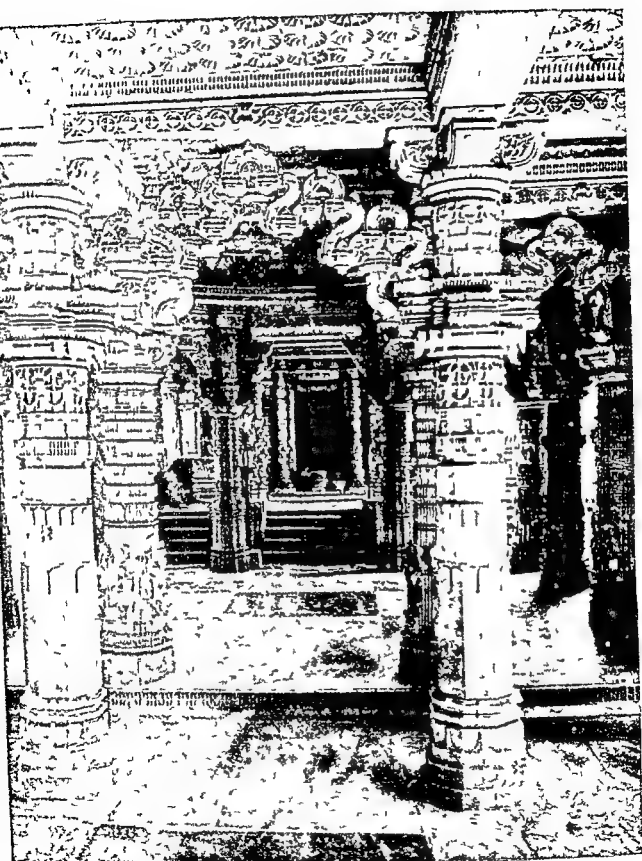
कमानकी लम्बा सुत्र भी साठे रूपमें पीछेसे पड़हवीं सोलहवीं सदीमें भारतीय स्थापत्यमें प्रविष्ट हुआ ।

(४) देवाङ्गना=देवकन्याना स्वरूपो अने नाम लक्षण पन्नीश कहेवा छे शरीरना अंग भरोड अने चेष्टापन्थी तेना लक्षण अने नामो जुड़ा जुड़ा सविस्तर जलुमुदर रीते वृद्धाङ्गना १४०मा अध्यायभा आपेला छे कटपत देवाङ्गनानु स्वरूप करु नहि तेम शास्त्रोक्त पाठ साथे तेना आवेपन सहित आ अथ अध्याय १२०मा सचित्र आपेला छे ते जेनु

(४) देवाङ्गना=देवकन्याके स्वरूपा और नाम लक्षण बत्तीस रहे हैं । शरीरके अंग भरोड और चप्पा परमे लक्षण और नाम भिन्न भिन्न सविस्तर बहुत सुंदर ढंगसे उद्धारणक अ १४०में दिये हैं । कल्पित देवाङ्गनामा स्वरूप नहीं कम्ना । उसके शास्त्रोक्त पाठके साथ उसके जालेपन सहित यह क्षीरार्णव ग्रन्थमें अ १२०में सचित्र दीया है सो देखना ।

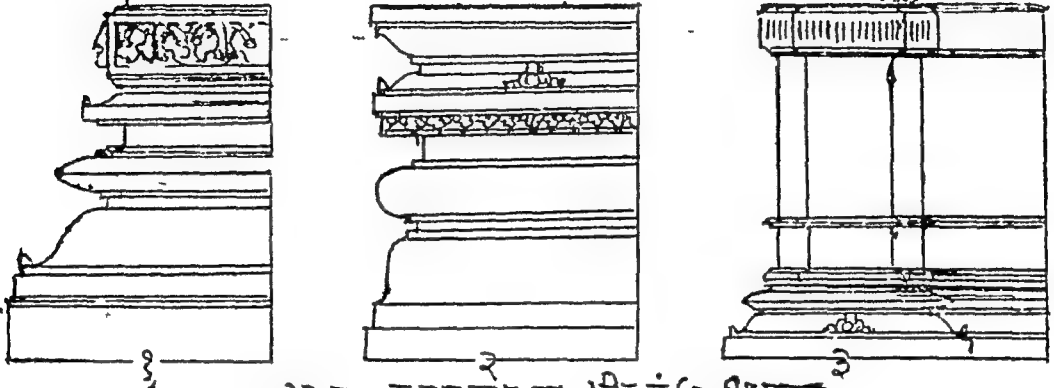


सुंदर कलामय रुपस्तम्भके छोड, गवाक्ष और ईलिका तोरण (आबु देलवाडा)



आशु-वस्तुपाल भदिर के स्तंभोको विविधता और हीडोलक (आदोलक) तोरण

खुले मंडपको (१) पहले थरमें मिट्टी जाड़वा कगी और ग्रासपट्टीका पीठ बंध फिरती प्रदक्षिणामें करना । अगर (२) कुंभ कलश केवाल और पुष्पकंठका थर अगर (३) पीठपर राजसेवक वेदिका और आसन रख कर उसकेपर कक्षासनसे मंडप करना । (ऐसे तीनों प्रकारके भिन्न भिन्न कक्षासनके नामों वृक्षाणवमें दिये हैं । १४-१५.)



खुला - नृत्यमण्डप का पीठ बंध. तीन प्रकार.

प्रासाद् स्त्रिपंच भूमिः सप्तभिः नवभिस्तथा ।
ब्रह्मस्थानं सदारम्यं स्वर्गं प्रासादं शाश्वतम् ॥ १६ ॥
चतुर्मुखो ब्रह्मणो हि विष्णावेः कुर्याद् विशेषतः ।
चतुर्मुखश्च रुद्रस्य प्रासादः पुण्यहेतवे ॥ १७ ॥
यथा दिनं विना सूर्यं शशांकं विना शर्वरी ।
यस्मिन् देशे चतुर्मुखः प्रासादो न हि विद्यते ॥ १८ ॥

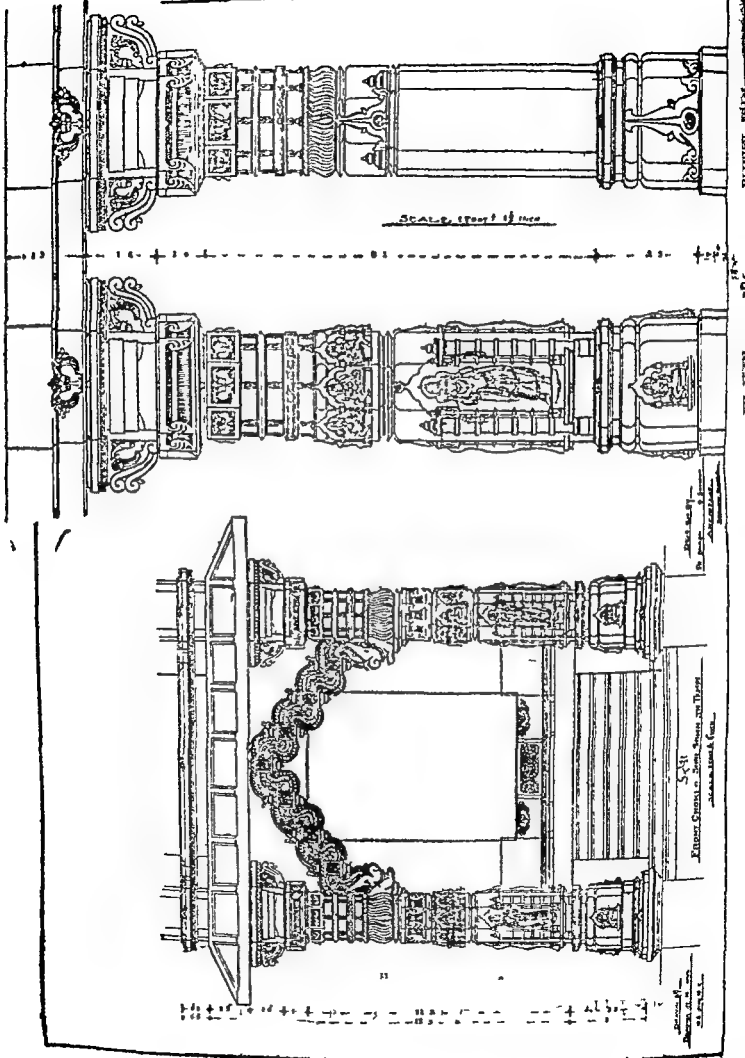


दीगंम्वरः शिव-नृत्य

शिव-नृत्य

ईशानदेव-दिग्पाल दिग्पाल

ब्रह्मा



SCALE, 1 FOOT = 1 INCH

Arch. No. 1000
In plan
Arch. No. 1000

S. 41
K. 1000
Arch. No. 1000

Arch. No. 1000
In plan
Arch. No. 1000

महाप्रासाद त्रणु पांच सात के नव भूमि-भाणवाणा કરવા. स्वर्ग જેવા શાશ્વત પ્રાસાદમાં બ્રહ્મ=મધ્યસ્થાન હમેશાં રમ્ય કરવું. બ્રહ્મ વિષ્ણુ અને રુદ્રના ચતુર્મુખ પ્રાસાદ કરાવવાથી મહદ્દુપુણ્ય ઉપાર્જન થાય છે. જે દેશમાં આવા રમ્ય ચતુર્મુખ પ્રાસાદ નથી તે દેશ સૂર્ય વગરના દિવસ જેવો કે ચંદ્ર વિનાની રાત્રિ જેવો જાણવો. ૧૬-૧૭-૧૮.

મહા પ્રાસાદ ત્રીન પાંચ સાત યા નૌ ભૂમિ મજલેવાલે કરનાં । સ્વર્ગ જેસે શાશ્વત પ્રાસાદમેં બ્રહ્મ મધ્યસ્થાન હમેશા રમ્ય કરના । બ્રહ્મા વિષ્ણુ ઔર રુદ્રકે ચતુર્મુખ પ્રાસાદ કરાનેસે મહદ્ પુણ્ય ઉપાર્જન હોતાં હૈ । જિસ દેશમેં એસે રમ્ય ચતુર્મુખ પ્રાસાદ નહીં હૈ વહ દેશ સૂર્યકે વિના દિન જેસા યા ચંદ્રકે વિના રાત્રિ જેસા જાનના । ૧૬-૧૭-૧૮.

शिवरूपं च कर्तव्यं वामाश्वोर मीशानकम् ।

लास्य तांडव नृत्यं च वैतालं च विशेषतः ॥ १९ ॥

नारद स्तुवरुश्चैव वादित्रै विविधैः सह ।

सिद्धि बुद्धि समायुक्ते नृत्यकृद् गणनायकः ॥ २० ॥

अष्टाशिति सहस्राणि ऋषि रूपाण्यनेकधा ।

चतुसहस्र गोपीयुक्त कृष्णः परिकरै र्वृतः ॥ २१ ॥

स्त्री युग्म संयुते रूपं लोकलीलां प्रदर्शयेत् ।

*મિથુનૈઃ પત્ર વલ્લિભિઃ પ્રમથૈશ્ચય શોભયેત્ ॥ ૨૨ ॥

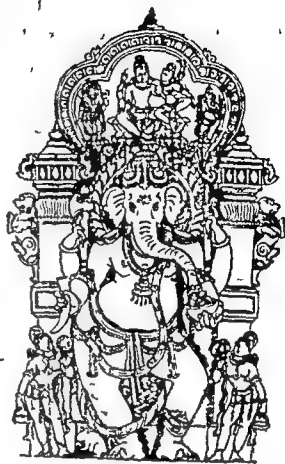
(૫) મિથુનનો અર્થ શિલ્પી બંધુઓએ મૈથુનમાની અનેક જૂના પ્રાસાદોમાં તેવી આકૃતિઓ કુતુહલ વૃત્તિથી કંઠેલી છે. અશ્લીલ સ્વરૂપો ધણા જૂના મંદિરોમાં તેવી ચોટા કરતા ખુણે ખાંચરે મંડોવરમાં, છતમાં, કુંભામાં કે નરપીઠમાં કરેલી જેવામાં આવે છે. તે સહેતુ છે. એવી પણ એક માન્યતા પ્રવર્તે છે. આવાં સ્વરૂપો ઓરીસા, ભુવનેશ્વર, જગન્નાથજી અને કોણાર્કના સૂર્યમંદિરમાં મોટા અને આશુ રાણકપુરના જૈન મંદિરોમાં નાનાં સ્વરૂપો કરેલાં છે.

નોટ—આ ગ્રંથની કેટલીક અપૂર્ણ પ્રતોમાં ફક્ત નવ જ શ્લોક છે. વળી શ્લોક ૧૩થી ૨૩ સુધી દીપાર્ણવ ગ્રંથને મળતા છે.

(૫) મિથુનકા અર્થ શિલ્પી બંધુઓને મૈથુન માનકર અનેક પુરાને પ્રાસાદોમાં વૈસી આકૃતિયો કુતૂહલ વૃત્તિસે કંઠારી હૈ । અશ્લીલ સ્વરૂપો વહુત પુરાને મંદિરોમાં વૈસી ચોટા કરતે કોનેમેં -મંડોવરમેં, છત્મેં, કુંભામેં યા નરપીઠમેં કી હુઈ દેખનેમેં આતી હૈ । વહ સહેતુ હૈ એસી મી એક માન્યતા પ્રવર્તતી હૈ । એસે સ્વરૂપો ઓરીસા, ભુવનેશ્વર જગન્નાથજી ઔર કોનાર્કકે સૂર્ય મંદિરમેં વહે ઔર આશુ રાણકપુરકે જૈનમંદિરોમેં છોટે સ્વરૂપો વનાયા હે । નોટ—અિસ ગ્રંથકી કુછ અપૂર્ણ પ્રતોમેં સિર્ફ નૌ હી શ્લોક ૧૩સે ૨૧ તક પાઠો દીપાર્ણવ ગ્રંથકો મિલતે જુલતે હૈ ।



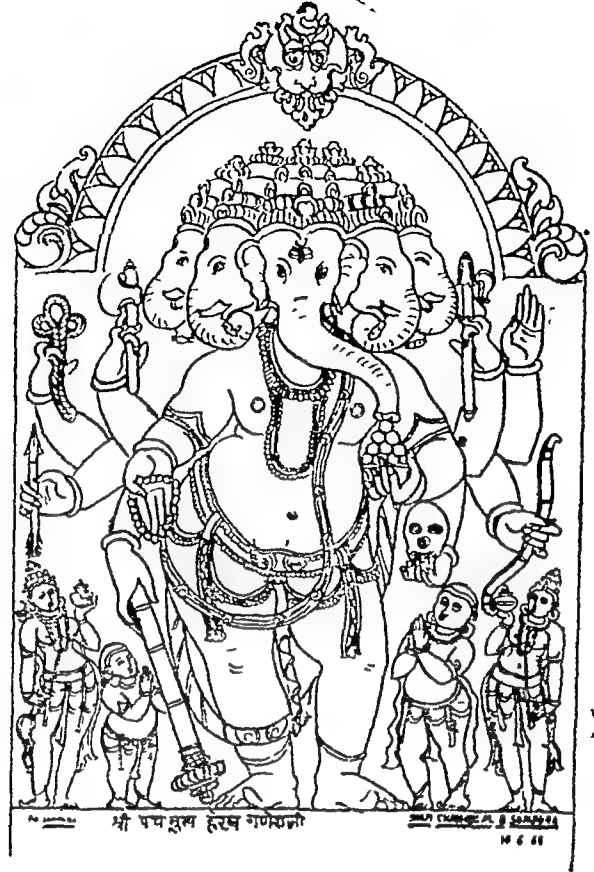
राम पचायतन युक्त घानर सेना साय हनुमत



शिव पचायतन युक्त गणपति विरालिका
साय स्तम्भ तोरण नीम सिद्धि ओर सिद्धि नार

जिवना प्राप्तादना भडपोंमा शिवना अनेक स्वरूपो वाम अधोर, तत्पुरुष
ध्यानादि कृत्वा लास्य ताडन नृत्य करता शिवना स्वरूपो करवा वैतालिका पणु
उपो करवा (ते रीते जे देवीना प्रासाद होय त्या तेवा स्वरूपो करवा.) नारद
तुभइ विविध बाणत्रयुक्त सिद्धियुद्धि सहित नृत्य करता गणपतिना इप
कृत्वा अक्षशी हजार ऋषिमुनिना अनेक स्वरूपो चौराशी हजार गोपी सहित
कृष्णार्थी करता परिकरयुक्त स्वरूपो (विष्णुमंदिरमा ने भडपमा) करवा स्त्रीपुरुषना
नेडला इपो वेलडीला करता दर्शाववा स्त्रीपुरुषना युग्मउपो कभणना पत्रो अने
वेलडीआर्थी इपो शोभता करवा १६-२०-२१-२२

शिवके प्रासादके मंडपमे शिवके अनेक स्वरूपो वाम अधोर तत्पुरुष
इशानादि करना । लास्य ताडन नृत्य करते शिवके स्वरूप करना । वैतालिके
रूपो भी करना । (इस तरह देवोंका प्रासाद हो वहाँ वैसे स्वरूपों करना ।)
नारद तुंवरु, विविध बाजित्र युक्त सिद्धि बुद्धि सहित नृत्य करते गणपतिके
रूप करना । अष्टाशी हजार ऋषि मुनिके अनेक स्वरूपों चौरासी हजार गोपी
सहित कृष्णसे फिरते परिकरयुक्त स्वरूपों (विष्णु मंदिरमे त्या मंडपोंमें)



पंचमुख रुद्र हनुमंत मनुष मुखहस्ती कभी सिंह वराह पंचमुख हेरंम्ब गणपति परिकर युक्त करना । स्त्रीपुरुषके युगलरूपों लोकलीला करते दिखाना । स्त्रीपुरुषके युग्मरूपों कमलके पत्रों और वेलियोंसे रूपोंको शाभित करना । १९-२०-२१-२२.

आदित्य सूर्यका बारा स्वरूप



१ सुधाता



२ मित्रा



३ आर्य मणि

इन्द्रादि लोकपालाश्च नृत्यकुर्वीत ते सदा ।
 भास्करादि ग्रहः कार्यं द्वादश राशयस्तथा ॥ २३ ॥
 सप्तविंशतिर्नक्षत्रा कर्तव्यानि प्रयत्नतः ।
 अप्तावाया श्वाष्ट्यया नवतारा स्वरूपकम् ॥ २४ ॥



४ इन्द्र



५ वरुणा

जादित्य सूर्यसा स्वरूप



६ सूर्य



७ भग



८ विवस्थान



९ पुष्या

आदित्य सूर्यका स्वरुप



१० सविता



११ त्वष्टा



१२ विष्णु

सप्तस्वराश्च षड्रागाः षट्त्रिंशत्स्वरागिनिकाः ।

द्वादशमेघरूपाणि कर्तव्यानि प्रयत्नतः ॥ २५ ॥

नवग्रह



सूर्य



चंद्र



मंगल



बुध



गुरु



शुक्र



शनी

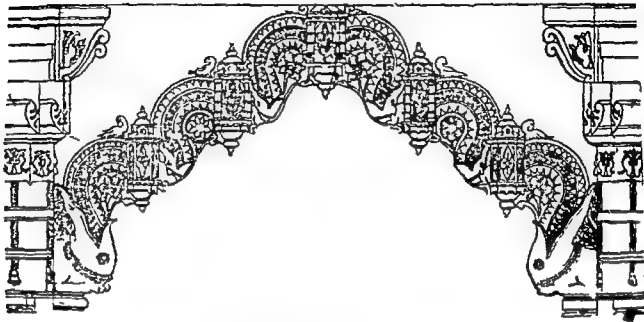


राहु

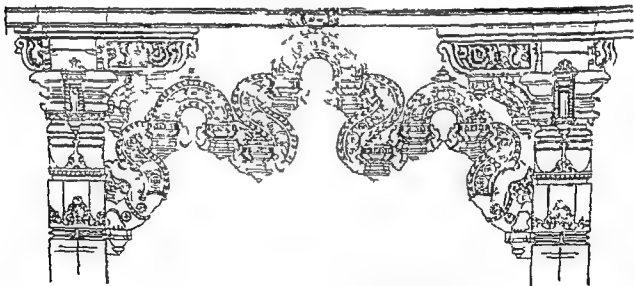


केतु

યક્ષ ગંધર્વ વિદ્યાદ્યા પન્નગાઃ કિન્નરાસ્તથા ।
 અનેક દેવતા નૃત્ય-મંડપે પરિવેષિતાઃ ।
 હલિકાતોરણૈર્યુક્તા ગજસિંહવિરાલિકા ॥ ૨૬ ॥

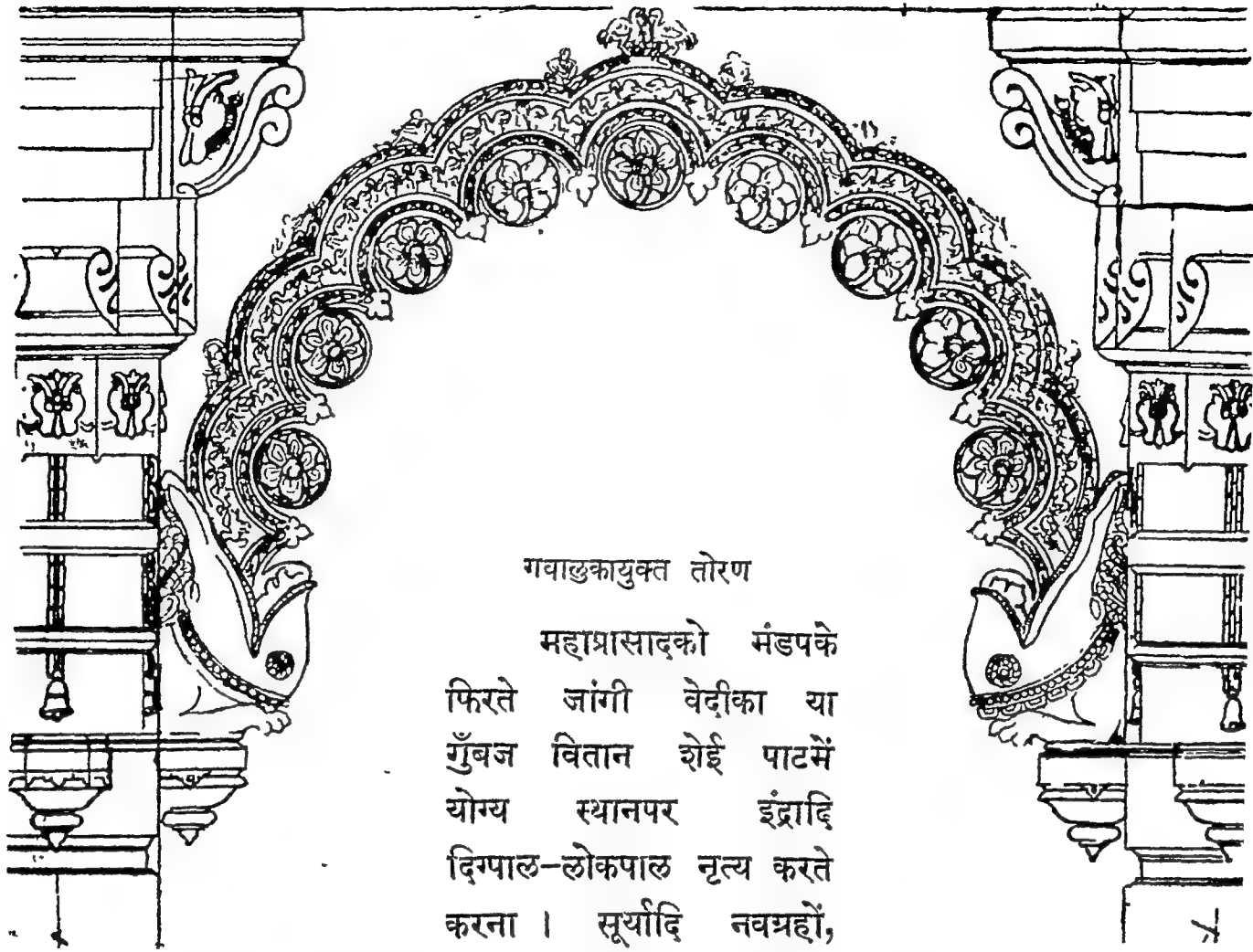


મદલ યુઝન તિલક તોરણ હલિકા તોરણ



સત્તમ ભરણ સરા મદલ આદોલક હીંગોલક તોરણ

મહાપ્રામાદને કે મડપની ફરતા બાળી વેદિકા કે છુ મટ વિતાન શેષપાટમા
 ચોગ્ય મ્યાને ઇદ્રાદિ દિગ્પાલ નૃત્ય કરવા, સૂર્યાદિ નવ ગ્રહો, ખાર રાશિઓ,
 સત્તાવીશ નક્ષત્રો, આઠ આય, આઠ વ્યય, નવતાગ, સાત સ્વર છ ગગ, છત્રીશ
 રાગિણી, ખારભેઘ, યક્ષગાધર્વ વિદ્યાધરો, નાગ, કિન્નરો વગેરે અનેક દેવો દેવી
 દેવતાઓના મ્વરૂપો મડપ ફરતા નૃત્ય કરતા કરવા (મુખ્ય મ્વરૂપને) ઇલિકા
 તોરણ સાથે ગજસિંહ અને વિગલિકા સાથે થાભલી સાથે કરવા ૨૩ ૨૪ ૨૫-૨૬



गवालुकायुक्त तोरण

महाप्रासादको मंडपके
फिरते जांगी वेदीका या
गुँबज वितान शेई पाटमें
योग्य स्थानपर इंद्रादि
दिग्पाल-लोकपाल नृत्य करते
करना । सूर्यादि नवग्रहों,

बारह राशियों, सत्ताईश नक्षत्रों, आठ आय आठ व्यय, नवतारा, सात स्वर,
छः राग छत्तीस रागिणी, बारहमेघ, यक्ष, गंधर्व, विद्याधरों, नाग, किन्नरों
वगैरह अनेक देवों देवी देवताओंके स्वरूपों मंडपके फिरते नृत्य करते करना ।
(मुख्य स्वरूपको) इलिका झूलके साथ गजसिंह और विरालिकाके साथ स्तंभिका
के साथ करना । २३-२४-२५-२६.

इतिश्री विश्वकर्माकृतायां क्षीरार्णवे नारद पृच्छायां स्तंभ मान लक्षणाध्याये
शताग्रे पंचदशमोऽध्याय ॥११५॥ क्रमांक अ० १७

इतिश्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवे नारदजीके पूछे हुए स्तंभमान लक्षणका शिल्प
विशारद श्री प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुराकी रचि हुयी सुप्रभा नामकी भाषाटीका का
अध्याय ११५. क्रमांक अध्याय १७.

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवमें नारदजीके पूछे हुए स्तंभमान लक्षणका शिल्प
विशारद श्री प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुराकी रचि हुयी सुप्रभा नामकी भाषाटीका का
एकसौ पंद्रहवाँ अध्याय ॥११५॥ क्रमांक अध्याय १७

॥ अथ मंडपाधिकार ॥

क्षीरार्णव (अ० ११६) क्रमांक अ० १८

विश्वकर्मा उवाच—

उत्सवार्थे प्रयत्नेन कर्तव्या शुभमंडपा ।

प्रासाद राजवेश्मानि वापी कुप तडागयो ॥ १ ॥

तत्रैव मंडपा कार्यौ ऋषिराज धृणोत्तमा ।

प्रासादाग्रे महारम्या मंडपास्यामनेरुधा ॥ २ ॥

श्री विश्वकर्मा कहे છે ચનયાગાદિ ઉત્સવકાર્યમા શુભ એવા મંડપ, પ્રાસાદ આગળ રાજભવન, આગળ, વાવ કુવા, તળાવાદિ જળાશ્રય આગળ મંડપો કરવાનું હું ઋષિગજ ! હવે માલખો પ્રાનાદની આગળ મહારમ્ય એવા અનેક પ્રકારના મંડપો કરવા કહ્યા છે ૧-૨

શ્રી વિશ્વકર્મા કહેતે હૈં । ચદ્ધાગાદિ ઉત્સવ કાર્યમે શુભ એસે મંડપ પ્રાસાદકે આગે રાજમનનકે આગે, વાવ-કૂવ તાલાવાદિ જલાશ્રય આગે મંડપ કરનેકા હે ઋષિરાજ, અવ સુનો । પ્રાસાદકે આગે મહારમ્ય એસે અનેક પ્રકારકે મંડપ કરનેકે લિયે કહે હૈં । ૧-૨

પ્રાગ્નાદિ વિજયાચાદ્યં મંડપા ઉક્તમાનતઃ ।

દ્વિસ્તમ સ્તતો વૃદ્ધિ મંડપા પુષ્પ ઉચ્યતે ॥ ૩ ॥

ઋન્યસં ચ તતો હીન દ્વિગુણ નૈવ કારયેત્ ।

જગતી મંડપા પ્રાજ્ઞ ગ્રસ્તદોષં પરિત્યજેત્ ॥ ૪ ॥

પ્રાગ્નાદિ અને વિજયાદિ અનેક મંડપો માનથી કહ્યા છે પુષ્પકાદિ પ્રકારના મંડપો પ્રથમ સુભદ્ર મંડપથી બપ્પે થાભલાની વૃદ્ધિએ પુષ્પકાદિ ૨૭ મંડપો કહ્યા છે કનીષ્ઠમાનથી હીન પણ તે પદથી બમણો (મંડપ) કદિ ન કરવો સુજ શિલ્પીએ જગતીથી મંડપ નીચો ગાળવાનો દોષ ન કરવો ૩-૪

પ્રાગ્નાદિ ઓર વિજયાદિ અનેક મંડપો માનસે કહે હૈં । પુષ્પકાદિ પ્રકારકે મંડપાં પ્રથમ સુભદ્ર મંડપસે દો દો સ્તમોંકી વૃદ્ધિકર પુષ્પકાદિ ૨૭ મંડપાં કહે હૈં । કનીષ્ઠમાનસે હીન મીં ઉસ પદસે દૂગના (મંડપ) કમી નહીં કરના । સુજ શિલ્પીકો જગતીસે મંડપ નીચા ગાળનેકા દોષ ન કરના । ૩-૪

પ્રથમે સમ સપાદ સાર્દ્ધં પાદોનદ્વયમ્ ।

દ્વિગુણં ચાદપિ કર્તવ્યા સપાદ દ્વયમેવ ચ ॥ ૫ ॥

સાર્દ્ધં દ્વયં તુ કર્તવ્યં અતઃ ઊર્ધ્વન કારયેત્ ।

સપ્તધા પ્રમાણ સૂત્રં વાસ્તુવિદ્ધિરુદાહતમ્ ॥ ૬ ॥

મંડપના વિસ્તાર પ્રમાણ હવે કહે છે (૧) પ્રથમ પ્રાસાદ જેટલો (૨) પ્રાસાદથી સવાથે. (૩) પ્રાસાદથી દોઢો (૪) પ્રાસાદથી પોણા બે ગણો (૫) પ્રાસાદથી બમણો (૬) પ્રાસાદથી સવા બે ગણો (૭) પ્રાસાદથી અઢીગણો મંડપ કરવો તે સાત પ્રમાણ બાણવા તેથી મોટો મંડપ ન કરવો. વાસ્તુશાસ્ત્રના જ્ઞાતાઓએ એ રીતે સાત પ્રમાણ સૂત્ર મંડપના કહ્યા છે. ૫-૬.

મંડપકે વિસ્તાર પ્રમાણ અવ કહતે હૈં । (૧) પ્રથમ પ્રાસાદકે વરાવર (૨) પ્રાસાદસે સવા ગુના (૩) પ્રાસાદસે ઢેઢ ગુના (૪) પ્રાસાદસે પૌને દો ગુના (૫) પ્રાસાદસે દો ગુના (૬) પ્રાસાદસે સવા દો ગુના (૭) પ્રાસાદસે ઢાઈ ગુના મંડપ કરના । એ સાત પ્રમાણ કહે । इससे बड़ा मंडप नहीं करना । वास्तुशास्त्रके ज्ञाताओंने इसी तरह सात प्रमाण सूत्र मंडपके कहे हैं । ५-६.

૧સમં સપાદં પંચાંશત્વર્યતં દશહસ્તકમ્ ।

દશત્પંચ હસ્તે સાર્દ્ધં ચતુર્હસ્તે દ્વયપાદૂન ॥ ૭ ॥

ત્રિહસ્તે દ્વિગુણં તદ્વિશિષ્ટા ચતુષ્કિકા ।

ચતુષ્કં વાઽપિ ચાષ્ટાંશ શુકસ્તંભાનુંસારત્ ॥ ૮ ॥

પચાશ હાથથી દશ હાથના પ્રાસાદોને પ્રાસાદ જેટલો સમ અગર સવાથે મંડપ કરવો. પાંચથી દશ હાથના પ્રાસાદને દોઢો, ચાર હાથના પ્રાસાદને પોણા બે ગણો ત્રણ હાથનાને બમણો અને તેનાથી ઓછા નાના પ્રાસાદને વિશિષ્ઠ એવું ચોકિયાતું કરવું. ચોકી ચોરસ કે અષ્ટાંશ શિખરના આગળ શુકનાશના શુક સ્તંભને અનુસરતા પાદમંડપ જેવું કરવું. ૭-૮.

पचास हाथसे दस हाथके प्रासादोंको प्रासादके बराबर सम अगर सवा गुना मंडप करना । पाँचसे दस हाथके प्रासादको ढेढ गुना, चार हाथके प्रासादको पौने दो गुना तीन हाथके प्रासादको दूगना और इससे कम छोटे

अपराजितसूत्र १८५ भां आने भणतो पाठ छे. महाराज भोजदेव विरचित समराज्जण सत्रधार अ० ६७भां लघु प्रासादने मोटो मंडप करवो होय तो थर्छ शके. वास्तुभूमिना संकेयना कारणे ओछो पणु करी शकय ते आगण जता महामंडपनुं कहे छे.

શતમષ્ટોતરં જ્યેષ્ઠશ્ચતુષ્ષઠિ કરોઽવરઃ ।

કનિષ્ઠો મંડપઃ કાર્યો દ્વાત્રિશત્કર સંમિતઃ ॥

એકસો આઠ હાથનો જ્યેષ્ઠ મંડપ, ચોસઠ હાથનો મધ્યમાનનો અને બત્રીશ હાથનો કનિષ્ઠમાનનો મંડપ રચી શકાય છે.

प्रासादको विशिष्ट गेसी चोकी करना । चोकी चोरस या अष्टाश शिखरके आगेके शुकनासके शुकनासको अंगुसरते पादमंडप जेमा करना । ५-८

शुकनासे समाघटा कर्तव्या सर्व कामदा ।

तेन मानेन पादान्त(?) मंडपोदय समुत्सृजेत् ॥ ९ ॥

प्रासादना शुकनासनी णगण मंडपनी शाभरणनी भूय घटा समान ओके भूयभा राभवी ते भर्ष कामनाने आपनाऽ णगणु तेवी ते भानथी मंडपनी जिआर्ष राभवी २ ६

प्रासादके शुकनासके चराचर मंडपकी शाभरणकी मूल घटाके समान एक सूत्रमे रखना । उसे सर्व कामनाको देनेवाला जानना । इससे उस मानसे मंडपकी ऊँचाई रखना । २ ९

नरपीठस्य चोर्ध्वं तु उत्तरद्वस्य मस्तके ।

कृत्वा दश सार्धानि भागैक राजसेनकं ॥१०॥

वेदिका च द्विभागा तु भागार्धासनपट्टकं ।

स्तंभश्चैव चतुर्भागा भागार्धं भरणं भवेत् ॥११॥

शरं च भागमेकेन पट्टं च सार्धं भागकः ।

कन्यसं च समाख्यातं मध्यमं चमतः शृणु ॥१२॥

भाग

१ राजमेवक

२ वेदिका

०॥ आसपट्ट

४ स्तंभ

०॥ भरण

१ मरु

१॥ पाट

१०॥ भागउदय

मंडाप्रसादना नग्यगना मथाणाथी द्वारना ओत्तरगना

मथाणा सुधीनी जिआर्षना (सुभ प्राथीव मंडपना) भाडा

दश भागो करवा तेभाओद भागनु राजसेनक जे भागनी

वेदिका अने अर्धाभागनु आसनपट (आभरोट) करवो

ते ५० आऽ भागनो स्तंभ-अर्धा भागनु भरण-ओके

भागनु शर अने दोढ भागनो पाट भाडा करवो ओ रीते

साडा दश भाग मंडपना उदयना कनिष्ठमानना णगणवा

हुवे मध्यमाननो उदय सालणो १०-११-१२

महाप्रासादके नरथरके शीर्षकसे द्वारके ओत्तरगके शीर्षक तककी ऊँचाई के

(२) अपराजितसूत्र १८५भा शुकनास भाटे उहे छे “तदूर्ध्वं न च कर्तव्य मध इव नैव द्रूपयेत् । शुकनासनी घटा जिथी न करवी पणु नीचे होय तो होय नथी मदनसुनधार पणु तेम उहे छे “न्यूनाश्रेष्टा न चाधिका ।

(३) अपराजितसूत्र १८५ में शुकनासके लिये कहते हैं । तदूर्ध्वं न च कर्तव्य मध इव नैव द्रूपयेत् । शुकनासकी घटाकी ऊँची न करना लेकिन नीचे हो तो दोष नहीं है । मदन सुनधार भी ऐसा कहते हैं । न्यूना श्रेष्टा न चाधिका ।

सांभार निरधार प्रासादके स्त्रीक मंडपका कक्षासन युक्त स्तंभादि उदय प्रमाण

लाग	नरपीठम्या चोघ्वतु ऋटछाद्यस्य मस्तक ।
१ गलमेव	कृत्वा दश साढांशान पूर्वमानेन मध्यमम् ॥१३॥
२ वेदिका	
॥ आमनप	निधधार प्रासादना म डपनी नग्थरना मथाणाथी छज्ज
४ स्तल	मुधीनी विआधना माडा दश लाग करी आगण ने वेदिकांने
॥ लगलु	स्त लादिना लाग कछा प्रभाणे कृवाथी मध्यमान नल्लु १३
१ स	
१॥ पाट	

१०॥ लाग निरधार प्रासादके मडपकी नग्थरके शीर्षकसे छज्ज तककी ऊँचाईके साढे दस भाग कर आगे जो वेदीकाके स्तभादिके भाग कहे उसके अनुसार करनेसे मध्यमान जानना । १३

नरपीठस्य चोर्ध्वं तु यावद् भरणी मस्तके ।

भागाश्च दशसार्द्धा ज्येष्ठमानं विधीयते ॥१४॥

माधार महाप्रासादना नग्थरना मथाणाथी म डोवरनी लगलीना मथाणा मुधीना त्रीक म डपना उदयना माडादश लाग करी तेभा आगण कडेला लाग मान प्रभाणे वेदिका स्त लादि कृवा आ नेधमान नल्लु १४

साधार महाप्रासादके नग्थरके शीर्षकसे मडोवरकी भरणीके शीर्षक तककी त्रीक मडपके उदयके साढे दस भाग उसमे आगे कहे हुए भाग मानके अनुसार वेदिका स्तभादि करना । यह ज्येष्ठमान जानना । १४

नश्च भरणं चैव सार्द्धदश भाग समुच्छ्रयं ।

दंड छाद्यं द्विभाग च निर्गमं च विनिर्दिशेत् ॥१५॥

भागार्धे च कपोतालि पालके मंडप शुभ ।

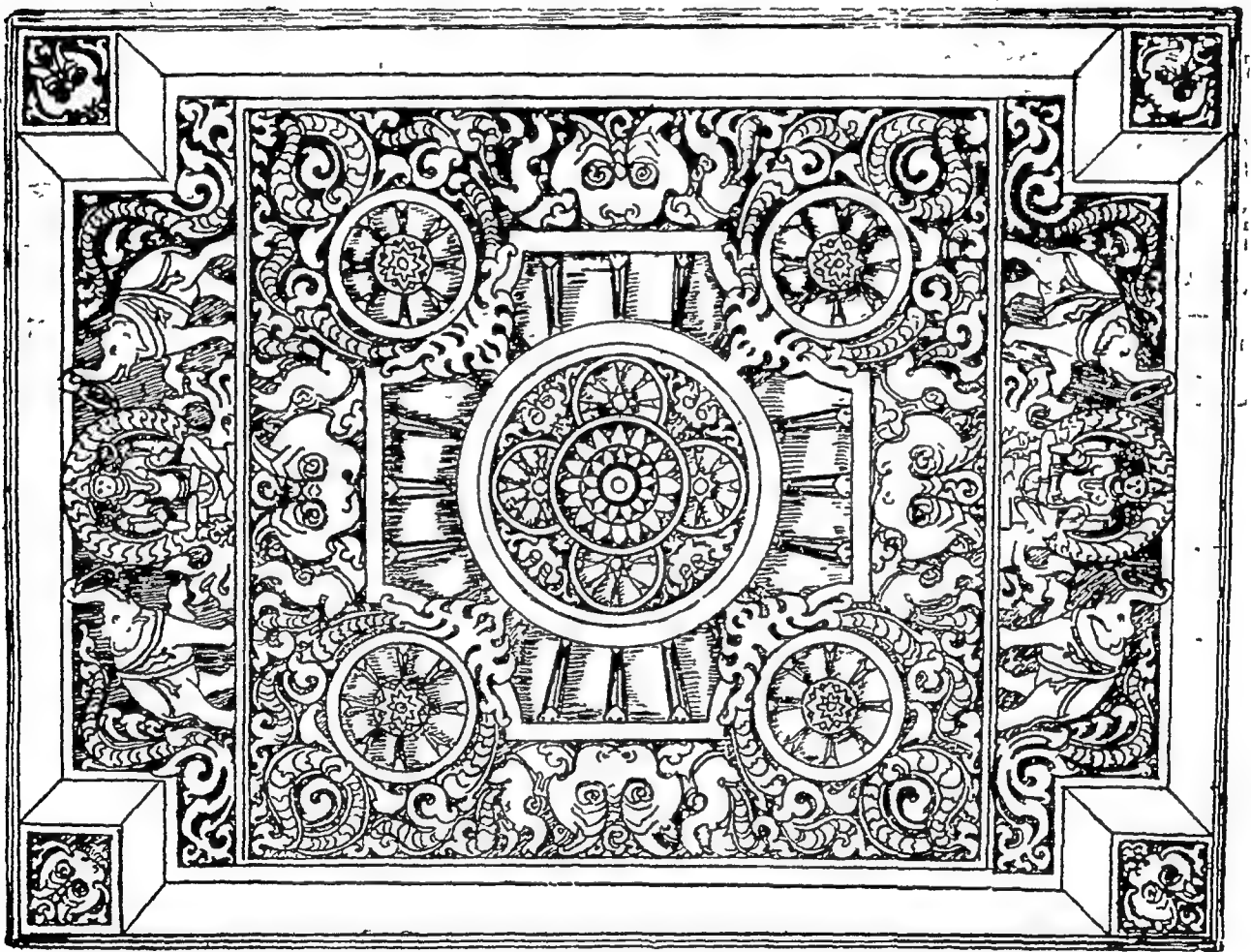
भागात्र पद विस्तार ततो बृत्त च आमितिं ॥१६॥

(२) निधवार प्रासादमा छज्ज अने पाट ओकसत्रमा न होय ते प्रभाणे अही श्लोक १४ प्रभाणे म डपना छाद्यु कथु छे पाटी आधार प्रासादमा ओतगके मथाणा नेटली म डपनी उलली अग तो लरल्ला नेटली उलली नाथानु होय आनु तागामा दष्टत छे

(३) निरधार प्रासादमे छज्जा और पाट ओक सत्रमे ही हो, जिस तरह यहाँ श्लोक १४ के अनुसार मडपके पौधेके लिये कहा है। बाकी माधार प्रासादमे ओतगके शीर्षकके बराबर मडपका उदय अगर तो भरणीके बराबर उदय रक्खनेका होता है। इसका दष्टात तागामें है।

नरपीठथी भरणी सुधीना उदयना साडादश भागमां दोढ लागनुं दंड छाद्य-
दांतीयुं छजुं करवुं. अने नीकाणो पणु तेटलो जे लागनो राखयो. ते पर
(दावडी पर) अरधा लागनो केवाण अने पाल मंडप उपर अडारना लागमां
करयो ते शुभ जानवुं. अंदर पद विस्तारथी हांशो वगेरे थर करता गोण
करवा. १५-१६.

नरपीठसे भरणी तकके उदयके साढे दस भागमें देढ भागका दंड-छाद्य-
दांतीया छज्जा निर्गम करना । और निकालो भी उतना दो भाग का रखना ।



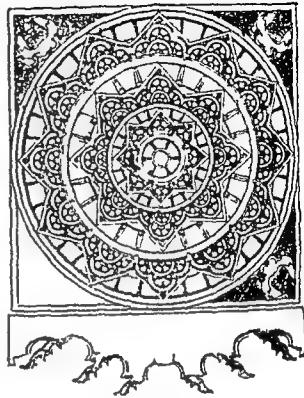
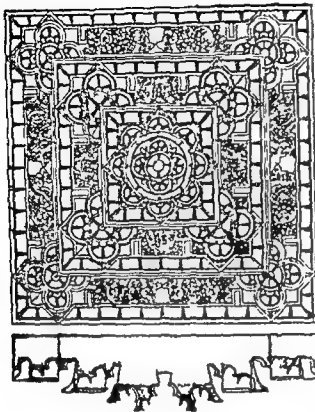
चतुष्कीकाकी छत शिल्पिग-वितान

उसके पर (दावडीके पर) आधे भागका केवाल और पाल मंडपके बाहरके
भागमें करना । उसे शुभ जानना । अंदर पद विस्तारसें हांशो वगेरा थर फिरता
गोल करना । १५-१६.

वितानानि विचित्राणि क्षिप्तान्युक्षिप्तकानि च ।

समतलानि ज्ञेयानि उदितानि त्रिधाक्रमात् ॥१७॥

एकादशशतान्ये वितानानि त्रयोदश ।
शेक्ताश्च विविधाश्छंदा लुमा स्तत्रत्वनेकधा ॥१८॥४

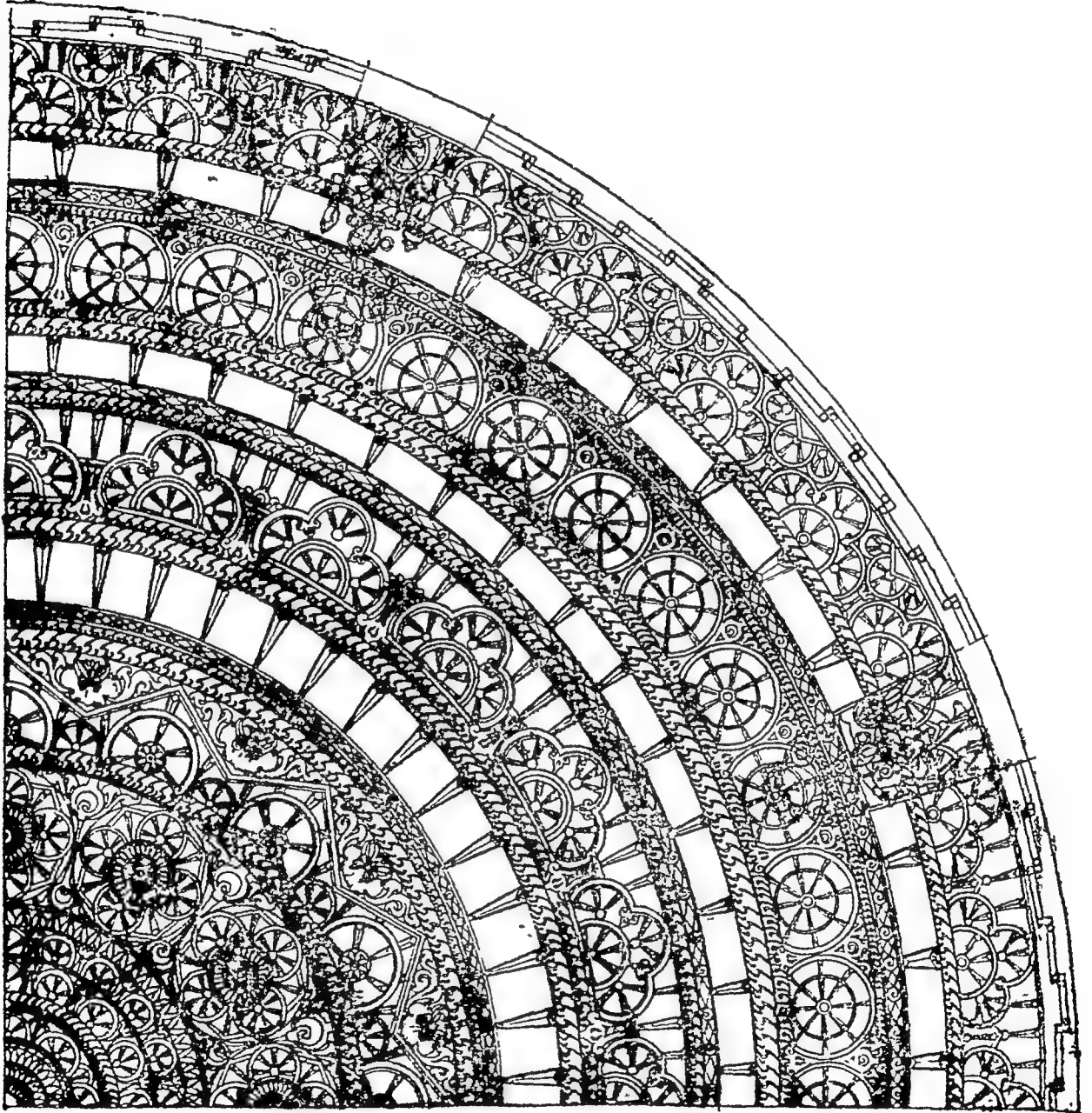


વિતાનના પ્રમાણ-ક્ષિપ્તાનુક્ષિપ્ત-તલ્લદશન જૌર ઉગ્ધ દર્શન

(૪) વિતાન એટલે આગળ બધાનો, મડપનુ વિતાન એટલે ધુમટ હત, કોન કાયલા વાળો ધુમટ આગ કામેમા થાય છે તે સીપીઓ પોતાની બુદ્ધિથી મુદ્દ કરતા ૫૦૬ ઉપર એક કોણ, એક ગણુ વળી કોન એમ ક્રમે ક્રમે એકેક જગી મધ્યમ ધુમટ જેની પશ્ચિમના અનુદત થાય છે કેટલાક ત્રણ કોન અને એક ગણુનો થય એમ પણ શક્ય છે ગોળ ૫૦૬મા દેવગપ-ધ્યાના દરયા કોતરે છે કોઈ માસ કે હસતા ૫૫ કુરે જે જૈન પ્રાસાદમા ચોનીશ તીર્થ દર તેમના યલયલાલુ સાથે કરે છે મધ્યમા પશ્ચિમના ન્યાપનનુ નિધિથી મુકુર્ત થાય છે ગણુ કે તે ત્રણ જેમની ગમ છે કોન લાચનાવાળુ ગમ ધુમટનુ ગીમતી ગમ ન કરુ હોય તો ૫-૭-૯ કે ૧૧ થયે ગતતા ગતનાના નીજળા લીડીને ધુમટ કરે છે આ છેવી સાદી ગીન મોળમી સદી મુની હતી મુસ્લીમ ગાન્ય કાળમા આદા ધુમટો થયા માડ્યા તેમા ધુવમા સાચો ગખરામા આવે છે વિતાનના ૧૧૧૩ વિવિધ પ્રકારો શિ પશાત્રોમા જ્ઞા છે તેમા કોન કાયલાના થયો વાય તે ઉપગત લુમ લામસા મળોના નીજળાથી સકાયી ગોળ અગર ચોરસ પણ ગમ થાય છે મુસ્લીમ રાન્યગળમા ધુમટો અદ ખહાર સાદા થવા માડ્યા તોજાનુ સ્થાન કમાને લીધુ ધુમટની ખહાર ઉપર સવ ગણુને બધે મન્યાગીના-મસ્તક જેના ગોળ ધુમટ થયા માડ્યા સવરણાની રચના મુદ્દ છે જેકે તેનુ વર્તમાન કાળમા થોડા ફેકાર સાથે સવરણા શિપકારે કરી જ્ઞા છે તે ગુલચિન્હ છે

(૪) વિતાન અથાન્ આવાશ, ચદગવા, મડપકા વિતાન ગથાન્ ધુમન છન, કોલ

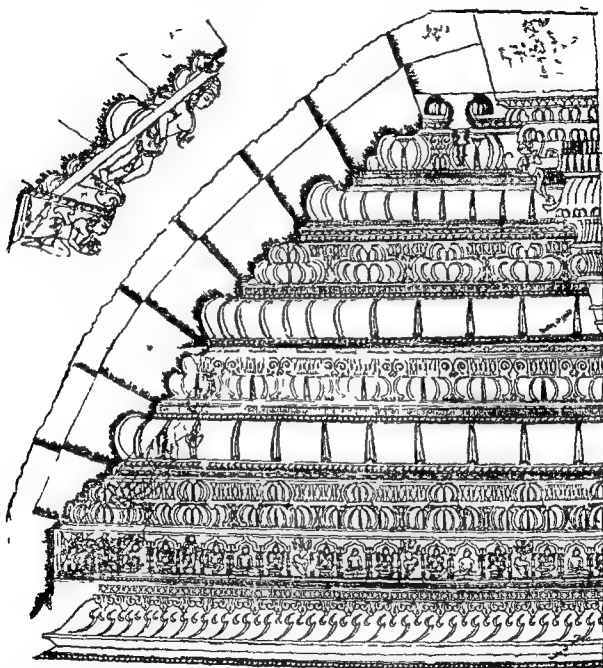
अनेक प्रकारेना वितानो-धुमट विचित्र प्रकारना थाय तेमां मुख्य त्रण लेह छे. १. क्षिप्तानुक्षिप्त ओटवे कायदाना थरो ठांचे चडी वणी नीचे उतरे तेवो धाट (२) समतल- सरणा छातिया जेवा के पट्टनी जेम तेमां आकृतिओ पाणु केतरे. (३) उदितानि- ओटवे केव कायदाना ठांचा ठांचा चउता थरोनो



गजताल और कोल का थरों से अलंकृत वितान (गुम्बज) का तलदर्शन-उदित (२)

काचलावाला गुँवज अच्छे कामोंमें होता है। ये शिल्पीओ अपनी बुद्धिसे सुंदर करते हैं। रुपकंठके उपर अेक कोल जिसी तरह क्रमसे अेक अेक कर मध्यम झुग्मरके जैसी पद्माशीला अलंकृत होती है। कअी लोग तीन कोल और अेक गवालुका थर जिस तरह भी चढाते हैं। गोल रुप कंठमें देवरुप कथाके दृश्योंको कोतरते हैं। कअी लोग ग्रास या हँसके रुप करते हैं। जैन प्रासादमें चौबीस तीर्थकरोंको उनके यक्ष यक्षणियोंके साथ करते हैं। पद्मशिला स्थापनका

धुमट, ओ रीते वितान छत धुमटना त्रिविध प्रकार नखुवा तेनी खुदी खुदी आकृतियो ओक हुनर ओकसो तेनी विविध छदनी धुम भदवोना प्रकारनी छही

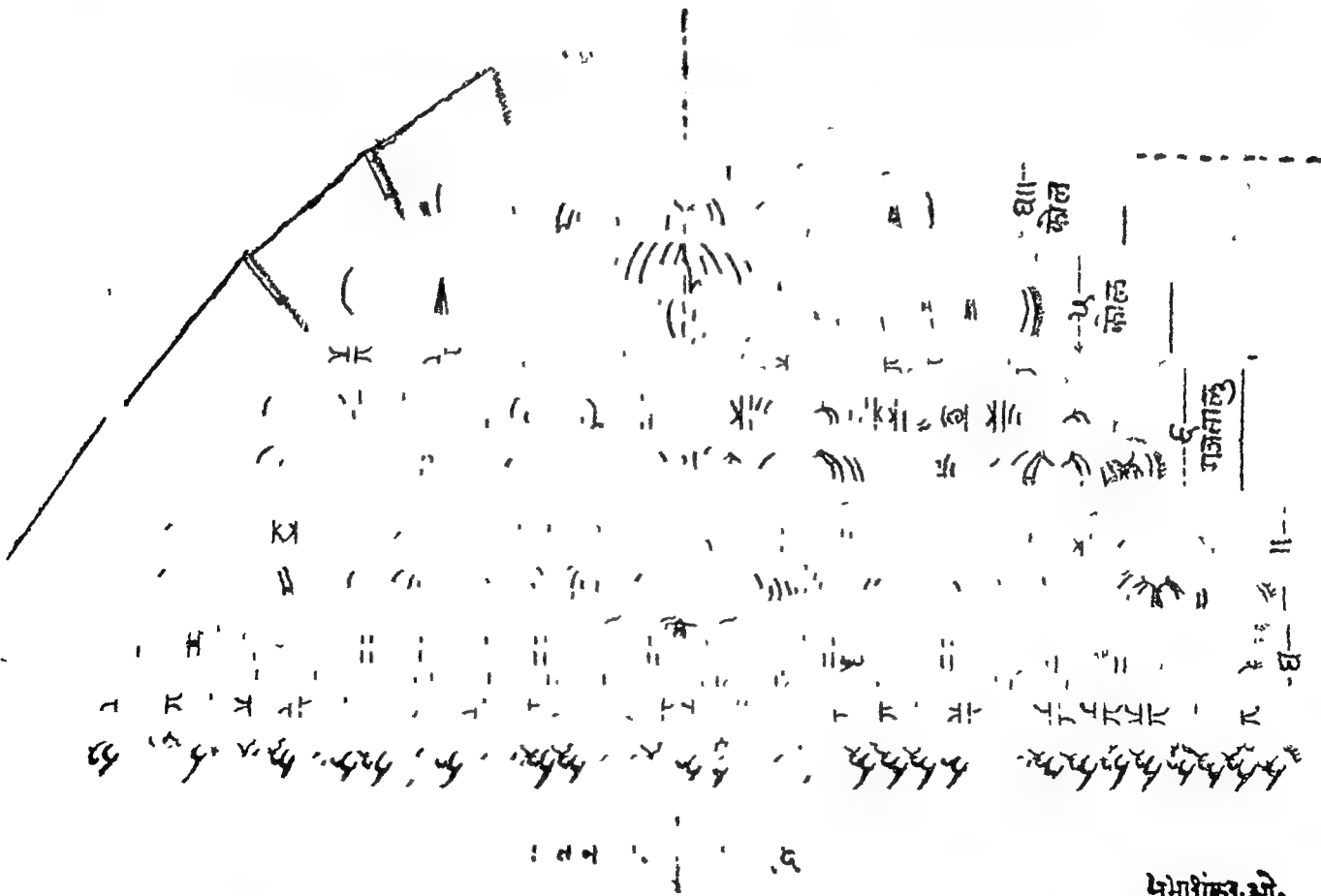


गजनाल जीर कोल से जलकृत वितान (गुम्पज) का दर्शन और उद दर्शन उदित (१) विधिसे सुहुत होता है क्योंकि वह बहुत खतरवाला काम है। कोल काचलावाला काम गुंजना कोमती काम न करना हो तो ५-७-९ या ११ थरो गजते गलतेके निकाले निकालकर गुंज करते हैं। यह अतीम सादी रीत सोलहवीं सदी तक थी। मुस्लीम राज्य कालमें सादे गुंज होने लगे। उसमें धुवमें सवान रखा जाता है।

वितानके १११३ विविध प्रकारों गिल्पशास्त्रोंमें रहे हैं। उसमें कोल काचलेके थरों होतें हैं, तदुपरात लुम लाममा मदगोंके निकालेसे सकोचकर गोल या चोरस भां काम होता है। मुस्लीम राज्यकालमें गुंज अदर बाहर सादे होने लगे। झलका स्थान कमानो ठिया। गुंजके

छे. तेमां शुद्ध संघाट (समतल) मिश्र संघाट उंचा नीचा तलवाणा क्षिप्त लटकता काचलावाणा ४ उक्षिप्त-उंचा चउता काचलाना थरोवाणा येवा प्रकारना अनेक वितानो कइया छे. मुख्य त्रण लेह छे. १७-१८.

अनेक प्रकारोंके वितानों-गुंबज विचित्र प्रकारके होते हैं । उसमें मुख्य तीन भेद हैं । १ क्षिप्त उक्षिप्त-अर्थात् काचलोंके थर उंचे चढ़कर और नीचे उतरे वैसा घाट २ समतल-समान छातिये जैसेकि पट्टकी तरह उसमें आकृतियोंको भी कोतरें । ३ उदितानी-अर्थात् कोल काचलेके ऊंचे ऊंचे चढ़ते थरोंका गुंबज इस तरह वितान छत गुंबजके त्रिविध प्रकार जानना । उसकी भिन्न भिन्न आकृतियाँ एक हजार एकसौ तेरहकी विविध छंदकी लुम मदलादिके प्रकारकी कही गई हैं । उसमें शुद्ध संघाट (समतल) २ मिश्र संघाट-ऊंचे नीचे तलवाले ३ क्षिप्त-लटकते काचलेवाले ४ उक्षिप्त-ऊंचे चढ़ते काचलेके थरोंवाले ऐसे अनेक प्रकारके वितानों कहा हैं, मुख्य तीन भेद हैं । १७-१८.



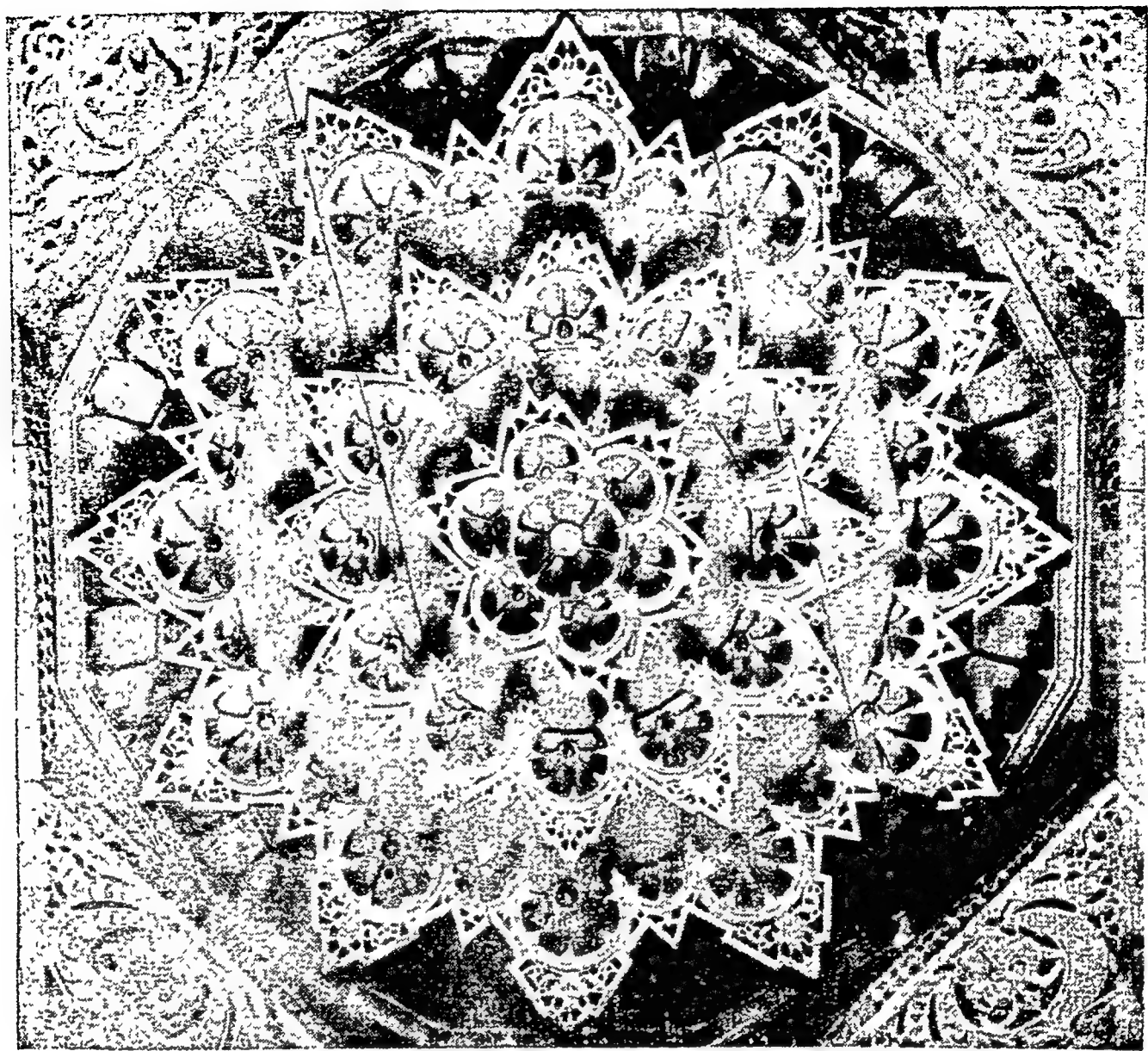
गजताल और कोलादि थरो युवतः वितान (गुम्बज) विस्तार भाग ६६ उदय भाग ३३

बाहर उपर संवरणाके बदले सन्यासीके मस्तक जैसे गोल गुम्बज होने लगे । संवरणाकी रचना सुंदर है । यद्यपि वैसा वर्तमान कालमें कुछ फेरफारके साथ संवरणा शिल्पकारों करते हैं । यह शुभ चिह्न है ।

अष्टात्रे षोडशात्रे च वृत्तं कुर्यात्तदूर्ध्वतः ।
 उदयं विस्तरार्धेन षट् षष्टि विराजिते ॥१९॥
 कर्ण दर्दरीका सप्त भागेन निर्गमोत्तुच्छता ।
 रूपकंठे तु पंचभाग द्वयभागेन निर्गमम् ॥२०॥
 षोडशाष्टार्कं जिन संख्ये विद्याधर निर्गमम् ।
 तदूर्ध्वे चित्ररूपा देवाङ्गना नृत्य शोभिता ॥२१॥
 गजतालु षड्भाग प्रथमा द्वितीया तु षष्ट ।
 पचभाग भवेत्कोलं चतुर्भाग द्वितियके ॥२२॥
 मध्ये वितान कर्तव्य चित्रवर्ण विराजितम् ।
 एष तु कारयेन्नित्यं वितानैक मुमंडिताम् ॥२३॥

म उपना अष्ट उपना लागमा अठाग सोलाग (षत्रीशाश) आदि थरो
 करी गोण थर द्वेयवा त्या तेना विस्तारना छासठ लाग करी तेना उदयना
 अर्ध-अष्टले तेत्रीश लाग जणुवा कणी दादरीको थर सात लागनो अने तेना
 निकणो पणु तेडलो ७ कणो ते पर उपकठ नो थर पाच लागनो, तेना
 निकणो ये लागनो गणवो ते उपकठना थरमा आठ, बार मोण के चौवीश
 अम मभ्यामा विद्याधरो ना निकणता स्वर्धो कणा, ने विद्याधर उपर चित्र
 विचित्र अवी देवाङ्गनाओ नृत्यथी शोभती कणी पहिले गवाणुनो थर छ लागनो
 अने-णीने ते पर गवाणुनो थर पणु छ लागनो करवो पाच लागनो कोलनो
 थर करी ते पर बार लागनो णीने कोलनो थर कणो (अ रीते कुल तेत्रीश
 लाग उदयना जणुवा) तेनी मध्यमा लटकती धणी कोतरखीवाणी पञ्चशीला
 कणी अवा ललण युक्त वितान-धुमट ह भेगा तागमडण जेवो सुशोभित
 करवो १६ थी २३

महपके अवर उपरके भागमे अठाग सोलाश (वत्तीसाश) आदि धरोको
 बनाकर गोल धरको फिराना । वहाँ उसके विस्तारके ठियासठ भागकर उसके
 उदयके अर्ध अर्थात् तैतीस भाग जानना । कणी दादरीका थर सात भागका
 और उसका निकाला भी उतना ही करना । उस रूपकठके धरमे आठ, बारह
 सोलहया चौवीस इसी सख्यामे विद्याधरोके निकलते रूपो करना । उस विद्याधरके
 उपर चित्र विचित्र ऐसी देवाङ्गनाओंको नृत्यसे शोभित करना । पहला गवालुका
 थर छ भागका और उसके पर दूसरा गवालुका थर भी छ भागका करना ।
 पाँच भागका कोलका थर कर उसके पर चार भागका दूसरा कोलका थर



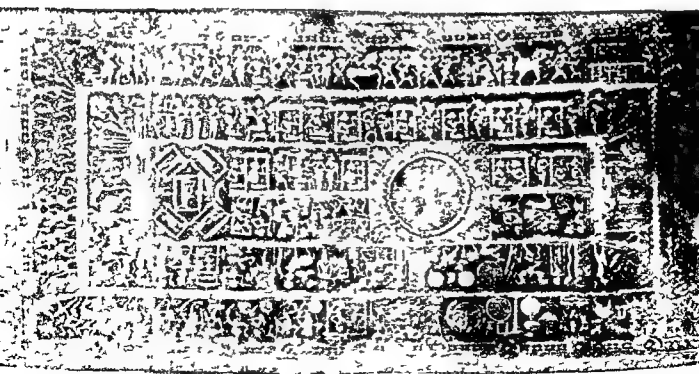
वितान छतके क्षिप्तानुक्षिप्त प्रकार (पंचासरा पाटण)



मूर्तिनिर्माण कर्ता गुजरातके सुप्रसिद्ध शिल्पकलाविद श्री चंदुलाल भ. सोमपुरा



देवदेवादिनादि स्वरूप सहित कौल और गजताल (दयाल) के धरयुक्त वितान (गुम्बज)



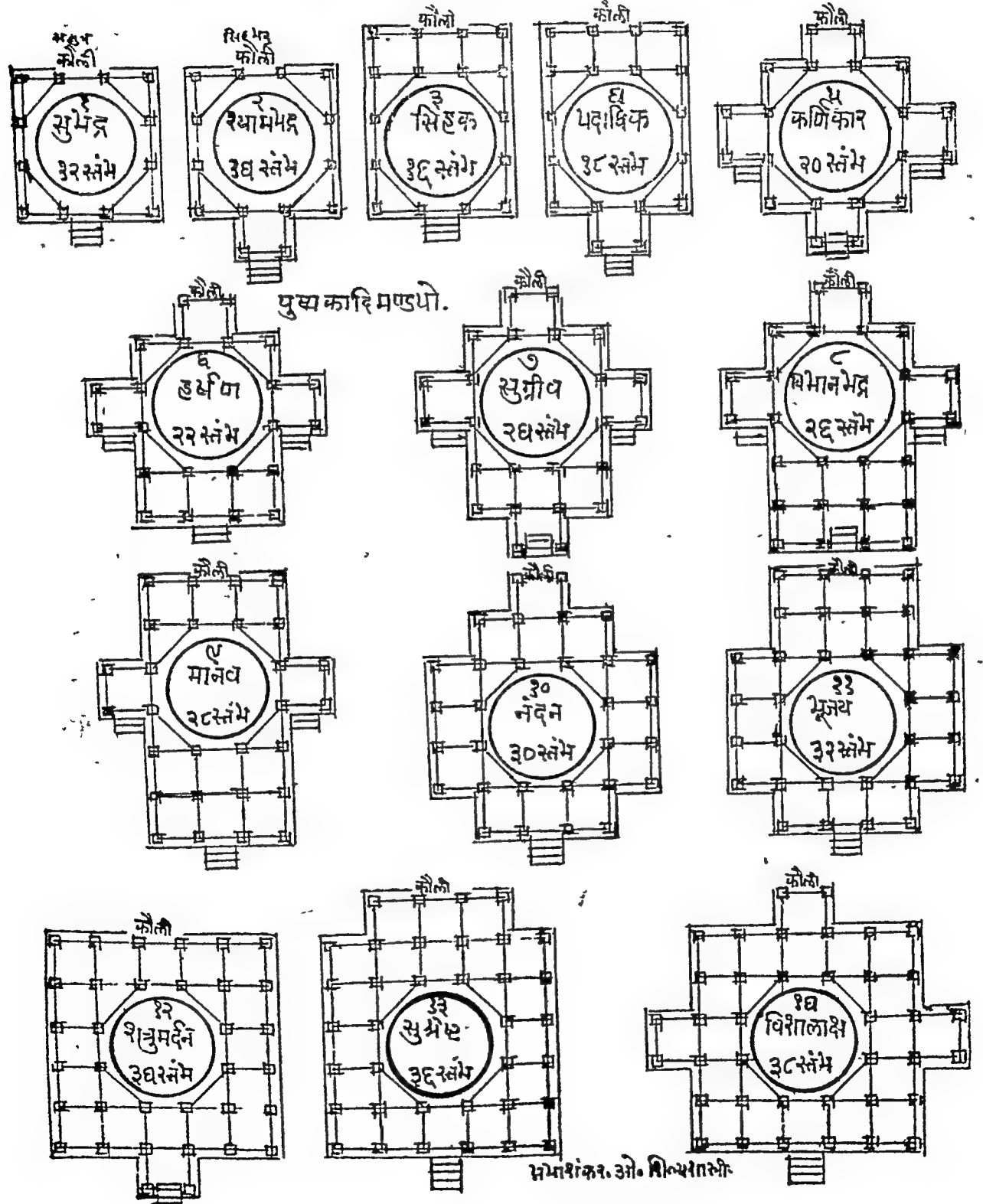
समतल (छतयुक्त) वितानका एक प्रकार (आरासन-अयाजी)

अथ मंडपाधिकारः

करना । (इस तरह कुल तैतीस भाग उदयके जानना ।) उसके मध्यमें लटकती बहुत ही कँडारी हुई पद्मशिला करना । ऐसे लक्षण युक्त वितान-गुंबज हमेशा तारा मंडल जैसा सुशोभित करना । १९ से २३.

पुष्पकोऽथ चतुषष्टि आद्ये द्वादश स्तंभका ।

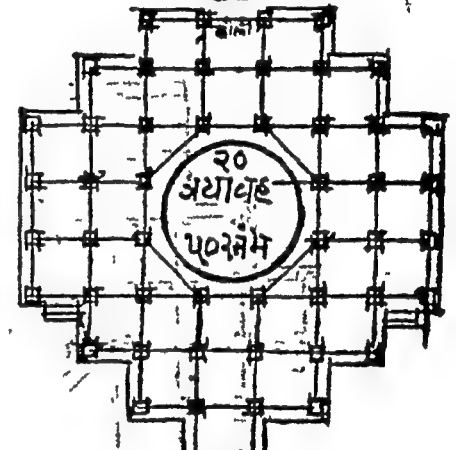
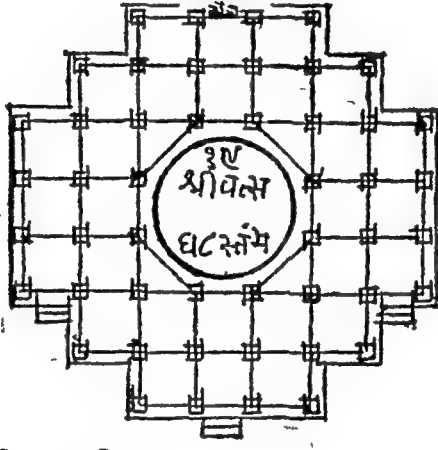
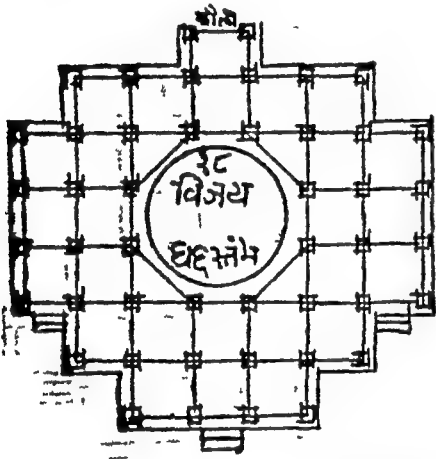
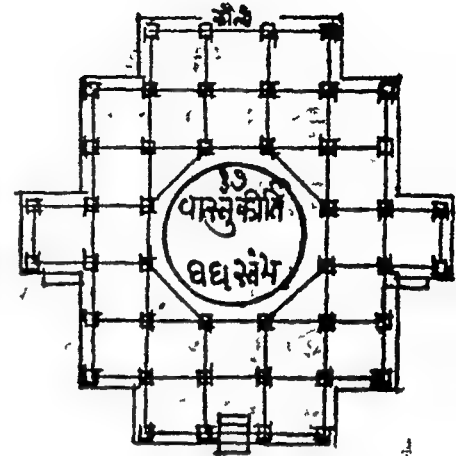
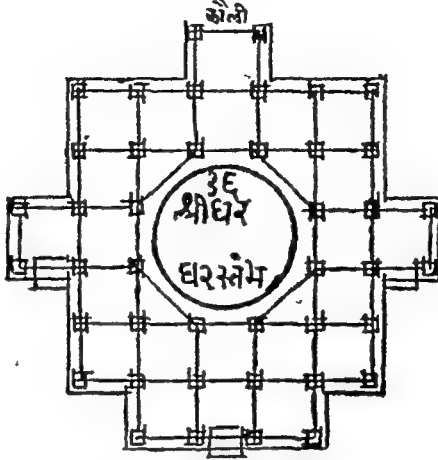
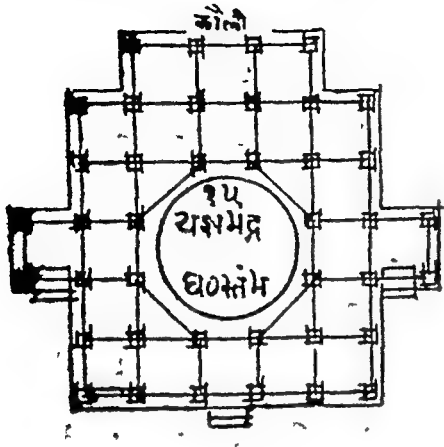
पुष्पकाद् द्वौ द्वौ हीनाः स्युः मंडपाः सप्तविंशति ॥२४॥



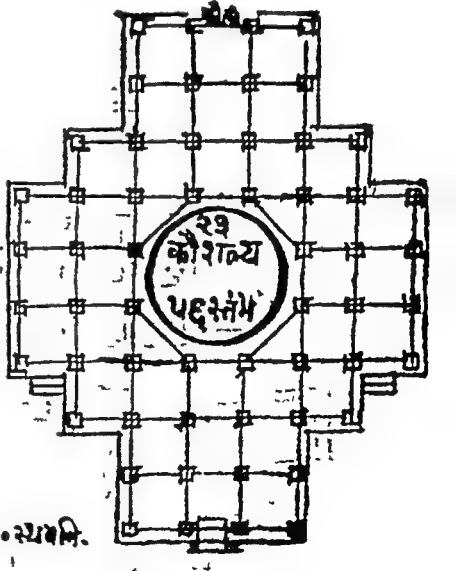
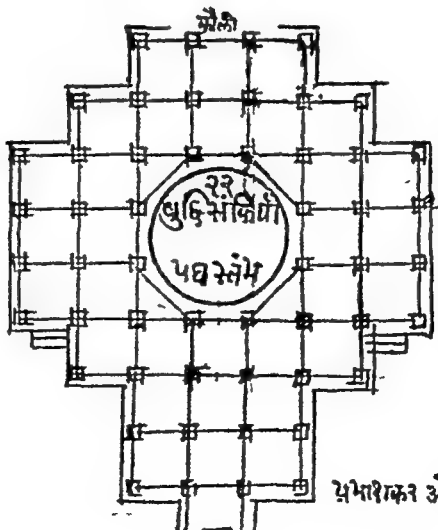
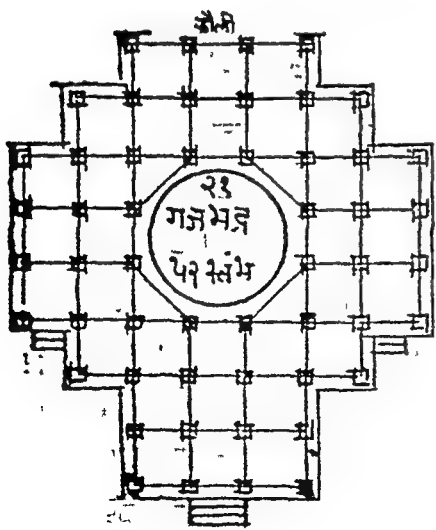
भूमाशंकर. ओ. शिल्पशास्त्री

पुष्पकादि २७ मंडप स्वरूप (१ से १४) (१)

है । उससे दो दो स्तंभों कम कम करते सत्ताईस मंडपों होवें (उनके नाम) और स्तंभ संख्या नीचे फूटनोट में दिये हैं ।)



पुष्पकादि मण्डपो.



प्रभाशकर ओ. स्थिति.

पुष्पकादि २७ मंडप स्वरूप (१५ से २३) (२)

एक त्रिवेद पट् सप्त नव चतुष्किकान्वितः ।

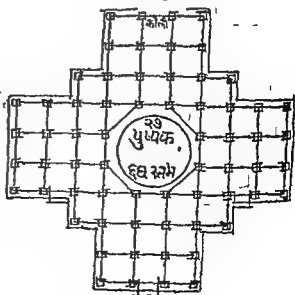
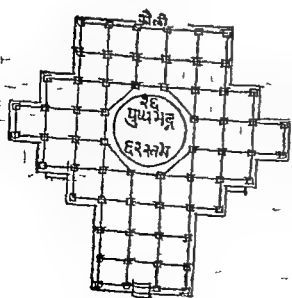
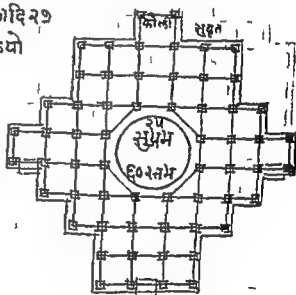
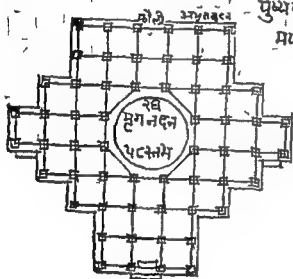
अग्रे भद्रं द्विपार्थे द्वेचाग्रपार्थद्वयो स्तथा ॥२५॥

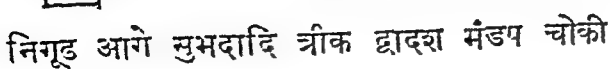
અગ્રતસ્ત્રિ ચતુષ્કવચ્ચ તથા પાર્શ્વ દ્વયોડયિચ ।

મુક્તકોનો ચતુષ્કવચ્ચો ચેદિતિ દ્વાદશ મળ્ડપાઃ ॥૨૬॥

(૧) એક પદની ચોકી સુલક (૨) ત્રણ પદ કીરિટ (૩) ત્રણ પદ આગળ એક ચોકી હુલુભિ (૪) છ ચોકી પ્રાત (૫) છ ચોકી આગળ ૧ ચોકી મનોહર (૬) નવ ચોકીનો શાત મડપ (૭) નવ ચોકી આગળ ૧ ચોકી (નદ) (૮) નવ ચોકીની ખાલુમા બે ચોકી (૧૧-૫૬) સુદર્શન (૯) સુદર્શનના ૧૧ પદ આગળ એક ચોકી રમ્મક (૧૦) આગળ ત્રણ ચોકીના ૧૪ પદ મુમાલ (૧૧) સુનાલના પડખેની બે ચોકી ને પાછળ બે તંત્ર એકેક પદ વધારતા ૧૬ પદનો મિહક

પુષ્પકાદિ ૨૭
મળ્ડપો





(१) एक पदकी चौकी सुभद्र (२) तीन पदका किरिट (३) तीन पदके आगे एक चौकी दुंदुभि (४) छः चौकी प्रांत (५) छः चौकीके आगेकी चौकी मनोहर (६) नौ चौकीका शान्त मंडप (७) नौ चौकीके आगेकी चौकी (नंद) (८) नौ चौकीकी बाजुमें दो चौकी (११ पद) सुदर्शन (९) सुदर्शनके ११ पदके आगे एक चौकी रम्यक (१०) आगे तीन चौकीके १४ पद सुनाभ (११) सुनाभकी बाजुकी चौकी और पीछे दो तरफ एक एक पद बढ़ाते १६ पदका सिंहक (१२) पाँच पदकी तीन पंक्तिके आगे तीन चौकीके १८ पदके सूर्यात्मक इस तरह बारह प्रकारके प्राश्रिय चौकी संडप जानना ।

२५-२६.

सुभद्रस्तु किरीटं च दुन्दुभिः प्रान्त एव चः ।
मनोहरश्च शान्तश्च नन्दाख्याश्च सुदर्शनः ॥२७॥

सम्यक् च सुनामश्च सिंहः सूर्यात्मकस्तथा ।

निर्गृहाग्रे त्रिकेख्यातं द्वादश मुखमण्डपाः ॥२८॥

उपगना चक्षुषवाणा आर मउपोना नाम १ सुभद्र २ किरीट ३ हुन्दुलि
४ भ्रान्त ५ मनोहर ६ शात ७ नदास्य ८ सुदर्शन ९ रम्भक १० सुनाम ११ सिंह
१२ सूर्यात्मक ये आर सुभमउप शुद्ध मउपनी आगण श्रीक्षुप
आर मउप जलुवा २७-२८

उपरके स्वरूपाळे वारह मण्डपोंके नाम १ सुभद्र २ किरीट ३ हुन्दुलि ४
भ्रान्त ५ मनोहर ६ शात ७ नदास्य ८ सुदर्शन ९ रम्भक १० सुनाम ११ सिंह
१२ सूर्यात्मक इन वारह मुखमण्डपको शुद्धमण्डपको आगे स्त्रीक रूप बाग मण्डप
जानना । २७-२८

क्षीरार्णवे समुद्भूता मेरुणादि मण्डपाः

मेरु त्रैलोक्य विजयात् मरुत्याया पंचमिश्रति ॥२९॥

भित्तिद्वार प्राग्ग्रीवाश्च भूमिकां मातृमुच्छ्रयम् ।

समत्पारणच्छाय संवरण वितानकम् ॥३०॥

क्षीरार्णवथी उद्भूतवेला जेवा मेरुवादि मउपो मेरुथी त्रैलोक्य विजय
भुधी पञ्चीश मभ्याना मउपो छे ते लीतोवाणा हागणा प्राग्ग्रीवादिउप
भगलावाणा जेवा कग्वा ते कक्षासन युक्त मत्तवागण वाणा वितान-धुमट अने
मवरणुथी छयेला कग्वा २९-३०

क्षीरार्णवसे उत्पन्न मेरुणादि मण्डपा मेरुसे त्रैलोक्य विजय तक पञ्चीम
सल्याके मण्डप है । उनको दिगर्गेवाले द्वारवाले प्राग्ग्रीवादि रूप मजलेवाले ऊँचे
करना । उनको कक्षासन युक्त मत्तवागणवाले वितान-धुमट और संवरणसे ढाये
हुए करना । २९-३०

मेरुणादि मण्डप लक्षण-लक्षणानि म प्रोक्तानि कथयामि समासत ।

चतुरस्तीकृते क्षेत्रे अपृष्ठा प्रविभाजिते ॥३१॥

भवेन्मध्ये द्विभागस्तु चतुष्का सवृत्तौ धरै ।

अलिंदं भागिकं कुर्याद् द्वादशं स्तंभै शोभितम् ॥३२॥

हुवे हु मेरुवादि मउपना लक्षणो कहु छु समथोरस क्षेत्रने आठ लाग
कग्वा ओटले ४x४ लागथी विभाजित क्पु (ओटले १६ पद थ्या) तेभा वरला
आठ विभागनु ओक पद वरी, वरती याठे द्विभागा जण्णे लागनी पडोणी

चतुष्पिकां करवी. अने ते चतुष्पिका = अलिंद अंकेक लाग नीकणतीं करवी ते पडेलां आरे स्तंभानां मंडप शोभतां करवो. ३१-३२.

अब मैं मेखादि मंडपके लक्षण कहता हूँ। समचोरसं क्षेत्रको आठ भागसे अर्थात् ४ × ४ भागसे विभाजित करना। (सोलह (१६) पद हुए।) उसमें मध्यके चार विभागका एक पद कर फिरती चारों दिशाओंमें दो दो भागकी चौड़ी चतुष्पिका करना। और वह चतुष्पिका = अलिंद एक एक भाग नीकलती करना। उससे पहले बारह स्तंभका मंडप सुशोभित करना। ३१-३२.

द्वितीयो विंशति स्तंभै रष्टाविंशतिः परैः।

भद्रं तु भाग निष्कांश षड् भागं चैव विस्तरे ॥३३॥

भीने मंडप वीश स्तंभानां (अटले उपरना आर स्तंभाना स्वइपने इरतुं लद्र आरे तरइ अण्णे स्तंभानुं थोडीनुं करवुं.) अने त्रीने मंडप अष्टावीश स्तंभानां न्नाणुवो. तेमां अंकेक पद निकणतुं (त्रणु पद पडोणुं) करवुं—आ मंडप छ छ लाग विस्तारमां (कुल छत्रीश लागमां) करवो—३३.

दूसरा मंडप वीस स्तंभका (अर्थात् उपरके बारह स्तंभके स्वरूपको फिरता भद्र चारों तरफ दो दो स्तंभोंका चौकीका करना। और तीसरा मंडप अट्ठाईस स्तंभोंका जानना। उसमें एक एक पद निकलता (तीन पद चौड़ा) करना। यह मंडप छः छः भाग विस्तारमें (कुल छत्तीस भागमें) करना। ३३.

प्रतिभद्रं ततो भागे चतुर्भागं विस्तरम्।

द्विभागायाम विस्तारः प्राग्रिवः स्याच्चतुर्दिशि ॥३४॥

(सोण पदमां आर स्तंभोवाणा मंडपने आरे तरइ) आर लाग विस्तारतुं (अंकेक पद नीकणतुं) प्रतिभद्रं आरे तरइ करवुं. तेनाथी आगण (अंकेक लाग) नीकणती अने छे लागनी लांणी विस्तार चतुष्पिका—प्राग्रिव अलिंद आरे तरइ करवी. आभ थोथो मंडप (छत्रीश स्तंभानां) न्नाणुवो. ३४.

(सोलह पदमें बारह स्तंभोंवाले मंडपको चारों ओर) चार भाग विस्तारको (एक पद नीकलता) प्रतिभद्र चारों ओर करना। उससे आगे (एक भाग) नीकलती और दो भागकी लम्बी विस्तार चतुष्पिका—प्राग्रिव अलिंद चारों ओर करना। इस तरह चौथा मंडप (छत्तीस स्तंभोंका) जानना। ३४.

सूर्योत्तरशतंस्तंभा भूमिका पंचधोच्छिता।

मेरुमंडप उक्तश्च द्विर्भौमोर्ध्व च मांडतः ॥३५॥

द्वौ द्वौ स्तंभौ द्वस्व योगान्मंडपाः स्युरनुक्रमात्।

चतुष्पष्टि स्तंभ कान्त मंडपाः पंचविंशतिः ॥३६॥

ओङ्मो गा० तलोना जे मज्जाथी पायबूभि मज्जा मुधीना मेउमउप
 नालुये। ओङ्मो गा० तलोथी जणजे तलोना ओछा ओछा कभथी अनुङ्मो
 योमठ तलो मुधीना पञ्चीग मउपो नालुये। (योमठ तलोना त्रैलोक्य विजय
 मउप जे लुभिना नालुये।) ३५-३६

एक सौ बारह स्तभोंका दो मजलोंसे पाँच भूमि-मजले तकका मेरुमंडप
 जानना । एक सौ बारह स्तभोंसे दो दो स्तभोंके कम कम क्रमसे अनुक्रमसे चौसठ
 स्तभों तकके पञ्चीस मड़पों जानना । (चौसठ स्तभोंका त्रैलोक्य विजय मंडप
 दो भूमिका जानना । ३७-३८

एक भूम्यादि पंचभूम्या गर्भस्रानु सारत ।

^१छायादर्घ्यत्वं पदान तथा^२ पद्मसंभवा ॥ ३७ ॥

^३जंघात्रार्था सातस्या नवधा ^४पंचलक्षण ।

^५जंघाछाद्य समोदयः ^६पोडशांश ^७मयोर्धत् ॥ ३८ ॥

उत्तरंगोत्तरं सूत्रेण बाह्य पट्टानसंशयः ।

गर्भछाद्य तुलाधस्ता^१ शाखोत्सवचोर्ध्वत् ॥ ३९ ॥

एतत् क्षेत्रस्य मित्युक्तं ब्राह्मपद न संशय ।

मंडपाग्रे द्वितीयांश^२ शुग्मपद यदा भवेत् ॥ ४० ॥

द्वार चानिक्रम यत्र^३ भारपट्टं न संशय^४ ।

द्वारस्यायत्^५ त्रिभाग च^६ पद दशांश विधियते ॥ ४१ ॥

न दोषो समाख्यातो स्ताल भेदो न योजयेत् ।

अलिंदास्येनलिंदस्य^१ सम स्रानुसारतः ॥ ४२ ॥

बाह्यलिंदं च कर्तव्य किंचिन्मूलाधिकं शुभ ।

गभस्रानुसारेण^१ मध्यदेवा चतुष्पिंदा ॥ ४३ ॥^२

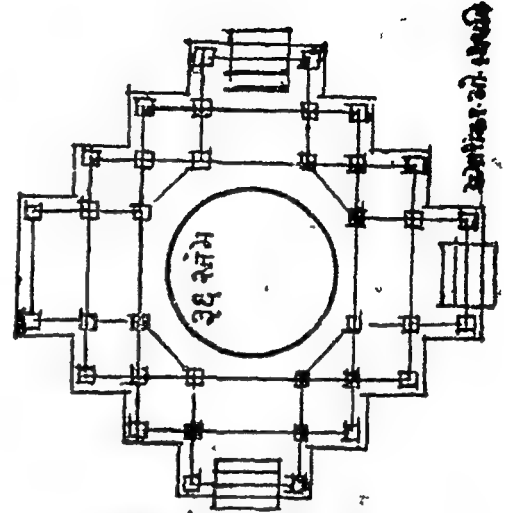
(६) छायादर्घ्यद्विपदस्यात् (७) जघोऽधत् तथा कार्या (८) पद (९) जघोत्सवसमोदय
 (१०) समोर्धत् (११) तत्स्येष्ट्या (१२) तृतीयस्तु (१३) मस्यद्वारपट्ट (१४) द्वारस्या (१५) मायद्
 (१६) भ्रम (१७) मध्यकाम्यदे बुध

(१) श्लोक ३७ वी ४३ मुधीना यात श्लोका पाठ वेदनी स्पष्टता के छि विद्वान
 शिल्पी द्वारा यजे तो ते नवी आवृत्तिभा आभाष नीदारीशु अशुद्ध पाठोवाणी प्रती पश्यी
 अमे जे आपी नव्या छीजे तेनाथी अमे नतुष नथी

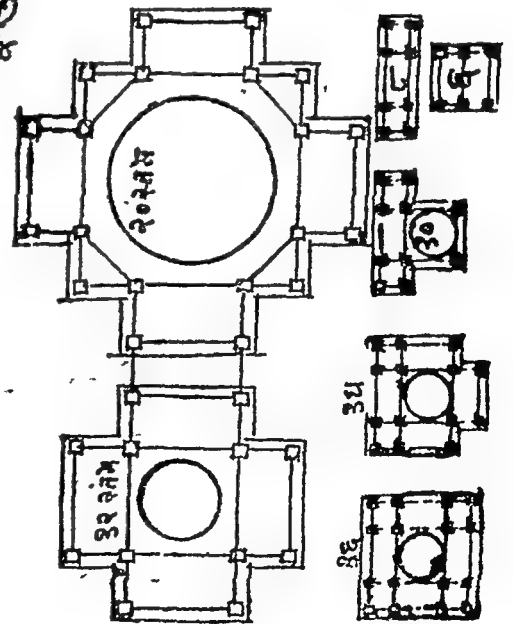
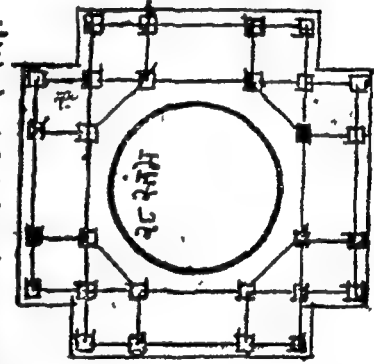
(१८) श्लोक ३७ से ४३ तकके सात श्लोकके पाठ वेदकी स्पष्टता कोई विद्वान शिल्पीके
 द्वारा होगी तो उसे नये संस्करणमें साधार स्वीकारगे। हमको अशुद्ध पाठोवाली प्रती परसे
 जो पता चला है उससे हम सतुष्ट नहीं है।

पंचभूमियुक्त मेरवादि २५ मंडप रचना

क्रमांक	मंडपों के नाम	संख्या	भूमि	भूमि प्रथम	भूमि द्वितीय	भूमि तृतीय	भूमि चतुर्थ	भूमि पंचम
१	त्र्येलोक्य विजय	६४	प्रथम	३६	२८			
२	लक्ष्मीविलास	६६		३६	३०			
३	पद्म संभव	६८	भूमि	३६	३२			
४	विमान	७०	द्वितीय	३६	३४			
५	तेजवर्धन	७२		३६	३६			
६	प्रताप	७४		३६	२८	१०		
७	सूर्यांग	७६		३६	२८	१०		
८	भुर्भुवा	७८	भूमि	३६	२८	१४		
९	पुण्यात्मा	८०	द्वितीय	३६	२८	१६		
१०	शान्तिदेह	८२	तृतीय	३६	२८	१८		
११	सुरवल्लभ	८४		३६	२८	२०		
१२	शतशृङ्ग	८६		३६	२८	२२		
१३	पूर्णख्य	८८		३६	२८	१४	१०	
१४	कीर्तिपताक	९०		३६	२८	२०	६	
१५	महापद्म	९२	भूमि	३६	२८	२०	८	
१६	पद्मराग	९४	चतुर्थ	३६	२८	२०	१०	
१७	इंद्रनील	९६		३६	२८	२०	१२	
१८	शृङ्गवा	९८		३६	२८	२०	१४	
१९	रत्नकूट	१००		३६	२८	२०	१२	४
२०	हेमकूट	१०२		३६	२८	२०	१२	६
२१	गंधमादन	१०४		३६	२८	२०	१२	८
२२	हिमवान	१०६	भूमि	३६	२८	२०	१२	१०
२३	कैलास	१०८	पंचम	३६	२८	२०	१२	१२
२४	मंदार	११०		३६	२८	२०	१२	१४
२५	मेरु	११२		३६	२८	२०	१२	१६



भूमियुक्त मेरु २५ मंडप रचना



ભાવાર્થ—એક ભૂમિથી પાચભૂમિ મજલાના મડપો ઊભા પ્રદક્ષગર્ભને અનુસરીને કરવા છબ ઉપર (બે) પદની નીકળતી ચતુષ્કાની રચનાવાળા મડપતુ નામ ‘પદ્મસ ભવ’ બાણુ જ ધાના નવ વિભાગમાના પાચ લક્ષણ બાણુવા જ ધાની છાજલી બરાબરથી નીચે સોળખો અંશ ઉપર લઈ જવા ઉત્તરગના ઉત્તર સૂત્રની બહાર પટ્ટનો સશય ન ગળવે. ગણારાની છાજલીના તળાચા નીચે શાખો (૩૯) એ રીતે ક્ષેત્રના બાહ્યપદ નગય મડપની આગળ બીજી અને ત્રીજી પદ ૪૦) દ્વારના ભારપટ્ટ એક સૂત્રમા રાખવા દ્વારના ત્રીજાભાગે દશાશ પદ (૪૧) દોષ વગરનું કાર્ય કરવું તાલભેદ થવા ન દેવે. અલિંદ—ચૌકી ઉપર ચૌકી સમસૂત્ર અને ગર્ભસૂત્રાનુસાર કરવી બહારના અલિંદ = ચૌકી ક ઇકે મૂળથી અધિક કરવી તે શુભ બાણુ મધ્યની ચૌકી ગર્ભ સૂત્રને અનુસરીને કરવી ૩૭ થી ૪૭

માર્ગ—એક ભૂમિસે પાંચ ભૂમિ—મજલેકે મડપો રહે બ્રહ્મગર્ભનો અનુસરકે કરના । છજ્જેકે ઉપર (બે) પદની નિકલતી ચતુષ્કાની રચનાવાળે મડપકા નામ “પદ્મ સમય” જાનના । જઘાકે તકમે નૌ વિભાગમે પાંચ લક્ષણ જાનના । જઘાકી છાજલી વરાવરસે નીચે સોલહવાં અંશ ઉપર લેજાના । ઉત્તરગકે ઉત્તર સૂત્રની બહાર પટ્ટના સશય ન રરના । ગર્ભગૃહકી છાજલીકે તલાચેકે નીચે શારણે સ્તર તરહ ક્ષેત્રકે બાહ્ય પદ સગય મડપકે આગે દૂસરા ઔર તીસરા પદ દ્વારકે ભારપટ્ટ એક સૂત્રમે રરના । દ્વારકે તીસરે ભાગમે દશાશપદ દોષ રહિત કાર્ય કરના । તાલભેદ ન હોને ઢેના । અલિંદ—ચૌકીકે ઉપર ચૌકી સમ-સૂત્ર ઔર ગર્ભસૂત્રાનુસાર કરના । બાહરકે અલિંદ=ચૌકી કુઠ મૂલસે અધિક કરના । વહ શુભ સમક્ષના । મધ્યકી ચૌકી ગર્ભસૂત્રકો અનુસરકે કરના । ૩૭ સે ૪૭

મેરુમંદર ક્ષિપ્રાસઃ હિમગન્ ગંધમાદન ।
 હેમકૂટો રત્નકૂટાલ્ય ઐતે શૃંગમેર ચ ॥૪૪॥
 ઈન્દ્રનીલઃ પદ્મરાગ મહાપદ્મસ્તથા પરઃ ।
 કીર્તિપતાક—પૂર્ણાસ્યો—શતશૃંગ સુરવલ્લભ ॥૪૫॥
 શાન્તિ દેહો પુન્યાત્મ ભૂર્ભુવઃ સ્વ સૂર્યાગસ્તથા ।
 પ્રતાપ તેજવર્દન વિમાન પદ્મસંભવઃ ॥૪૬॥
 લક્ષ્મીવિલાસો ત્રિજ્ઞેય સૈલોક્યવિજયસ્તથા ।
 પંચવિંશતિ સંપ્રોક્તા મંડપા મેઘાદિકા ॥૪૭॥

મેરુવાદિ પચ્ચીશ મડપના નામે કહે છે ૧ મેરુ ૭ મહ ૩ કૈલાસ

૪ હિમવાન ૫ ગંધ માદન ૬ હેમકૂટ ૭ રત્નકૂટ ૮ શૃંગવા ૯ ઇન્દ્રનીલ ૧૦ પદ્મરાગ ૧૧ મહાપદ્મ ૧૨ કીર્તિપતાક ૧૩ પુર્ણાખ્ય ૧૪ શતશૃંગ ૧૫ સુરવલ્લભ ૧૬ શાંતિદેહ ૧૭ પુણ્યાત્મા ૧૮ ભુર્ભુવ ૧૯ સૂર્યાંગ ૨૦ પ્રતાપ ૨૧ તેજવર્ધન ૨૨ વિમાન ૨૩ પદ્મ સંભવ ૨૪ લક્ષ્મી વિલાસ ૨૫ ઐલોક્ય વિજય એમ મેરવાદિ પચ્ચીસ મંડપોનાં નામો કહ્યાં. ૪૪ થી ૪૭.

મેલાદિ પચ્ચીસ મંડપકે નામો કહતે હૈં. ૧ મેલુ ૨ મંદર ૩ કૈલાસ ૪ હિમવાન ૫ ગંધમાદન ૬ હેમકૂટ ૭ રત્નકૂટ ૮ વૈશ્વંગ ૯ ઇન્દ્રનીલ ૧૦ પદ્મરાગ ૧૧ મહાપદ્મ ૧૨ કીર્તિપતાક ૧૩ પૂર્ણાખ્ય ૧૪ શતશૃંગ ૧૫ સુરવલ્લભ ૧૬ શાંતિદેહ ૧૭ પૂણ્યાત્મા ૧૮ ભુર્ભુવ ૧૯ સૂર્યાંગ ૨૦ પ્રતાપ ૨૧ તેજવર્ધન ૨૨ વિમાન ૨૩ પદ્મ સંભવ ૨૪ લક્ષ્મી વિલાસ ૨૫ ઐલોક્ય વિજય—ઈસ તરહ મેરવાદિ પચ્ચીસ મંડપોંકે નામ કહે. ૪૪ સે ૪૭.

અતઃ પ્રાસાદતુલ્યાચ દ્વિતીયા ભૂમિરુર્ધ્વતઃ ।

તૃતીયા ચ પ્રકર્તવ્યા પ્રાસાદ સ્કંધહીનક ॥ ૪૮ ॥

મત્તવારણચ્છાદ્યં ચ સંવરણાઃ વિતાનકમ્ ।

પ્રાસાદસ્યાગ્રતઃ કાર્યાં બલાણકસ્ય ચોપરિ ॥ ૪૯ ॥

હવે પ્રાસાદના પ્રમાણથી, બીજી બીજી ભૂમિની ઉપર ત્રીજી ભૂમિ મંજલો પણ તે પ્રાસાદના સ્કંધથી નીચા કરવા. મંડપોને કક્ષાસન વેદિકા યુક્ત કરી ઢાંકી અંદર વિતાન ઘુમટ અને ઉપર શામરણ કરવી. આવા મેરવાદિ મંડપો પ્રાસાદ આગળ અને બલાણક ઉપર પણ કરવા. ૪૮-૪૯.

અવ પ્રાસાદકે પ્રમાણેસે ઊંચી દૂસરી ભૂમિકે ઉપર ત્રીસરી ભૂમિકે મજલે મી ઉસ પ્રાસાદકે સ્કંધસે નીચે કરના. મંડપોંકો કક્ષાસન વેદિકા યુક્ત કર ઢંક કર અંદર વિતાન ગુંબજ ઓર ઉપર શામરણ કરના. ઈસ તરહ મેરવાદિ મંડપો પ્રાસાદકે આગે ઓર બલાણકકે ઉપર મી કરના. ૪૮-૪૯.

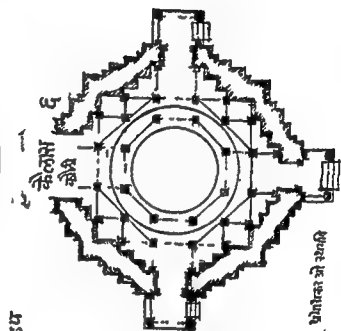
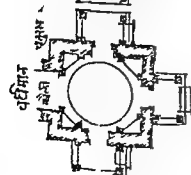
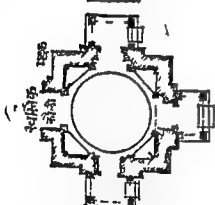
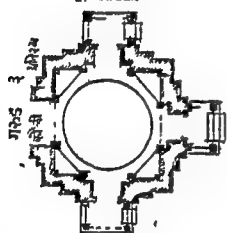
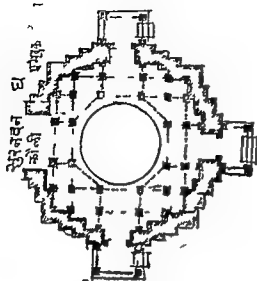
પ્રાંગણે માઢરૂપાદ્યઃ કર્તવ્યઃ શુભલક્ષણઃ ।

રાજવેદિકાસનથ ચ કક્ષાસન વિભૂષિતઃ ॥ ૫૦ ॥ ॥ ઇતિ મેરવાદિ મંડપાઃ ॥

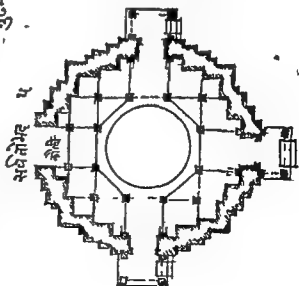
શુભ લક્ષણવાળા આ મેરવાદિ પચ્ચીસ મંડપો આગળ પ્રવેશદ્વાર પર બલાણક કે માઢ કરી વેદિકા આસનપટ અને કક્ષાસનથી વિભૂષિત કરવા. ૫૦.

ઈતિ મેલાદિ ૨૭ મંડપ શુભ લક્ષણવાલે ઈન મેલાદિ પચ્ચીસ મંડપોંકો આગે

૧૯. મેરવાદિ મંડપના સ્વરૂપ અને તેના સામાન્ય સ્વરૂપો અપરાજિતસૂત્ર ૧૮૮ માં કહ્યાં છે. એ સિવાય સૂત્ર ૧૮૬માં પુષ્પકાદિ સત્તાવીસ મંડપ લક્ષણ સાથે આપેલાં છે. સૂત્ર ૧૮૭માં વર્ધમાનાદિ આઠ ગૂઢ મંડપો તથા સુભદ્રાદિક બાર મંડપો સૂત્ર ૧૮૮માં પ્રતિવાદિ ષોડશ મંડપ સુરાગ્રય પ મંડપો, યજ્ઞાર્થ પ મંડપો, સભા મંડપો પાંચ, રાજ ભુષણાર્થ પાંચ, નૃપ ભોજનાર્થ પાંચ એમ પચ્ચીસ મંડપો સ્તંભ સંખ્યા સાથે કહ્યા છે. ઉપરાંત નંદનાદિ આઠ મંડપો પણ કહ્યા છે.



गुटमंडप

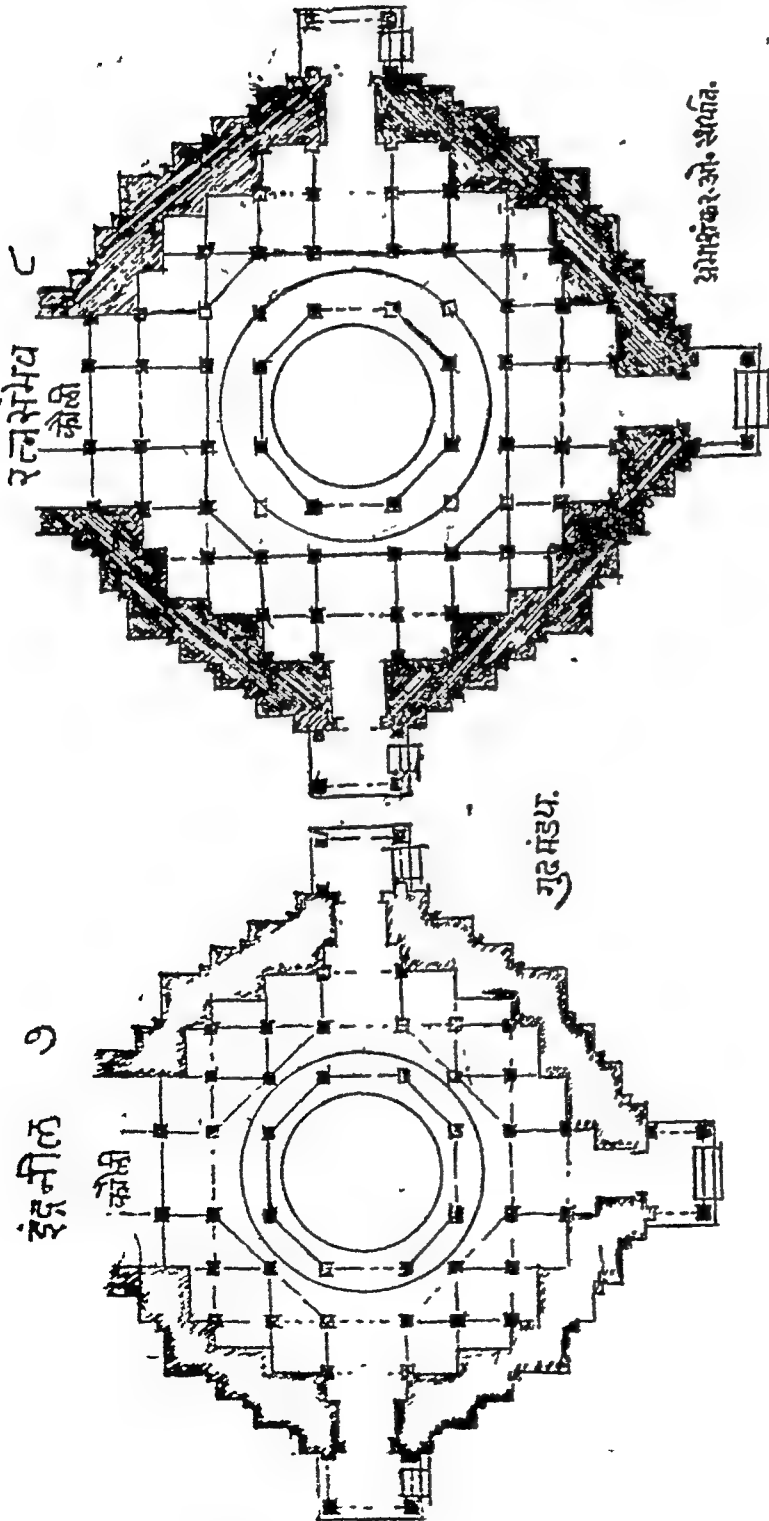


शेषोक्तो स्तुति

गुट मण्डपके ८ प्रकारसे ६

गुट मंडप आठ प्रकारमेंसे छ तलक्षण
प्रवेश द्वार पर उल्लङ्घन चार माह कर गजसेनक वेदिका आसनपट ओर कक्षा-
मनसे विभूषित करना । ५० इति मेग्गादि २७ मंडप ।

વર્ધમાનઃ સ્વસ્તિકાચ્ચૌ ગરુડઃ સુરનંદનઃ ।
 સર્વતોભદ્ર કૈલાસેન્દ્રનીલા રત્નસંભવ ॥ ૫૧ ॥
 ઇત્યષ્ટૌચ સમાચ્યાતા વર્ધમાનાદિ મંડપાઃ ।
 સપીઠ મંડોવરાદિ પ્રાસાદાકૃતિ મેઘલા ॥ ૫૨ ॥
 એકં વાં ત્રીણિ વા કુર્યાદ્ દ્વારાણિ કામદાયકઃ ।
 ચતુષ્કિકા યામ્યોત્તરે અગ્રે વા વામદક્ષિણે ॥ ૫૩ ॥



આઠ ગૂઢ મંડપનાં નામં
 કહે છે. ૧ વર્ધમાનં (ચોરસ)
 ૨ સ્વસ્તિક (ભદ્રચુક્ર) ૩
 ગરુડ (પ્રતિરથચુક્ર) ૪
 સુરનંદન (પ્રભદ્રવાળો) ૫
 સર્વતોભદ્ર (કોણીકાચુક્ર
 ખુણીઓ કરવી.) ૬ કૈલાસ
 (અધિક ભદ્રવાળો = સુખ
 ભદ્રચુક્ર) ૭ ઇન્દ્રનીલ (બે
 પ્રતિ રથ વાળો) ૮ રત્ન
 સંભવ (ત્રણ પ્રતિ રથવાળો)
 એમ આઠ ગૂઢ મંડપોનાં
 નામ બાણવાં. તે ગૂઢ
 મંડપોને પ્રાસાદના સ્વરૂપ
 જેવાં પીઠ મંડોવર જેવા
 થરો કરવા. તેવા મંડપોને
 એક સન્સુખ દ્વાર અગર
 ત્રણ એમ બાબુના દ્વારો
 કરવાથી તે કામનાને આપે
 છે. આગળના દ્વારે એક અને
 ડાબી જમણી તરફના મંડપના
 દ્વારોએ આગળ ચોકીઓ
 કરવી. (આનાં સ્વરૂપો
 હીપાર્ણવ અને અપરા-
 જિતમાં આપેલાં છે.)

आठ गूढ मडपके नाम कहते हैं १ वर्यमान (चोरस) २ स्वस्तिक (भद्र युक्त) ३ गरूड (प्रतिरथ युक्त) ४ सुरनदन (प्रभद्रवाला) ५ सर्वतोभद्र (कोणीका युक्त कोना करना) ६ कैलास (अधिक भद्रवाला = सुखभद्र युक्त) ७ इन्द्रनील (दो प्रतिरथवाला) ८ रत्न सभर (तीन प्रतिरथवाला) इस तरह आठ गूढ मडपके नाम जानना । उन गूढ मडपोंको ग्रामादके स्वरूप जैसे पीठ मद्योपर जैसे थरो करना । वैसे मडपोंको एक सन्मुख द्वार अगर तीन बाजु द्वाग करनेसे ये कामनाओंको देते हैं । आगेके द्वारको एक और दाईं बाहिनी तरफके मडपके द्वारोंके आगे चौकियाँ करना । ५१-५२-५३ (इनके स्वरूपों दीर्घार्ण और अपराजितमे दिये हैं ।)

अतः परं प्रवक्ष्यामि मंडपानां यथाक्रमम् ।

नामस्वरूप मान च प्रयुक्तः वृक्षराजमुः॥५४॥

शिखनाद हरिनादो ब्रह्मनाद स्तथैव च ।

रविनादो सिंहनादः पटको मेघनादकः ॥५५॥

शिवनादा पणमंडया द्विसाद्वी सयभूमिका-।

सर्वदेवेषु कर्तव्या स्व नाम्ना च विशेषतः ॥ ५६ ॥

मध्य स्तंभाष्टके गडदी तोरणानि. प्रदक्षिणः।

रथयुक्ताश्च प्रासादा वेदियुक्ताश्च मंडपा ॥५७॥

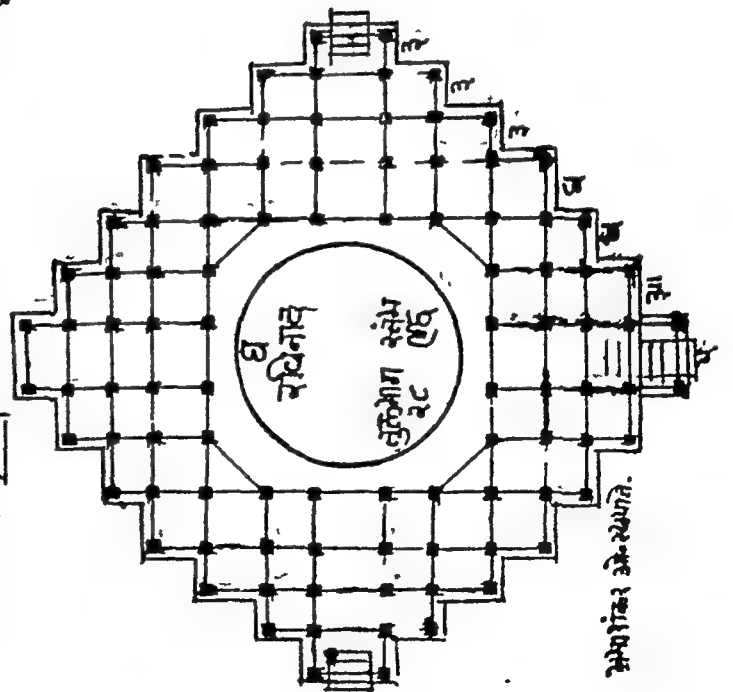
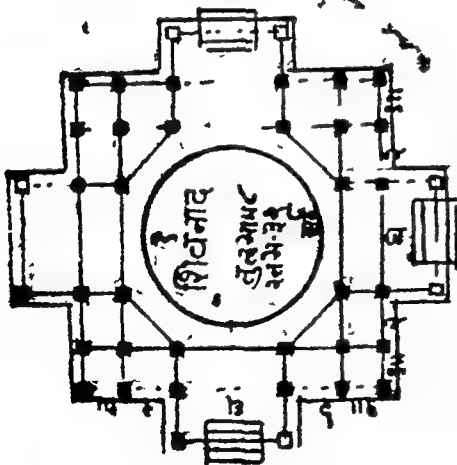
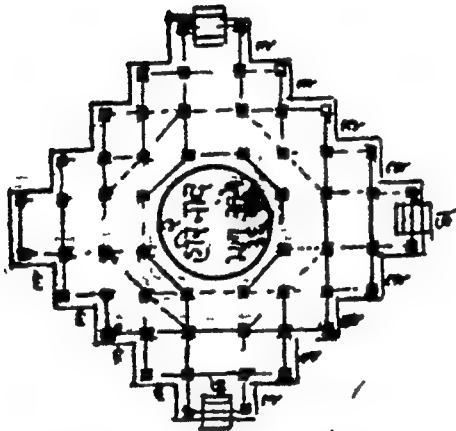
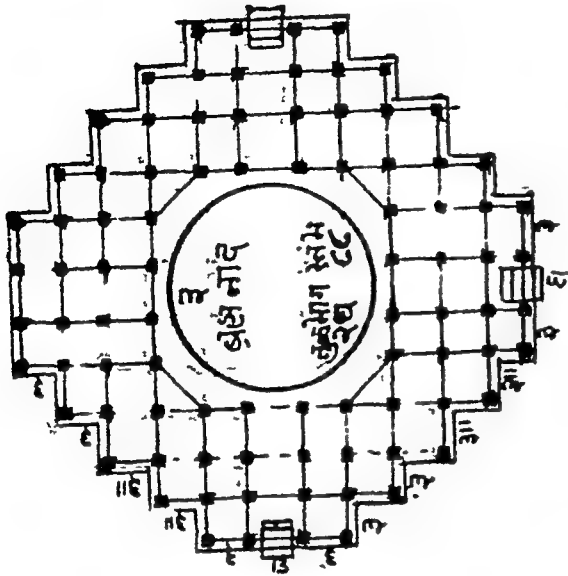
હવે હું છ મહામંડપોના નામ કંમથી કહું છું જે વૃક્ષાણુંવમા તેના માન અને સ્વરૂપો કહેલા છે ૧ શિવનાદ ૨ હરિનાદ ૩-બ્રહ્મનાદ ૪ રવિનાદ ૫ સિંહનાદ ૬ મેઘનાદ એમ છ મહામંડપો જાણવા આ શિવનાદાદિ છ મહામંડપો જાણવા આ શિવનાદાદિ છ મંડપો અદ્વી કે ત્રણ ભૂમિ ઉદયના વિશેષ કરીને કરવા (તેથી પણ ઉચ્ચ થાય છે) આ મંડપો સર્વ દેવોને કરવા પરંતુ વિશેષ કરી જેના જેવા નામના દેવોને કરવા તે પ્રાસાદની જેમ ભદ્ર-સ્થાદિ અગવાળા (ખુલ્લા મંડપ) ડગવા આ મંડપને પ્રાસાદના જેવું પીઠ કરી તે પર વેદિકા કંઠાસનચુકત કે ખુલ્લા સ્તંભો પણ કરી શકાય મંડપના મધ્યના

(१९) भेजादि मण्डपके स्वरूप और उनके सामान्य स्वत्त्वों अंतराजित सूत्र १८८ में फहे हैं। जिनके सिवा सूत्र १८९ में पुण्यकादि मत्ताश्रीम मण्डपा लक्षणके साथ दिये हैं। सूत्र १८७में वर्षमानादि आठ गृहमण्डपो, तथा मुमद्रादि त्रिक वारह मण्डपों सूत्र १८८में प्राणीय आदि षोडश मण्डप मुरालय ८ मण्डपो यज्ञार्थ ५ मण्डपों, सभा मण्डपों ५, राजभूषणार्थ ५, नपभोन्नार्थ ५ अिम नरह पन्चीस मण्डपो स्तभ मख्याके साथ कहे हैं। उपरात नदनादि आठ मण्डपों भी कहे हैं।

आठ स्तंभोने ठेडी चढावीने होढीया उदयवाणा भंडप करवा. तेने इरता आठ तोरणो करवा. २०. ४७ थी ५४.

अब मैं छः महामंडपोंके नाम क्रमसे कहता हूँ जो वृक्षार्णवमें उनके मान

स्वरूपों कहे हुए हैं । १ शिवनाद २ हरिनाद ३ ब्रह्मनाद ४ रविनाद ५ सिंहनाद ६ मेघनाद इस तरह छः महामंडपोंको जानना । इन शिवनादादि मंडपोंको ढाई या तीन भूमि उदयके विशेष करके करना (इससे भी ऊँचे होते हैं ।) इन मंडपों सर्व देवोंको करना । परंतु विशेषकर जिसके जैसे नामके देवोंको करना । उस प्रासादकी तरह भद्ररथादि अंगवाले (खुले मंडप) करना । इन मंडपोंको प्रासादके जैसा पीठकर उसके पर वेदिका कक्षासनयुक्त या खुले स्तंभ भी कर सकते हैं । मंडपके मध्यके आठ आठ स्तंभोंको



मेघनादादि षड् महामंडप

(२०) आ छ ओ महामंडपोंनुं विशेष चिलागथी लंद्र प्रतिबंद्र रथ उपरथादि अंग साथे शिल्पना महाग्रंथ वृक्षार्णवना अध्याय १०२ भां विगतथी आपेलुं छे. अही संक्षिप्त छे. शिवनाद लाग आठ स्तंभ २८, हरिनाद लाग १६, स्तंभो ५६, ब्रह्मनाद लाग २४,

लागे नीच्य गर्भगृहनु भूमितल राभधु रगभउपनु तण पीठना भथाणा भराभर राभधु रगभउपनु तणीयु आरसना चित्र विचित्र पाषाण्णवाणु रगीन पट्टी-ओथी शोभतु करुणु (गर्भगृहथी भउप नीचो तेनाथी नीची चोकी ओभ उत्तरोत्तर नीच्य राभधु उच्य राभे तो दोप णाणुवे ६०-६१

मंडपकी रचना विषम पद विभाग के तलके उपर सम स्तभो से करना । प्रासादके गर्भगृहके ऊँचरेकी ऊँचाईके आधे भागमे, तीसरे भागमे या चौथे भागमे नीचे गर्भगृह के तलको रखना । मंडप रगमंडप के तल-पीठके शीर्षकपर रखना । रगमंडप का तल आरस के चित्र विचित्र पाषाणजाला रगीन पट्टियों से शोभित करना । (गर्भगृहसे मंडप नीचा उससे चौकी नीची इस तरह उत्तरोत्तर नीचा रखना, ऊँचा रखनेसे दोष होता है । ६०-६१

अथात्कथित रिपि ! बलाणकस्य लक्षणम् ।

प्रासाद व्यासमानेन गभमानेन चाज्यथा ॥ ६२ ॥

शालालिंद मानेन त्रिविध मानलक्षणम् ।

अन्यच्च युक्ति मेदै न पुरतः पृष्ठतोऽथवा ॥ ६३ ॥

हे ! ऋषि डवेहु भलाणुकना लक्षणु कहु छ (१) प्रासादनी पडोणाधना मानथी (२) गर्भगृहना माने (३) शाला आलिंद चोकीना प्रमाणथी भलाणुकने विस्तार राभवाना आ त्रधु मान णाणुवा अन्य युक्ति लेहे करीने पूर्व अने पश्चिम आगण पाछण ओभ अतुमुअ प्रासादने आरे तरङ्ग भलाणुक करवा ओक सुभना प्रासादने आगण ओक भलाणुक करु ६२-६३

हे ऋषि, अब मैं बलाणकके लक्षण बताता हूँ । (१) प्रासादकी चौड़ाई के मानसे (२) गर्भगृह के मानसे (३) शाला अलिंद चौकी के प्रमाण से बलाणक विस्तार रखने के ये तीन मान जानना । अन्य युक्तिभेदे कर पूर्व और पश्चिम आगे पीछे इस तरह चतुर्मुख प्रासादको चारों तरफ बलाणक करना । एक मुखके प्रासादको आगे एक बलाणक करना । ६२-६३

वामनश्च विमानश्च हर्म्यशालश्च पुनरः ।

तथा चोत्तुंगनामा च पंचैते च बलाणका ॥ ६४ ॥

वर्तनं कथयिष्यामि पदं संस्थानमानतः ।

प्रासादग्रे च प्राकारे मंदिरे वारिमध्यतः ॥ ६५ ॥

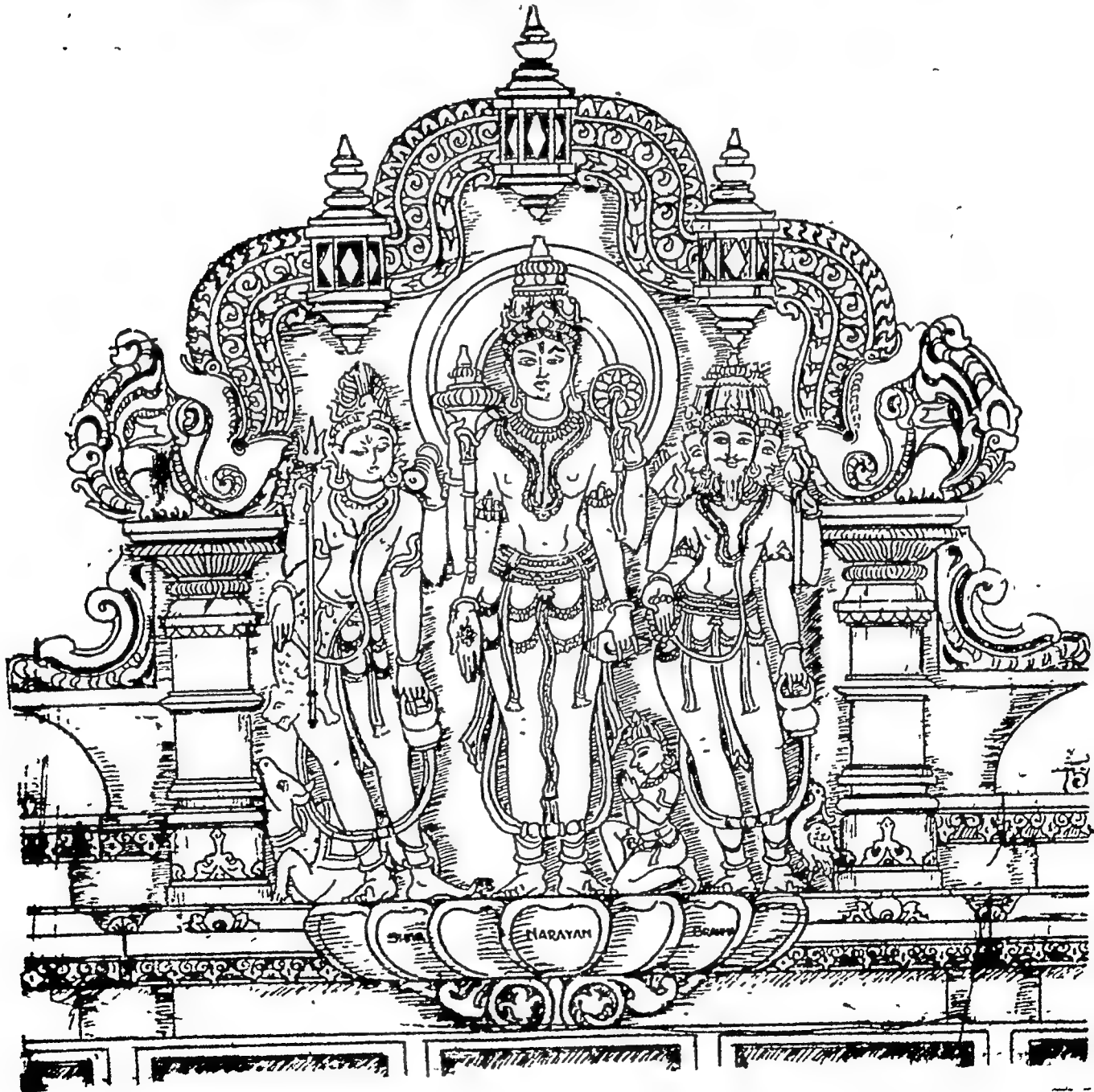
५५ प्रकारना भलाणुकना नामो कहे छे १ वामन २ विमान ३ हर्म्यशाल ४ पुंकर अने ५ उत्तुंग ओभ पांचे भलाणुकना वर्तन स्वल्प पद संस्थानना मानथी कथा

कथां करवाते हुं कहुं छुं. देवमंदिर आगण प्रासाद (राजमहल) आगण, नगरना किद्धा आगण, जलाश्रयनी मध्यमां के आगण ओम जलाश्रयना पद स्थान जालुवा. ६४-६५.

पाँच प्रकारके बलाणकके नामों कहते हैं । १. वामन २. विमान ३. हर्म्य शाल ४. पुष्कर ५. उत्तुंग । इस तरह पाँचों बलाणकके वर्तन स्वरूपपद संस्थान के मानसे कहाँ कहाँ करना वह कहता हूँ । देव मंदिर आगे प्रासाद (राजमहल) के आगे; नगर के कोटके आगे; जलाश्रय के मध्यमें या आगे इस तरह बलाणक के पद स्थान जानना । ६४-६५.

वामनो देवताग्रे च विमानोतुङ्गै राजवेश्मनि ।

हर्म्यशाले गृहे वाऽपि प्रासादे नगरानने ॥ ६६ ॥



પુષ્કરં વારિમધ્યસ્થં મગ્નતથૈવ ભૂપિતમ્ ।

સપ્ત નમ ભૂમ્યુત્તુન્ન મત ઉર્ધ્વન કારયેત્ ॥૬૭॥

દેવ પ્રાસાદની આગળ જે બલાણક કરવામા આવે તેનુ ૧ વામન નામ બાણુ: રાજમહેલ આગળના બલાણકને ૨ વિમાન નામ બાણુ, અગર તેને ૩ ઉત્તુન્ન નામ પણ કહ્યુ છે ઘરોના આગળ ડેલી કે નગર આગળના બલાણકને ૪ હર્મ્યશાલ નામ બાણુ જળાશ્રયના મધ્યમા કે જળાશ્રયના મુખ આગળ શોભિતુ ૫ પુષ્કર નામનુ બલાણક બાણુ ૬ ઉત્તુન્ન નામનો બલાણક સાતથી નવ માળ સૂધીનો ઉચો (કીર્તિસ્તભ જેવો) કરવો તેથી વધુ જિથો ન કરવો (૨૧) ૬૬-૬૭

દેવપ્રાસાદ કે આગે જો વલાણક કરને મે આવે उसका १ वामन नाम जानना । राजमहल के आगेके वलाणक का २ विमान नाम जानना । अगर उसका ३ उत्तुग नाम भी कहते हैं । घरोंके आगे सिडकी या नगरमुखके आगे के वलाणकका ४ हर्म्यशाल नाम जानना । जलाश्रय के मध्यमे या जलाश्रय के मुखके आगे शोभता पुष्कर नामका वलाणक जानना । उत्तुग नामका वलाणक सात से नव मालभूमि तकका ऊँचा (कीर्तिस्थम्भ जैसा) करना । इससे ज्यादा ऊँचा न करना^{२१} । ६६-६७

પ્રાસાદાગ્રે જગત્યગ્રે ગ્રસ્તઃ સ્યાન્મુખમંડપઃ ।

ઉર્ધ્વભૂમિ' પ્રકર્તવ્યા નૃત્યમંડપ સૂત્રતઃ ॥૬૮॥

લક્ષણં તસ્ય વક્ષ્યામિ સ્થાનમાનં ચ ભૂમિકામ્ ।

એક દ્વિત્રિ ચતુ પંચ રસ સપ્તાષ્ટભિસ્તથા ॥૬૯॥

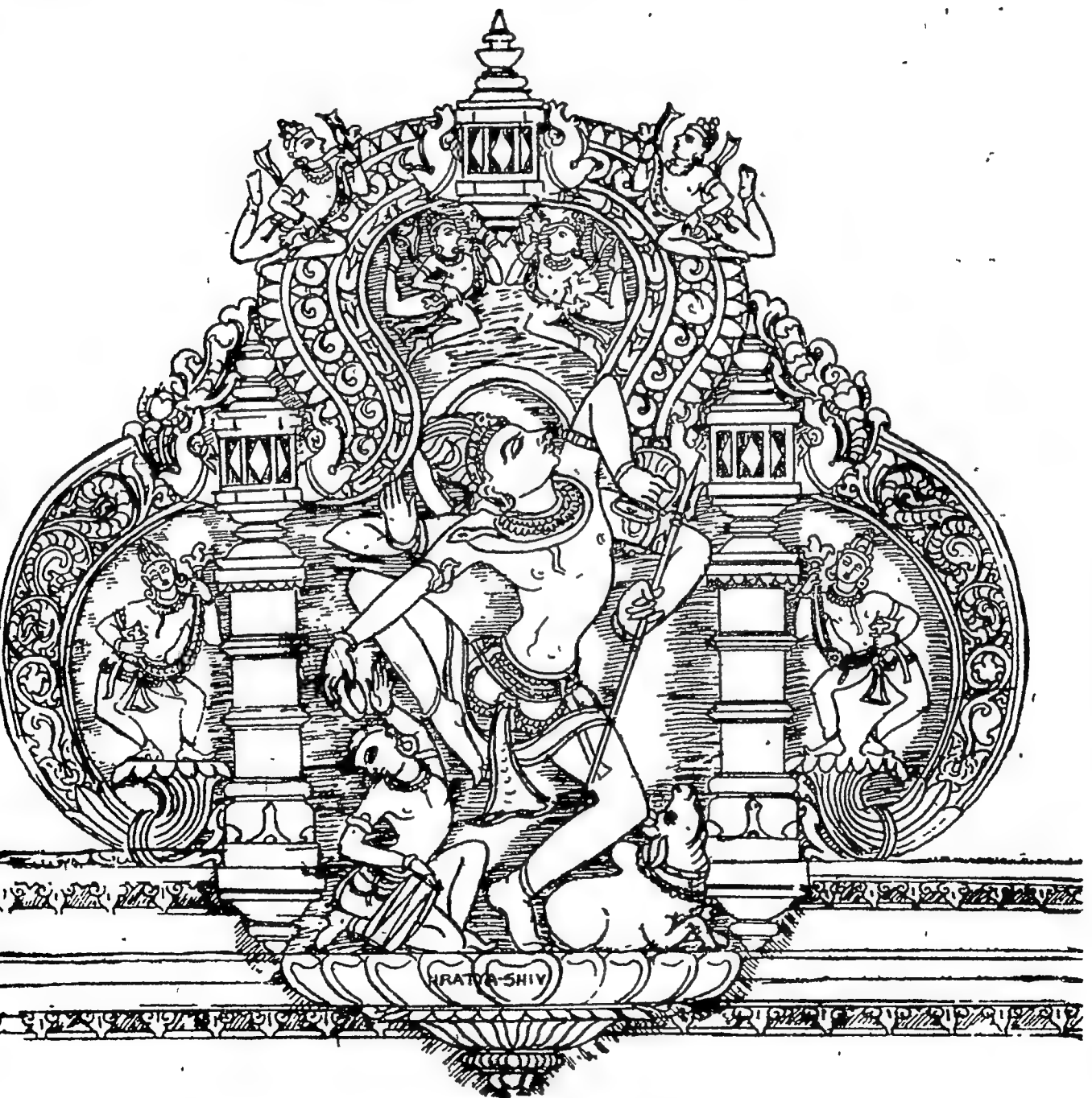
પ્રાસાદની આગળ, જગતીની આગળ કે જગતીથી અદર મમય તેવો આગળ મુખ મડપ કરવો જગતીનો ભૂમિમડપ નૃત્યમડપના ગર્ભસૂત્રે કરવો

૨૧ બલાણક વિશે અન્ય મત પણ છે પ્રાસાદની જગતી આગળ જગતીમા સમાય તેવી ગોપી કે મડપ કરવો તેને ૧ વામન નામનુ બલાણક કહે છે રાજમહેલ આગળ ૨ વિમાન કે પાચ સાત ભૂમિ જિથુ એનુ બલાણક ઉત્તુન્ન કહે છે વગ આગળના દ્વાર પર ગોપુરાકૃતિ એક કે બે ત્રણ માળની ડેલી ને હર્મ્યશાલ બલાણક કહે છે અહી જળાશ્રય આગળ પુષ્કળ બલાણક જ્યો તેવી જળાશ્રય આગળ ઉત્તુગ કીર્તિ સ્તભ જેવો અને મદિર આગળ ગોપુર કહે છે

૨૧ વલાणक के बारेमें अन्यमत भी है । प्रासाद की जगती जागे जगतीमें समाप्त के ऐसी चौकी या मंडप करना । उसकी १ वामन नामका वलाणक कहते हैं । राजमहल के आगे २ विमान या पाँच सात भूमि ऊँचा ऐसा वलाणक उत्तुग कहा जाता हैं । घरके पासके द्वारपूर गोपुराकृति एक या दो तीन मजलेके प्रवेशद्वार को हर्म्यशाल वलाणक कहते हैं । यहाँ जलाश्रय आगेका पुष्कर वलाणक नहीं कहा है अपूर्ण है । उत्तुग जलाश्रयके पास कीर्तिस्थम्भ कहा होता है । मन्दिरके आगे गोपुर भी होता है ।

तेनां लक्षणं कहुं छुं. आ बलाणकं प्रासादथी जगतीथी अकं छे त्रण पांच छ
सात के आठ पद छे स्थान मानने आश्रय जालीने भूमि छोड़ीने करवो. ६८-६९.

प्रासादके आगे, जगतीके आगे या जगतीके अंदर समास के ऐसे आगे
मुख मंडप करना । जगतीका भूमि मंडप नृत्य मंडप के गर्भसूत्र में करना ।
उसके लक्षण कहता हूँ । यह बलाणक प्रासादसे या जगतीसे एक दो तीन पाँच
छः सात या आठ पद दूर स्थान मानका आश्रय जानकर भूमि को छोड़कर
करना । ६८-६९.



तोरण परिकार साथ नृत्यशिव का गेबल

જગતી તુ શિરોદેશે જઠરે ચોત્તરજ્ઞકમ્ ।

અધસ્તુલોદયે ભૂમિર્ધટનાદિ ચ તત્સમમ્ ॥ ૭૦ ॥

તત્સમં તુ પ્રકૃતવ્ય મુત્તરજ્ઞે સપટ્કમ્ ।

ઉદયોન્નતમાનેન સોપાનં તુલામધ્યતઃ ॥ ૭૧ ॥

જગતીના મથાળા મુધીમા એટલે કે તેના જઠરના દ્વારના ઉત્તરબનેા સમાસ કરવો (જગતી નીચે પ્રવેશ મડપ કે ચોકીના) તુલા પાટડાનો ઉદય ભૂમિદય કે કુલા બરાબરમા કે નીચે સમાવવો જગતીની ચોકીના પાટ બરાબર પ્રવેશ દ્વારનો ઉત્તરગ રાખવો જગતીના ઉદયના માનમા પાટડાની અદર ઉપર ચડવાના પગથિયા કરવા ૨૨ ૭૦-૭૧

જગતીકે ગીર્ણક તકમે અર્થાત્ત उसके जठरमे द्वारके उत्तुगका समास करना । (जगतीके नीचे प्रवेश मडप या चौकीके) तुला पाटडेका उदय भूमिदय या कुले के बराबरमे या नीचे समाना । जगती की चौकी के पाट बराबर प्रवेश द्वारका उत्तरग रखना । जगतीके उदयके मानमे पाटडे के अदर ऊपर चढ़नेके पगथिये करना । २२ ७०-७१

કુર્મીસ્તંમ શિરઃ પટ્તં પૃથક્ સ્વ તુલાદિકમ્ ।

ભૂમિ તુ ભુમિ માનેન સમસૂત્રે વિચક્ષણા ॥ ૭૨ ॥

બલાણુકેના કુલી સ્તભ સરાપાટ આદિ મૂળ પ્રાસાદના સ્તભના છાંડ પ્રમાણે સમસૂત્રે કરવા પ્રત્યેક મળવના ઉદય પ્રમાણે વિચક્ષણ શિલ્પીએ સમસૂત્રે રાખવા ૭૨

૨૨=બનાણુક એટલે લીટિક લાપામાં ડેવી-પ્રવેશ દ્વાર પરના ભાગ બાણુવો જેવ પ્રાસાદમા આવા બલાણુક બનાવવાને ભૂમિનળથી એક મળતા એટલી જગતી ઉઠા કરી તે પર પ્રાસાદ દેવ હોય તો જ દેવપ્રાસાદ સામે બનાણુક કરવુ યોગ્ય થાય છે ને કે જગતીના બરાબર ઉચાઈ બરાબર પણ આગળ જે મડપ કરનામા આવે છે તેને પણ 'સામન' નામનું બનાણુક કહ્યું છે જેનોમા દેવ સ્થાપના પ્રલોભને બનાણુકમા પ્રાસાદની બરાબર સામે ગર્ભગૃહે કરી તે પર શામરણ કે ત્રિપટ દરે છે એટલે મૂળ મંદિરથી નીચુ કરવાના હેતુથી તેમ જ છે કારણ કે મૂળ આનાદ કે મૂળ ભવન કે મૂળ ઘરની ડેવી રૂપ આ બનાણુક હમેતા નીચુ રહેવુ જ નોર્ધએ ઓગા ઉદયવાળી જગતીમા સ્થાક ૭૦-૭૧ પ્રમાણે નીચેના મુખમડપ કે ચોકીના પાટ અને તે પરના ભૂમિ દળ (છાતીયા ગુલા થાળ) કાદી-વેવોર નો સમાસ મૂળ પ્રાસાદના ઉચ્ચરની અદર એટલે કુલાની અદર સમાવે છે તેનાથી નીચુ થાય તો ઉત્તમ ગણાય જગતી બરાબર ના મુખ મડપ કે ચોકીનો પાટ મુખ્ય પ્રવેશ દ્વારના ઉત્તરગ ઉપર હોય છે આ વિષય સ્થાન માન અને ભૂમિતંત્રના જગતીના ઉદય પર આધાર રાખે છે ઉત્તર નામનો બલાણુક દ્રવિડના ગોપુર જેવો અગર રાજ પ્રાસાદ આગળ ટાવર જેવો બાણુવો કીર્તિસ્તભ એ આ ઉત્તરના સહેદર જેવો બાણુવો

૨૨ ચલાનક=અથાત્ લૌકિક માયાને હહલી=પ્રવેશ દ્વારકે ઉપરકા ભાગ સમજના । વચ પ્રાસાદમે જેસે ચલાનક ચલાનેમે ભૂમિતલસે દુક ભૂમિ જાતિની જગતી ઉંચી વરકે પ્રાસાદકા

बलाणक के कुम्भी स्तंभ सरापाट आदि मूल प्रासाद के स्तंभ के छोड़के अनुसार समसूत्रमें रखना । ७२.

बलाणकस्तत्तदग्रेतोरणभद्रमस्तके

तद् बाह्ये मत्तावरणं सन्मुख वामदक्षिणे ॥ ७३ ॥

इति पंचविध बलाणक

अथाशुकना आगण लट्ठागना स्तंभोने तोरणु करवुं. तेनी अडार सन्मुख अने आनुमां नभणी डायी तरङ्ग मत्तावारणु कक्षासन करवां. ७३.

बलाणके आगे भद्र भागके स्तम्भों को झूल करना । उसके बाहर सन्मुख और बाजुमें दाहिनी बायीं तरफ मत्तावारण-कक्षासन करना । ७३.

अथ संवरणा—संवरणाश्च प्रवक्ष्यामि प्रथमं पंचघटन् ।

चतुर्घटाभिर्वृद्ध्या च यावदेकोत्तरं शतम् ॥ ७४ ॥

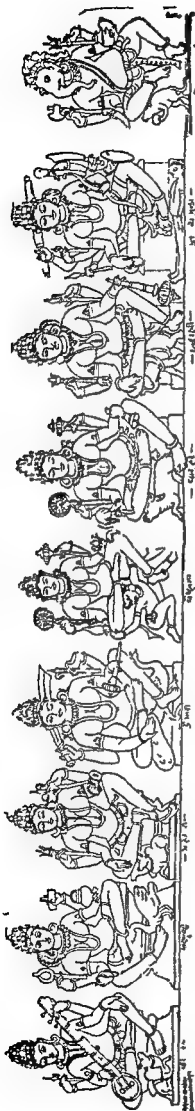
पंचविंशतिरित्युक्ता विभक्तिर्भाग संख्यया ।

विभक्ति रष्टभागाद्या यावद् वेदोत्तरं शतम् ॥ ७५ ॥

इवे हुं संवरणा विशे कहुं छुं. शङ्कां पांच घंटाथी अर्यार घंटानी वृद्धिअे अेकसो अेक घंटा सुधीनी तेम लाग संध्याथी पञ्चीस संवरणा कही छे. विभक्ति लाग संध्याअे पड़ेदी आठ लागनी साभरणथी अेक सो. आर लाग सुधीनी अेम पञ्चीस संवरणा अर्यार लागनी वृद्धिथी करता नवुं. ७४-७५.

अब मैं संवरणाके बारेमें कहता हूँ । शुरूमें पाँच घण्टेसे चार चार घंटे की वृद्धि पर एकसौ एक घण्टे तककी उस भाग संख्या से पञ्चीश संवरणा कही गयी है । विभक्ति भाग संख्यासे पहली आठ भागकी शमरणसे एक सौ

निर्माण किया हो तो ज देव प्रासादके सामने बलाणक हो सकता है । जगतीका उदय सम आगे जो मंडप बनाते हैं उनको “वामन” नामक बलाणक कहते हैं । जैनोंमें देव स्थापनका प्रलोभनसे बलाणक प्रासादकी बराबर सामने गर्भगृह करके उसकी पर संवरणा या त्रिषट बनाते हैं । शिखर नहि करता । मूल मंदिरसे नीचा रखनेका हेतुसे अैसा करता है । मूल प्रासाद या मूल भवन या मूल घरसे उहली बलाणक हमेशा नीचा होना चाहिये । कम उदय वाली जगतीमें श्लोक ७०-७१ का प्रमाणसे नीचेका मुखमंडप=चोकीका पाट=बीम और ते परकी भूमिदल (छालिया-रणथल=लादी=फलोर) का समास मूल प्रासादके उदम्बकी अंदर होना चाहिये । उससे ऊँचा नहिं मगर नीचा रखना उत्तम है । जगती बराबर मुख मंडप=चोकीका पाट=बीम मुख प्रवेश द्वारका उत्तरङ्ग उपर होना चाहिये । यह विषय स्थान मान और भूमितलका जगतीका उदय पर आधार रखता है । उत्तुंग नामका बलाणक ब्रविडका गोपुरम् जैसे अगर राजप्रासाद आगे टावर जैसे समजना । कीर्ति स्तम्भ ये उत्तुङ्ग का सहोदय अैसा समजना ।



વિરેચન=વિરેચ

૧ વ્રહ્માણી ૨ મહેશ્વરી

૩ કૌમારી

૪ વૈષ્ણવી

૫ વારાહી

૬ કન્દીણી

૭ રક્ત ચામુડા

૮ ચિનાયક ગણેશ

સંવરણાને શિલ્પીઓની ભાષામાં શામરણ કહેવાતું કહે છે અહીં મડપ પર શામરણ કરવાતું કહે છે પરંતુ ગર્ભગૃહ પર પણ જ્યાં શિખર કરવાની દુષ્કર્તા હોય અગર અલ્પ દ્રવ્ય વ્યયના કારણે ગર્ભગૃહ પર શામરણ કરે છે આશુના મહામુલા મદિરા પર શામરણ, ઓરિસાકલિંગ દેગમા ઓરીસા કાલગ અને ખજુરાહોમા શિખર અને શામરણ બેઉ જોવામાં આવે છે શામરણનો ખીજો પ્રકાર ત્રિપટા છે કલિગાદિ દેશોના જુના કામોમા જોવામાં આવે છે, આપણા સૌરાષ્ટ્ર ગુજરાતને કચ્છ રાજ-સ્થાનના જૂના કામોમા ત્રિપટ જોવામાં આવે છે એક પગ ખીજા જાજ્જી પાછી મારી સકોતી ઉપર આમલસારો ધટા કરી કળશ ચડાવે છે ત્રિપટાનો નાગરાદિ શિલ્પમાં ગાત્રોક્ત પાઠ હલુ જોવામાં આવેલ નથી ૧ શિખર ૨ શામરણ ૩ ત્રિપટા એમ ત્રણ મર્વેચ્ચ શિલ્પ મનાય છે ત્રિપટાએ થોડા દેગશર સાથે શામરણનું સંક્ષિપ્ત સ્વરૂપ છે સવરણાને શિલ્પમા નારિનિતિથી સંબોધાય છે શામરણ વિસ્તારથી અર્ધ ઉચી હોય છે પરંતુ શિલ્પીઓ પોતાની કળાતુ પ્રદર્શન કરવા પ્રત્યેક ઘરે જાગી ચડાવી જાયી કરે છે જેસતમેરમા તેવું છે વર્તમાનકાળમાં શામરણ ચડાવવાની જે પ્રથા શિલ્પીઓમાં છે તે બસોક વર્ષથી ચાલી આવી છે જાજ્જી ફૂટએ ધટા પ્રત્યેક ઘરમા કરવાનું શાસ્ત્રકાર કહે છે જ્યારે વર્તમાન કાળની શામરણમા એકબી ધટા-આમસાના થર પર થર ચડાવે છે જો કે આ રીત અશાસ્ત્રી તો ન કહી શકાય જ્યારે ગર્ભગૃહ પર સવરણ કરવાની હોય છે ત્યારે ઉપર મૂળ ધટાના સ્થાને આમલસાગે જ કરવાની ફરજ પડે છે કારણ કે ધ્વજદડ જોબો કરવાનું મૂળ ધટામાં બની શકતું નથી પરંતુ આમલ સારામા સાલ રાખીને દડ આપન કરી શકાય છે

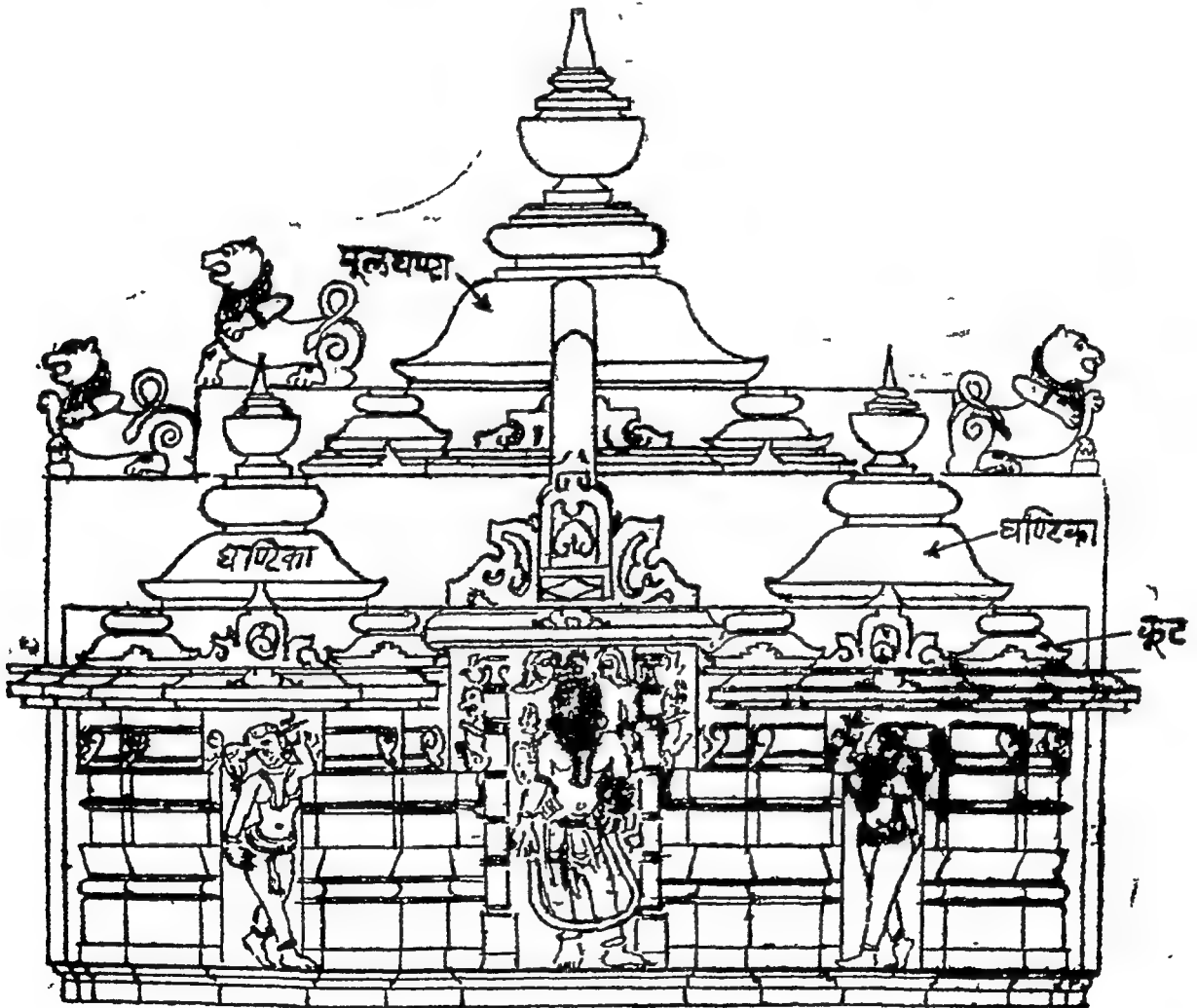
अथ संवरणा—संवरणाश्च प्रवक्ष्यामि प्रथमं पंचघटन् ।

चतुर्घटाभिर्वृद्ध्या च यावदेकोत्तरं शतम् ॥७४॥

पंचविंशतिरित्युक्ता विभक्तिर्भाग संख्यया ।

विभक्ति रष्टभागाद्या यावद् वेदोत्तरं शतम् ॥७५॥

हुवे हुं संवरणा विशेषे कहुं छुं. शस्त्रमां पांच घंटाथी अन्वयार घंटानी वृद्धिअे ओकसो ओक घंटा सुधीनी तेम लाग संख्याथी पन्चीस संवरणा कही छे. विलक्षित लाग संख्याअे पहेली आठ लागनी सामरणथी ओक सो अार लाग सुधीनी अेम पन्चीश संवरणा अन्वयार लागनी वृद्धिथी करता जवुं. ७४-७५.



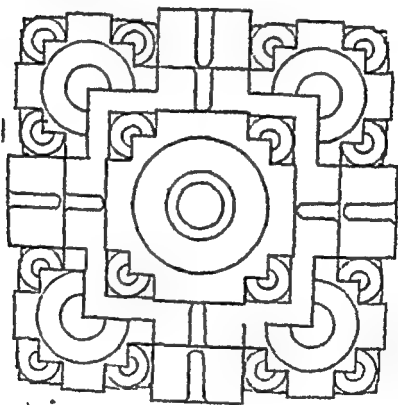
पुष्पिका नाम संवर्णी (९) घण्टिका ५ कूट १६. सिंहट. भागट.

प्रभाशङ्कर. ओ. स्थिति.

अब मैं संवरणाके बारेमें कहता हूँ । शुरूमें पाँच घण्टेसे चार चार घंटे की वृद्धि पर एकसौ एक घण्टे तककी उस भाग संख्या से पच्चीश संवरणा कही गयी है । विभक्ति भाग संख्यासे पहली आठ भागकी शामरणसे एक सौ

ચાર ભાગ તક ફી દ્વય તરફ પશ્ચીમ મેરગળા પાઠ પાઠ ભાગ ફી શુદ્ધિ સે ફરતે જાના । ૭૬-૭૭

ચતુરશ્રીકૃતે દેવે અષ્ટમાગ વિભાજિતે ।
 માગૌ દ્વૌ ગધિકા કાર્યા ચતુર્દિશુ વ્યવસ્થિતા ॥૭૬॥
 ફર્ણે ધંટિકાદ્વિમાગા તદ્વથ કૃટ કોગતઃ ।
 મૂલ ધંટા ત્રયોમાગા માગંકં કલ્પ્યં મયેન્ ॥૭૭॥
 ઉદયં ચ મયલ્પ્યામિ માગાભત્વાત્ એવ ચ ।
 છાષોટ્રમાસ્ત્રકૃટ તદ્વર્ણ ધટિકા મયેન્ ॥૭૮॥



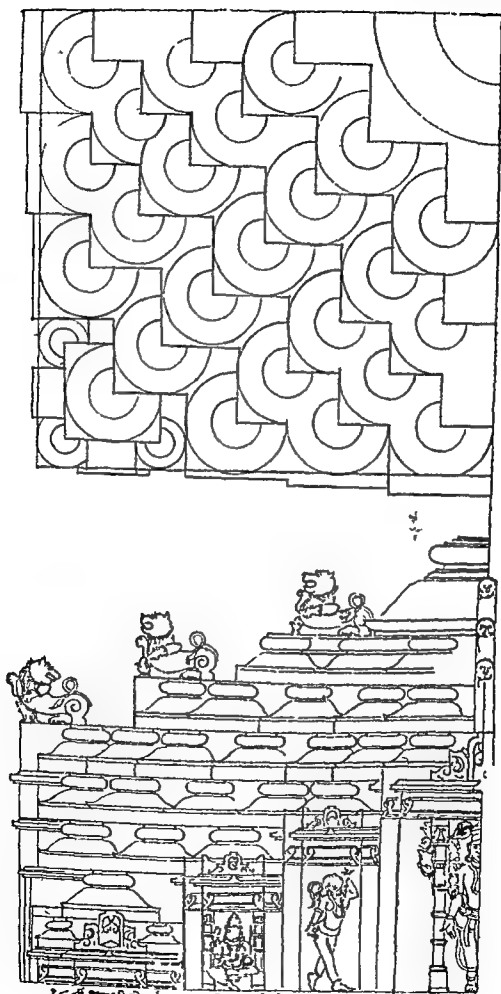
૧ પુષ્પિકા નામ મયર્ણાં તત્ત્વ દર્શન (તત્ત્વ સામુદ્ર પાર્શ્વ)

ચોરમ દેવત્રના આઠ વિભાગ કરવા, તેમા ગતો મધ્યમા બે ભાગની રશિકાં (ભદ્ર) અને ત્રણ ત્રણ ભાગની રેખા કરવી તે રીતે ચારે બાજુએ વિભાગની વ્યવસ્થા કરવી રેખાએ બે ભાગની પહોળી ધટિકા કરી તેની નીચે ખુણે કૂટ કરવા સર્વોચ્ચ મૂળ ધટ ત્રણ ભાગની કૂટ સાથે ચાર ભાગની પહોળી કરી તે ઉપર એક ભાગનો કળશ કરવો આમ તળવિભાગ કદા હુવે ઉદય ઉભણી ચાર ભાગની કરવાનું કહ્યું છુ પ્રત્યેક ધટા નીચે છામલી તે પર કૂટ કરવું કૂટના ચરમાં ધટિકાના ગળે ઉદ્ગમ દોઢીયા કરવા તે કૂટ ઉપર ધટિકા કરવી,

आ रीते शामरण—पञ्चीश यडाववी. शामरणना प्रत्येक धरमा नीचे छाजली कूट उद्गम अने ते पर घंटीका यडाववां आम शामरणना प्रत्येक थरोना कम न्हाणुवे। आ रीते करतां जेम शिपरने उरु शृंग यडे छे तेम शामरणने गले उरुघंटा यडे ते पर सिंडु जेसे छे. मध्यनी सर्वोपरिने मूल घंटा कडे छे. अने तेना पर मोटो कणश स्थापन थाय. जेके प्रत्येक घंटा पर कणश. धंडा भूकवां. ७६-७७-७८.

चोरस क्षेत्रके आठ विभाग करना । उसमें गर्भमें मध्य में दो भाग की राशिका (भद्र) और तीन तीन भाग की रेखा करना । इस तरफ चारों बाजु विभाग की व्यवस्था करना । रेखापर दो भागकी चौड़ी घंटिका कर उसके नीचे कोनेमें कूट करना । सर्वोपरि मूल घण्टा तीन भागकी कूटके साथ चार भाग की चौड़ी करसे उसके ऊपर एक भागका कलश करना । इस तरह तलविभाग कहे । अब उदय चार भागका करने के लिये कहता हूँ । प्रत्येक घण्टा के नीचे छाजली उसके ऊपर कूट करना । कूटके थरमें घंटिका के गर्भमें उदय डेढ़िया करना । उस कूटके ऊपर घंटिका करना ।

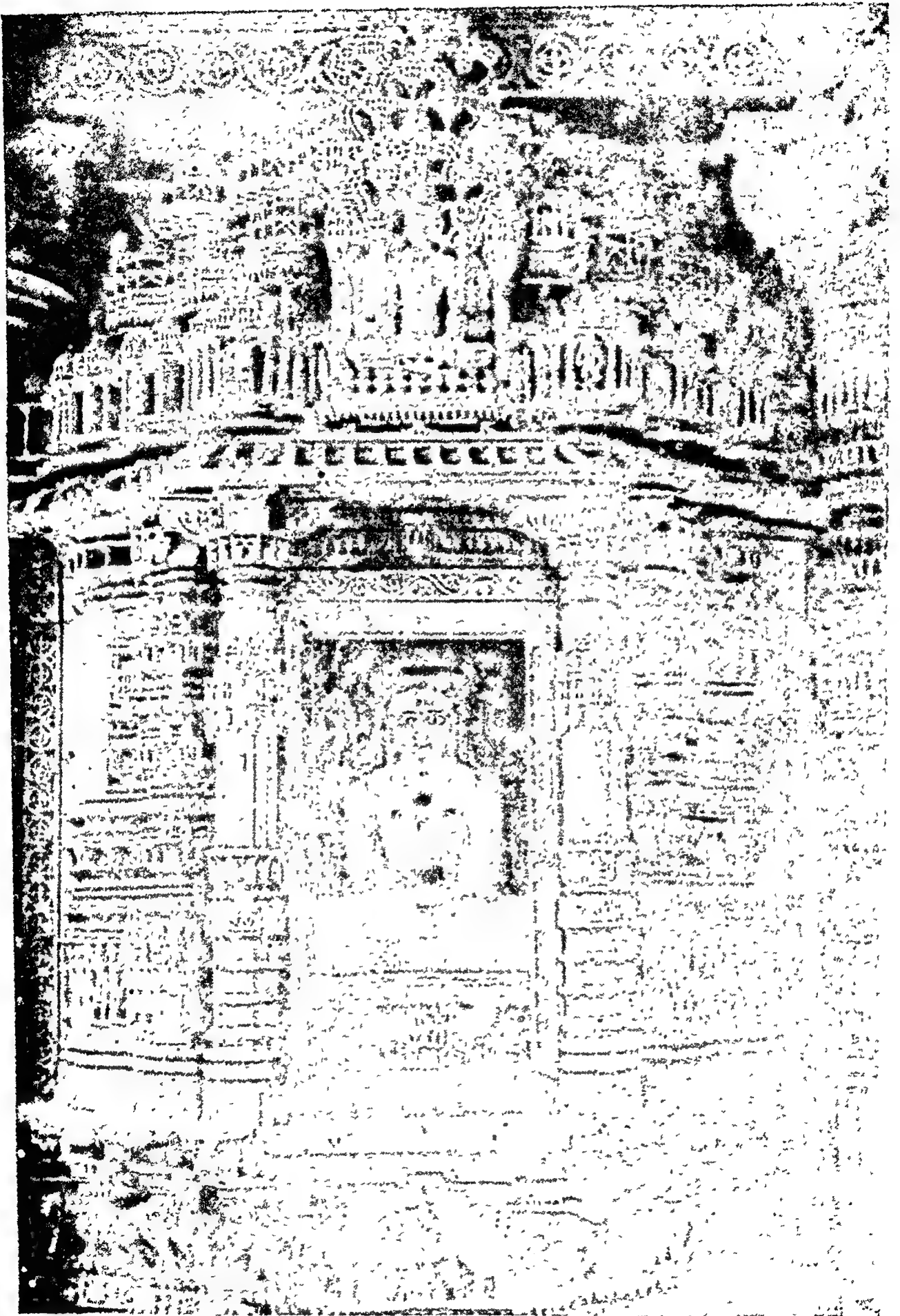
संवरणाको शिल्पीओंकी भाषामें शामरण कहते हैं । यहाँ मंडप पर शामरण करने के लिये कहा है । परंतु गर्भगृह पर भी जहाँ शिखर करनेकी दुष्करता हो अगर अल्प द्रव्य व्ययके कारण गर्भगृह पर शामरण करते हैं । आवूके महामूले मंदिरों पर शामरण ओरिसा-कलिंग और खजुराहोमें शिखर और शामरण दोनों देखनेमें आते हैं । शामरण का दूसरा प्रकार त्रिषट है । और कलिंगादि देशोंके पुराने कामोंमें देखनेमें आते हैं । अपने सौराष्ट्र, गुजरात और कच्छ, राजस्थान के पुराने कामोंमें त्रिषट देखनेको मिलता है । एक पर दूसरी छाजली पीछे मारकर संकोचकर उपर आमलसाराघंटा कर कलश चढ़ाते हैं । त्रिषटाका नागरादि शिल्पमें शास्त्रोक्त पाठ अभी देखनेमें आया नहीं है । (१) शिखर (२) शामरण (३) त्रिषटा इस तरह तीन सर्वोच्च शिल्प होता है । त्रिषटा थोड़े फेरफारके साथ शामरणका संक्षिप्त स्वरूप है । संवरणा को शिल्पमें नारी जातिसे संबोधन किया जाता है । शामरण विस्तार से अर्ध ऊँची कही गई है । परंतु शिल्पीओं अपनी कलाका प्रदर्शन करनेके लिये प्रत्येक थर पर जांगी चढ़कर ऊँची करते हैं । जेसलमेरमें वैसा है । वर्तमानकालमें शामरण चढ़ानेकी जो प्रथा शिल्पियोंमें है, वह करीब दो सौ सालसे चली आयी है । छाजली कूट घंटा प्रत्येक थरमें करनेका शास्त्रकारका विधान है । और वर्तमानकाल की शामरणमें अकेली घंटा लामसाके थर पर थर चढ़ाते हैं । यद्यपि यह रीत अशास्त्रीय नहीं कही जाती । जब गर्भगृह पर संवरणा करनेकी होती है तब उपर मूल घंटाके स्थान पर आमल सारा ही करनेका फर्ज पड़ता है, क्योंकि ध्वजा दंड खड़ा करनेका कारण मूल घंटेमें घनता नहीं है । परंतु आमलसारेमें साल रखकर ध्वजा दंड स्थापन किया जा सकता है ।



१८ वीं शताब्दी से यह नाम दिल्ली के सयाफा शैली

प्रभाशकर ओ. स्थिति

वर्तमान कालसे शिल्पियों की क्षमरण की प्रथा



देवराणी जेठाणी के स्पर्धाका सुंदर कलामय गोखला-छुर्णिग वसही (देल्वाडा आयु)



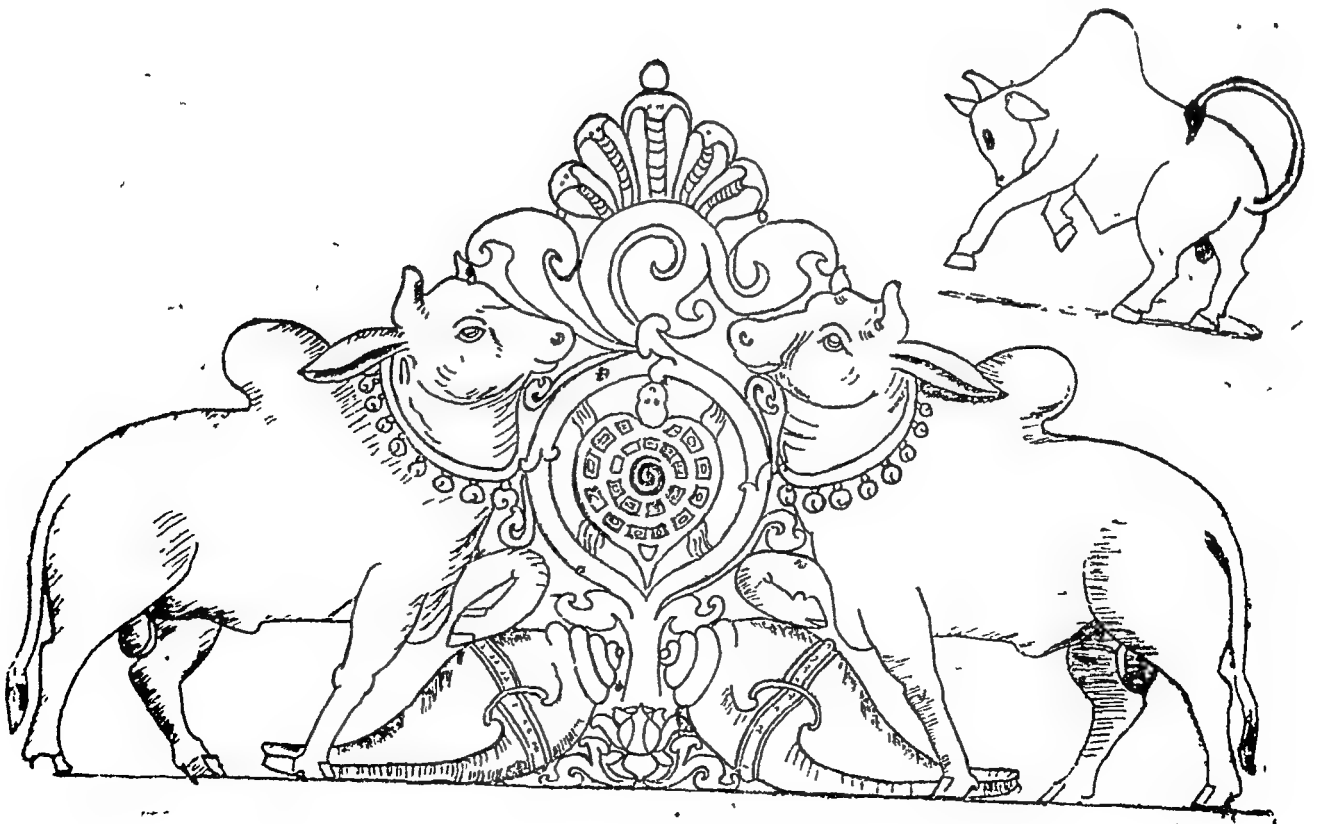
देववाडा धातु के चिमल वसही मठ के स्तम्भ देवाज्ञना और इलिका तोरण

इस तरह शामरण पच्चीस चढ़ाना—शामरणके प्रत्येक थरमें नीचे छाजली कूट—उद्गम और उसके पर घण्टीका चढ़ाना । इस तरह शामरणका प्रत्येक थरका क्रम जानना । इस तरह करते जिस तरह शिखर को उरुशृंग चढ़ता है इस तरह शामरण के गर्भमें उरुघण्टा चढ़े उसके पर सिंह बैठता है । मध्य की, सर्वोपरि को मूल घण्टा कहता हैं और उसके पर बड़ा कलश स्थापित होता है । यद्यपि प्रत्येक घण्टा पर कलश—अंडा रखा गया है । ७६—७७—७८.

इति श्री विश्वकर्मा कृतायां क्षीरार्णवे नारदपृच्छायां मंडपाधिकारे शताग्रे षड्विंशोऽध्यायः ॥ ११६ ॥ (क्रमांक अ० १८)

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवे श्री नारदजीके पूछे मंडपाधिकारना शिल्प विशारद स्थपति श्री ओषडभाई सोमपुराकी रचि हुई सुप्रभा नाम्नी भाषा टीका साथेना अक्षसो सोलहवा अध्याय (११६) (क्रमांक अ० १८)

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवमें श्री नारदजीके पूछे हुए मंडपाधिकारके शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रभाशंकर ओषडभाई सोमपुराकी रचि हुई सुप्रभा नाम्नी भाषा टीका का एकसौ सोलहवा अध्याय । ११६) (क्रमांक अ० १८)



॥ अथ साधार भ्रम निरूपणाध्याय ॥

क्षीरार्णव अ० ॥ ११७ ॥ क्रमांक १९

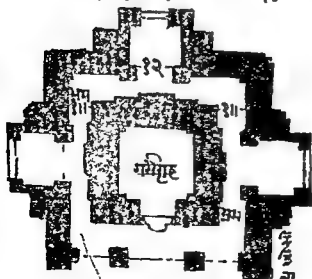
श्री विश्वकर्मा उवाच

भ्रममिति प्रवक्ष्यामि प्रासाद मानतां बुध ।
 दशहस्तोचरा यावत्प्रासादाः सभ्रमा भवेत् ॥ १ ॥
 दशोर्ध्वं च शतपादे भ्रममेकं प्रकीर्तितम् ।
 सप्तविंशे द्वयं चैव अष्टमांशे तथा पुनः ॥ २ ॥
 सप्तपादे तु चत्वारि पङ्कणैः पञ्चसीर्युते ।
 भ्रममिति विभागानि श्रुत्वात्वेकाग्रतो मुनिः ॥ ३ ॥
 प्रासाद द्वादशभागा गर्भेपङ्क सार्द्धं मध्ये ।
 'सार्द्धं द्वयो द्वयमिति शेषं च भ्रम विस्तरे ॥ ४ ॥

इति एक भ्रममान

श्री विश्वकर्मा कहे છે બુદ્ધિમાન શિલ્પીઓ ? પ્રાસાદના માનથી સાધાર
 પ્રાસાદના ભ્રમ અને ભિત્તિના માન પ્રમાણ હવે હું તમોને કહું છું દશ હાથ
 ઉપરના પ્રાસાદને ભ્રમ કરવો દશથી પચ્ચીસ હાથના પ્રાસાદને એક ભ્રમ કરવો
 સત્તાવીસ હાથના પ્રાસાદને બે ભ્રમ કરવા અને આઠમા ભાગે ભ્રમભિત્તિ કરવી
 એમ ભ્રમ અને ભિત્તિના વિભાગ રાખવા હે મુનિ,

અક્રમ (સાધારપ્રાસાદ)



અક્રમ તલદર્શન

હવે એકાગ્રતાથી સાલળો પ્રાસાદ
 બહાર રેખાએ હોય તેના બાર
 ભાગ કરી વચ્ચે સ્તૂપ-ગર્ભગૃહ
 ભિત્તિ સાથે સાડા છ ભાગનો
 રાખવો અને બે છેડાની બહારની
 બેઠ લીતો અઢી ભાગની બાકી
 રાખવી (એટલે સવા ભાગની
 એકેક લીત બાકી) બાકીના ત્રણ
 ભાગમાંથી દોઢ દોઢ ભાગનો ભ્રમનો
 વિસ્તાર બાણવો ૧-૨-૩-૪

શ્રી વિશ્વકર્માજી કહતે હૈં । હે ! બુદ્ધિમાન શિલ્પિ ! પ્રાસાદકે માનસે ભ્રમ

और भित्तिमान सांधार प्रासादके मान प्रमाण अब मैं तुम्हें कहता हूँ । दश हाथके उपरके प्रासादको भ्रम करना । दशसे पच्चीस हाथके प्रासादको एक भ्रम करना । सत्ताईश हाथके प्रासाद को दो भ्रम करना और आठवें भागमें भ्रमभित्ति करना ।

.....इस तरह भ्रम और भित्ति के विभाग करना । हे मुनि ! अब एकाग्रतासे सुनो । प्रासाद बाहर रेखाके पर हो उसके बारह भाग कर बिचका स्तूप-गर्भगृह भित्तिके साथ साढे छः भागका रखना और दो अंतकी बाहर की दोनों दिवारें ढाई भाग की मोटी रखना । (अर्थात् सवा सवा भागकी एकेक दिवार मोटी) बाकीके तीन भागमें से डेढ़ डेढ़ भागका भ्रमका विस्तार जानना । १-२-३-४. इति एक भित्तिमान ।

द्विभ्रमं च प्रवक्ष्यामि यथा शास्त्रे न संभवः ।

चतुर्विंश कृते क्षेत्रे द्वादश लिङ्ग पीठयोः ॥ ५ ॥

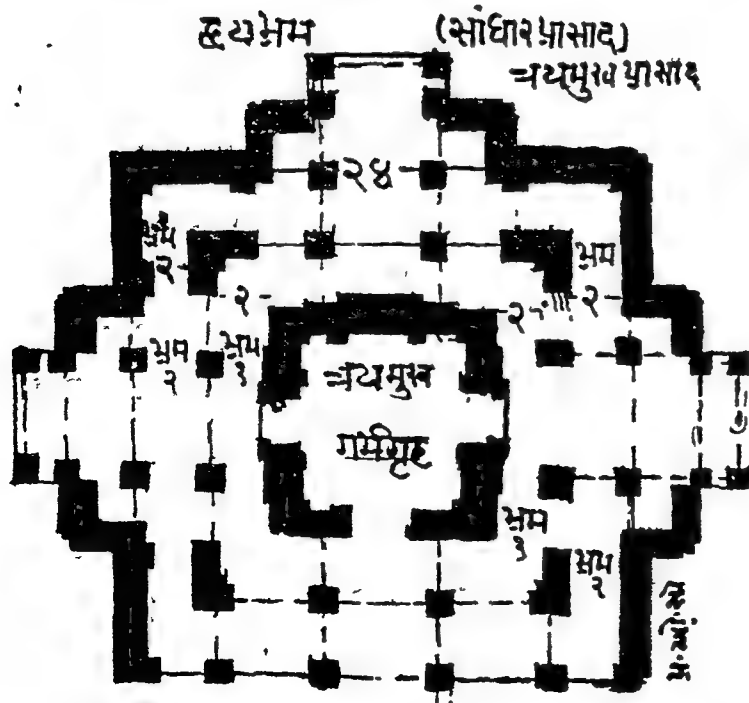
चतुर्भिर्भित्ति त्रिभागानि शेषं च भ्रम मुत्तमम् ।

स्तंभः श्रेणि यदा सूत्र भ्रमद्वय विराजिता ॥ ६ ॥

कर्ण मध्ये प्रकर्तव्या मंडपा मर्हता श्रता ।

॥ इति भ्रमद्वयं मध्यमान ॥

हुवे जे भ्रमनुं शास्त्रोक्त मान संशय वगरनुं कहुं छुं सांधार प्रासादानी



मध्यमान द्वय भ्रम तल दर्शन

गडारनी रेखाये चौवीश
लाग करी वचलुं दिगं पीठ=
स्तूप-भित्ति साथे गर्भगृह
-गार लागनो राखवो चार
लीतो त्रणु लागनी अटले
पोणु पोणु लागनी प्रत्येक
सिंत नडी राखवी. लाडीना
गेडि भ्रमो गण्ठे लागना
राखवा भ्रमनी सिंतोना
स्थाने स्तंभोनी श्रेणी लींतना
सूत्रना स्थाने राखवी: आ
गली कर्ण-रेखा-मंडपमां
स्तंभोनी श्रेणीथी नालुवी.

अब दो भ्रमका शास्त्रोक्त मान असंशय कहता हूँ । सांधार प्रासाद की

बाहर की रेखाके पर चौबीस भागकर विचका लिंगपीठ-स्तूप-मिति के साथ गर्भगृह-वारह भागका रखना । चार दिवारे तीन भागकी अर्थात् पौने पौने भाग की प्रत्येक दीवार मोटी रखना । बाकीके दोनों भ्रम दो दो भागके रखना । भ्रम की दिवारोके स्थानपर स्तम्भों की श्रेणी भीतके सूत्रके स्थानपर रखना । आगेकी कर्णरेखा-मण्डपमे स्तम्भों की श्रेणीसे जानना ।

पङ्क्तिश कृते क्षेत्रे लिङ्ग पीठ दशाष्टकम् ॥ ७ ॥

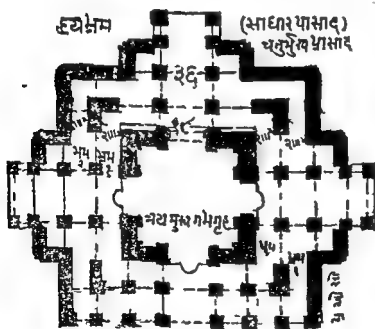
मितिपङ्क्ति सार्द्धश्च चत्वारिभ्रम कल्पसेत् ।

रुद्रसार्द्धं चतुर्भ्रम स्तंभ युक्तं न संशय ॥ ८ ॥

एवं विभक्ति मादाय भ्रमाद्वय विराजिते ।

(भ्रमा त्रीणि विराजित) इति भ्रमद्वय कनिष्ठमान

इसे कनीष्ठ मानना ये भ्रमवाणा प्रासादोंना लागे कडे छे अठार इभाये छत्रीश भाग करवा तेमा वयलो दिगपीठ (स्तूप) मिति सहित गर्भगृह-



भ्रम द्वय (कनिष्ठमान) तलदर्शन

अठार भागना राखवा तेनी बार बी तो साडा छ भागनी (अष्टले १॥=भागनी अष्टके करवी) कनीष्ठ मानना द्वय भ्रम नी राखवी साडा अग्यार भागना बार-भ्रमो (२॥=भागनी अष्टके) = प्रदक्षिणा राखवी " लि तोना स्थाने (भ्रमना लट्रोभा) स्तूपो भूडी शक्य तेमा संशय न करवा अ रीते ये भ्रमना प्रासादना विभाग कनीष्ठमानना नालुवा

७-८

अब कनिष्ठ मानसे दो भ्रमवाले प्रासादोंके भागों कहते हैं । बाहर रेखाके पर छत्रीश भाग करना । उसमे विचका लिंगपीठ (स्तूप) (मितिसहित) गर्भगृह अठारह भागका रखना । उसकी चार दिवारे साढ़े छ भागकी (अर्थात् १॥=भागकी एक करना) कनिष्ठमान के द्वय भ्रमकी रखना । साढे ग्यारह भाग के चार भ्रमों (२॥=भागकी एक एक प्रदक्षिणा रखना । मितोके स्थानपर भ्रम के

२ इयाद्विरीशेव पच भ्रमविस्तरे-पाठतर ।

भद्रोंमें) स्तम्भों रख सकते हैं। उसमें संशय न करना, इस तरह दो भ्रम के प्रासादके विभागों कनिष्ठमान के जानना। ७-८.

यथा एवं विभागं च ज्येष्ठत्वेष्टादशः शुभं ॥९॥

सर्वभित्ति भवेद्भागं भागैकं भ्रमणद्वयं ।

द्विभागं द्विभ्रमज्येष्ठं शेषं गर्भगृहं भवेत् ॥१०॥

॥ इति भ्रमद्वय ज्येष्ठमान ॥

इसे ज्येष्ठमानना के भ्रमनी विधि ऊहे छे. अठार लाग देखाये करवा सर्व भीतो. ओकेक लागनी अने के भ्रम ओकेक लागना राखवा ओटवे ओक तरफ के भ्रम के लागना जाणवा. अने आधी दश लागनो (गर्भगृह—(साथे स्तूप) राखवो. ८-१०.

अब ज्येष्ठमान के दो भ्रमकी विधि कहते हैं। अठारह भाग रेखाके पर करना। सर्व दिवारें एक एक भागकी और दो भ्रम एक एक भागके रखना। अर्थात् एक तरफ दो भ्रम दो भागके जानना और बाकी दश भागका (गर्भगृह स्तूप साथका रखना। ९=१०.

क्षेत्राष्ट दशभिर्भागं षड्भागं लिङ्गपीठके ।

भागैकं षट्भित्ति च भाग भागं भ्रमत्रय ॥११॥

स्तम्भा श्रेणि युतां तंश्च भ्रमांश्चत्वारि धीमताम् ।

मध्यवेदिककृते गर्भे (क्षेत्र) सभ्रमं च करोटकः ॥१२॥

ज्ञायते तद् भ्रमं पंच महामेरुप्रसिद्धयेत् ।

कवलिका सप्तमाख्याता भाषितं विश्वकर्मणा ॥१३॥

साधार प्रासादना अठार देखाये होय तेना अठार लाग करवा. तेमांथी वन्हे छ लागनुं लिङ्गपीठ स्तूप भित्ति साथे गर्भगृह—राखवो. तेनी छ भित्ति ओकेक लागनी अने त्रण त्रण भ्रम पण ओकेक लागना करवा. (अ रीते भ्रमनुं प्रमाण जाणवुं.) ११-१२-१३.

साधार प्रासादके बाहर रेखाके हो उसके अठारह भाग करना। उनमें से बिचमें छः भागका लिङ्गपीठ—स्तूप—भित्ति के साथ गर्भगृह रखना। उसकी छः

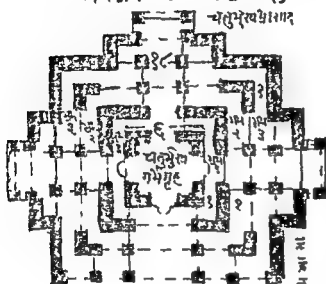
(२) श्लोक ७-८ ना पाठो धांला न अशुद्ध अने गणुत्री अठारनां विभाग अशुद्ध छता. शुद्ध पाठो भणशे तो नवी आवृत्ति शुद्ध पाठ सुडीशुं.

२. श्लोक ७-८ के पाठो अशुद्ध है। शुद्ध मिलनेसे नया संस्करणमें शुद्ध पाठ रखेंगे।

द्विवारे एक एक भागकी और तीन तीन भ्रम भी एक एक भाग के करना ।
(इस तरह तीन भ्रमका प्रमाण जानना । ११-१२-१३)

भ्रमनी एी तोभा मध्यभागभा यथ्या श्रेणीना स्त लो बुद्धिमान शिल्पीये

अथ भ्रम (साधार प्रसाद)



भ्रमत्रय-तलदशन

शिली को करना । (वैसा दो दो अर्थात् चार भ्रमके प्रासादको करना । मध्यमे वेदीका कर गर्भगृहको घुमटी कलाडिया-करोटक करना । प्रसिद्ध ऐसे सहामेरूको पाँच भ्रम करना । (अथवा पचमेरू को इस तरह भ्रम करना ?) आगे कोलीका भ्रम के विभागमे श्री विश्वकर्माने कही है ।

कप्पा (तेषु णाम्हे अेटले चार भ्रमना प्रासादने कप्पु) मध्यभा वेदीका करी गर्भगृहने घुमटी-कलाडिया-करोटक करवो प्रसिद्ध अेवा महाभेइने पाथ भ्रम करवा (अथवा पथ भेइने आ रीते भ्रम करवा ।) आगण कोलीका भ्रमना विलागभा श्री विश्वकर्माने कही छे

भ्रमकी दिवारोंमे मध्यभागमे

चार चार श्रेणीके स्तभ बुद्धिमान

एक द्विद्वयो त्रीणि तृतीये चतुपंचके ।

मध्य वेदी समायुक्त भ्रमस्तैतालिलक्षणम् ॥ १४ ॥

भ्रमश्च भ्रमर्योमध्ये यदाभित्ति निवेशितम् ।

सपटं तसोत्परे प्राज्ञ क्रमशा क्रमणान्तके (?) ॥ १५ ॥

साधार प्रासादने अेक भ्रम, अेने अे त्रलुना त्रलु अने चार अने पाथ भ्रमो करवा वच्चे वेदी (भद्रभा) भ्रमनी तालीकाना लक्षण्णे। णलुवा भ्रम अने णीज भ्रमनी वच्चे बिती करवी भ्रमना मध्यना लागभा स्त लोनी श्रेणी करवी अे रीते अह्मा शिल्पीये कभ पर कभथी भ्रमो करवा १४-१५

साधार प्रासादको एक भ्रम दो को दो, तीनके तीन और चार और पाँच भ्रमों करना । विचमे वेदी (भद्रमे) भ्रमकी, तालिकाके लक्षण जानना । भ्रम और दूसरे भ्रमके बीच मिति करना । भ्रमके मध्य भागमे स्तभों की श्रेणी करना । इस तरह बुद्धिमान शिल्पीको क्रमपरक्रमसे भ्रमों करना चाहिये । १४-१५

शिवेच देवता उक्ता आगमस्ता पुनः पुनः ।

एहि-उक्ता ग्रहासर्वे तत्सर्वेभ्रममध्यनः ॥ १६ ॥

भवाज्ञा रूप संयुक्ता गणपति विविधानि च ।

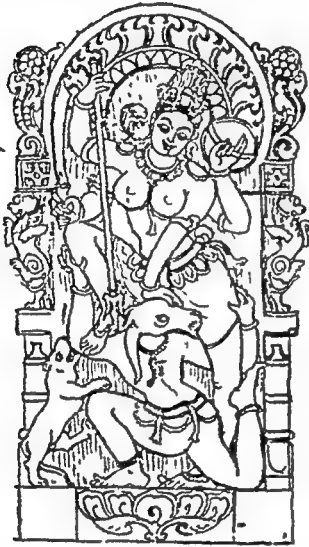
नकुलिशो शेषरामाश्चभ्रमस्तुयलंकृते ॥ १७ ॥

प्रवेक्षणं यदा सूर्ये सौम्यादि नवमेव च ।

भ्रमस्थाने प्रदातव्या पूजिता च सुखावहा ॥ १८ ॥



ब्रह्मा



महिषासुरमर्दिनी



सूर्य



विष्णु

उध्वे पृथक् पृथक् पक्ष तोरण पक्षे विरालिका स्तंभिका आदि परिकर युक्त

आवा सांधार भ्रमयुक्त प्रासादोमां शिवआदि देवो ने आगमोमां तेनी अंग संख्या करी करीने कही छे.....ते सर्वे तथा सर्व अहो इस्ता भ्रमनी लीतोना मध्यमां करवा....गणपतिना बुद्धा बुद्धा गत्रीश स्वर्पो (सुदल पुराणमां कह्या छे ते नकुलीश भगवान शेषनारायण राम आदि स्वर्पो भ्रम प्रदक्षिणामां करी अलंकृत करवा...सूर्य अने चंद्रादि नव अहो भ्रमना स्थानमां तेनां स्वर्पो करी पूजवाथी सुभने आपनारा जणवा, १६-१७-१८.

ऐसे सांधार भ्रमयुक्त प्रासादो में शिव आदि देवों जो आगमों में उनकी अंग संख्या बार बार कही गई है.....उन सब तथा सब ग्रहोंके चारों ओर भ्रमकी दिवारों के नकुलीश भगवान शेषनारायण राम आदि स्वरूपों भ्रम प्रदक्षिणामें कर अलंकृत करना...सूर्य और चन्द्रादि नौ ग्रहों भ्रमके स्थानमें उनके स्वरूपों कर पूजन करनेसे सुखके देनेवाले हैं । १६-१७-१८.



धुनदेवी-शारदा
सरस्वती का १२ स्वरूप



१ महादेव



२ वेदगमा



३ इक्षरी



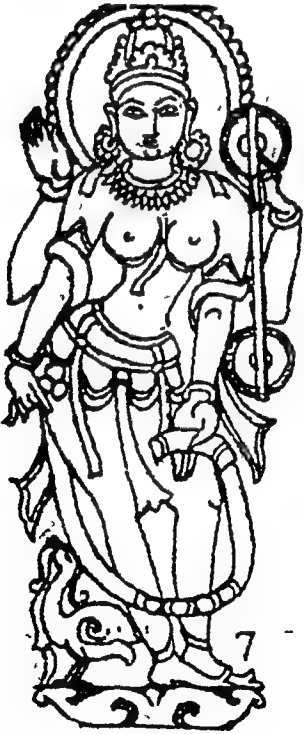
४ जयादेवी



५ विजयादेवी



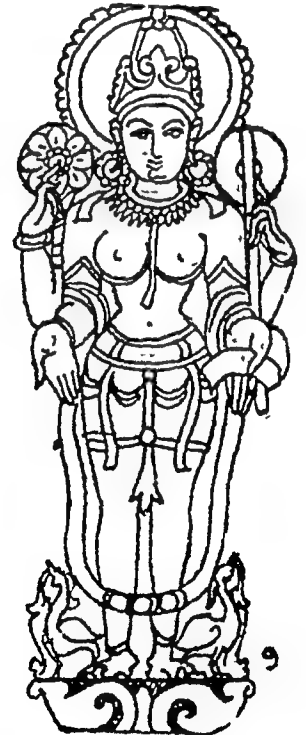
६ सारङ्गदेवी



७ तुंबरीदेवी



८ नारदीदेवी



९ सर्वमंगला

नारदादि रिषि सर्वे पांडवाद्यायुधिष्ठिरः ।

प्रासादे भ्रम संस्थाने स्वस्थाने भ्रम प्रदक्षिणे ॥ १९ ॥

स्वच्छंद भैखाद्यं च आनंदो प्रति भैरव ।

मुक्ति उक्ता यथा देव्या भ्रम स्थाने सुखावहा ॥ २० ॥



૧૦ વિદ્યાધરી



૧૧ મર્ચવિદ્યા



૧૨ સર્વપ્રસન્ના નારદીય

અપ્રાશિતિ સહસ્રાણિ ઋપિરાજ મુખાવહા ।

બ્રહ્મણે ભ્રમસંસ્થાને વસિષ્ઠાય પ્રદક્ષિણે ॥ ૨૧ ॥

નારદ આદિ સર્વ ઋષિઓ અને મુનિઓના પાડવો પ્રાપ્તિના ભ્રમના પોત પોતાના સ્થાને ફરતા કરવા તેમજ અવ્યથા હૈરવાદિ આનંદ હૈરવ પ્રતિ હૈરવ તથા મુક્તિને દેનારા એવા દેવો અને દેવીઓને પ્રદક્ષિણામાં આપવા તે મુખને આપનારા બાણવા ભ્રમમાં અઠ્યાશી હજાર ઋષિ વસિષ્ઠાદિના સ્વરૂપે પ્રાપ્તિના મહા પ્રાસાદના ભ્રમની પ્રદક્ષિણામાં કરવા ૧૯-૨૦-૨૧



દક્ષિણ દિગ્ગપાલ યમ

મૈરવ-ક્ષેત્રપાલ
નોસ્તી

ઉમામહેશ-આસનસ્થ

ઉર્ધ્વ દૃષ્ટ-લલાટ તિલક
શિવ

नारद आदि सर्व ऋषियों और युधिष्ठिरादि पाँडवों को प्रासादके भ्रमके अपने अपने स्थानपर फिरते करना । उनमें स्वच्छंद भैरवादि. आनन्द भैरव, प्रति भैरव तथा मुक्तिदाता ऐसे देवों और देवियों को प्रदक्षिणा में स्थापना वे सुखके देनेवाले हैं । भ्रममें अठ्ठासी हजार ऋषि वसिष्ठादि के स्वरूपों ब्रह्मा के स्वरूपों ब्रह्माके महाप्रासादके भ्रमकी प्रदक्षिणामें करना । १९-२०-२१.

इति श्री विश्वकर्माकृतायां क्षीरार्णवे नारद पृच्छायां सांधार भ्रम निरूपणाधिकारे शताग्रे सप्तदशाधिकारे ॥ ११७ ॥ क्रमांक अ० १९

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवे श्री नारदऋषिये पूछेला सांधार भ्रम निरूपणाधिकार पर शिल्प विशारद श्री प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुराये रचेली सुप्रभा नामनी भाषा टीकाते अकसो सत्तरमे अध्याय. ११७, (क्रमांक अ० १९)

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवमें नारदजीके पूछे हुए सांधार भ्रम निरूपणाधिकार का शिल्प विशारद श्री प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुराकी रचि हुअी सुप्रभा नामकी भाषाटीका एकसौ सत्रहवाँ अध्याय ॥११७॥ (क्रमांक अ० १९)



॥ अथ सांधार चतुर्मुख प्रासाद वर्णन ॥

क्षीरार्णव अ० ११८ क्रमांक २०

श्री नारदोवाच-

स्वर्ग स्थानार्चितं पूर्वं शिवस्थानं चतुर्मुखं ।
जिनभवनं देवलोकं ममश्रुत्वा मुहुर्मुहुः ॥१॥
पुनः कांच विशिष्टं च मानतुङ्गं महीतले ।
उक्ता चातुर्मुखा सर्वे कथितं मम सांप्रत ॥२॥

श्री नारदजी कहे छे आतुर्मुख ओवो शिवस्थान प्रासाद स्वर्गभा पूज्य तेवो आपे आगण कही, तेवो देवलोकभा पूज्य तेवा एन लवननो भर्म भने कहे। श्रुत्य लोकभा पृथ्वीने विशे विशिष्ट ओवो कायन जेवा प्रासाद आतुर्मुख हुवे भने कहे। १-२

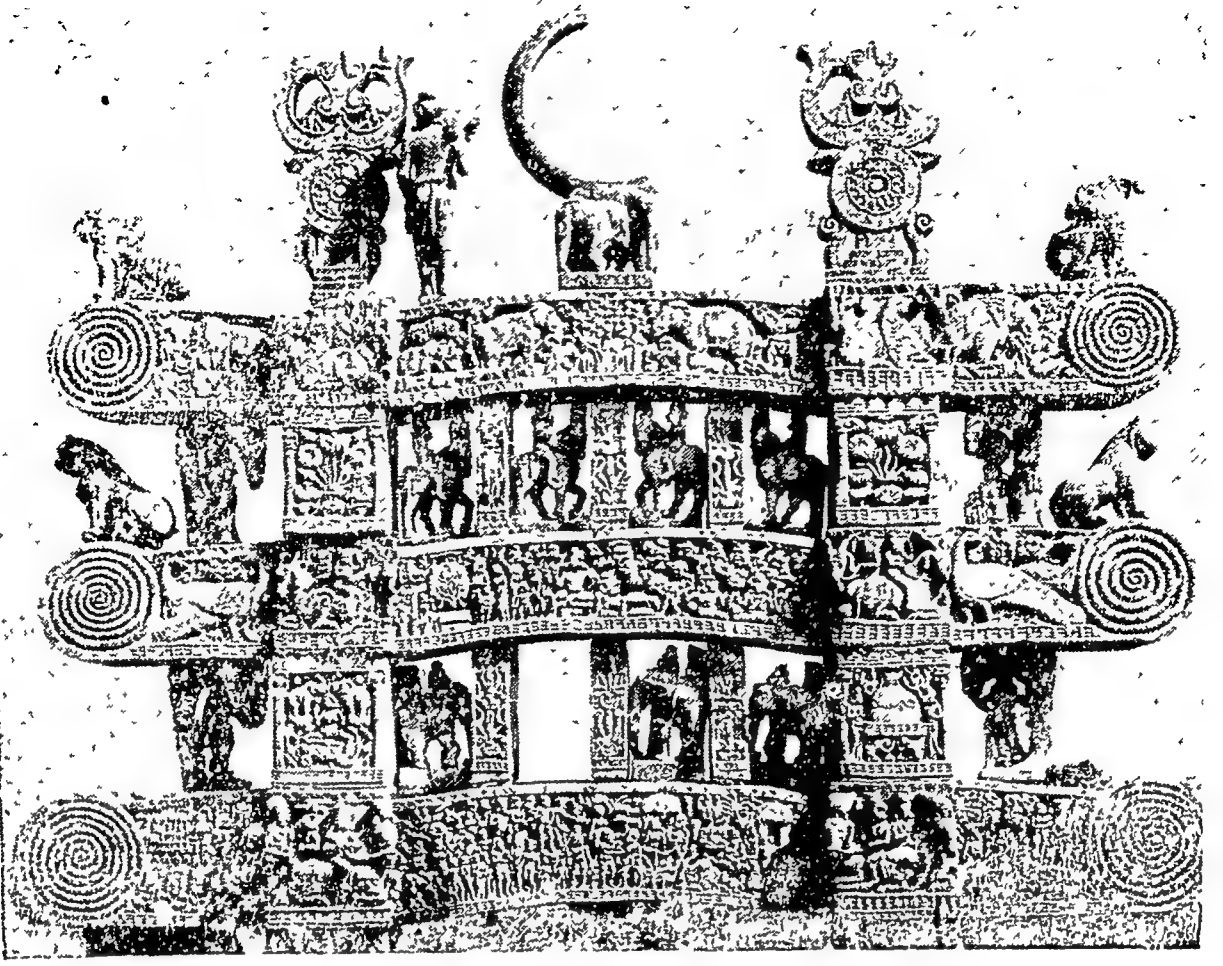
श्री नारदजी कहते हैं—चातुर्मुख ऐसा शिवस्थान प्रासाद स्वर्गमें मी पूजनीय होवे वैसा आपने आगे कहा, वैसा ही देवलोक से पूज्य होवे वैसा जिनभवन का मर्म मुझे बताओ। १-२

श्री विश्वकर्मा उवाच-

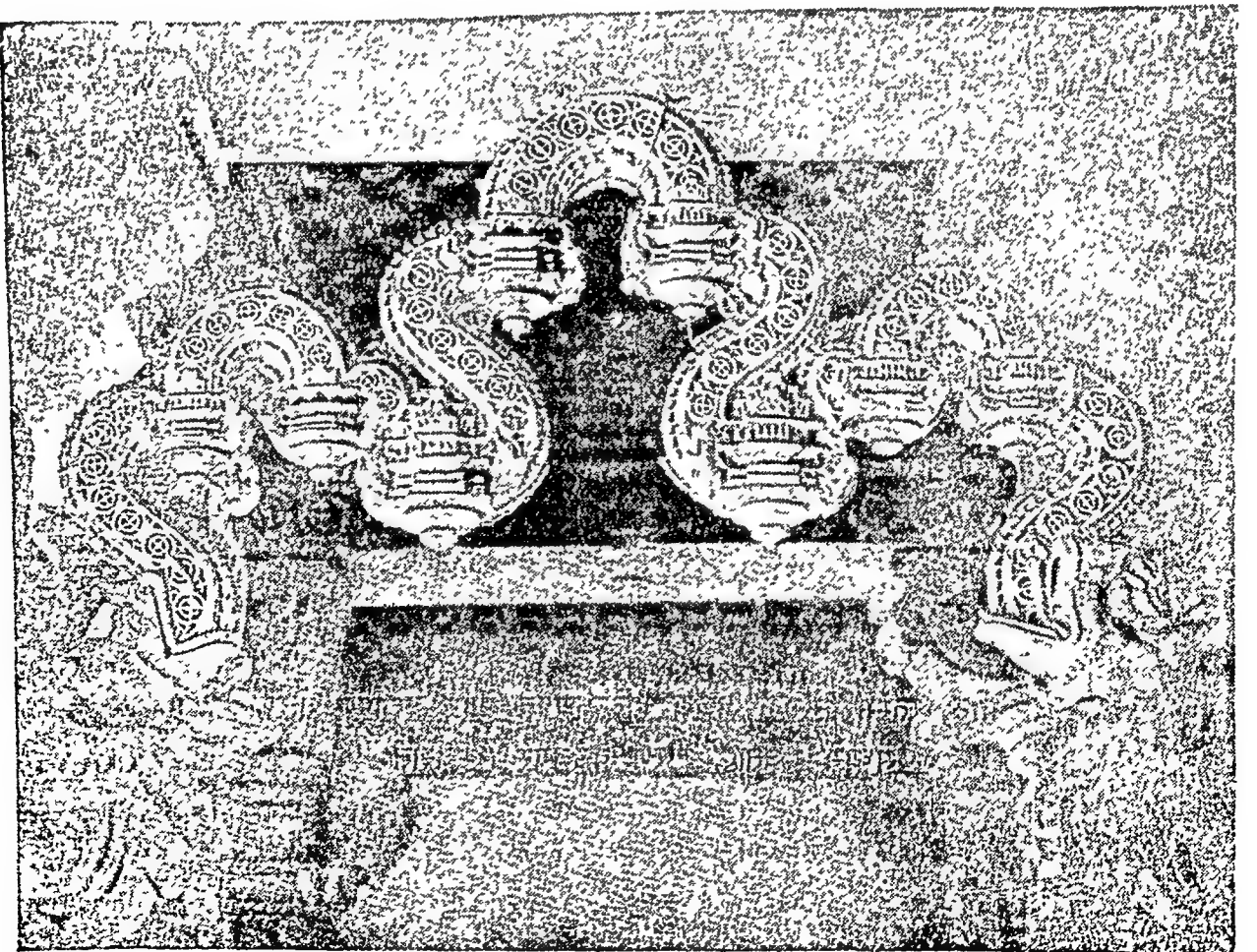
* उक्तं माहवमितिश्च क्षेत्रे चातुर्मुखं वंदिते ।
प्रासादं ब्रह्मक्षेत्रे सरथर युक्तेन च ॥३॥
नंदकोष्टं प्रतिष्ठे त्याद्यततः वेदि भ्रमति परिधा ।
मंडपा तस्य चाग्रेण त्रिभिः कर्णे पद्भिर्यता वेदिका ॥४॥
तेषां युक्ति विधातन सुरे जैनेन्द्र पुनोत्तरे ।
युक्ताकोष्टप्रमाण विवरे आयामा विस्तीर्णा कोष्टे ॥५॥
उपसिविष्टे (?) आयाम त्रिंश गृह्यन्ति कोष्टा ।
विधेम्य श्रुति, मेघा रचति मेघस्तरानि सिंहश्रिते ॥६॥

पाठान्तर १ स्वचित पूर्वं चतुर्मुख, २ विशिष्ट, ३ मातलोगे, ४ क्षेत्रे, ५ सरवयुक्तेन
६ नदाकाष्टे, ७ कर्णे कर्णे त्रिभिः, ८ नेनेन्द्र, ९ पूणोत्तरे, १० मेघध्वरानि ।

* श्लो३ ३ थी १० भा घण्टी अशुद्धिओ होवाथी अनुवाद यर्ध शक्यो नथी.



त्रिताल-तोरण सांचीस्तूप ईस. पूव दुसरी शताब्दी



कलामय ह्रीडोलक (आंदोलक) तोरण सोमनाथ (प्रभासपाटण)



પીઠ, રામ્મ, ગરવી, સાથ ફેલિયામુક્ત મુદર ચળાવ્યાં તોરણ
મધ્યમે ગચ્છાણ તોરણ વડાગર (ગુજરાત)

તથાગ્રિ મેઘારચંતિ સાર્ધ્વ નાંલ્યોપરિઃ સંક્રમે ।
 અધરઃ સ્વભૂમિકૃતે નંદવેદી કક્ષાંતરે ॥૭॥
 વર્તને ત્યાવચ્છાદનં ^{૧૧}ભૂમતિચેદ્ ચાતુર્દક્ષુ નિર્મિતા ।
 દ્વૌ કોષ્ટો ભ્રમણ રહિતં ત્રિવિટિસ્તુ મે સંચયમ્ ॥૮॥
 પ્રાસાદ ^{૧૨}પક્ષે ભ્રમ વેદિ ઉચ્છાલયં ઉત્તમં ।
 સંલગ્નં સ્તંભત્યજે મિતિ ત્યજેત્..... ॥૯॥
 લગ્નાપુટં ઉચ્છાલને રુપમનેક ચિત્રે પ્રાસાદાનાં સન્મુખમ્ ।
 ચ્છાદંતિ છાનિરુપાઃ પ્રસિદ્ધઃ સૂર્યાદિ તારાઝલી ॥૧૦॥
 રથોપરથ નિષ્ક્રાન્તે માને કવલી સદા ।
 નિર્મિતં ગવાક્ષ મદલૈ ^{૧૩}સ્તંભસ્ય સહિત પદમ્યં પટાન્તરે ॥૧૧॥
 દ્વારશ્ચ દ્વારે ^{૧૪}શાખા પ્રશાખે ઉપર્યુ પરિ ભૂમિકે ।
 પુનઃ પુનઃ કપોતાલી જંઘા પ્રજંઘા કપોલ ^{૧૫}છાદ્યકૈ ॥૧૨॥

ભાવાર્થ—રથ ઉપરથના ઉપાંગોના નિકાળાના માનથી કોણીનું નિર્માણ હંમેશાં કરવું ગોખ જડખા મદન સ્તંભો સહિત સુશોભિત કરવું—પદના પાટ સુધી....દ્વાર ઉપર દ્વાર દ્વારની શાખા ઉપશાખા ઉપરાઉપર કરવી. ઉપલી ભૂમિને ફરી કેવાળ જંઘા તે પર ફરી જંઘા કરી કેવાળ પર છજી કરવું ૨૬-૩૦

ભાવાર્થ—રથ ઉપરથકે ઉપાંગોંકે નિકાલેકે માનસે કોલિકા નિર્માણ હમેશાં કરના । ગોખ, ફરોલા મહલ સ્તંભોં કે સહિત સુશોભિત કરના । પદકે પાટ તક...
 ...દ્વારકે ઉપર દ્વાર દ્વારકી શાખા ઉપશાખા ઉપરાઉપર કરના । ઉપરકી મૂર્મિ કો ફિર કેવાલ જંઘા, ઉસકે પર ફિર જંઘા કર કેવાલ—પર છજા કરના । ૨૯-૩૦

માનતુજ્ઞો વિરાજિતઃ સદા જિનેંદ્ર ઉક્તા શ્રુમા ।
 ત્યાવ જગતી ભ્રમતી પરિધી લુબ્ધ માનતુજ્ઞા ર્જતા ॥૧૩॥
 જ્ઞાતિ વૈરાદિચ્છંદર્વિમાને મર્જય રેલા નિજઃ ।
 શ્રી મહાગતશ્ચ ક્રિયતે અક્ષય પદં લભ્યતે (?) ॥૧૪॥

ભાવાર્થ—માનતુંગ પ્રાસાદ જ્યાં છે ત્યાં સદા શુભ એવા જિનેંદ્ર પ્રભુ વિરાજે છે, તેની જગતી પરિધી—ભ્રમવાળી છે. માનતુંગ પ્રાસાદ વૈરાટી જ્ઞાતિ છંદ કે વિમાન જાતિમાં મંજરી રેખાવાળું શિખર કરવું. આવો પ્રાસાદ કરાવનારને અક્ષય પદના લાભની પ્રાપ્તિ થાય છે. ૩૧-૩૨

પાઠાન્તર ૧૧. ભ્રમતિ; ૧૨. પ્રાસાદ ક્ષેત્રત્રયવેદિ; ૧૩. મદલૈર્વમસ્યા, ૧૪. દ્વૈર શ્રદ્ધારે, ૧૫. કપોત ।

भावार्थ—मानतुंग प्रासाद जहाँ है वहाँ मदा शुभ ऐसे जिनेन्द्र प्रभु विराजते हैं। उसकी जगती परिधी-भ्रमजाली है। मानतुंग प्रासाद वैगटी ज्ञाति छद या विमान जातिमें मजरी रेखावाला शिखर करना। ऐसा प्रासाद करनेवाले को अक्षयपद के लाभकी प्राप्ति होती है। ३१-३२

शिखरोर्ध्वे पंचदंड स्तंभे रूपादि जिनेश्वरम्।

उपला २२ उरुशृंगोना आभलभाराभा २२ अने भूषा शिखरने भणी पाथ ५५-१६६ योभुषने करवा अने शिखरना पाधवु। उपर जिनेश्वरनी मूर्ति करवी ३३

उपरके चार उरुशृंगोंका आमलसारेमें चार और मूल शिखर संय मिलकर पाँच ध्वजादण्ड चौमुखको करना और शिखरके स्तंभके ऊपर जिनेश्वरकी मूर्ति करना। ३३

चतुरस्त्रीकृते क्षेत्रे अष्टादश विभाजिते।

कर्ण त्रिभाग विस्तारं पल्लवी पदमेव च ॥१५॥

निर्गमंतत्समंकायं प्रतिकर्णद्वयो भवेत्।

निष्क्रान्त समंवक्ष्ये कर्णि भागाश्च विस्तरं ॥१६॥

निवेशं च समं कुर्यात् भद्रार्थं भाग द्वयो भवेत्।

निर्गमं पद सार्द्धं च उभयो वामदक्षिणे ॥१७॥

३ कर्ण
१ पल्लवी
२ प्रतिरथ
१ नदी
२ लक्ष
६ भाग
६ भाग
१८

प्रासादना योग्य क्षेत्रना अठार भाग करवा करवा तेभा देखा त्रयु भागनी पल्लवी (नदी) एक भागनी समदल, अथवा जे प्रतिकर्ण गणने भागना ते पल्लु समदल कवा नदी-भूली एक भागनी समदल अर्धु लक्ष जे भागनु अने तेना नीकाणे होठ भागने राखवे अथ जे उत्तर अथी नमणी तरक्ष अथ आरे तरक्ष करवु १५-१६-१७

प्रासादके चोरस क्षेत्रके अठारह भाग करना। उनमें रेखा तीन भाग की पल्लवी (नदी) एक भागकी समदल, ऐसे दो प्रतिकर्ण दो दो भाग के, वे भी समदल करना। नदी कोनी एक भाग की शमअर्धा भद्र दो भागका और उसका निकाला डेढ भागका रखना। इस तरह दो उत्तर बायीं दायीं तरफ ऐसे चारों तरफ करना। १५-१६-१७

उर्णे नन्दनं सर्वेषां नवशृङ्गे रथोपरि।

नन्दि श्रीवत्समेकैकं रथिका भद्रभूषित ॥१८॥

रथे कग पुनः कायं नव पञ्च परि भ्रमं।

कर्णि तिलकं प्रदातव्यं कूटकारादिकं क्रमात् ॥१९॥

કેસરી કર્ણ સંસ્થાને રથે શ્રીવત્સદાયયેત્ ।

મજ્જરી મૂલ રેખા ચ ષટ્શ્રંગસતુલા (!) ॥૨૦॥

ઝરુ ઙ્ગ પ્રત્યાંઙ્ગે સરતરા સર્વકામદા ।

નાગેષવેદ યુક્તાશ્ચ શ્રુજ્જવત્

પૂરિતાંતરૈ ॥૨૧॥

તિલકં ષટ્ત્રિંશોક્તં માનંતુજ્જ

વિરાજિતે ।

તેષા લક્ષ માતંગૈશ્ચ રિષિરાજ

શ્રુણોત્તમમ્ ॥૨૨॥ ઇતિ માનંતુજ્જ

રેખા કથૌ તેર અંડકનું નંદન

કર્મ પહેલું ચડાવવું. પઢરે નવ

અંડકનું સર્વતોભદ્ર ચડાવવું. ભદ્રની

બેઉ ખૂણીઓ પર એકેક શ્રૃંગ ચડાવવું.

ફરી રેખા પર નવ શ્રૃંગનું સર્વતોભદ્ર

અને પ્રતિરથ પર પાંચ અંડકનું

કેસરી ચડાવવું. ખૂણીઓ પર તિલક

ફૂટ ચડાવવા. રેખા પર ત્રીજું કર્મ

કેસરી પાંચ અંડકનું અને પ્રતિરથ

પર શ્રીવત્સ-શ્રૃંગ ચડાવવું. મૂળ

રેખા પર મંજરી (તિલક ચડાવવું.)

.....(ભદ્રના ખૂણે એક તિલક

ચડાવવું) ઉરુશ્રૃંગ સોળ અને આઠ

પ્રત્યાંઙ્ગ ચડાવવાથી બસો ઓગણ

સીત્તેર ૨૬૬ શ્રૃંગ અને છત્રીશ

તિલક ચડે ત્યારે ઇતિ માનંતુજ્જ

નામનો પ્રાસાદ થયો ૪-૫ બાણવો.

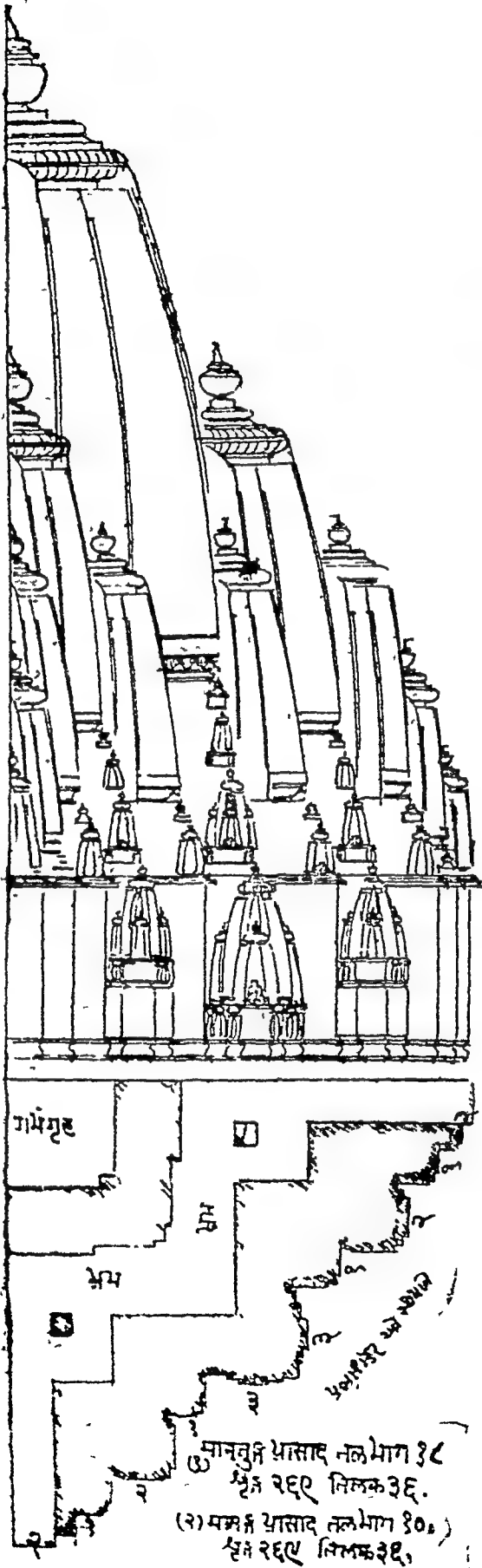
હવે માતંગ પ્રાસાદના લક્ષણ હે

ઋષિરાજ ! કહ્યું તે સાંભળો.

૧૮ થી ૨૨.

કર્ણ પર તેરહ શ્રુજ્જકા નંદન કર્મ

પ્રથમ ચઢાના । પ્રતિરથ પર ૯ સર્વતોભદ્ર



भद्रके कोणी पर एकेर शृङ्ग चडाना-फिर कर्ण पर नौ शृङ्गका सर्वतोभद्र, और



प्रतिरथ पर केसरी चडाना । कौने पर तिलक कूट रखना-कर्ण उपरे तीसरा कर्म केसरी पाँच शृङ्गका चडाना और प्रतिरथे एक शृङ्ग चडाना । मूल रेखा पर मञ्जरी-तिलक चडाना

भद्रके कौने पर तिलक रखना । उरुशृङ्ग सोलह और प्रत्याग आठ चडानेसे दोसौ उनसित्तर शृङ्ग और छत्तीस तिलक चडानेसे मानतुङ्ग नामक प्रासाद समजना । अब हे ऋषिराज ! मातङ्ग प्रासाद का लक्षण मैं कहता हूँ वो सुनो । १८ से २२ इति मानतुङ्ग

दशधात यदा क्षेत्रं चेड आणे निवेशितं ।
मानतुङ्गश्च यदाङ्गा शिखर सर्व कामदम् ॥२३॥
अन्यत्राङ्गे न कर्तव्यं प्रासादादि संयुतम् ।
चेड्राणे विशेषण शोक सन्ताप कारितः ॥२४॥
यादशं मूल प्रासाद तादश^१ जगती क्रम ।
रथेयुक्ते विभागं च समेशृङ्ग समाकुलम् ॥२५॥
इति मातङ्ग

लावार्थ-मात ग प्रासाद येधथाणुना क्षेत्रना दश लागकरवा तेभा अ ग कालना मानतु ग प्रासाद जेटला (अदारना दशलागे) करवा अने शिखर पणु अवा न प्रकारतु कर्मशृंगवाणु

करवाथी सर्व कामनाने आपनाइ लणुतु ते प्रासाद अ ग विलाग भील न करवा जे भील करे तो शोक सतापने आपे न्या सुधी भूण प्रासादना रथ आदि अ ग विलाग करवा अने शृंगो पणु अम तेटला न अडाववा (देभा जे लाग, जे नही अरधा अरधा लागनी, प्रतिरथ अने लद्र अकेक लागना भणी दश लाग करवा) इति मात ग २३-२४-२५

मातङ्ग प्रासादका क्षेत्रका दश भाग करना (२ भाग रेखा दो नदी आधा आधा भाग । प्रतिरथ और भद्रार्थ एकेक भाग) उनका फालना मानतुङ्ग जीतना

प्रमाणसे रखना । शिखर उसी प्रकारका कर्म श्रृंग युक्त करना यह सर्व कामना दायक समजना । प्रासादका अङ्गविभाग और शृङ्गादि अन्य प्रकारका करना नहि यदि करे तो शोक संतापकारक समजना । २३-२४-२५

इति मातङ्ग

तथा मंडोवरे रिषि विभागं शृणु सांप्रतम् ।

पीठं पूर्वं प्रमाणेन कुवेरं कुमुदोद्भवम् ॥२६॥

खुरकं हृयं भागानी कुंभकं पंच मेव च ।

कलशं त्रिभागमुत्सेधं रन्तरपत्रं पदार्धत ॥२७॥

कपोताली त्रिभागेन २० मञ्चिका स्त्रिणि वे रिषि ।

२१ चतुर्दशोच्छिता जंघा सार्धचत्वारि उद्गमम् ॥२८॥

भरणी गुण विचारेण द्विपदं उर्ध्वकपोतिका ।

छादनं पदमेकेन कपोताली च पूर्वतः ॥२९॥

अर्धयान्तर पत्रं च चत्वारि कूट छाद्यकं ।

कन्यसं च अतः प्रोक्तं मध्यमानं च कथ्यते ॥३०॥

हे ऋषिराज ! हुवे मंडोवरना विभाग सांलणो. पीठ आगण कहुआ

- २ स्वरो प्रमाणे कुवेर के कुमुदोद्भव प्रकारनुं करवुं. भरे भे लाग, कुलो
५ कुंभो पांच भागनो, कणशो त्रणु भागनो, अंतरपत्र अरधा भागनुं,
३ कलसा डेवाण त्रणु भागनो, माची त्रणु भागनी, जंघा चौद भागनी,
०॥ अंतरपत्र उद्गम दोढीयो साडा चार भागनो, लरणी त्रणु भागनी, (३८
३ केवाल भाग) ते पर उर्ध्व डेवाण भे भागनो, छादन अेक भागनुं, डेवाण
३ मञ्चिका त्रणु भागनो, अंतरपत्र अरधा भागनो, चार भागनुं छणुं. अे
१४ जंघा रीते ४८॥ भागना कनीष्ठ मानना मंडोवरना लाग कहुआ. हुवे
४॥ उद्गम मध्यमानना मंडोवरना विभाग कहुं छुं.

- ३ भरणी हे ऋषिराज ! अव मंडोवर का विभाग सुनाता हूँ । पीठ आगे
२ उर्ध्वकथो कहा ऐसा कुवेर-या कुमुदोद्भव प्रकारका करना । खुरो-दो भाग,
१ छादन कुंभक पाँच भाग, कलशा तीन भाग, अंतराल आधा भागका, केवाल
३ केवाल ४ छज्ज
०॥ अंतराल ४८॥ भाग

कनिष्ठमान और माची तीन तीन भागकी जंघा चौदा भागका, देढीया साडा चार भागका, भरणी तीन भागकी, (३८ भाग) उसकी पर अर्ध्व केवाल दो भागका, छादन एक भागका, केवाल तीन भागका, अंधारी आवे भागकी, और छज्जा चार भागका । ऐसे कनीष्ठ भागका मंडोवर ४८॥ भागका कहा, अव मध्य मानका मंडोवर कहता हूँ । २६ से ३०

भरणी मस्तके ग्राह्य चतुर्भागा शिरावटिः ।
छादनं कथ्यते पूर्वं कपोतालि च पूर्वतः^{२२} ॥३१॥
पुनः कपोताली त्रिभागेन अर्धं चान्तरपत्रय ।
कूट छाद्यं भवेत्पूर्वं मध्यमानंतु निश्चयं ॥३२॥

उपर कहेला कनिष्ठमानना भडोवरभा त्रष्टु लागनी लरणी (सुधीना ३८

३ लरणी	लाग) उपर चार लागनी शिरावटी अने आगण
३८ लाग आगण	कहेला ते प्रभाष्टु छादन अेक लाग, डेवाण त्रष्टु लाग
४ शिरावटी	इरी डेवाण त्रष्टु लागनो, अ धारी अर्ध लागनी,
१ छान	छत्रु चार लागनु करवु अे रीते पडा लागनो
३ डेवाण	मध्यमाननो भडोवर नालुवो ३१-३२
३ डेवाण	आगे कहा हुआ कनिष्ठमान का मंडोवर मे
०॥ अ धारी	तीन भागकी भरणी (थर्यतका ३८ भाग) उपर
४ छत्रु	चार भागकी शिरावटी, एक भागका छादन, तीन
लाग पडा	भागका केनाल फीर तीन भागका केनाल, आधे
मध्यमान	भागकी अधारी, चार भागका छज्जा करना । ऐसे
	५३॥ भागका मध्यमानका मंडोवर समजना ।
४६	
६ न धा	
४॥ दोहीयो	
३ लरणी	
३ डेवाण	
०॥ अ धारी	
४ छत्रु	
लाग ७०	
ज्येष्ठमान	

कपोताली वभूमध्ये जंघा भाग नव स्तथा ।

^{२३}उपर छाद्य प्रधानं च ज्येष्ठ मानं च सिद्धि^{२४} ॥३३॥

उपर कहेला मध्यमानना पडा लागभा जे डेवाण वर्ये ४६ लाग भरे
न धा नव लागनी करवी ते उपारना थरे। आगण कहेला दोहीयो ४॥ लाग,
लरणी त्रष्टु लाग, डेवाण त्रष्टु लागनो, अ धारी अर्ध लाग अने चार
लागनु छत्रु भणी कुल ७० लागनो ज्येष्ठ माननो भडोवर सिद्धिने आपतार
नालुवो (जे भूमि अेक छाद्य) ३३

आगे मध्यमानका ५३॥ भागमे दो केनालकी विचमे ४६ भाग, उपर
जघा नव भागकी ते उपरके थरों आगे कहा चद्रम ४॥ भाग, भरणी तीन भाग,
केनाल तीन भाग, अधारी आधा भाग उपर मुख्य छाद्य चार भागका मीलके
७० भागका ज्येष्ठमानका मंडोवर (दो भूमि एक छाद्यका) सिद्धि दायक जानना । ३३

५३॥ भागका मध्यमानका मड़ोवर

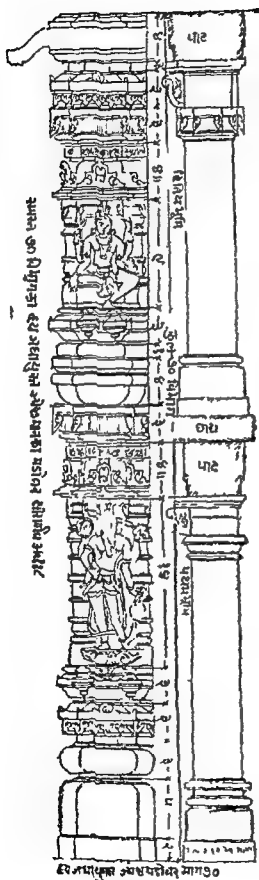


(ભાવાર્થ) શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે....જિનાયતનની જગતીનો કોઠો લાંબો પહોળો કરવો. તે કોઠાના વેદિ રૂઝ ભાગ અને ઉંડાઈ ત્રીશ ભાગ તે કોઠામાં મૂળ પ્રાસાદ ચૈદિઆણુ (૧) ઓગણીશ ભાગ અને પચ્ચીશ ભાગ લાંબો ઉંડાઈમાં વિધિથી કરવો. ત્રણ કોઠાના અંતરે આઠ એવા ત્રણ ભદ્રે....સોળ.... મધ્યગર્ભથી બેઉ પડખે બત્રીશ....ભદ્રના પડખે પાણુ....ત્રણ ત્રણ પડખાના અંતરે પ્રવિષ્ઠ કરવા. આઠ....બેંડા પ્રવિષ્ઠ....ભદ્રે ભદ્રે જિનાલય કરવાં જિનાલયમાં બાવન જિનાલય સર્વમાં શ્રેષ્ઠ છે.

૩૪-૩૫-૩૬-૩૭-૩૮

पाठान्तर २५ आयामंत्र विस्तृतम्, २६ आयमं च त्रिंशति, २७ क्रियमान, २८ कक्षांन्तरे
२९ सिद्धा बभूवक्षे ३० () इरेक्ष छे ते आ ये पद्मे डेट्कीड प्रतोभां नथी.

उत्प्रेष्ठ मानका महामंडावर एक छज्जा उदय भूमि-उदयज्जग युक्त मंडोवर समस्त भाग ७०



(भारार्थ) विश्वकर्मा कहते हैं
जिनायत की जगतीका कोष्ठ लम्बा चौड़ा
करना । उस कोष्ठके वेद २३ भाग और
गहराई तीस भाग । उस कोठे में मूल
प्रासाद=चेइयाण उन्नीस भाग और पच्चीस
भाग लम्बा गहराईमें विधि से रखना ।
तीन कोठे के अतरे आठ ऐसे तीन भद्रे
सोलह मन्व्यगर्भ से दोनु ओर
पच्चीस भद्रेके वगलमें भी तीन तीन
बाजुके अतरमें प्रविष्ट करना । आठ
गहरा प्रविष्ट भद्रे भद्रे जीनालय
करना । जिनायतमें बाघन जिनायतन
सर्वमें श्रेष्ठ हैं । ३४-३५-३६-३७-३८

दिग्पाल ताडवनाद्यं लास्यं
लोके वैतालश्च ॥३९॥

११ प्रकृते पु पुनर्निमित्तु (?)
नृत्य कूर्याच्चतुर्मुखे १२ ।

स्तर स्थाने विशेषण शाखे
स्तम्भे निरंतरे १४ ॥४०॥

यावज्जीवानि सर्वाणि नृत्यकुर्वति
मे सदा ।

प्रासाद मानतुङ्गश्च १५ द्विपंचाश
जिनालय ॥४१॥

छद् नागर मादाय
सर्वछदानिमाश्रितम् ।

१६ येनपीठ चिरंचितम्
मंडोवर विशेषतः ॥४२॥

चातुर्मुखे च दातव्या पुनर्दद्या चतुर्मुखे ।
इति मातंग (मानतुङ्गप्रासाद)

भावाथ—यातुर्मुख जिनायतनने इरता तांडव लास्यादि नृत्य करता दिग्पाल लोकपाल वैतालादिनां स्वरूप करवा. अने विशेषे करीने थरना स्थाने, शाखाओंमां अने स्तंभना विस्तारमां हुंभेशां स्वरूपो करवां. ज्यां सुधी ज्ञेयानुं अस्तित्व छे त्यां सुधी ज्ञेये ते सर्व हुंभेशां नृत्य करता रहे. तेवो मानतुंग प्रासाद (३५) बावन....जिनालयवाणे करवो. प्रासादना सर्व छंदमां नागरछंदना आश्रये अटवे प्राधान्य रुपे ज्ञेयवो. तेना पीठ पर मंडोवर करवो. चतुर्मुखना उपर इरी योमुख ओम करवा. ४०-४१-४२. इति मातंग (मानतुङ्ग) प्रासाद

भावार्थ—जिनालय के चारों ओर तांडव लास्यादि नृत्य करते दिग्पाल लोकपाल, वैतालादि के स्वरूप करना और विशेषकर थरके स्थानपर, शाखाओंमें और स्तंभके विस्तारमें हमेशां रूपों करना । जहाँतक जीवोंका अस्तित्व है वहाँ तक वे सब जाने हमेशां नृत्य करते रहते हो ऐसा मानतुंग प्रासाद (३५) बावन...जिनालयवाला करना । प्रासादके सर्व छंदमें नागरछंदके आश्रयपर अर्थात् प्राधान्य रूपसे जानना । उसके पीठपर मंडोवर करना । चतुर्मुख के ऊपर फिर चोमुख ऐसे करना । ४०-४१-४२. इति मातङ्ग (मानतुङ्ग) प्रासाद ।

जगती प्रदीया क्षेत्रे महावेदे २० प्रदीया ३५ जिन ॥ ४३ ॥

प्रदीया जिन संस्थाने जिणमाला ३६ मूर्ध्वनाय ।

वामदक्षे तथा पृष्ठाग्र मंडपा रंजमण्डपे ॥ ४४ ॥

पंचविंशति विस्तार अष्टाविंश मुखायतम् ।

४० भागैक लोपयेत्कर्ण चतुराशिति जिनालयम् ॥ ४५ ॥

विंश विंशाग्र ४१ पृष्ठे (चतु) चत्वारिं मुखायते ।

४२ जिणमाला स्तदानाम सर्वकल्याण कारिणी ॥ ४६ ॥

१ चतुर्मुख
७६ देवकलोका
८ महवर

८४

८ मंडप

४ वलाणक

स्तंभ संख्या

४२०

३३६ देरी ८४में

१२ मूलगर्मगृह

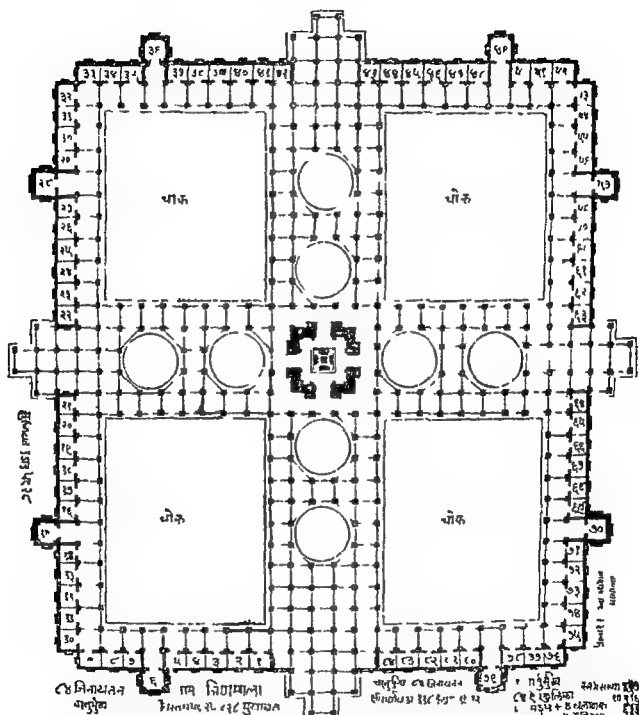
गर्मगृह

स्तंभ ७६८ प्रथम भूमि

भावाथ—जगतीना क्षेत्रना....संस्थानमां ज्ञेयमादानी वृद्धि करवी. डाणी जभाणी तरक्ष अने आगण तथा पाछण रंगमंडपो (इरता योमुखने) करवा. क्षेत्रना पञ्चीश भाग पछोणाध अने अट्ठावीश भाग (मुभायत=जिंडा) दंभाधमां करी थार ज्ञेये अट्ठेक भाग लोपवो. ये रीते चोराशी ज्ञेयालय वीश वीश आगण पाछण अने पडणे भावीश भावीश अटवे युमादीश मुभायतमां ज्ञेयायत करवां. ज्ञेयुं चोराशी ज्ञेयायतन सर्वानुं कल्याण करनाइं ज्ञेयुं “जिणमाला” नाम ज्ञेयुं. ४३-४४-४५-४६.

३७ महाविद्ये, ३८ प्रतिमादिच, ३९ विवर्द्धनीय, ४० भागै लोपये, ४१ विंशविंशकृतेक्षेत्रे पृष्ठे चत्वारिंश मुखायतो, ४२ जिपाद्रष्टि विचार कृतै पृष्ठे ।

जीणमाला तलदर्शन



२८x२५=खण्ड=विभागका ८४ जिनायतनके चतुर्मुख "जिणमाला"

१ चतुर्मुख भ. ३५-८
 ७६ द्वेवकुविका पत्ताखुड-४
 ८ भडाधर नादीभ ३५-४

८४
 भूतल स. ४२०
 डेरी ८४ना ३३६
 भूतल गल. १२
 ७६८

जगतीके क्षेत्रके सस्थान के जिनमालाकी वृद्धि करना बाजी दायी तरफ ओर आगे तथा पीछे रंग-मण्डपों (फिरते चोमुख के) करना। क्षेत्रके पन्चीश भाग चौड़ाई और अट्ठाईश भाग (मुखायत गहरे) लम्बाई में कर चारों कोनोंमें एक एक भाग लोपना। इस तरह चोराशी जिनालय बीस बीस आगे पीछे और बाजुमें बाईस

बाईस अर्थात् चुमालीश मुखायतमें जिनायत करना । ऐसा चौर्याशी जिनायतन सर्वका कल्याणकर ऐसा “जिणमाला” नाम जानना । ४३-४४-४५-४६.

द्वारस्य विस्तरंगृह्य अष्टमांशानि मध्यतः ।
ज्येष्ठमध्या कनिष्ठं वा अर्चमानं चतुर्मुखे ॥४७॥
द्वारस्य विस्तरं ग्राह्यं द्विधा भक्तं च कारयेत् ।
वीतरागो स्तथा कृष्ण अर्चमानं च सर्वतः ॥४८॥
हीने हानि प्रकुर्वित अधिके स्वजनक्षयम् ।
रेखामानं भवेदर्चा सर्वकामर्थकारिणी ॥४९॥

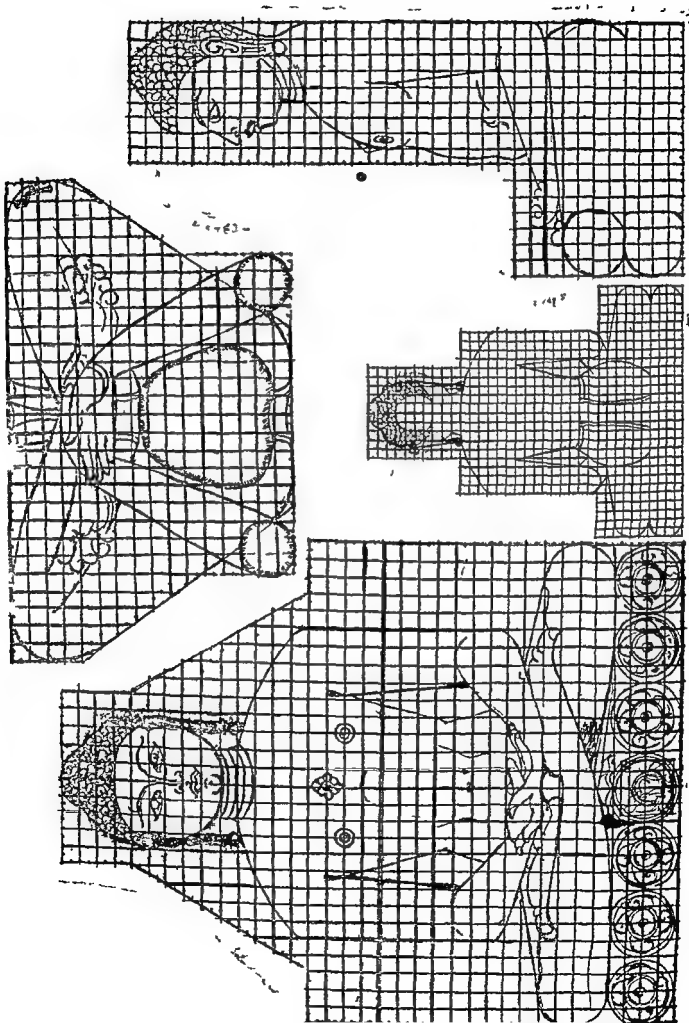
गर्भगृहना द्वारना विस्तार जेटली प्रतिमा करवी. ते मध्यमान-तेनो आठमो लाग हीन करवाथी कनीष्ठमान अने आठमो लाग अधिक करवाथी जेष्ठमान ते चातुर्मुख प्रतिमानुं मान जाणवुं. द्वार विस्तारना जे लाग करी ओक लागनी जिन प्रतिमा अने कृष्ण तथा लक्ष्मीनी पूजनीक मूर्तिनुं मान जाणवुं. कहेला मानथी हीन करवाथी हानि थाय अने वधु मोटी करवाथी पोताना स्वजननो नाश थाय. कहेला आभ रेणा मानथी प्रतिमा कराववाथी काम अर्थनो लाभ थाय छे. ४७-४८-४९.

गर्भगृहके द्वारके विस्तारके बराबर प्रतिमा करना । उस मध्यमानका; आठवाँ भाग हीन करनेसे कनिष्ठमान और आठवाँ भाग अधिक करने से ज्येष्ठमान ...चातुर्मुख प्रतिमाका मान जानना । द्वार विस्तार के दो भाग कर एक भागकी जिन प्रतिमा और कृष्ण तथा लक्ष्मीकी पूजनीक मूर्तिका मान जानना । कहे हुए मानसे हीन करनेसे हानि होती है, और ज्यादा बड़ी करनेसे अपने स्वजन का नाश होता है । कहे हुए ऐसे रेखामान से प्रतिमा करने से काम अर्थका लाभ होता है । ४७-४८-४९.

द्वारोच्छ्रयष्टधा भक्ते भागमेकं परित्यजेत् ।
सप्तमाष्टमे सप्तम देवद्रष्टि नियोजयेत् ॥५०॥
उर्ध्वं द्रष्टि द्रव्यनाशाय अधस्ते भोगहानि च ।
रेखा द्रष्टि यदाप्राज्ञ दानपुण्य विवर्धनम् ॥५१॥
अर्चाद्रष्टि स्तर स्तंभं पीठ मंडोवरं स्तथा ।

* वालाग्र लोपयेद्यत्र निष्कलं तत्पूजायते ॥५२॥

જિન પ્રતિમા અગ વિભાગ

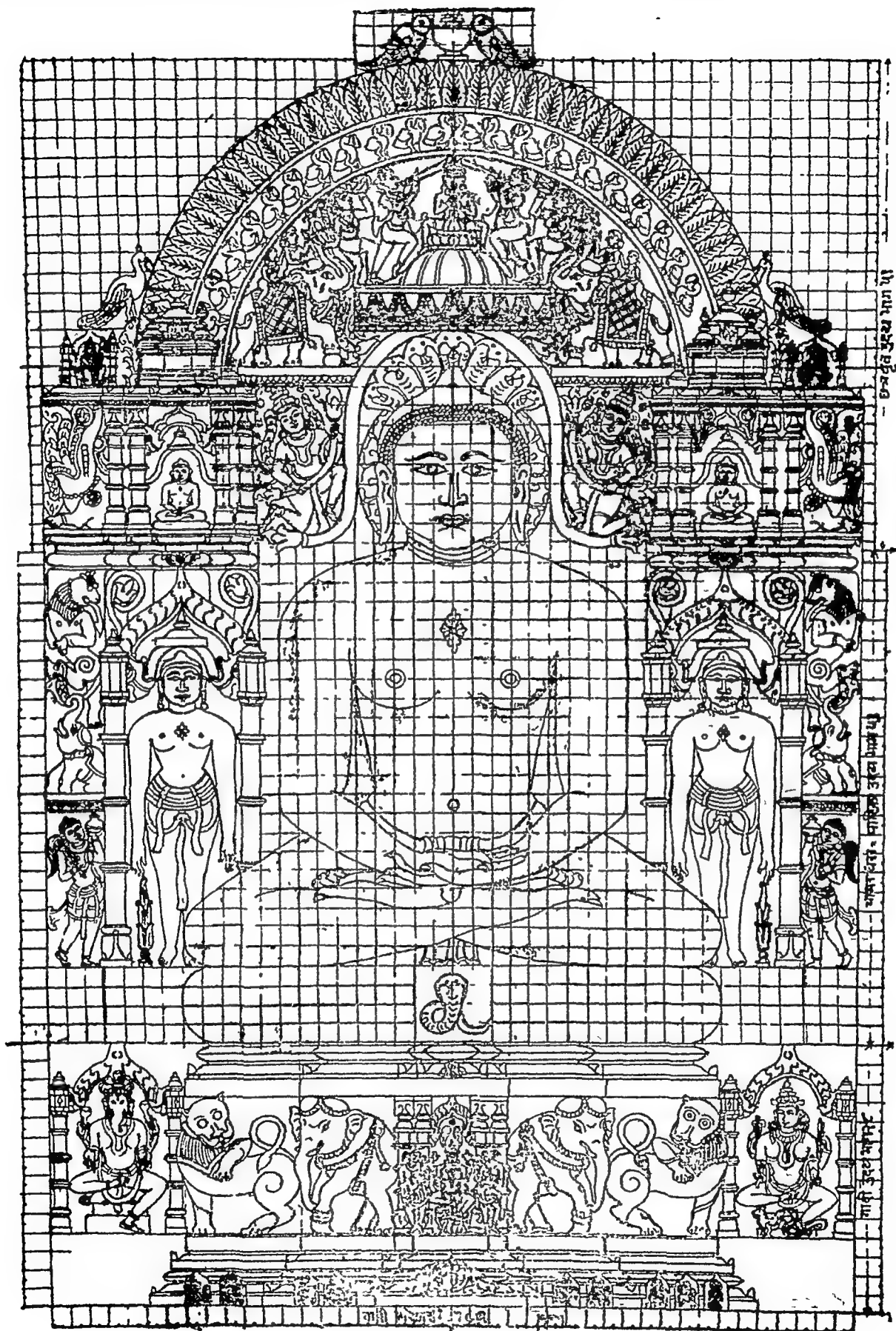


જૈન પ્રતિમા પદ વિભાગ

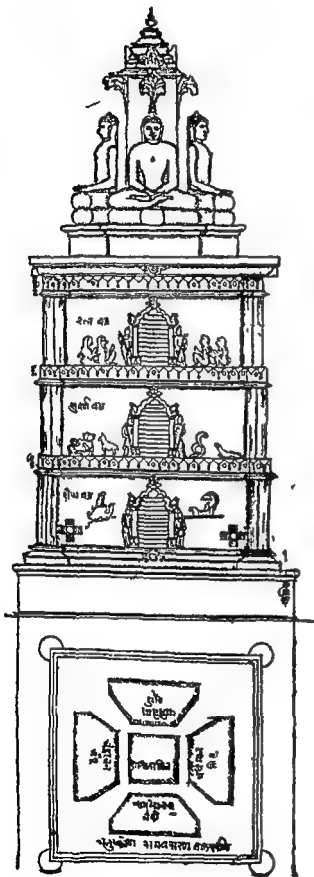
જૈન પ્રતિમા શુભ વિભાગ

જૈન પ્રતિમા સન્મુખ વિભાગ

જૈન તાલ વિભાગ



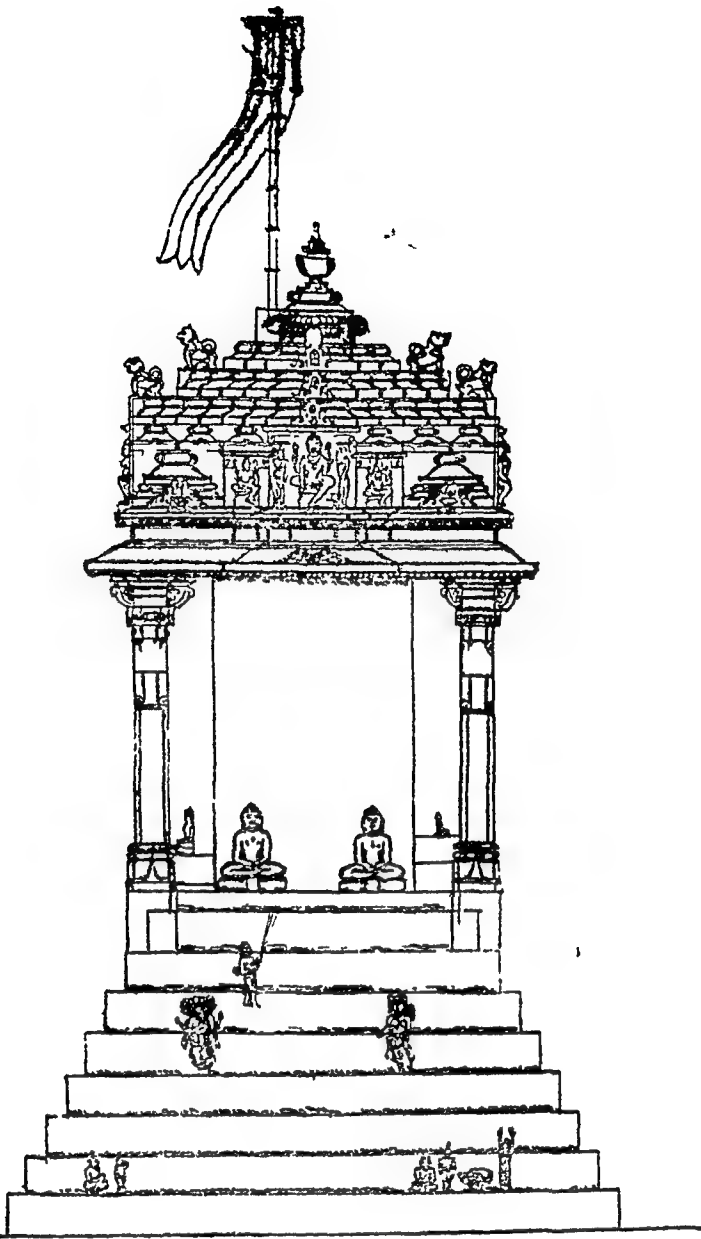
जैन प्रतिमा और परिकर विभाग



जैन समवसरण

गर्भगृहना द्वारनी छि याधना आठ
भाग करी तेना उपलो भाग तल
नीचेना सातभा लागना आठ भाग
ठप्पा तेना सातभा लागे देवदष्टि
राखवी इहेला मानथी जे दष्टि
छिथी राखे तो धनने नाश थाय
अगर जे नीची राखे तो समृद्धिने
नाश थाय भाटे डाह्या पुत्रुपोखे
रेखा प्रभाषे न्या रेखा आवी
छोथ त्याज दष्टि राखवाथी दान
पुण्यनी वृद्धि थाय छे प्रतिभा
दष्टि थर, स्तभ, पीठ अने मडोवर
तेना मानथी जे अेक वाल जेटलो
पछु छिया नीचे लोपथाय तो ते कार्य
कणने आपनाइ न जाणवु पूण
निष्कण जय ५०-५१-५२

गर्भगृहके द्वारकी ऊँचाईके आठ
भाग कर उसका उपर का भाग
आठवाँ तज कर सातवें भागका
आठ भाग करना । उसके सातवें
भागमे देवदष्टि रखना । कहे हुए
मानसे जो दष्टि ऊँची रखे तो धनका
नाश होता है अगर जो नीची रखे
तो समृद्धिका नाश होता है । इस
लिये सुद्ध पुरुषोंको चाहिये कि
रेखाके धरावर जहाँ रेखा आवी हो
वहाँ ही दष्टि रखना, इससे दान
पुण्य की वृद्धि होती है । प्रतिभा
दष्टि थर, स्तभ, पीठ और मडोवर
उसके मानसे जो एक वाल जितना
भी ऊँचा नीचा लोप हो तो
उसे फल प्रदकार्य न जानना ।



अष्टापद

इति श्री विश्वकर्मा
कृतायां क्षीरार्णवे नारद
पृच्छायां सांधार चतुर्मुख
प्रासाद मंडोवरादि लक्षणं
नाम शताग्रे अष्टादश
मोऽध्याय ॥ ११८ ॥ क्रमांक
अ० २०

इति श्री विश्वकर्मा विरचित
क्षीरार्णव श्री नारदजीके पूछेला
सांधार चतुर्मुख प्रासाद अने
मंडोवरादि लक्षणना शिल्प विशा-
रद श्री प्रभाशंकर ओघडभाईके
रच्येले सुप्रभा नामनी भाषा
टीकाके अेकसे अठारवो
अध्याय. ११८. क्रमांक अ० २०

इति श्री विश्वकर्मा विरचित
क्षीरार्णव श्री नारदजीके पूछे हुए
सांधार चतुर्मुख प्रासाद और
मंडोवरादि लक्षणके शिल्प विशारद
श्री प्रभाशंकर ओघडभाईकी रची
हुई सुप्रभा नामनी भाषा टीकाका
एक सौ अठारहवाँ अध्याय ॥ ११८ ॥
क्रमांक अ० ॥ २० ॥

संवरणा के कोष्टक. अ-११६ के श्लोक ७४ से ७८ का स्पष्टीकरण

क्रम	संवरणानु नाम	विभक्ति भाग	घंटिका संख्या	फूट संख्या	सिंह संख्या	क्रम	संवरणानु नाम	विभक्ति भाग	घंटिका संख्या	फूट संख्या	सिंह संख्या
१	पुष्टिका	८	५	१६	८	१४	देव गांधारी	६०	५७	—	६०
२	नंदिनी	१२	९	४८	१२	१५	रत्नगर्भा	६४	६१	—	६४
३	दशाक्षा	१६	१३	—	१६	१६	चूडामणि	६८	६५	—	६८
४	देवसुंदरी	२०	१७	—	२०	१७	हेम रत्ना	७२	६९	—	७२
५	कुल तिलक	२४	२१	—	२४	१८	चित्र कूट	७६	७३	—	७६
६	रम्या	२८	२५	—	२८	१९	हिमा	८०	७७	—	८०
७	उद्भिन्ना	३२	२९	—	३२	२०	गंध माधनी	८४	८१	—	८४
८	नारायणी	३६	३३	—	३६	२१	मंदरा	८८	८५	—	८८
९	नलिका	४०	३७	—	४०	२२	मेदिनी	९२	८९	—	९२
१०	चंपका	४४	४१	—	४४	२३	कैलासा	९६	९३	—	९६
११	पद्मा	४८	४५	—	४८	२४	रत्न संभवा	१००	९७	—	१००
१२	समुद्भवा	५२	४९	—	५२	२५	मेरु कूट	१०४	१०१	—	१०४
१३	त्रिदशा	५६	५३	—	५६						

॥ अथ केशरादि वैराग्यकूलप्रासाद ॥

क्षीरार्णव (अ० ११९) क्रमांक २१

श्री नारदोवाच-

प्रणपत्यमिदं वक्ष्ये यावन्मे धारणामतः ।

कथियामि न संदेहो शिखरं सर्वकामदम् ॥ १ ॥

कस्मिन्नाकारे समुत्पन्ना प्रासाद शिखरोत्तमं ।

किं दलं किं विभक्तेन किंमा शृंगे विभागतः ॥ २ ॥

श्री नारदजी कहे છે હું પ્રણામ કરીને કહું છું કે મને પ્રામાદના શિખરે કે જે સર્વ-કામનાને પૂર્ણા છે તેના વિષે મદેહ વગર કહે। તે કેવા આકારના ઉત્પન્ન થયા, તેના દલ અને શૃંગના વિભાગ આદિ મને કહે। ૧-૨

શ્રી નારદજી કહતે હું—મેં પ્રણામ કર કહતા હું કે મુझे प्रासाद के शिखरों के बारेमें कि जो सब कामनाओं को पूरने वाले हैं, उनके बारेमें निःसन्देह कहो। वे कैसे आकार के उत्पन्न हुए, उनके दल विभाग और शृंग के विभाग आदि मुझे कहो। १-२

किं मे अष्ट विभक्तं च तेषां स्कंध कितां भवेत् ।

दशधा स्कंध रेपा च स्कंधमान किता भवेत् ॥ ३ ॥

मम बालंजरं श्रुत्वा सस्तरकं हेतवे ।

किं विभागे समोत्पन्ना कथय ममसाग्रतं ॥ ४ ॥

આઠ વિભાગ કેમ કરવા ગિખરનું સ્કંધ આઠણુ કેટલા ભાગે કેવું કરવું, શિખરના આઠણાની રેખા સ્કંધનું માન કેવું ગણવું, વાલંજરના ભાગ તથા પાણીતાર કેમ કરવા વિભાગોની ઉત્પત્તિ કેવી રીતે થઈ? તે મને હવે કહે। ૩-૪

આઠ વિભાગ कैसे करना, शिखर का स्कंध कितने भागपर कैसे करना, शिखरके स्कंध की रेखा-स्कंधका मान कैसे रखना, बालंजरके भाग तथा पानीतार कैसे करना विभागोंकी उत्पत्ति कैसे हुई?—यह मुझे अब बताओ। ३=४

विश्वकमां उवाच-

यच्चया पृच्छते चैत्र शृणुत्वैकाग्रतो मुने ।

शिखरं विविधाकारा अनेकाकारमुद्रितः ॥ ५ ॥

उक्तं च प्रक्ष्यामि श्रेष्ठानां वैराग्यकुलं सभवेत् ।

केसरादि विधिस्तेषां तथा क्षीरार्णवे स्मृते ॥ ६ ॥

द्विमानं मयुरे प्रोक्ता ! कस्यमेनफलैश्च ।

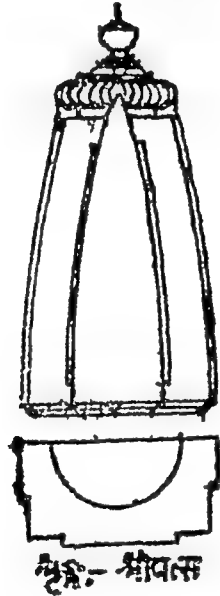
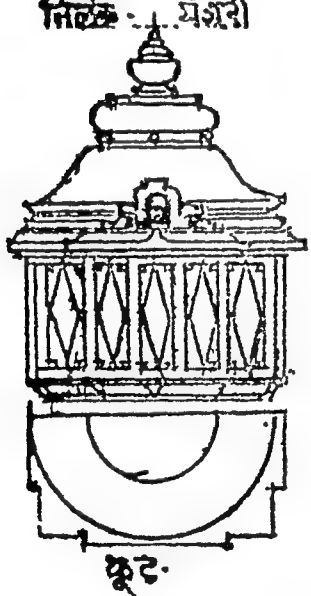
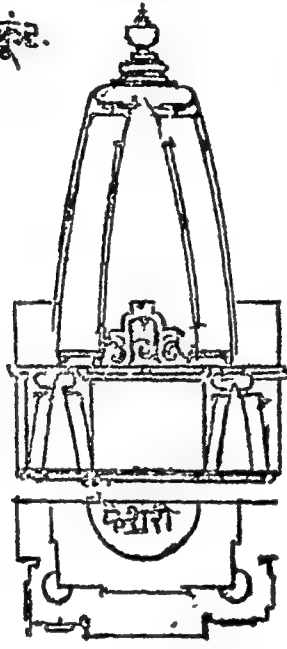
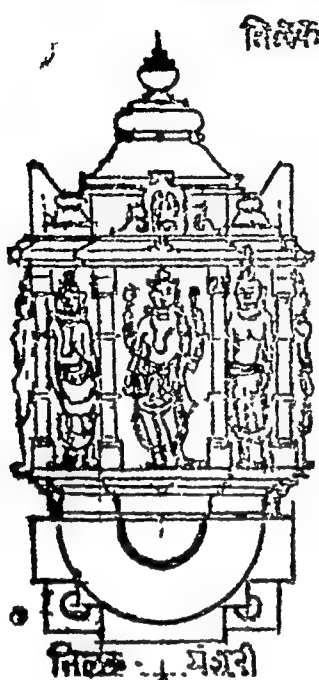
शिखरो पुष्करे विद्यात् विमाना रुह देवता ॥ ७ ॥

શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે. તમે પૂછો છો હે મુનિ, હવે એકાગ્ર મનથી સાંભળો. શિખરોના અનેક વિધ આકારોના અને અનેક આકારના કહ્યા છે, તે

શિખરમાં આવતા કમેની સમજ.

કમ-અનુભવે શ્રી શ્રીવત્સાનિ આણક

તિલકલાકુંટ.



તિલક મંજરી કૂટ-શ્રીવત્સ કેસરી

હું તમેને શ્રેષ્ઠ એવા વૈરાગ્ય-કુળના કેશરાદિ પ્રાસાદનો વિધી તે ક્ષીરાર્ણવમાં (તથા વૃક્ષાર્ણવમાં પણ) કહું છું. ૫-૬-૭

શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે—
તુમ પૂછતે હો તો હે મુનિ, અવ
एकाग्रता से सुनो। शिखरों के
अनेकविध आकारों और अनेक
आकारके शिखर कहे हैं। वह
मैं तुम्हें श्रेष्ठ वैराग्यकुल के
केशरादि प्रासाद का विधि मैं
क्षीरार्णव में भी कहता हूँ।
५-६-७.

वज्र पद्मराग वैडूर्य
रत्नकोट विमानकः।
भूधरो च महानीलं
ईन्द्रनीलो पृथ्वीजयः॥८॥
कैलास हेमकूट
श्रामृतोद्भव मंदिरं तथा।
नंदशाली नंदनं च हयेतै
विभक्ति दशतलम्॥९॥

વૈરાગ્યકુળના ૨૫ પ્રાસાદોના ૧૧ થી ૨૫ શિખરો દશાષ્ટતિળનાં નામ કહે

(૧) મૂળ જૂની પ્રતોમાં ઉપરોક્ત આપેલા શ્લોક ૮ થી ૧૧ ના પાઠોનાં નામ અને તળ વિલકિત અને શ્રુગતી સંખ્યાનો ક્યાંય મેળ ખાતો નથી. તેથી ઉપર આપેલ ક્રમ પ્રમાણે મળે છે. પરંતુ અઢાર્થ અને દશાર્થ તળના ૭ નામો અને વિલકિતનાં એવડાય છે. કોઈની શુદ્ધ પ્રતની પ્રાપ્તિથી આ અધ્યાય સ્પષ્ટ થઈ શકે. અમને મળેલી ગુજરાત સૌરાષ્ટ્રની દશ આર પ્રતોમાં આવાજ પ્રકારની અશુદ્ધિ છે. અપરાજિત સૂત્ર ૧૫૪ થી ૫૭ ના

छे २५ वज्र २४ पद्मराग, २३ वैद्युर्य, २२ रत्नकट, २१ विमान, २० भूधर १६ भडानील, १८ धद्रनील, १७ पृथ्वी-य १६ डैवान, १५ छेमकट, १४ अभूतोद्भव, १३ मदिरे, १२ नदशाणी अने ११ नदन अये पद्वे प्रामादोना शीषगानी दशावतणनी विभक्ति जालुची ८-६

वैराज्यकुलके २५ प्रासादोके ११ से २१ गिरगो दशाई तलके नाम कहते हैं। २५ वज्र, २४ पद्मराग, २३ वैद्युर्य, २२ रत्नकट, २१ विमान, २० भूधर आर अध्यायो वैराज्यादि प्रामादोना छे तेना साथे अडी आपेना नाम के विभागने पण भेण आते नथी कोर्ध अथनो आधार हरे

भूण नूनी प्रतोभा आ प्रभाणे कभ वगरना नामो आपेना छे ते भूण पाठ आ नीचे आपीअे छीअे

२५ वज्र २३ वैद्युर्य मुस्त वादद्रमणि भूतिलक ।

२४ पुष्पराग च गोमेज प्रवालं शृङ्ग भूषण ॥ ८ ॥

तथा शृङ्गतलं विद्यादष्ट भाग च लक्षणम् ।

केसरी सर्वतोभद्र नंदनस्य विशेषतः ॥ ९ ॥

मदिरो हेमकूटश्च कैलासोभूतोद्भव ।

श्रीवृक्षो विजय शैव अष्टधा च निश्चलम् ॥ १० ॥

नंदशाल हेमवाश्च नदिन्यो इद्रनीलकम् ।

श्रीवत्साद्यो मनेकाश्च दशधा तलं दीयते ॥ ११ ॥

भूण प्रतोभा आ आपेत पाठो अन्तर्गत छे तेथी सुधारीने उप ८ थी ११ श्लोक कभभद्र आपवाभा आव्या छे तेज प्रभाणे आगण आपेनी विभक्ति तण अने अग सभ्या अने नामनो कभ गरागर भणी रहे छे उपर ॥ आर श्लोक सुधारीने भूधरानी धृष्टता करवा पदन विद्वानो दाभा आपगे अगर

(१) मूल पुरानी प्रतोमे उपरोक्त दिने हुए लोक ८ से ११ के पाठने नाम और तल तल विभक्ति और शृङ्गरी सख्याका कहीं भी पता नहीं लगता है। इसमें उपर दिने हुए क्रमके अनुसार मिले, लेकिन अष्टाई और दशाई तलके छ नामा दोनो विभक्तिमें दुने होते हैं। किसी प्राचीन शुद्ध प्रनरी प्राप्तिसे यह जघ्याय स्पष्ट हो राखे। हम मिली हुई गुजरात सौराष्ट्रकी दस बारह प्रतोंमें जैसे ही प्रसारकी अशुद्धि है। जपरजिन सूत्र १५ध में ५७ के चार अध्यायों वैराज्यादि प्रामादोके हैं। उनके साथ यहाँ दिने हुए नामो या विभागना मी मेल नहीं मिलता है। किम ग्रथका आधार होगा ?

मूल पुरानी प्रतोमे क्रमके निना अस्तव्यस्त क्रममे नामो दिने है। यह मूलपाठ (श्लोक ८ से ११) उपर लिया गया है।

१९ महानील, १८ इन्द्रनील, १७ पृथ्वीजय, १६ कैलास, १५ हेमकूट, १४ अमृतोद्भव, १३ मन्दिर, १२ नन्दशाली और ११ नन्दन इन पन्द्रह प्रासादों के शिखरों की दशाईतल की विभक्ति जानना । ८-९.

रत्नकूट भूधराख्य महानीलं हेमकूटक ।

हेमवर्णाऽमृतोद्भवो श्रीवत्सं मन्दिरं स्तथो ॥१०॥

सर्वतो भद्र केशरीं च ह्यते चाष्ट विभक्तितलम् ।

तथा शृङ्गतल विद्यात् दशाष्ट भागं च लक्षणम् ॥ ११ ॥

ते पछी १० रत्नकूट, ८ भूधर, ८ महानील, ७ हेमकूट, ६ हेमवर्ण, ५ अमृतोद्भव, ४ श्रीवत्स, ३ मन्दिर, (नन्दन) २ सर्वतोभद्र अने १ केशरी येम दश प्रासादोना शिखरनी अट्ठाई तल विलक्षित ज्ञाणुवी. ये रीते कुल पच्चीस प्रासादो अट्ठाई अने दशाई तल अने शृङ्गनां लक्षणो डवे डडे छे. १०-११.

उसके बाद १० रत्नकूट, ९ भूधर, ८ महानील, ७ हेमकूट, ६ हेमवर्ण, ५ अमृतोद्भव, ४ श्रीवत्स, ३ मन्दिर, २ सर्वतोभद्र और १ केशरी । इस तरह दस प्रासादों के शिखर की अट्ठाई तल विभक्ति जानना । इस तरह कुल पच्चीस प्रासादो अट्ठाई और दशाई तल और शृंगके लक्षणों अब कहते हैं । १०-११.

संक्षेप्तं कथितं चैव तथा विस्तरशृणु ।

क्षेत्रार्धं च भवेद्भद्रे भद्रार्द्धं कर्णं विस्तरम्

॥ १२ ॥

कर्णाद्वेन प्रयत्नेन कर्तव्यं भद्र निर्गमम् ।

श्रीवत्स कर्ण संस्थाने भद्रे च

उद्गमोत्तमम् ॥ १३ ॥

पंचशृङ्गं प्रदातव्यं केशरी शिखरान्वितं ।

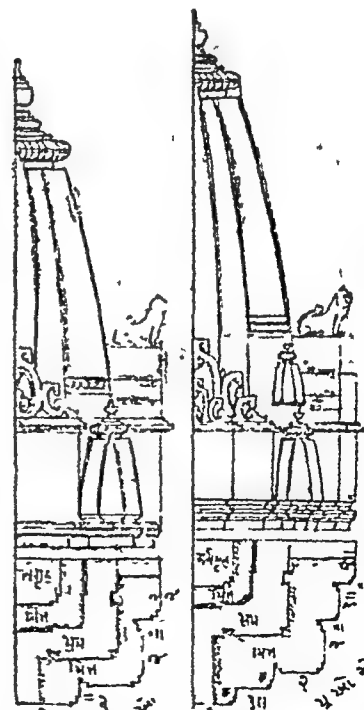
भद्रे शृङ्गं प्रदातव्यं सर्वतोभद्र नामतः

॥ १४ ॥

प्रासादोनां नाम अने विलक्षित संक्षिप्तमां कल्यां. डवे विस्तारथी सांलणो. प्रासादना क्षेत्रना (आठ) विलाग करवा. तेमां क्षेत्रना अर्धमां आणुं लद्र पडोणुं करवुं अने

लद्रतुं अर्धं कर्णुं रेणा पडोणी करवी. ओटले ये लागनी रेणां अने अंरधुं लद्र ये लागतुं कुल आठ लाग रेणातुं अर्धं ओटले ओक लागनो लद्रनो निडावो राणवो. कर्णु-रेणा पर श्रीवत्स शृंग यडावी लद्रे होदीये करवो तेवो

साधार केशरी प्रासाद १ तलभाग ८ शृङ्ग ५



साधार केशरी प्रासाद
तलभाग ८ शृङ्ग ५
विभागे ३ प्रासाद ३

साधार सर्वतोभद्र प्रासाद
तलभाग ३० शृङ्ग ९
विभागे २ प्रासाद २

साधार सर्वतो भद्र प्रासाद २ तलभाग ८ शृङ्ग ९

પાત્ર શ્રૃંગનો ૧ કેસરી નામનો પ્રાસાદ બાણવો બે કેસરીના સ્થાને ભદ્રે ઉરુશ્રૃંગ ચડાવે તો ૨ સર્વતોભદ્ર નામનું નવ અડકનું ખીબું શિખર બાણવું ૧૨ ૧૩ ૧૪

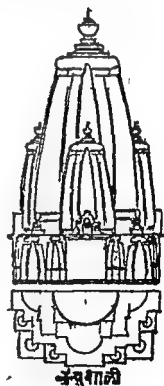
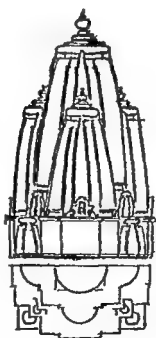
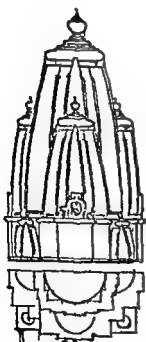
પ્રાસાદોં કે નામ ઓર વિમત્તિ મક્ષિત્તમે કહે ગવે, અવ વિસ્તારસે સુતો । પ્રાસાદ કે ક્ષેત્રકે (આઠ) વિભાગ કરના । ઉસમે ક્ષેત્રકે અર્ધમે પૂરા મદ્ર ચૌઢા કરના ઓર મદ્રકા અર્ધ કર્ણ = રેસા ચૌડી કરના । અર્થાત્ હો ભાગ કી રેસા ઓર આધા મદ્ર હો ભાગકા, કુલ ભાગ આઠ, રેસાકા અર્ધ અર્થાત્ એક ભાગકા મદ્રકા નિકાલા રચના । કર્ણ-રેસા કે પર શ્રીવત્સ=શ્રૃંગ ચઢાકર મદ્ર પર ડેઢિયા કરના, ઘેના પાંચ શ્રૃંગકા કેસરી નામકા પ્રાસાદ જાનના । જો કેસરી કે સ્થાનપર મદ્ર પર ઉરુશ્રૃંગ ચઢાયા જાય તો સર્વતોમદ્ર નામકા નવ અડક કા દૂસરા શિખર જાનના । ૧૨-૧૩-૧૪

કર્ણે કેસરી સર્વેણ મદ્રે શ્રૃંગ ચતુર્ભવેત્ ।

મદ્રકર્ણકૃતે કૂટં ગગાક્ષં મધ્યદાપયેત્ ॥ ૧૫ ॥

ઉરુશ્રૃંગ તથા મધ્યે શિખરં સર્વકામદં ।

અન્ય શ્રૃંગ ચ સંસ્થાને મદિરં સૌશ્રમાનકં ॥ ૧૬ ॥



સાવધારાદિ વેગરી પ્રાસાદ

હવે પચ્ચીશ શ્રૃંગનું મંદિર શીખર હવે સાબળો ઉપરના અકુદિતળના ચારે કોણે-કેસરી કર્મ (પાત્ર અડકનું) ચડાવવું અને ભદ્રે એકેક એમ ચાર ઉરુશ્રૃંગ ચડાવવા અને ભદ્રના ખૂણે કૂટ ચડાવવા ભદ્રના વચ્ચે ગવાક્ષ કરવો આથી

सर्वं कामनाने आपनारुं ओषुं अन्यशृंगना स्थानरूप मंदिर नामनुं त्रीणुं शिखर पञ्चीश अंडकनुं ज्ञाणुं. १५-१६.

अब पच्चीस शृंगका मन्दिर शिखर सुनो। ऊपर के अठ्ठाई तलके

चारों कर्णों पर केसरी कर्म (पाँच अंडक का) चढाना और भद्र पर एक एक इस तरह चार उरुशृंग चढाना और भद्रके कोने पर कूट चढाना। भद्रके बिचके गवाक्ष करना। इस सर्व कामना को देनेवाला ऐसा अन्य शृंगका स्थानरूप मंदिर नामका तीसरा शिखर पच्चीस अंडकका जानना। १५-१६.

कर्ण शृङ्ग द्वितीयं च श्रीवत्सं
सर्वकामदं ।
सर्वे भद्रे उरुशृङ्गं अमृतोद्भव
संज्ञकः ॥ १७ ॥

मंदिर शिखरनी देखाये ओक
पीणुं शृंग गडाववाथी सर्व कामनाने
देनारुं ओथुं श्रीवत्स शिखर रद
अंडकनुं ज्ञाणुं. अने श्रीवत्स

शिखरना यारे भद्रे अंडक उरुशृंग गडाववाथी उउ अंडकनुं अमृतोद्भव नामनुं
पांचमुं शिखर ज्ञाणुं. १७.

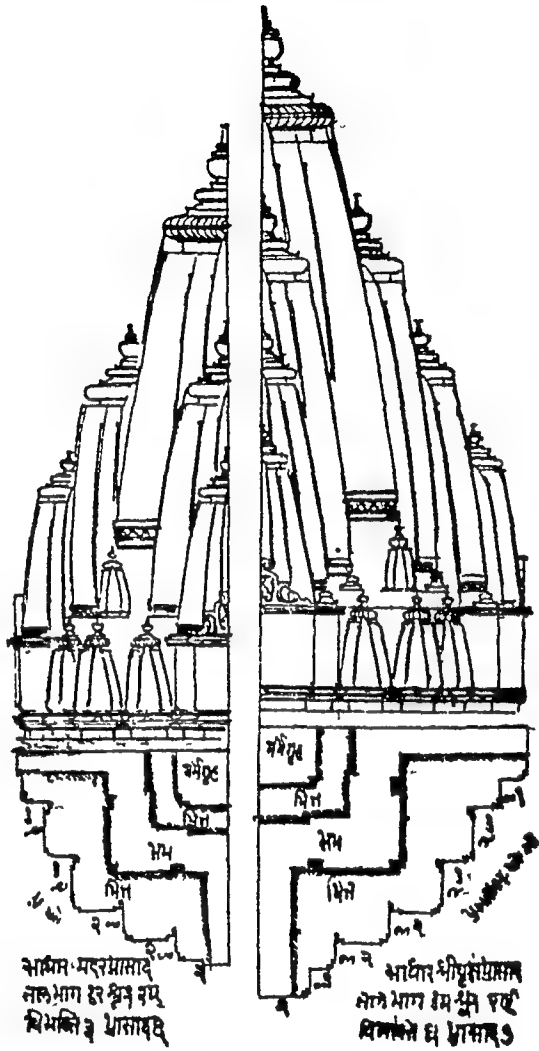
मन्दिर शिखर की रेखापर एक दूसरा शृंग चढानेसे सर्व कामनाओं को देनेवाला चोथा श्रीवत्स शिखर २९ अंडकका जानना और श्रीवत्स शिखर के चारों भद्रके पर अंडक उरुशृंग चढाने से ३३ अंडकका अमृतोद्भव नामका शिखर पाँचवा जानना। १७.

सर्वतोभद्रं च कर्णेषु भद्र शृङ्गततोष्टमि ।

हेमवर्णं च माक्षातं हेमकूटं च अतः शृणु ॥ १८ ॥

मूल प्रतमें इन दिये हुए पाठोंको सुधारकर उपर ८ से ११ श्लोक क्रमबद्ध दिये गये हैं। उसी तरह आगे दि हुई विभक्ति तल और शृङ्ग संख्या और नामका क्रम बराबर मिलता है। उपरके चार श्लोक सुधारकर रखनेकी धृष्टता करनेके लिये विद्वानों हमको क्षमा करें।...

साधार मंदिर प्रासाद ३ तलभाग ८ शृंग २५



साधार श्रीवत्स प्रासाद ४ तलभाग ८ शृंग २९

भारम-मंदिरप्रासाद
तलभाग ८ शृंग २५
विभक्ति ३ प्रासाद

साधार श्रीवत्सप्रासाद
तलभाग ८ शृंग २९
विभक्ति ४ प्रासाद

ચારે ભદ્રના ખુણા પર (કૂટના બદલે) એકેક એમ આઠ શૃંગ ચડાવવાથી એકતાલીશ અડકનો સાક્ષાત્ હેમવર્ણ નામનો છઠ્ઠા પ્રાસાદ બાણવો હવે હેમકૂટ પ્રાસાદનું સ્વરૂપ સાબળેા ૧૮

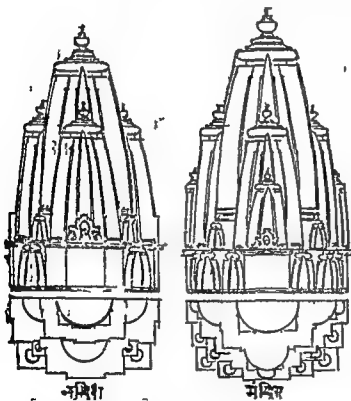
ચારોં મંદિરને કોનેપર, (કૂટને બદલે) એકેક હમ તરહ આઠ શૃંગ ચઢાને સે હમ્યાલિશ અડકકા સાંક્ષાત્ હેમવર્ણ નામકા છઠ્ઠા પ્રાસાદ, જાનના । અવ હેમકૂટ પ્રાસાદ કા સ્વરૂપ સુનો । ૧૮

કર્ણે શૃંગ પ્રદાતવ્યં તથા નગમાલય ઉચ્યતે ।

કર્ણ તે અંડક પ્રોક્ત મંદિરે શૃંગ પ્રદાપયેત્ ॥ ૧૯ ॥

શૃંગ સંભાવર શૈવ મહાનીલં ચ મિશ્રકં ।

પુનઃ શૃંગં તદા મંદિરે ભૂધરો મિશ્રકાન્વિતઃ ॥ ૨૦ ॥



નમિશી

મંદિર

સાવંધારાદિ વેશરી નન્દિશ મંદિર

સાતવા જાનના । રેસાકે પર એકેક ઓર મંદિરપર એકેક ઉરુશૃંગ ચઢાનેમે ૫૩ અડકકા મહાનીલ મિશ્રક પ્રાસાદ આઠગોં જાનના । ફિર એક ઉરુશૃંગકો મંદિર પર ચઢાનેસે ભૂધર નામક મિશ્રક પ્રાસાદ નવમેા જાનના । ૨

હેમવર્ણને રેખા પર એકેક શૃંગ ચડાવવાથી ૪૫ અડકનું નવ માલ્ય એવું હેમકૂટ શિખર સાતમું બાણવું રેખાએ એકેક અને ભદ્રે એકેક ઉરુશૃંગ ચડાવવાથી ૫૩ અડકનો એવો મિશ્રક મહાનીલ પ્રાસાદ આઠમે બાણવો ફરી વળી એક ઉરુશૃંગ ભદ્રે વધારવાથી ૫૭ અડકનો ભુધર મિશ્રક નવમેા પ્રાસાદ બાણવો ૨

હેમવર્ણની હવ રેસાપર એકેક શૃંગ ચઢાનેસે ૪૫ અડકકા નગમાલ્ય એસા હમકૂટ શિખર

(૨) ઉપર કહેના ૧ કેમરી ૨ અવતોભદ્ર ૩ મંદિર ૪ શ્રીનત્સ અને વધુમા ૫ અમૃતોશ્વર-એમ પાંચ પ્રાસાદ મૂળ અદ્વાઈતજ ૫૦ આ પાંચ શિખરો ચડી નકે તે પછાના પાંચ હેમવર્ણથી રત્નકૂટ મુનીના પાંચ પ્રાસાદના શિખરો અદ્વાઈતજ ૫૦ ચડાવવાનું ધણુ મુશ્કેલ છે અથર અહી પાંચ નુટક છે તે કે અમોએ પાંચ આન પ્રતો મેળવીને પ્રયાસ કરી

कर्णे शृङ्गं द्वितियं च रत्नकूटं प्रणष्टकम् ।

एकाशी अंडक चैव कर्णे द्वितिय केसरी ॥ २१ ॥

भुदर शिखरनी रेखाये ओक वधु शृंग श्रीवत्स अने ओक भीलुं पंचांडी केसरी कर्म अडाववाथी ओकाशी शृंगनो पापनाशक ओवो रत्नकूट नामनो प्रासाद दशभो नाणुवो. ओ रीते अष्टाध विभक्ति उपर दश लेह कहे. २१.

भुदर शिखर की रेखा पर एक ज्यादा शृंग श्रीवत्स और एक दूसरा पंचांडी केसरी कर्म चढ़ानेसे इक्याशी शृंगको पापनाशक ऐसा रत्नकूट नामका प्रासाद दशावाँ जानना । इस प्रकार अठ्ठाई विभक्तिके उपर दस भेद कहे । २१.

तथा च दशमीक्षेत्रं कर्णस्य पंचमांशकः ।

तस्यार्द्धं रथकार्यं शेषं भद्रस्य विस्तरम् ॥ २२ ॥

भाग भागं च निष्क्रान्तं उर्ध्वमानं अतः शृणुः ।

कर्णे द्वयं कार्यं भद्रं शृङ्गं च मेव च ॥ २३ ॥

मध्ये गवाक्षं प्रदातव्यं सर्वकामदा ।

भद्रे शृङ्गं प्रदातव्यं नंदशाली मनोहर ॥ २४ ॥

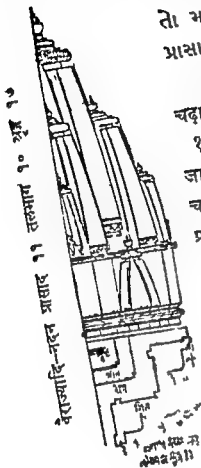
उपे दशाईतलना प्रासादो कहे छे. प्रासादना क्षेत्रना दश लाग करवा. तेमां रेखा-कण्ठ पांचभो लाग ओटले ओ ओ लागनी करवी. ओक लागनो प्रतिरथ अने भाडीना चार लागनुं लद पंडोणुं नाणुवुं. ते उपांगोना नीकाणा ओकेक लागना राखवा. अने उपरना शिखरनुं मान सांलणो. २२.

अब दशाईतल के प्रासादोंके बारेमें कहते हैं । प्रासादके क्षेत्रके दस भाग करना । उसमें रेखा=कर्ण पाँचवा भाग अर्थात् दो दो भागकी करनी । एकेक भागका प्रतिरथ और बाँकीके चार भागका भद्र चौड़ा जानना । इन उपांगों के नीकाले एकेक भागके रखना और ऊपरके शिखरका मान सुनो । २२.

रेखाये भाँजे शृंग अने लद्रे ओकेक उरुशृंग अडाववाथी ने लद्रे गोभं करवाथी तेर अंडकनो नामनो अग्यारभो नंदन प्रासाद सर्व कामनाने देनासे नाणुवो.

लेयो छे. परंतु अमने भणती यधी प्रतोमां आवा सरभा न पाछो भल्या छे तेथी नेयुं अमने भयुं तेयुं अडीं रणु करीये छीये.

(२) उपर कहे हुए १ केसरी २ सर्वतो भद्र ३ मंदिर ४ श्री वत्स और ज्यादा से ज्यादा ५ अमृतोद्भव-इस तरह पाँच प्रासाद तक अठ्ठाई तल पर ये पाँच शिखरों चढ़ सके उसके बादके पाँच हेमवर्णसे रत्नकूट तकके पाँच प्रासादके शिखरों अठ्ठाई तल पर चढ़नेका काम सुदिकल है, या तो यहाँ पाठ चुटक है । जो कि हमने पाँच सात प्रतां मिलाकर प्रयास किया है, परंतु सब प्रतांमें ऐसे समान ही पाठों है इससे जैसा हमें मिला वैसा यहाँ रखते हैं ।



ન દનશિખરમાં ને એકના બદલે બાળે ઉરુશ્રંગ ચડાવે
તો મનોહર એવો સત્તર અડકનો ખારમો ન દશાલી
પ્રાસાદ બાણવો ૨૩-૨૪.

રેસાકે પર દો દો શ્રંગ ઓર મટ્રકે પર એક ઉરુશ્રંગ
ચઢાનેસે ઓરમટ્રપર ગોણ કરનેસે તેરહ અડકકા નેદન
૧૧વા નામકા પ્રાસાદ સર્વ કામના કા દેનેવાલા
જાનના । નંદન શિખરમે જો એક કે વડલે દો દો ઉરુશ્રંગ
ચઢાયા જાય તો મનોહર એસા મટ્રહ અડકકા નંદશાલી
પ્રાસાદ વારવા જાનના । ૨૩-૨૪

રથે શ્રૃંગપ્રદાતવ્યં ઉરુશ્રૃંગ તથોપરિ ।
મદિરગ્યાતં શ્રૃંગસ્થાત્પંચવિંશતિઃ ॥ ૨૫ ॥

૫૬૨એ એક શ્રૃંગ મૂકવું એની પર ઉરુશ્રૃંગ છે
ત્યા ત્યાદે તે પચ્ચીશ શ્રૃંગનું મદિર શિખર તેરશુ
બાણવુ ૨૫

મદિરથ કે પર એક શ્રૃંગ રસના । જિસકે પર ઉરુશ્રૃંગ
હે જહાં તત્ર ઉસે પચ્ચીસ શ્રૃંગકા મદિર શિખર તેરહવાં
જાનના । ૨૫

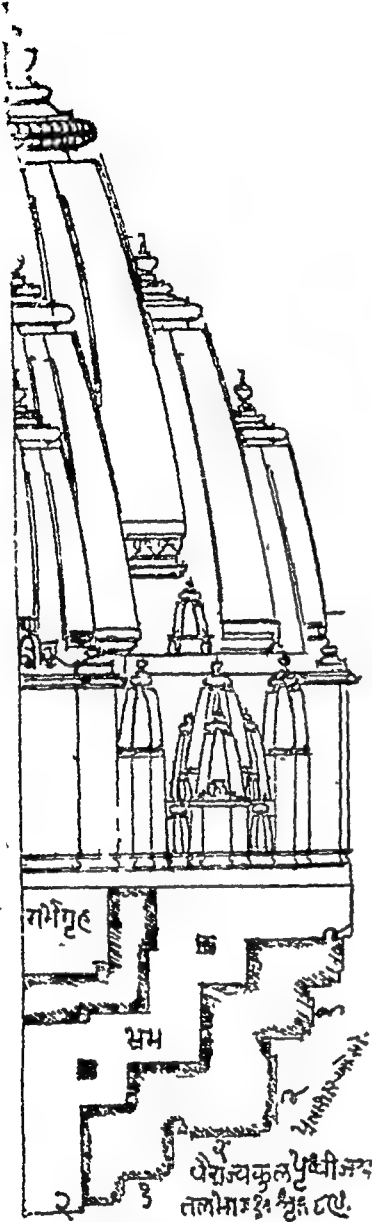
કર્મે કેસરી સર્વે રથકૂટં પ્રદીયતે ।
અમૃતોદ્ભવ નામાર્ય વલ્લભં સર્વ દેવતા ॥ ૨૬ ॥

દેખાને એ શ્રૃંગ છે ત્યા એક પચાડી કેસરી કર્મ દેખાપર વધારે મૂકવું
અ. ૫૬૧ ને કૂટ ચડાવવાથી સર્વ દેવોને વલ્લભ એવો અમૃતોદ્ભવ નામનો
(૨૨ શ્રૃંગનો) ચોદમો પ્રાસાદ થાય ૨૬

રેસાકે પર દો શ્રૃંગ જહાં હે વહાં એક પચાડી કેસરી કર્મ રેસાપર જ્યાદા
રસના ઓર પદ્મેપર કૂટ ચઢાનેસે સર્વ દેવોનો વલ્લભ એસા અમૃતોદ્ભવ નામકા
(૪૫ શ્રૃંગકા) ચોદવાં પ્રાસાદ હોતા હે । ૨૬

રથે શ્રૃંગપ્રદાતવ્યં હેમકૂટં સ ઉચ્યતે ।
મુલમટ્રે શ્રૃંગમેરં કૈલાસ સર્વકામદં ॥ ૨૭ ॥

૫૬૨ે એક શ્રૃંગ ચડાવવાથી (૫૩ શ્રૃંગનું) હેમકૂટ પદ્મુ શિખર થાય, અને ને
ભદ્ર ઉપર એ ઉરુશ્રૃંગના બદલે ત્રણ ઉરુશ્રૃંગ ચડાવીએ તો ૫૭ શ્રૃંગનું બાણવું
પાંચ હેમકૂટુ શિખર (૧૬) બાણવું ૨૭.
મુશ્કેલ છે અગ



पढरेपर एक शृंग चढानेसे (५३ शृंगका) हेमकूट पंदरवाँ शिखर होता है, और जो भद्र के पर दो उरुशृंग वढले तीन उरुशृंग चढायें तो ५७ शृंगका कैलास नामका शिखर (१६) जानना । २७.

कर्णे च नंदन सर्वे रथे शृङ्गपरित्यजेत् ।

उरुशृङ्गाष्ट कर्तव्यं पृथ्वीजयं च मुत्तमम् ॥ २८ ॥

रेभाये चारे भुण्डे ओकेक तेर अंडकनुं नंदन कर्म अढावपुं अने पढरे जे शृंग छे ते ओके तजवाथी अने उरुशृंग आठ करवाथी पृथ्वीजय नामनुं ६७ शृंग शिखर जाणुवुं. २८.

रेखाके पर चारों कोनेमें एक एक तेरह अंडकका नंदनकर्म चढाना और पढरे पर दो शृंग हैं वह एक तजने से ओर उरुशृंग आठ करनेसे ९७ शृंगका पृथ्वीजय नामका १७ मा शिखर जानना । २८.

इंद्रनीलं च प्रासादे उरुशृङ्गानी द्वादश ।

उरुशृंग परित्यज्यं रथेशृंग प्रदापयेत् ॥ २९ ॥

महानीलं च विज्ञेयं सर्व मनोरथदायक ।

पृथ्वीजयना स्थाने आठने षढले बार उरुशृंग अढाववाथी (१०१ शृंगनुं) इंद्रनील नामनुं अढारभुं शिखर थाय. इंद्रनीलना स्थाने लढनुं ओके उरुशृंग

तजने पढरापर ओकेना षढले जे शृंग अढाववाथी १०५ शृंगनुं भडानील (१६) नामनुं सर्व प्रकारना मनोरथने आपनारुं शिखर जाणुवुं. २९.

पृथ्वीजय के स्थानपर आठके वढले बारह उरुशृंग चढानेसे (१०१ शृंग) इंद्रनील नामका शिखर होता है । इंद्रनील के स्थानपर भद्रका एक उरुशृंग तजकर पढरेपर एकके वढले दो शृंग चढानेसे १०५ शृंगका महानील (१९) सर्व प्रकारका मनोरथ देनेवाला शिखर जानना । २९.

उरुशृङ्गार्क शेषं च भूधर सुरवल्लभ ॥ ३० ॥

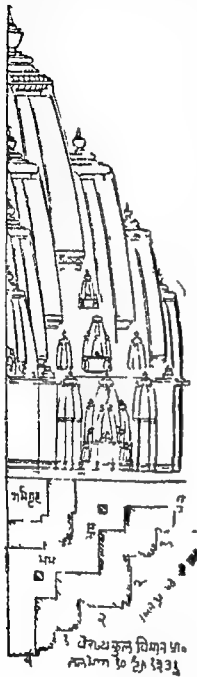
केसरी सर्वतोभद्रं कर्णस्थाने प्रदापयेत् ।

* रथशृङ्गश्च संस्थाने विमानं च विचक्षणं रथशृङ्गे प्रयोजयेत् ॥ ३१ ॥

उरुशृङ्गाष्ट कर्तव्या रत्नकोटि यथाविधि ।

* पादान्तर रथशृङ्ग संस्थाने विमाने त द्विचक्षणात् ॥ ३१ ॥ आ पाठ ईर छे. विमान शिखर उपलब्ध्या पृथी रत्नकोटि उपजे.

अस्युक्त वैराज्यकुल विमान ग्रासाद (२१) तलभाग १० शृंग १४५



महानील शिखरना स्थाने आठने णहले णार उरुशृंग यडाववाथी देवाने दुर्लभ ऐसो (१०६ शृंगनु) भूधर नामनु वीशसु शिखर णाणुवु भूधरना स्थाने देणाये ६ शृंगनु भवतोलाद्र कर्म यडाववाथी २१सु विमान नामनु १४५ शृंगनु शिखर णाणुवु विमान शिखरना स्थाने पढरेपर ओक शृंग यडाववु अने लोडे आठ उरुशृंग करवाथी (१४६ शृंगनु) (२२) रत्नकोटि नामनु शिखर णाणुवु ३०-३१

महानील शिखरके स्थानपर आठके बढले बारह उरुशृंग चढानेसे देवों को दुर्लभ ऐसा (१०९ शृंगका) (२०) भूधर नामका शिखर जानना । भूधर के स्थान पर रेखा के पर ९ शृंगका सर्वतोभद्र कर्म चढानेसे (२१) विमान नामका (१४५ शृंगका) शिखर जानना । विमान शिखरके स्थानपर पढरेपर एक शृंग चढाना और भद्रके पर आठ उरुशृंग करने से (१४९ शृंगका) (२०) रत्नकोटि नामका शिखर जानना । ३०-३१

तथा वैदूर्य ग्रासादो उरुशृंगानि द्वादश ॥३२॥

भद्रे शृंग परित्यज्य रथे शृंग प्रदापयेत् ।

पद्मराग च नामारुख्यं ग्रासादा सर्वकामदम् ॥३३॥

रत्न कोटि शिखरना स्थाने णार उरुशृंग यडावे तो १५३ शृंगनु (२३) वैदूर्य नामनु शिखर णाणुवु ते पछी जे लोडनु ओक उरुशृंग तछने पढरे ओक शृंग यडावे तो सर्व कामनाने देनाउ ओवु १५७ शृंगनु २४सु पद्मराग नामनु शिखर थाय ३२-३३

रत्नकोटि शिखरके स्थानपर बारह उरुशृंग चढावे तो १५३ शृंगका २३वाँ वैदूर्य नामका शिखर जानना । उसके बाद जो भद्रका एक उरुशृंग तजकर पढरे पर एक शृंग चढावें तो सर्व कामना को देनेवाला ऐसा १५७ शृंगका २४वा पद्मराग नामका शिखर होता है । ३२-३३

ભદ્રેશ્રંગ પ્રદાતવ્યં વજ્રકર્મ મુમુક્ષુકાં ।
મુકુટોજ્વલ પ્રાસાદં ઉરુશ્રંગાર્ક ભૂષિતે ॥ ૩૪ ॥

તન્વંધાં જાયંતે પ્રાંજ આદિ મધ્યા ચ સાનકં ।

પદ્મરાગ શિખરને ભદ્રે શ્રંગ ચડાવી કુલ બાર ઉરુશ્રંગથી શોભતું શિખર (૨૫) વજ્ર કર્મના મુમુક્ષુને....વજ્રક નામનું (૧૬૧ શ્રંગનું) શિખર બાણુવું તે રીતે....૪.

પદ્મરાગ શિખરનો ભદ્રપર એક શ્રંગ ચઢાવવા કુલ બારહ ઉરુશ્રંગથી શોભત શિખર (૨૫) વજ્રકર્મને મુમુક્ષુને...દુર્લભ એવે ૧૬૧ શ્રંગના વજ્રક નામના શિખર જાનના, એવે તરહ...૪.

*અષ્ટધાં દર્શધાં ક્ષેત્રં કેશરી પંચ વિંશતિ ॥૩૫॥
તથા મૃક્ષકે ચ જ્ઞાત્વા ત્રિવિધં ચ વિશેષત્ ।

વૈરાજ્ય કુળના કેશરાદિ પચ્ચીસ પ્રાસાદના શિખરો અઠાઈ અને દશાઈ તળ ક્ષેત્રના હતા. આવા પ્રાસાદો કરાવવાથી ત્રિવિધ ધર્મ અર્થને મોક્ષની પ્રાપ્તિ થાય છે. ૩૫.

વૈરાજ્યકુલને કેશરાદિ પચ્ચીસ પ્રાસાદ કે શિખરો અઠાઈ અને દશાઈ તળ ક્ષેત્રને કહે । એવે પ્રાસાદો બનવાને તે ત્રિવિધ ધર્મ અર્થ અને મોક્ષની પ્રાપ્તિ થાય છે । ૩૫.

(૪) વૈરાજ્યકુળના કેશરાદિ ૨૫ પ્રાસાદોનો પાઠમાં આપેલ ક્રમ અને શ્રંગ સંખ્યા—
અઠાઈતલ વિભક્તિ દશાઈતલ વિભક્તિ

ક્રમ	પ્રાસાદ	શ્રદ્ધ	ક્રમ	પ્રાસાદ	શ્રદ્ધ	ક્રમ	પ્રાસાદ	શ્રદ્ધ		
૧	કેસરી	૫	૧૧	નન્દન	૧૩	*	૧૯	મહાનીલ	૧૦૫	
૨	સર્વતોભદ્ર	૧૩	૧૨	નન્દશાલી	૧૭		૨૦	ભૂધર	૧૦૯	
* ૩	મન્દિર	૨૫	*	૧૩	મન્દિર	૨૫		૨૧	વિમાન	૧૪૫
૪	શ્રીવત્સ	૨૯	*	૧૪	અમૃતોદ્ભવ	૪૫	*	૨૨	રત્નકૂટ	૧૪૯
* ૫	અમૃતોદ્ભવ	૩૩	*	૧૫	હેમકૂટ	૫૩		૨૩	વૈદ્ય	૧૫૩
૬	હેમવર્ણ	૪૧		૧૬	કૈલાસ	૫૭		૨૪	પદ્મરાગ	૧૫૭
* ૭	હેમકૂટ	૪૫		૧૭	પૃથ્વીજયં	૬૭		૨૫	વજ્રક	૧૬૧
* ૮	મહાનીલ	૫૩	*	૧૮	ઇન્દનીલ	૧૦૧				
* ૯	ભૂધર	૫૭								
* ૧૦	રત્નકૂટ	૮૧								

અહીં આપેલા પચ્ચીસ પ્રાસાદોના શિખરો અઠાઈતળ વિભક્તિના દશ ભેદ અને દશાઈ તળ વિભક્તિના પંદર ભેદ મળી કુલ પચ્ચીસ શિખરો હતા છે. તે બેઉ વિભક્તિના પ્રાસાદના ફૂલવાળા નામો દશાઈ અઠાઈમાં એક જ આવે છે. એ વિચિત્ર છે.

તેના શ્રંગની વિધિનાં ૧ કેશરાદિથી વધુમાં વધુ પાંચમા અમૃતોદ્ભવ સુધી શ્રંગો અઠાઈતળ

तिलक चडावपुं अने रथ-पढरा पर उत्तम ओवुं इयक. चडावपुं- शृंगनी उपर शृंग अने ते उपर शिखर.....मिश्रक सर्वतो भद्रने कर्ण रेखाये भीष्म तिलक चडावपुं. ३६-३७.

भावार्थ—शृंग मिश्रक-रुचक और भद्र पर मिश्रको तिलके.....कर्णरेखा के पर तिलक चढाना और रथ-पढरेपर उत्तम ऐसा सूचक चढाना । शृंग के उपर शृंग और उसके उपर शिखर.....मिश्रक सर्वतोभद्र को कर्णरेखा पर दूसरा तिलक चढाना । ३६-३७.

कर्णे तिलकं मेकं श्री वत्सं च तथोपरि ? ॥ ३८ ॥

माल्यातकं च कर्तव्यं ऊरुशृङ्गे विभूषितं ।

केसरी मिश्रकं विद्या तिलकः शृङ्ग समाकुलम् ॥ ३९ ॥

तथा च सर्व क्षेत्राणां मिश्रकं सर्व कामदं ।

केशराद्यं प्रयोज्यते यावत्कैलासमिश्रकं ॥ ४० ॥

रेखाये भीष्म तिलक श्री वत्स उपर चडावपुं.....ऊरुशृङ्गथी शोभतो माल्यातल.....प्रासाद ढाणुवो. मिश्रक केसरी प्रासादो तिलक अने शृङ्गो चडावपुंने पोताना सर्व क्षेत्रे (अठ्ठाई दशाई) सर्व कामनाने देनेवा ओवा मिश्रक केसरादिथी मिश्रक कैलास सुधीना (पच्चीस प्रासादो) ढाणुवा. ४०.

रेखाके पर दूसरा तिलक श्रीवत्स उपर चढाना ।.....ऊरुशृङ्ग से शोभता माल्यातल...प्रासाद जानना । मिश्रक केसरी प्रासादों तिलक और शृङ्गों चढाकर अपने सर्व क्षेत्रपर (अठ्ठाई दशाई) सर्व कामनाको देनेवाले ऐसे मिश्रक केसरादि से मिश्रक कैलासतक के (पच्चीस प्रासादों) जानना । ४०.

इति श्री विश्वकर्मा कृतायां क्षीरार्णवे नारद पृच्छते केसरादि वैराज्यकूल मिश्रक प्रासादाधिकारे शताष्ट्रेणकोविंशतेऽध्याय ॥ ११९ ॥ क्रमांक अ० २१

इति श्री विश्वकर्मा कृताया क्षीरार्णवे नारदे पूछेले केसरादि वैराज्य कूल मिश्रक प्रासादोना अधिकार शिल्प विशारद प्रभाशंकर ओषडभाई सोमपुराये रयेसी गुर्जर भाषामां सुप्रभा नामनी टीकानो ओक सो आगणीसभो अध्याय ११९. क्रमांक अ० २१

इति श्री विश्वकर्माकृते क्षीरार्णवे में नारदपृच्छा में वैराज्यकूल मिश्रक प्रासादाधिकार शिल्प विशारद प्रभाशंकर ओषडभाई की रची हुई भाषामें सुप्रभा नामकी भाषा टोकीका एकसौ

उन्नीसवाँ अध्याय ११९ क्रमांक अध्याय २१

अथ चातुर्मुख प्रासाद स्वरूप लक्षणम्

क्षीरार्णव अ० १२० क्रमांक २२

श्री नारद उवाच—

स्वर्गे देवलोकं च मधवन्स्थानमुत्तमम् ।

अन्यच्च किं विशिष्टं स्यात् कथय मम साम्प्रतम् ॥ १ ॥

यावत् सप्तपातालं ब्रह्मांडं सप्तसंख्यया ।

चतुर्मुखो हि प्रासादो कथय परमेश्वर ॥ २ ॥

श्री नारदः छंदे छे नेम स्वर्गमा देवलोकं विशे छंद्रेनु स्थान उत्तम छे तेम पीलु शु उत्तम छे ते मने छमल्लु छंदे सात पाताल अने सात प्रह्लाड अे औद लोकमा अेनु अतुर्मुख प्रासादनु वर्णन छे परमेश्वर, मने छंदे १-२

श्री नारदजी कहते हैं—जिस तरह स्वर्गमे देवलोकमे इद्रका स्थान उत्तम है इस तरह दूसरा क्या उत्तम है, वह मुझे अज कहो । सात पाताल और सात ब्रह्मांड इन चौदह लोकमे ऐसे चतुर्मुख प्रासादका वर्णन हे परमेश्वर मुझे कहो । १-२

विश्वकर्मावाचि—

क्षीरार्णवे समुत्पन्नाः प्रासादाश्च अनेकधा ।

तन्मध्ये श्रेष्ठप्रासादः चतुर्मुखः सुशोभनः ॥ ३ ॥

श्री विश्वकर्मा छंदे छे क्षीरार्णवमा अनेक प्रकारना प्रासादो उत्पन्न थयेला छे तेमा सर्वोत्तम अेवो श्रेष्ठ श्रेष्ठीना अतुर्मुख प्रासाद सुंदर शोभनीक छे उ

श्री विश्वकर्मा कहते हैं—क्षीरार्णवमे अनेक प्रकारके प्रासादो उत्पन्न हुए हैं । उनमे सर्वोत्तम ऐसा श्रेष्ठ श्रेष्ठीका चतुर्मुख प्रासाद सुंदर शोभनीक है । ३

(१) आ अध्याय स १७६७ आमे शुक्र १५ भोगवाग्नी प्रत परधी उतारिख छे आन अध्याय वृक्षार्णवमा संपूर्ण छे न्यारे क्षीरार्णवमा श्लोक ६२ सुधीना अपूर्ण गुणगत सौराष्ट्री प्रतोमा मने छे श्लोक ४ थी १० सुधीना अनुवाद अमारी मति प्रभावे पध अेसतो ज्वा प्रयत्न ज्यो छे शुद्धि प्राप्त थयेवी अमारी दोर क्षति छे तो ते सुधारीशु अगर दोर विद्वान अमारु लक्ष्य होगे तो अमे आलारी यक्षु

(१) ईस अध्यायको सं १७६७ आसो शुक्र १५ भोगवारकी प्रत परसे उतारा है । वृक्षार्णवमे यही अध्याय संपूर्ण है और क्षीरार्णव लोक १० तकका अपूर्ण गुणगत सौराष्ट्री प्रतोमि मिलता है । श्लोक ४ से १० तकका अनुवाद हमारी मतिवे अनुसार योग्य रूपमे लागू करनेका प्रयत्न किया है । शुद्धि प्राप्त होके हमारी कोई क्षति होनी तो उसे हम सुधारेंगे । या कोई विद्वान हमारा लक्ष्य लिखेगा तो हम उसके ऋणी बनने ।

चतुरस्त्रीकृते क्षेत्रे सर्वक्षेत्रास्यमध्यतः ।
 निर्गमो वेदिवैर्युक्त त्रयोविंशति विस्तरे ॥ ४ ॥
 आयामे षट् विंशति निरंधारं च सिद्धयति ।
 शरंध्रं नवकोष्ठानि ब्रह्मस्थानं विचक्षणः ॥ ५ ॥
 पंचमं कोष्ठकं ज्येष्ठ सार्द्धत्रयं च मध्यमम् ।
 त्रिपदं कन्यसं वक्षे किञ्चिदाऽयामते गृहे ॥ ६ ॥
 षड् चत्वारिंशत्कोष्ठ उत्तमोत्तमं जायते ।
 कोष्ठं तथैव चत्वारी जायते स्थान मानकम् ॥ ७ ॥
 दशपंच हस्त मध्ये शरंध्रं नव कोष्ठके ।
 षोडशैव यदा हस्ते कर्णाति नव कोष्ठभिः ॥ ८ ॥
 तस्योर्ध्व षट् त्रिंशन्तं शरंध्रं पंचविंशतिः ।
 कर्णात्पंचविंशत्या शतार्धं हस्त मानयोः ॥ ९ ॥
 तथा च नवकोष्ठेन ब्रह्मस्थानं प्रजायते ।

भावार्थ—प्रासादना चौरस क्षेत्रना सर्वनी मध्यमां नीकणती वेदी साथे त्रेवीश पद पडोणाधना करवा. दांणाधमां छत्रीश पद निरंधार प्रासादना नव कोठानो भूण $\frac{\text{शरंध्र}}{\text{गर्भगृह}}$ ब्रह्मस्थान साथे विचक्षण शिल्पीओ करवा. तेमां पांच कोठा ज्येष्ठमान-साडात्रण कोठा मध्यमान अने त्रण कोठा-कनिष्ठमान कंधकि दांणा (गर्भगृह) करवा (६) छेतादीश पदना गृहमां उत्तमोत्तम स्थान मान प्रमाणे चार कोठा करवा. पंद्रह हाथना गृहमां शरंध्रं () नव कोठानो-सोण हाथ सुधीमां पाण नव कोठानो शरंध्र () करवा. ते पर छत्रीश सुधीमां शरंध्रं () पच्चीश पदना करवा. ते पचास हाथ सुधीना ने कर्णात् पांचविश सुधी ब्रह्म स्थानमां नव कोठा करवा.

भावार्थ—प्रासादके चौरस क्षेत्रके सबकी मध्यमें नीकलती वेदीके साथ तेईश भाग चौडाईके करना । लम्बाईमें छत्तीस पद निरंधार प्रासादके नौ कोठेका मूल $\frac{\text{शरंध्र}}{\text{गर्भगृह}}$ ब्रह्मस्थानके साथ विचक्षण शिल्पिको करना । उसमें पाँच कोठे ज्येष्ठमान-साढेतीन कोठे मध्यमान और तीन कोठे कनिष्ठमान कुछ लम्बा (गर्भगृह) करना । (६) छयालीश पदके गृहमें उत्तमोत्तम स्थानमान के अनुसार चार कोठे करना । पंद्रह हाथके गृहमें शरंध्रं () नौ कोठेका सोलह हाथ तकमें भी

नौ कोठेका शरध (---) करना । उसके पर छत्तीस तकमे शरध () पच्चीश पदके करना । उस पच्चास हाथ तकके को कर्णात पचविंश तक ब्रह्म स्थानमे नौ कोठे करना ।

द्विचत्वारशदशक्षेत्रे सप्तधारुर्ण विस्तरे ॥ १० ॥

द्विपदं समसूत्रेण कर्णिका सर्वकामदा ।

अनुगश्चतुरो भागे निर्गमं च समं भवेत् ॥ ११ ॥

नन्दी भागद्वयं कार्या समनिष्कांगमेव च ।

शेषभद्र विस्तार स्रय निष्कांशं वर्त्तये ॥ १२ ॥

भद्रा चातुर्भुज प्रासादना क्षेत्रना जेताणीश भाग कच्चा तेभा देभा सात भागनी जे भागनी कर्णिका समदल-अनुग (प्रतिरथ) चार भागना समदल, नदी जे भागनी समदल नीकलती, बाकीनु आधु लद्द (चार भाग पडोथु) अने त्रय भाग नीकलतु करवु १०-११-१२

महा चातुर्मुख प्रासादके क्षेत्रके बगलीश भाग करना । उसमे रेखा सात भागकी, दो भागकी कर्णिका समदल, अनुग (प्रतिरथ चार भागका समदल नीकलती, बाकीका पूरा भद्र (बारह भाग चौडा) और तीन भाग नीकलता करना । १०-११-१२.

तथा पूर्णं भ्रमं तेन पदं पच दशस्तथा ।

नन्दन स्थापयेत्कर्णे सर्वतोभद्र चानुगे ॥ १३ ॥

नदिके केसरी देयं भद्रे द्वार च धीमताम् ।

गवाक्षे परिवेष्टितं इलिका तौरणैर्युतम् ॥ १४ ॥

अनुगं दापयेत्कर्णं नन्दयो च उत्तमोपरि ।

तिलकं पल्लवी त्राजं उरुप्रत्याङ्ग भूषणम् ॥ १५ ॥

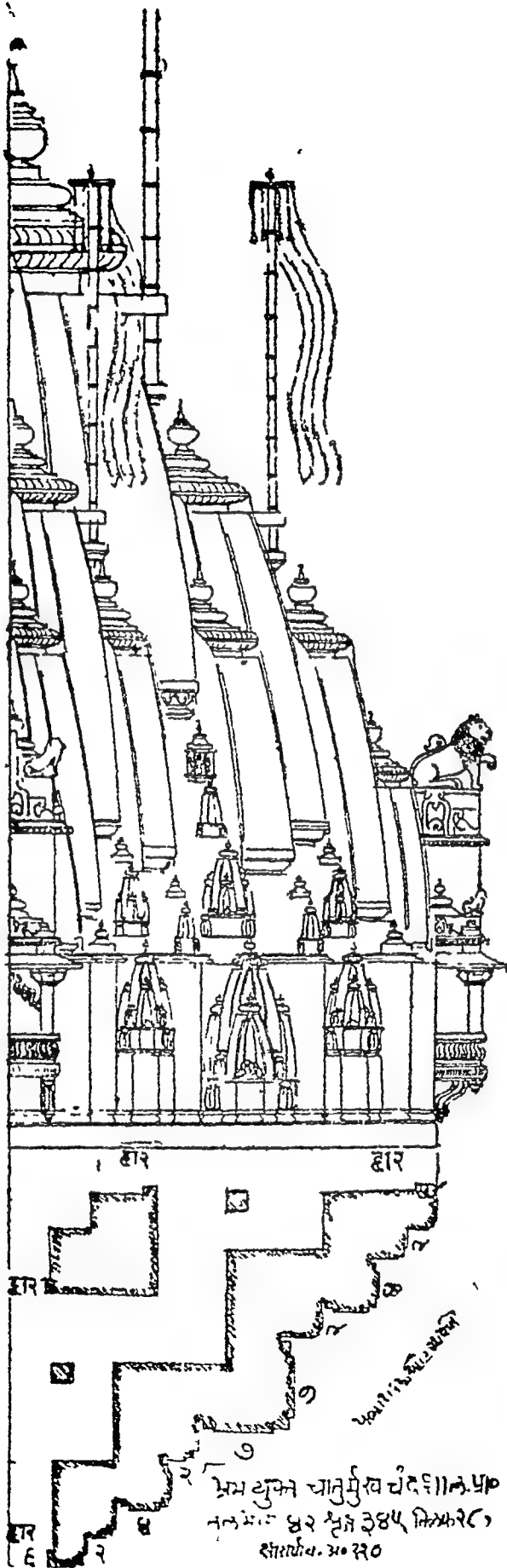
कर्णे केसरीं चैव तिलकं रथिकोपरि ।

मंजरी मूलरेखा च च पडम् (?) शृङ्गभूषितं ॥ १६ ॥

पंचचत्वारिंशत्तया उरु शृङ्गानि द्वादश ।

प्रत्याङ्गस्तु भवेदष्टौ तिलके सर्वदापयेत् ॥ १७ ॥

भ्रम भाग पायने अने (जे ओसार) दश भागना (अने मध्यमे) स्तूप-विंग-आधीश भागना तेना ओसार पाय पाय भागना) बाधुवा देभाये



तेर अंडकनुं नंदन कर्म यडाववुं.
अनुग-पढरो नव अंडकनुं सर्व-
तोलद्र कर्म यडाववुं. रेभा
पासेनी नंदी पर पांच अंडकनुं
केसरी कर्म यडाववुं अने शुद्धि-
मान शिदपीये यारे लद्रमां
द्वार मुक्वा. ते पर यारे तरङ्ग
गवाक्ष-गोष्प, अरुभा अने छलीका
-तोरणादिथी शुलोमित लद्र करवुं.
णीन थरमां अनुग पढरे रेभानी
जेम तेर अंडकनुं नंदन कर्म (अने
६ अंडकनुं सर्वतोलद्र कर्म)
यडाववां. लद्र पासेनी नंदी पर
अेक तिलक यडाववुं. (रेभा
पासेनी नंदी पर) प्रत्यांग यडावी
शुलोमित करवुं. रेभाये त्रीणुं
पांच अंडकनुं यडाववुं. पढरा
पर (अलकूट) तिलक यडाववुं
अने भूण रेभा पायया नीये
कूट युक्त मंजरी यडाववुं अने
भार उरुश्रंग अने आठ प्रत्याङ्ग
यडावी कुल त्रणुसो पीस्ताणीश
अंडकनो प्रासाद न्णवो. अने
तिलक (२८) सर्व स्थाने यडाववां.

भ्रम भाग पाँचका और (दो
ओसार) दश भागके (और
मध्यका स्तूप-लिंग बाईस भागके,
उनके ओसार पाँच पाँच भागके)
जानना । रेखा पर तेरह अंडक
का नंदन कर्म चढ़ाना । अनुग-
पढरा नौ अंडका सर्वतोमद्र कर्म

चढ़ाना । रेखाके पासकी नंदी पर पाँच अंडका केसरी कर्म चढ़ाना । और

बुद्धिमान शिल्पीको चारो भद्रमे द्वार रखना । उम पर चारों और गजाक्ष-गोख,
झरोखा और डलिका तोरणादिसे शुभोमित भद्र करना । दूसरा घरमे अनुग=प्रतिरथ
पर रेखाकी तरह तेरह अडकका नटन कर्म (और नौ अडकका सर्वतोभद्र कर्म)
चढ़ाना । भद्रके पासकी नदी पर एक तिलक चढ़ाना (रेखाके पासकी नदी पर) प्रत्यग
चढ़ाकर सुशोभित करना । रेखा पर तीसरा पाँच अडकका चढ़ाना । पढरे पर
(बलकूट) तिलक चढ़ाना । और मूल रेखा पाचवेके नीचे क्रयुक्त मजरी
चढ़ाना । और बारह उरुशृङ्ग और आठ प्रत्यग चढ़ाकर कुल तीनसौ पैतालीश
अडकका प्रासाद जानना । और तिलक (२८) सर्व स्थानों पर चढ़ाना । १३-
१४-१५-१६-१७

अर्चाश्च वीतरागाणां तिलकं त्रिभुवनस्य च ।

एभि स्तर्गैर्युक्ताश्चंद्रशालं चतुर्मुखे ॥ १८ ॥

इति चंद्रशाल चातुर्मुख प्रासाद भाग-४२, अडक ३४५

वीतराग जिन भगवानकी मूर्ति के त्रय भुवनमा तिलक समान छे
तेनो चंद्रशाल नामनो चतुर्मुख प्रासाद ते बाधुवो धिति चंद्रशाल प्रासाद-
भाग-४२, शृङ्ग ३४५ अने तिलक + २८

वीतराग जिन भगवानकी मूर्ति जो तीन भुवनमे तिलक समान है, उसका
चंद्रशाल नामका चतुर्मुख प्रासाद जानना । इति चंद्रशाल, प्रासाद भाग-४२ शृङ्ग
३४५ और तिलक २८

तथा पीठं च विस्तारं चत्वारो मंडपैर्युतैः ।

पणमेकं भवेत्कर्णं प्रतिकर्णं स्तथैव च ॥ १९ ॥

कर्णं च सपाद निष्क्रान्तं अनुगे भद्रे मंडपाः ।

भद्रं त्रिणि पणं प्राज्ञं पणमेकं तु निर्गमम् ॥ २० ॥

सिद्धद्वारं विशेषेण अनुगे सह सयुतम् ।

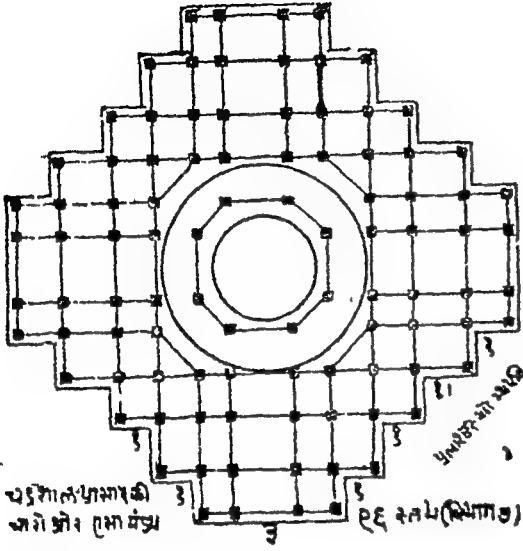
पणपंचैव विस्तारं यावत् त्रयमंडपाः ॥ २१ ॥

चत्वारि च पुनर्वेदा स्त्रीणि त्रीणि पदा नपि ।

अष्टाविंशं सिद्धद्वारे अष्टस्थान अतः शृणु ॥ २२ ॥

प्रासादने थारे तरह भउयो पीठ सहित विस्तारथी करवा तेने ओक भाग
रेखा प्रतिरथ ओक भाग ते रेखाथी सवायो नीकणतो अनुग (परेड) अने
भद्रनो राखवो भद्र त्रय भागनु अतुर शिल्पीओ राखवु नीकणो ओक भाग

तेनुं (नीचे) गडारनुं सिंङ्ग द्वारनी (चतुष्किका) अनुग पढरा सहितना विस्तार जेट्ठुं राभवुं. त्रणु मंडपना पांच पद जेट्ठुं राभवुं.



चार भाग रेखा, चार भाग अनुग, त्रणु भाग प्रतिरथ अने त्रणु भाग (अर्ध-भद्र) ओम जेठ गानुना मणी जेट्ठे अक्षुषीश भाग सिंङ्ग द्वार साथे मंडप करवा. आठ स्थाननुं डवे सांलणो. १९-२०-२१-२२.

प्रासादकी चारों तरफ मंडपों पीठ सहित विस्तारसे करना। उसको एक भाग रेखा प्रतिरथ एक भाग उस रेखासे सवागुना नीकलता अनुग (पढरा) और भद्रका रखना। भद्र तीन भागका चतुर शिल्पीको रखना। नीकाला एक भाग-उसका (नीचे)

चंद्रशाल प्रासादकी चारो ओर ऐसा मंडप-१६-१६ स्तंभोंका करना

बारहका सिंह द्वारकी (चतुष्किका) अनुग पढरा सहितके विस्तार जितना रखना। तीन मंडपके पांच पदके जितना रखना।

चार भाग रेखा, चार भाग अनुग, तीन भाग प्रतिरथ और तीन भाग (अर्ध भद्र) इस तरह दोनों वाजुके मिलकर अर्थात् अठ्ठाईस भाग सिंह द्वारके साथ मंडप करना। आठ स्थानका अव सुनो। १९-२०-२१-२२.

त्रीणि व त्रीणि चाष्टस्थाने चतुर्विंशति धीमता ।

चंद्रीआणाश्च सिध्यन्ति द्विपंचांशद् मनोहरा ॥ २३ ॥

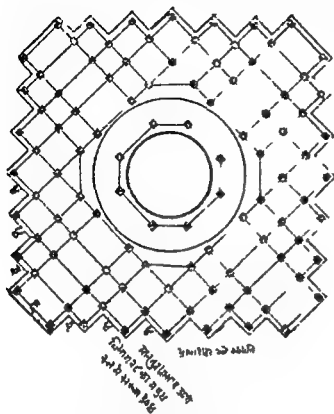
स्थयुक्ताः च प्रासादा चन्द्रिआण सनिर्मिता ।

चंद्रवक्त्रस्य नामानि विभागं शिखर सह ॥ २४ ॥

एतक्षेत्रान मध्यं च चतुःकर्ण वर्जिताम् ।

बावनो जिन अर्चाणी उक्ता क्षीराणवे शुभे ॥ २५ ॥

आठ स्थाने त्रणु त्रणु () ओम ओषीश-चंद्रियाणु (अमुअ मंडिर सहित अने मनोहर ओवा गानन जिनालय चंद्रियाणु प्रासादना स्थलद्रादि युक्तनुं निर्मित करवुं. शिखरना विभाग साथे चंद्रवक्त्र नाम आणवुं. ओवा क्षेत्रना चारे कर्ण पुण्णा वगरना (चार पुण्णे पांचा पांडेल) ओरस भावन जिनभूर्तिना भावन जिनालय क्षीराणुवमां शुभ कह्यो छे. २३-२४-२५.



માનતુક પ્રાસાદકે આગે

૨૮ વિભાગવા મડપ સ્તંભ ૧૦૪

આઠ સ્થાનો પર ત્રીણ ત્રીણ
() હસ તરહ ચોત્રીશ ચંદ્રી-
આળ (પ્રસુલ મદિર મહિત)
ઔર મનોહર ણેસે વાવન જિનાલય
ચંદ્રીઆળ પ્રાગાદકે રથ ભદ્રાદિ
યુક્તકા નિમિત્ત કરના । ડિસરકે
વિભાગકે સાથ ચંદ્રનક નામ
જાનના । ણેસે ક્ષેત્રકી મધ્યમે ચાર
કર્ણ કોને વિનાકા ચોરસ વાવન
જિનમૂર્તિકા વાવન લિનાલય ક્ષીરા
ણ્વમે શુભ કહા હૈ । ૨૩-૨૪-૩૫

વાવનાસેન ભદ્રા ચ વાસાઠિ
ત્રીણિ કર્ણિકા ।

મહામાન જગતીના વિચિત્રૈ
વિધિ ભૂષણે ॥૨૬॥

તથાથ સિંહ દ્વારેણ ચમૂન પક્ષે નમસ્તથા ।
તે નાલગ્રે ત્રયો દશ ચત્વારિંશન્મુલાયતે ॥ ૨૭ ॥
સિંહદ્વારે પરાક્ષામુખે ચતુસ્થાને શુભં ભવેત્ ।
અશીતિ ચતુરાગ્રેણ ચેન્દ્રિયાગા ચ સિધ્યતિ ॥ ૨૮ ॥
સિંહદ્વારે વિચારેણ બ્રહ્મત્યાને અતઃ શૃણુ ।
પ્રાસાદે નમકોષ્ઠેન પળમેક પ્રદક્ષિણે ॥ ૨૯ ॥
શ્રીમંવૃષ પળઃ પંચ મેઘનાદે તુ પંચકે ।
લ્લિકે નાલિત્પરિચૈવ નમવેદાભદ્રાગ્રત ॥ ૩૦ ॥

ભાવાર્થ—ખાવન જિનાયતના ભટ્ટ ભાગ ત્રણ કર્ણિકા વિચિત્ર
એવી જગતી વિધિથી શેલતી કરવી (૨૬) મિહ દ્વારની બેઠ ખાલુ નવ
નાલ (મડપની) આગળ પહોળા તેર ભાગ અને ચાલીશ ભાગ ઉડા
કરવો સિહ દ્વારની પાછળ મુખે પશ્ચિમે અને ચારે સ્થાનમા શુભ
(એવા મહાધર કરવા ?) કૃતા ચોરાશી જિનાયતનની દેવ કુલિકાઓ સિદ્ધ
કરવી મિહ દ્વારનો વિચાર કરીને શુભ એવું મધ્યનુ પ્રહ્લ સ્થાનનું સાલળો
પ્રામાદના નવ કોઠાને એક ભાગ પ્રદક્ષિણાનો રાખવો તેવા પાત્ર વર્ણા (?) શ્રીમંવૃષ

(चौमुख!) थाय ते पांचने मेघनाद मंडपो करवा. तेना नीचे सिंह द्वारे नालि (मंडप) तेना उपर पांच के नव पद लदने आगण (मंडप)... २६-२७-२८-२९-३०

भावार्थ—जावन जिनायतनके भद्र भाग.....तीन कर्णिका.....विचित्र ऐसी जगती विधिसे शोभती करना। (२६) सिंह द्वारकी दोनों बाजु नौ..... ताल (मंडपकी) आगे गहरा तेरह भाग और चालीश भाग चौड़ा.....करना। सिंह द्वारकी पीछे मुख पर पश्चिममें और चारों स्थानोंमें शुभ.....(ऐसे महाधर करना!) फिरते चौरासी जिनायतनकी देवकुलिकाओं सिद्ध करना। सिंह द्वारका विचार कर शुभ ऐसा मध्यके ब्रह्मस्थानके वारेमें सुनो। प्रासादके नौ कोठेको एक भाग प्रदक्षिणाका रखना। वैसे पाँच वर्ण (?) श्रीमध्व (चौमुख!) होवे उन पाँचको मेघनाद मंडपों करना। उनके नीचे सिंह द्वार पर नालि (मंडप) उसके पर पंच या नौ भद्रका आगे (मंडप)...२६-२७-२८-२९-३०.

ब्रह्मस्थाने त्रयः पक्षे निर्गमं च विशेषतः ।

त्रयो मंडपा न मध्ये पण द्वयं प्रदापयेत् ॥ ३१ ॥

मंडपैर्नालिकैर्वक्ष्ये षण्मेकेन बाह्यतेः ।

निर्गमो वेदिका बाह्ये अथ च योगि वेदिका ॥ ३२ ॥

तेषां प्रस्तार भावेन सर्वालंकार संयुता ।

... ..नाम मानतुङ्गना ॥ ३३ ॥

भावार्थ—ब्रह्म स्थान (मध्य चौमुख!) ना त्रणु आनु निकालो विशेषे करीने राखवो. त्रणु तरङ्गना मंडपना मध्यमां गण्ठे पद लागनु (अंतर!) राखवुं. नालिमंडप उपर कहु छुं ओक पद गहार आनुमां अने चार पद आगण नीकणता नीचे राखवा. गार्ही अंदर जिनायतनने करतो प्रस्तार चौकीयाणा करवाथी ते सर्व अलंकारयुक्त ओवो मानतुङ्ग नामनो चतुर्मुख प्रासाद बाणवो. ३१-३२-३३

ब्रह्मस्थान (मध्य चौमुख) के तीनों बाजु निकाला विशेषकर रखना। तीनों तरफके मंडपके मध्यमें दो दो पद भागका (अंतर) रखना। नालि मंडप उपर कहता हूँ। एक पद बाहर बाजुमें और चार पद आगे नीकलतेके नीचे रखना। बाकी अंदर जिनायतनके चारों और प्रस्तार—चौकीयाले करनेसे उसे सर्व अलंकारसे युक्त ऐसा मानतुङ्ग नामका चतुर्मुख प्रासाद जानना। ३१-३२-३३.

सौभाग्यानि प्रवक्ष्यामि तथा किरणावली शुभा ।

प्रासादं ब्रह्मसूत्रेश शरध्रं नव कोष्ठके ॥ ३४ ॥

ત્રિસંધાટ સમાકીર્ણો કવલી રચસૂત્રકે ।

ચતુર્મુખમતા ચંદ્રો સમ્રમા વર્જિતાગતા ॥૩૫॥

ગવાલુકા છાદનં રમ્યં ગર્ભમંડપસ્યાન્તરે ।

‘ભાવાર્થ’—હવે હું તમને સૌભાગ્યાનિ અને શુભ એવી કિરણાવલી કહું છું પ્રાસાદના બ્રહ્મસૂત્રના શરૂ થી નવ કોઠા કરવા રથ (પ્રતિરથ) ના સૂત્રે કોળી ત્રણ પદ જોડતી કરવી ચતુર્મુખના ભ્રમવાળા કે ભ્રમ વગરના પ્રાસાદને જોડતો ગર્ભ મંડપને ગવાલુકાના થરોથી રમ્ય એવો છાજેલ કરવો ૩૪-૩૫

અથ મેં તુમ્હે સૌભાગ્યાનિ ઓર શુભ એસી કિરણાવલી કહતા હૂં । પ્રાસાદ કે બ્રહ્મસૂત્રકે શરૂ થી નવ કોઠે કરના । રથ પ્રતિરથકે સૂત્ર પર કોલી ત્રણ પદ જોડતી કરના । ચતુર્મુખકે ભ્રમવાળે યા ભ્રમ વિનાકે પ્રાસાદકો જોડતા ગર્ભ મંડપકો ગવાલુકાકે થરોસે રમ્ય એસા છાજેલ કરના । ૩૪-૩૫

અથ: મંડોવરે પ્રાજ્ઞ નાગરં દ્રાવિઢ મૃણુ ॥૩૬॥

તલ છંદાનુસારેણ કવલીહીનં ન કારયેત્ ।

અજ્ઞાને કુલ્તે પ્રાજ્ઞ પ્રાસાદ પુણ્યવર્જિતમ્ ॥૩૭॥

અસિ સ્તમ્ભ સમાકર્ણે ભ્રમંતે ચ પ્રદક્ષિણે ।

ચતુર્વિંશ ચૈત્યકાનાં મધ્યેપંક્તિશ્ચ દાપયેત્ ॥૩૮॥

ત્રયોદશ ચતુઃકર્ણે દ્વિપંચાશસ્ય ક્ષેત્રકે ।

‘મંડપાશ્વ દ્વયો મધ્યે પળમેઘાં ચ સિધ્યતિ ॥૩૯॥

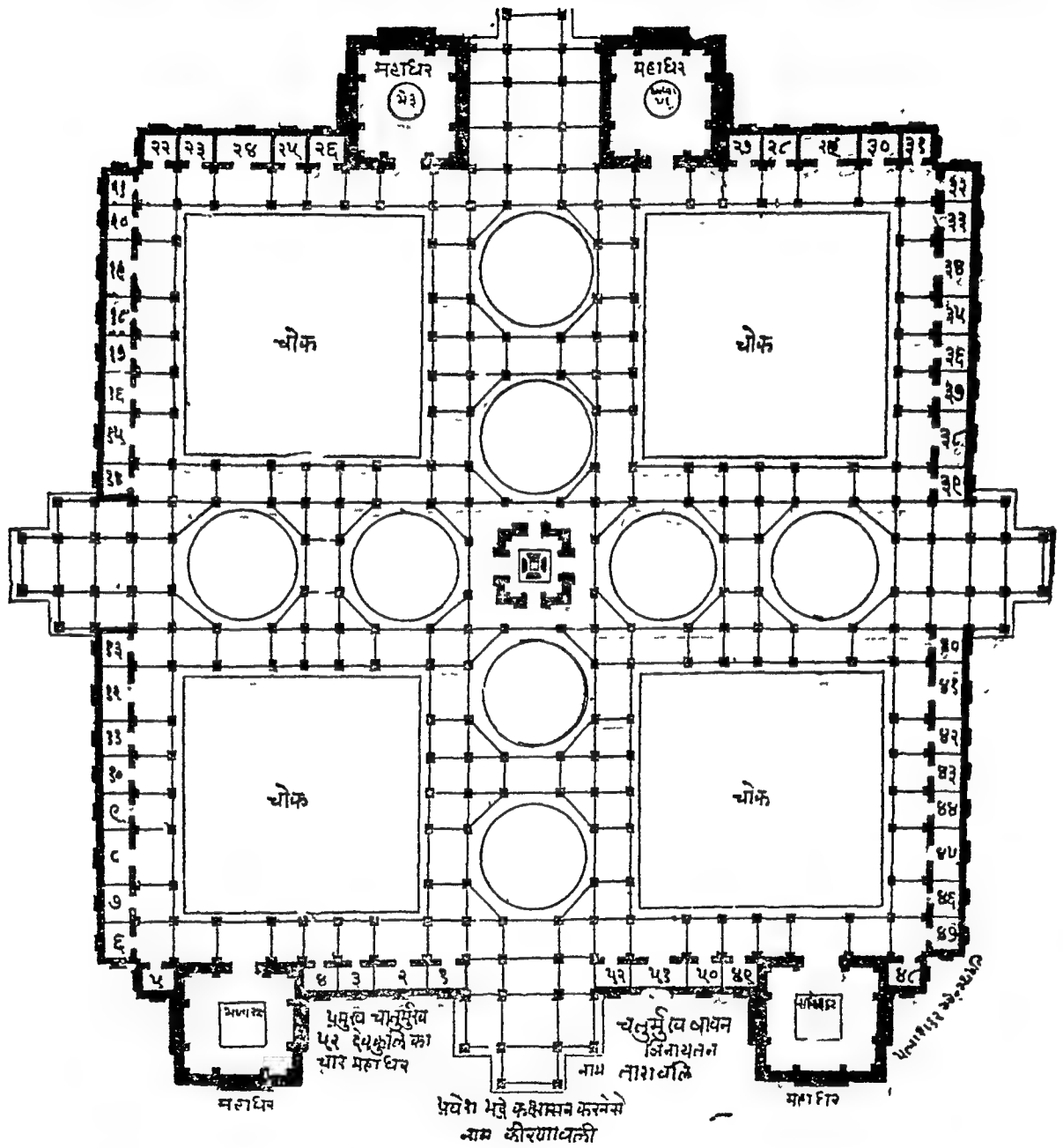
અથ પીઠં મવેચ્ચૈત્યે પ્રાસાદે જ્યેષ્ઠ પીઠકમ્ ।

કર્ણ કક્ષાન્તરે કૃત્વા પટં ચૈત્ય પ્રદક્ષિણે ॥૪૦॥

‘ભાવાર્થ’—નાગગદિ અને દ્રવિડાદિ છંદના મંડોવર ડાહ્યા પુરુષોએ કહ્યા છે, તે સાંભળો તમે છંદને અનુસંગીને કોળી હીન ન કરવું જે અજ્ઞાનતાથી તેમ કરે તો પ્રાસાદ બાધવાનું પુણ્ય વર્જિત થાય એવી સ્તલો ફરતા પ્રદક્ષિણાએ ભ્રમમા કરવા એવીશ જિનાલયની મધ્ય પંક્તિમા તેમ તેર ચારખૂણે કરી બાવન છંદનાયતના ક્ષેત્રમા તેમ કરવું જે મંડપો જોડતા હોય તો વચ્ચે એક પદ જોડવું અતર એકીનું રાખવું ચૈત્યને નીચે પીઠ કરવું મૂળ પ્રાસાદને જોડ માનવું પીઠ કરવું જિનાયતનની ફરતી પંક્તિમા ખુણે અને વચ્ચે કક્ષમા છ ચૈત્ય ફરતા કરવા (તેને મહાધર કહે છે)

નાગરાદિ ઓર દ્રાવિડાદિ છંદકે મંડોવર બુદ્ધિમાનનાં કહે હું વે સુનો । તલજીવકો અનુસરકે ‘કોલીહીન ન કરેના । જો અજ્ઞાનતાસે એસા ક્રિયા જાય

तो प्रासाद बाँधनेका पुण्य वर्जित होता है ।...अस्सी स्तंभोंको फिरते प्रदक्षिणामें भ्रममें करना । चौबीस जिनालयकी मध्य पंक्तिमें तेरह तेरह चार कोनेमें कर बावनके क्षेत्रमें वैसा करना । दो मंडपों मिलते हो तो विचमें एक पद जितना अंतर चौकीका रखना । चैत्यके नीचे पीठ करना । मूल प्रासादको जेष्ठमानका



३५६ स्तंभ संख्या
४८ महाधर ४
१२ मूल चोमुख
२०८ देरी पर
६२४ कुल स्तंभ

बावन देवकुलिका सहित चतुर्मुख
नाम "ताराउली"
प्रवेश भद्रे कक्षासन करनेसे
"किरणावली"

१ चतुर्मुख
५२ देवकुलिका
४ महाधर
५७
४ मेघनाद मंडप
४ मंडप
४ बलाणक

पीठ करना । जिनायतन की फिरती पक्तिमें कोने पर और त्रिचमे कक्षमें छ
चैत्यों फिरने करना । (उसे महाधर कहते हैं ।)

भद्रस्य कोष्टकं वक्ष्ये मुखभद्रे त्रीणिभवेत् ।

तत्स्थाने वेदिका रम्या सुभद्रा सर्वकामदा ॥ ४१ ॥

॥ इति किरणावली ॥

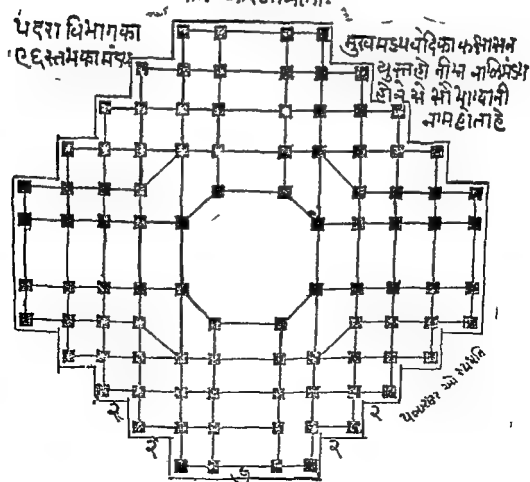
भद्रना डोडानु कहु धु सुभ भद्रने त्रये स्थाने रम्य अथी वेदिका-सुभद्रा
अर्ध कामनाने देनारी करवी ते किरणावली जलुवी ४१

इति किरणावली=भद्रके कोठके चारमे कहता हूँ । मुख भद्रके तीनों स्थान
पर रम्य ऐसी वेदिका सुभद्रा सर्व कामनाको देनेवाली करना । उसे किरणावली
जानना । ४१

कीरणावली—सौभाग्यानी

कीरणावली मंडप—मुख मंडप वेदिका प्रसासन युक्त और निम्न वाली मंडप
करनेसे सौभाग्यानी नाम पदरा विभागका ९६ स्तम्भका मंडप

नाम कीरणावली.



दिपंचाशज्जिनालये स्तम्भको मंडपद्वयम् ।

तस्याग्रे वेदिकास्यात् पंक्ति सोपान संचयः ॥ ४२ ॥

द्विसप्तति जिनावासे मंडपे मध्यवेदिका ।

नाली मंडप समाख्याता वेदिकासनमंडिताः ॥ ४३ ॥

भावन जिनालयमां आगण इरता स्तंभो अने तेने जे मंडपे
करवा. तेनाथी आगण पगथियानी पंक्ति करवी. अछोंतेर जिनायतनने मध्यमां
मंडप वेदिकायुक्त करवो. नीचे नाली मंडपनो आगणनो लाग वेदिका आसन
पट्टी शोभतो करवो. ४२-४३.

वावन जिनालयमें आगे फिरते स्तंभों और उसे दो मंडपों करना । उससे
आगेके भागमें (स्तंभोंको कक्षासन युक्त) वेदिका और उससे आगे पगथियेकी
पंक्ति करना । बहोत्तर जिनायतनके मध्यमें मंडप वेदिका युक्त करना । नीचे
नाली मंडपका आगेका भाग वेदिका आसनपट्टसे शोभता करना । ४२-४३.

कर्ण भाग द्वयं कार्यं प्रतिकर्णद्वयं भवेत् ।

सप्तभागायतं भद्रं मुख भद्रं त्रयं कारयेत् ॥ ४४ ॥

निष्कांशो भाग भागेन वेदिका मुखमंडनी ।

नाली मंडप सौभाग्यं स्वरूपो लक्षणान्वितं ॥ ४५ ॥

॥ इति सौभाग्यानी ॥

मंडपना तण विलाग छे छे. कर्ण रेखा जे लाग, प्रतिस्थ पाणु जे
लागनो सात लागनुं लद्र तेने त्रणु तरङ्ग मुख मंडप करवा (लद्रमांथी त्रणु
लागनु सुणलद्र) तेमां नीकाला अकेक लागना राखवा मुख मंडपने वेदिका
कक्षासन करवु जेवा स्वरूप अने लक्षणवाणो सौभाग्यानी नामनो नाली मंडप
बानुवो. ४४-४५. धति सौभाग्यानी.

मंडपका विभाग कहते हैं कर्ण=रेखा और प्रतिस्थ दो दो भागका सात
भागका भद्र रखना उसके तीनों बाजु मुख भद्र करना (भद्रसे तीन भाग मुख
भद्र ?) उसका निकाला एकेक भागका रखना । मुख भद्रके वेदिका कक्षासन करना
ऐसे स्वरूप और लक्षणवाला सौभाग्यनी नामके नालिमंडप जानना । ४४-४५.

नववेद षट्कोष्ठेन प्रासादा जिनचरिताः ।

तन्मध्ये मेघनादः स्यात् स्थापने पुण्यसागरः ॥ ४६ ॥

७ × ७ = आगण पयास पदमां छ कोष्टकना पदना जिननो प्रासाद रथ
साथे वरये करी तेमां मध्यमां मेघनाद नामनो मंडप स्थापन करवाथी अनेक
सागरोपम गाणुं पुण्य प्राप्त थाय. ४६.

उनचास पदमे छ कोष्टके पदके जिनके ग्रामाद रथ के साथ निचमे कर उनमे मध्यमे मेघनाद नामका मंडप स्थापन करनेसे अनेक सागरोपम गुना पुण्य प्राप्त होता है । ४६

तारका पच भूत्कार्यैर्जर्द्धये वृषभंगयणा सडं जिणालय होइशो सहीपुणे कजेणा उदकारस्य पचभृड जुड पदउयपगणणे सेइ जिणालयं इसो सो ही पुण्य कालेन ? (?) ४७

(४७)

मध्य परिध्य वेदी सा वेदी चेडआणादि देय अर्द्ध चतुर्मुखे यनरौरवान्न ? ॥४८॥

(४८)

पइपष्टि शतत्रीणि कोष्टका याम विस्तरे । आवर्जित ग्रयत्नेन चौकाग्रेण शतत्रय ॥ ४९ ॥

त्रयुसेने आठ पदना विस्तारवाणा डोडाभा अक्रमे त्रयु पद (४६)
तीनसौ साठ पदके विस्तारवाले कोठेमे एक सौ तीन पद ४९

ब्रह्मस्थाने च सस्थाप्य पंचविंश चतुर्मुखे ।

त्रिपंचपट् संघाटां प्रासादा रथ संयुता ॥ ५० ॥

शतकोष्टस्य तन्मध्ये च मेघनादश्चतुर्दिशि ।

रथयुक्ताश्च प्रासादा वेदियुक्ताश्च मंडपाः ॥ ५१ ॥

क्षेत्रस्यायाम विस्तीर्णं योगकोष्ठाः सप्तदशः ।

चतुर्मुखे षोडश स्तंभा दिशिगाह्यमुत्तरमेव च ॥ ५२ ॥

।

चतुर्मुखे युक्तिरुरै निरन्तरे ॥ ५३ ॥

द्विभूमि रचिता पुंसि ! मेघनाद स्वच्छद् जाति वर्णाभिरतरं ।

चतुर्दिशीं स्तंभमुखे मंडित शुभ सहस्र कार्यमुख पक्ति प्रदायनी ॥ ५४ ॥

लापार्थ—क्षेत्रना ब्रह्मस्थानभा पञ्चीश भड पदभा योभुजनी रथना करवी त्रयु पाय छ ओम नोडता प्रासादो रथ साये अगे योवा सो पदना डोडाभा मध्यभा आरे द्विशाये मेघनाद मंडपनी रथना करवी प्रासाद ओम रथादि अग युक्ता करवा तेम मंडपो वेदि कक्षासन युक्ता करवा (५१) क्षेत्रनी लभाछ अने पंडोणाधना योगे करीने मत्त डोडा करवा तेमा योग्वाधभा सोण स्तलो गडागनी (उत्तर) द्विशाभा करवा । युक्तिथी चतुर्भुजभा छमे शा

येनवा (५३) पोतानी नती अने वणु छंदनो मेघनाद मंडप थे भूमिनो
रथवो. ते आरे दिशाये पोताना मुण्थी शोभतो.....(५४).

क्षेत्रके ब्रह्मस्थानमें पच्चीश खंड-पदमें चोमुखकी रचना करना । तीन पाँच
छ इस तरह जोड़ते प्रासादों रथके साथ अंगोंको योजना । सो पदके कोठेके
मध्यमें चारों दिशामें मेघनाद मंडपकी रचना करना । जिसे तरह प्रासाद को
रथादि अंग युक्त करना इस तरह मंडपों वेदि कक्षासन युक्त करना । (५१)
क्षेत्रकी लम्बाई और चौड़ाईके योगसे सत्रह कोठे करना । उसमें चौरसाइमें
सोलह स्तंभ बाहरकी (उत्तर) दिशामें करना ।

.... युक्तिसे चतुर्मुख हमेशा....योजना ५३
अपनी जाती और वर्णके छंदका मेघनाद मंडप दो भूमिका रचना । वह
चारों दिशामें अपने मुखसे शोभता ५०-५१-५२-५३-५४.

द्विसप्तति जिनान्यक्षे नालिमंडप जिनविर ।

रचिताम्यमत्त मेरुकृतेभृवल भास्करेक्ति कारका सदा पदतश्चले ॥५५॥

गडोतेर जिनायतनभां नीचे नालि मंडप.....उपर आर स्तंभना
मंडपभां रम्य येवा “मेरु” नी रचना करवी.... ५५

बहोतर जिनायतमें नीचे नालि मंडप ... उपर बारह स्तंभका मंडप
से रम्य ऐसे “मेरु” की रचना करनी ५५

प्रासाद भवने चैव आयामे विस्तरे शुभम् ।

भागैकं च भवेत्कर्ण पंचाशिति शतद्वयम् ॥५६॥

युक्ति बाह्यं प्रकर्तव्यं चतुष्कोष्ठा मुखाग्रे च ।

जलान्तरं गतं द्वारं वेदिका मुखमंडितम् ॥५७॥

चंद्ररेखा च संस्थाने भद्रं च नवभागिकाम् ।

निष्कांश भागमेकेन चतुर्दिक्षु व्यवस्थितम् ॥५८॥

त्रीणि त्रीणि भवेत्वेदी स्थापदैर्न न नाभं च षोडश !

जिनवाचं वरमुच्यते ! चतुर्भूमियदानि च ॥५९॥

पदैकं षोडश पदे च मध्यस्तु पद (वेद) मुखै ।

इलिका तौरणैर्युक्तं रवि रेखा विराजितं ॥६०॥

नालिमंडप संयुक्ता द्वित्रिभूमि समाकुलाः ।

वेदिकासन पट्टेश्व पंक्ति सोपान संचयः ॥६१॥

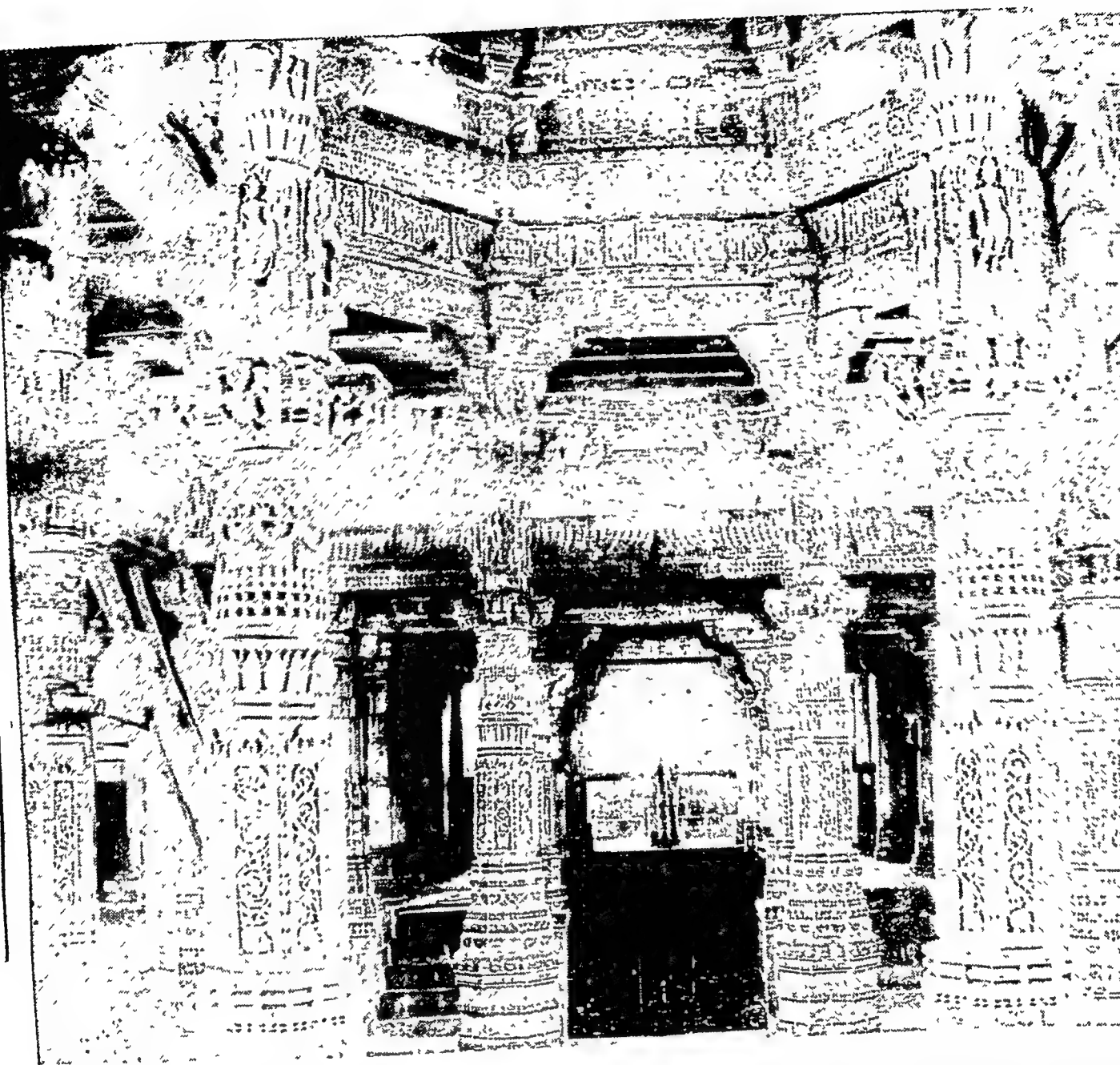
लावार्थ—प्रासाद भवनना क्षेत्रनी लणार्ध पडोणार्धना भन्ने पचाशी विभागना कोठाभा चार भुजे ओकेक भागना कर्ण गणवो युक्तिथी भहार चार कोठा भुभना अत्रे करवा जलान्तर् । भा द्वार करी वेदिकादिथी भुभ शोभित करवु अद्ररेणा ! () ना स्थाने नव भागनु भद्र करवु तेनो निकाणो ओकेक भागनो ओभ आत्रे तर्क करवु त्रषु त्रषु पदनी वेदी चार भूमि जिया (५६-५८)

ओकेक पद ओभ सोण पदना मध्ये करवु तेने धलिका तोरणथी युक्त रविरेणा ! () तेने नालिम उप साथे जे त्रषु भूमिवाणो करवो तेने राजसेनक वेदिका आसनपट्टादि करवा अने आगण पगथियानी पक्ति करवी ५६ थी ६१

प्रासाद भवनके क्षेत्रकी लम्बाई चौडाईके दोसो पचाशी विभाग—कोठके चार कोनेमे एक एक भागका कर्ण रखना । युक्तिसे वाहर चार कोठे मुखके अगले भागमे करना । जलान्तर । मे द्वार कर वेदिकासे मुखको शोभित करना । चंद्र रेखा । () के स्थान पर नौ भागका भद्र करना । उसका निकाला एक एक भागका इस तरह चारो ओर करना । तीन तीन पदकी वेदी चार भूमि ऊँचे एकेक पद इस तरह सोलह पदका मध्यमे करना । उसे इलिका तोरणसे युक्त रवि रेखा । () उसे नालि मंडपके साथ दो तीन भूमिवाला करना । उसे राजसेनक वेदिका आसन पट्टादि करना और आगे पगभियेकी पक्ति करना । ५६ से ६१

मेघनादैश्वसंयुक्ता द्वैश मृदा मेघनाश्रितं ।
मटलैर्मंडिता जाती इलिकाकुण्ड नालिका ॥६२॥
पुनः प्रासाद विधिपूर्वा नारदः शृणु सांप्रतम् ।
सभ्रमाय भ्रमहीन (पूर्वा) द्रव्यहीना धिरुं स्तथा ॥६३॥
गतोऽयं दिव्यलोकेन पुनः क्षीरार्णवे श्रुमे ।
क्षेत्रं मंदाति प्राज्ञः नैव चिंचति मानुषैः ॥६४॥
तथा वैध रहितानि सिंह द्वाराणि सर्वतः ।
सभ्रमं तत्र कार्यं च सिंह दारे च मंडपे ॥६५॥

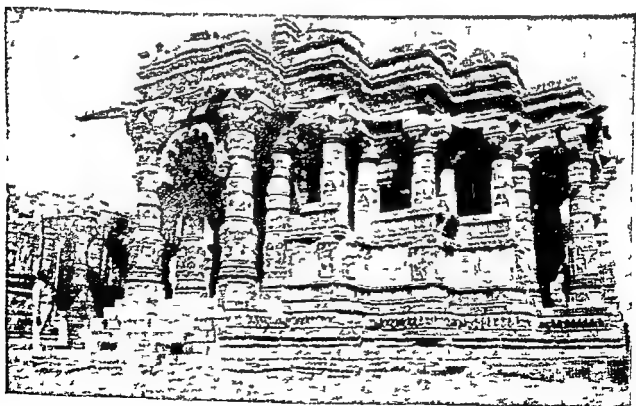
लावार्थ— ना आश्रित मेघनाद भहित भ उप भट्टणो—धलिका तोरणदिथी सुशोभित करवो छे नारद, छेवे क्षरी प्रासादनी विधि साभणो भ्रमयुक्त के भ्रम वगरने ते तो द्रव्यनी छीन अधिकता प्रभावे करवु तेथी



राणकपुर (राजस्थान) के मंदिरका बेघनाद मंडपका अंतरस्थ भव्य द्रश्य स्तंभ मदल और कलायुक्त



मोदेरा के कलामय सूर्यमंदिर के भडपद्वार स्तभ और गजताल्लयुक्त तोरण



मोदेरा के कलामय सूर्यमंदिर के नृत्यमण्डप का बाह्य दर्शन-पीठ वक्षसन स्तभादि

तेवो प्रासाद करावनार दिव्यलोकमां नृध विष्णुना शुभ एवा क्षीरार्णवमां नृध. क्षेत्रनी मंदता नाना मोटानी उद्या मनुष्ये चिंता न करवी. (स्थान प्रमाणे भ्रमवाणे के भ्रम वगरेनो एवो प्रासाद करवो.) परंतु ते वेध रहित करवो. चारे पाणु सिंहु द्वारे (प्रवेश) करवा. ते भ्रमवाणा प्रासादने मंडप सिंहु द्वार वाणा करवा. ६२-६३-६४-६५.

.....के आश्रित मेघनादके साथ मंडप-मदलो-इलिका तोरणादिसे सुशोभित करना । हे नारद, अब फिर प्रासादकी विधि सुनो । भ्रमयुक्त या भ्रमके बिनाका वह तो द्रव्यकी हीनाधिकताके अनुसार करना । इससे वैसा प्रासाद करनेवाला दिव्यलोकमें जाकर विष्णुके शुभ ऐसे क्षीरार्णवमें जाता है । क्षेत्रकी मंदता छोटे बड़ेकी पुञ्ज मनुष्यको चिंता न करनी चाहिये । (स्थानके अनुसार भ्रमवाला या भ्रमके बिनाका प्रासाद करना ।) परंतु उसे वेध रहित करना । चारों तरफ सिंह द्वारों (प्रवेश) करना । उस भ्रमवाले प्रासादको सिंह मंडप द्वारवाले करना । ६२-६३-६४-६५.

एकजंघा नवजंघा प्रासादेस्य श्रुतमुखे ।
तथा भ्रमश्च निर्वाण द्वयो जंघा नियोजयेत् ॥६६॥
ततः कुर्यात्प्रयत्नेन सिंहद्वारं विशेषतः ।
पुष्परागश्च सर्वेश सर्वविस्तर प्रजायते ॥६७॥
मिश्र मेघं प्रकर्तव्यं सिंहनादस्तथा भवेत् ।
सर्व मेघ स्ततो वक्ष्ये उक्तं प्रासादमुत्तमम् ॥६८॥

महाचातुर्मुख प्रासादना मंडोवरने ऐकथी नव जंघा चडाववी. इरतो भ्रम होय तो जे जंघा चडाववानी थोवना (तो जर). तेने प्रयत्ने करीने सिंहु द्वार तो विशेष करीने करपुं. पुष्पराग आदि सर्व प्रासादो पछोणाध वाणा करवा. तेने मिश्र मेघनाद के सिंहुनाद मंडपो करवा. तेवा उत्तम प्रासादोने सर्वेने मेघनादादि मंडपो करवानुं कहुं छे. ६६-६७-६८.

महा चातुर्मुख प्रासादके मंडोवरको एकसे नौ जंघा चढ़ाना । फिरता हुआ भ्रम हो तो दो जंघा चढ़ानेकी योजना (जरूर) करना । उसे यत्न करके सिंह द्वार तो विशेष कर करना । पुष्पराग आदि सर्व प्रासादों चौड़ा ईवाले करना । उसे मिश्र मेघनाद या सिंहनाद मंडपों करना । वैसे उत्तम प्रासादोंको मेघनादादि मंडपों बनानेके लिये कहा है । ६६-६७-६८.

पूर्वे च पश्चिमे चैव उत्तरे दक्षिणे तथा ।
 सर्वत्र मेघनादं च तत्पुण्यं सागरोपमम् ॥६९॥
 प्रासादस्य छन्देन मंडपस्य चतुर्दिशि ।
 उत्तमं तद्वे द्वास्तु इहलोके स्वयंभूवा ॥७०॥
 प्रासादे ज्येष्ठमानं च मंडपं कन्यसं भवेत् ।
 त्रयोद्वारा भवेत्यत्र सिंह द्वार विवर्जितम् ॥७१॥

महाचातुर्मुख प्रासादने पूर्व पश्चिम उत्तर अने दक्षिणे ओंम आरे
 दिशाओमे मेघनाद मंडपोनी रचना करवाथी सागरोपम पुण्यनी प्राप्ति थाय
 छे प्रासादना पोताना छदने। मंडप आरे द्विगाओ करवे। ते उत्तम वास्तुथी
 आ लोकभाथी स्वय स्वदेहे मोक्ष जाय छे आवा ओं भानना प्रासादने
 कनिष्ठ भानना मंडप करी शक्य तेने त्रिषु पालुओ द्वार करवाभा आवे तो
 ओं तरफनु भिड़ द्वार न करु ६९-७०-७१

महाचातुर्मुख प्रासादको पूर्व पश्चिम उत्तर और दक्षिण इस तरह चारो
 दिशाओमे मेघनाद मंडपोकी रचना करनेसे सागरोपम पुण्यकी प्राप्ति होती है।
 प्रासादके अपने छदका मंडप चारों दिशाओमे करना। वह उत्तम वास्तुसे स्वय
 स्वदेहे मोक्षमे जाता है। ऐसे ज्येष्ठमानके प्रासादको कनिष्ठमानका मंडप कर
 सकते हैं। उसे तीनों तरफ द्वार किया जाय तो एक तरफका सिंह द्वार न
 करना। ६९-७०-७१

अष्टहस्ते भवेत्पादौ यावद् दृग्वचक्रम् ।
 भ्रमोदय च कर्तव्यं योजया द्वि भूमिका ॥७२॥
 एक भूम्या द्वयो यत्र भूमिर्जंघा विधिरुमाम् ।
 मया प्रोक्त माधवा चैकादौ मास्तरात्तक्रम् ॥७३॥

आठ हाथना प्रासादथी पदर हाथना भ्रमवाला प्रासादने भ्रमना उदयभा
 मे भूमि करवी ओ ओं भूमि (ना साधार मंडाप्रासादना भेउ मंडोपर) ने ओ
 जंघा करवी ओं कमे विधिथी मे ओं कथी पार जंघानी भूमिनु मे
 कहु छे ७२-७३

आठ हाथके प्रासादसे पदरा हाथके भ्रमवाले प्रासादको भ्रमके उदयमे दो
 भूमि करना यह एक भूमि (के साधार महाप्रासादके मेह मंडोपर) को दो
 जंघा करना। इस तरह क्रमसे विधिसे मैने एकसे बारह जंघाकी भूमिका मैने
 कहा है। ७२-७३

तथा पीठस्ततोरिधि मानं मंडोवरं शृणु ।
 क्षीरसागरमुत्पन्ना प्रासादास्युश्चतुर्मुखाः ॥७४॥
 षड्भागं च भवेद् भिट्टं पंचभागं द्वितीयकम् ।
 भागं भागं च निष्क्रान्तं त्रिपदं च तृतीयकम् ॥७५॥
 सप्तांशं जाड्यकुंभं च त्रयोदश कणालिका ।
 द्वादशयोच्छ्रिता हस्ति हयास्तु वसुभागिकः ॥७६॥
 ²(सप्त भागां नरपीठं पीठं सप्त चत्वारिंशतः)² ।
 तथा निष्क्रान्तं वक्ष्यामि द्विपदं भिट्टमेव च ॥७७॥
 द्वितीयं तत्समं काय पदमेकं तृतीयकम् ।
 वसुभिः जाड्य कुंभं च कणालिका षड्मेव च ॥७८॥
 गजाश्चत्वारि भागानि त्रयं सार्द्धं तुरङ्गमाः ।
 द्विपदं नरपीठं च शिरपट्टीनु मेकतः ॥७९॥
 (द्वेहया च गजद्वेय उपटीया संपूजितं) ।

हे ऋषिराज, હવે ક્ષીર સાગરમાં ઉત્પન્ન થયેલ એવા ચતુર્મુખ મહા-
 પ્રાસાદના પીઠ વિભાગ અને મંડોવર માન સાંભળો (૭૩) ત્રણ ભિટ્ટમાં પહેલું
 છ ભાગનું, બીજું પાંચ ભાગનું અને ત્રીજું ત્રણ ભાગનું (એમ જે માન
 આવ્યું હોય તેના ચૌદ ભાગ કરીને ત્રણભિટ્ટ કરવાં) અને તેના નિકાળા એક
 એક ભાગના રાખવા. સાત ભાગનો જડંબો. તેર ભાગની કણી, (છાજલી અને
 ગ્રાસ પટ્ટી સાથે) કરવી. બાર ભાગનું ગજપીઠ, આઠ ભાગનું અશ્વપીઠ અને
 સાત ભાગનું નરપીઠ કરવું. એ રીતે મહાપીઠના ઉદયના સુડતાળીશ ભાગ
 બાણવા. ૭૪-૭૫-૭૬-૭૭.

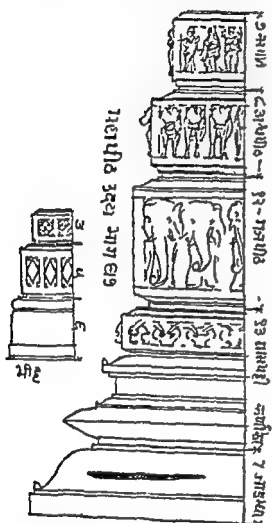
હવે નિકાળા કહે છે. પહેલું અને બીજું ભિટ્ટ બખબે ભાગ અને ત્રીજું
 ભિટ્ટ એક ભાગના નિકાળાનું કરવું. જડંબાનો આઠ ભાગ નિકાળો, કણીનો
 છ ભાગનો, ગજપીઠનો બાર ભાગનો, અશ્વપીઠનો સાડા ત્રણ ભાગનો, અને
 નરપીઠનો બે ભાગનો નિકાળો રાખવો. માથાની પટ્ટીથી નરના રૂપ એક ભાગ

(૨) કૌંસમાં આપેલ શ્લોક ૭૭ ના બે પદો-સાત ભાગનું નરપીઠ અને કુલ ઉદય
 સુડતાલીશ દરેક પ્રતોમાં નથી. પરંતુ તે બે પદ હોય તો જ પીઠ વિભાગ પૂર્ણ થાય. તેથી
 તેની પૂર્તિ કરવા રજા લઈ છું.

(૨) कौंसमें दिये हुए श्लोक ७७ के दो पदों सात भागका नरपीठ और कुल उदय
 सैतालीश दरेक प्रतोंमें लहियेके दोषसे नहीं है। परंतु दो पद होनेसे ही पीठ विभाग पूर्ण
 होता है। इससे उसकी पूर्ति करनेके लिये क्षमा करना।

नीकणता पट्टीथी जे लाग अश्वपीठना ३५ नीकणता कवा गजपीठना उपे,
नीचेनी पट्टीथी जे लाग नीकणता कवा

हे ऋषिराज, अब क्षीर सागरमे उत्पन्न हुए ऐसे चतुर्मुख महाप्रासादके
और मंडोपरभान सुनो। तीन मिट्टेमे पहला २. भागका, दूसरा पाँच भागका
और तीसरा तीन भागका (इस तरह जो मान आया हो उसके चौदह भाग



कर तीन मिट्ट करना। और उनके निकाले
एक एक भागके रखना। सात भागका
जाडवा तेरह भागकी कणी, (छाजली
और घास पट्टीके साथ) करना। बारह
भागका गजपीठ, आठ भागका अश्वपीठ
और सात भागका नरपीठ करना। इस
तरह महापीठके उदयके सुडताग्रीश भाग
जानना। ७४-७५-७६-७७

अब निकाले कहते हैं। पहला और
दूसरा मिट्ट दो दो भाग और तीसरा
मिट्ट एक भागके निकालेका करना।
जाडवाका आठ भाग निकाला, कणीका
छ भागको, गजपीठका चार भागका,
अश्वपीठका साढ़े तीन भागका, और नर
पीठका दो भागका निकाला रखना।
सरकी पट्टीसे नरके रूप एक भाग निक
लते-पट्टीसे दो भाग अश्वपीठके रूप निक-

३ मिट्ट भाग १४ और महापीठ विभाग ४७ लते करना। गजपीठके रूपों-नीचेकी
पट्टीसे दो भाग निकलते करना। ७८-७९

तथा मंडोपरं वक्ष्ये सुरकं द्विपदं भवेत् ॥८०॥
कुभकं पंचसार्द्धच कलश त्रिपदं शुभं।
अंतरपत्रं पदमेकेन कपोतालं त्रयपदा ॥८१॥
मचिका त्रयसार्द्धा चं जघैकादशपंचके।

इसे महायोगभुजना मंडोपरना लाग कहु छु भरी जे लागने, कुलो
साडापाय लागने, कणशो त्रय लाग, अंतरपत्र ओक लाग, केवाण त्रय लाग,

भाची साडा त्रणु लाग अने ओक पडेली जंघा, पंदर लागनी ठाची करवी. (हुये ते जंघाभां करवाना जुदा जुदा देव देवांगना दिग्पालादिना स्वरूपो छे छे). ८०-८१.

अब महाचोमुखके मंडोवरके भाग कहता हूँ। खरा दो भागका, कुंभा साढे पाँच भागका, कलश तीन भागका, अंतरपत्र एक भाग, केवाल तीन भाग, माची, साढे तीन भाग और एक पहली जंघा, पंद्रह भागकी ऊँची करना। (अब उस जंघामें करनेके भिन्न भिन्न देव देवाङ्गना दिग्पालादिके स्वरूपों कहते हैं। ८०-८१.

लोकपालाश्च दिग्पालाः अतीवानन्दपूरिताः ॥८२॥

रथदेवादीनां तत्र नृत्यवादित्र संयुताः ।

लास्यस्तांडवश्चैव तालानां च विशेषतः ॥८३॥

आयुधैर्वाहनैर्युक्ता नृत्यं कुर्वति देवताः ।

उत्सवं जिनालये च विशेषेण चतुर्मुखे ॥८४॥

इंद्रनाद्यं प्रकुर्वितं गण सेव्यं पुरावृत्तं ।

अधः बाण कर तंच नृत्यमानादि हस्तकम् ॥८५॥

अधोद्वष्टि विशेषेण वामयान पदस्तलम् ।

षड्भुजा अष्टभुजा वा मूर्ति मानादि संयुतं ॥८६॥

मंडोवरनी जंघाभां लोकपाल अने दिग्पालनां स्वरूपो अति आनंद लावयुक्त करता करवा. रथ प्रतिरथभां देवांगनानां स्वरूपो वाजंत्र साथे नृत्य करता जेडलां रूपो पणु करवां लास्य अने तांडवादि तालथी नृत्य करता रूपो विशेषे करीने करवां. आयुध अने वाहनवाणा इंद्रादि स्वरूपो चतुर्मुख लूनलवनभां उत्सव होय तेम नृत्य करता तेम ज ताल आपता गण सेवकोना करता स्वरूपो करवां. देवांगनाओनां स्वरूपोभां कोर्ध नीचे आणु मारता हाथवाणी-कोर्ध नृत्य मानादि हाथ मुद्रा युक्त करवी. विशेषे करीने देवांगनाओ नीची दृष्टिवाणी कोर्ध समान पद तगवाणी कोर्ध उभा उपडता पदतालवाणी ओवी देवांगनानां स्वरूपो करवां. देवोनी मूर्तिओ, कोर्ध (चार) छ के आठ हाथवाणी मानसूत्र प्रमाणु साथे सप्रमाणु करवी. ८२-८३-८४-८५-८६.

मंडोवरकी जंघामें लोकपाल और दिग्पालके स्वरूपों अति आनंद लावयुक्त करना। रथ प्रतिरथमें देवांगनाके स्वरूपों वाजित्रके साथ नृत्य करते युगल रूपों भी करना। लास्य और तांडवादि तालसे नृत्य करते रूपों विशेष करके करना।

आयुध और वाहनवाले इद्रादि स्वरूपों चतुर्मुख जिन भजनमें उत्पन्नमें हो इस तरह नृत्य करते और ताल देते गण सेजकोके फिरते स्वरूपों करना । देवाङ्गनाओंके स्वरूपमें कोई नीचे बाण मार्गते हाथवाली—कोई नृत्यमानादि हाथ मानादियुक्त करना । विशेषकर देवाङ्गनाओं नीची दृष्टिवाली कोई समान पद तलवाली कोई बाये उठाए हुए पदतलवाली ऐसी देवाङ्गनाके स्वरूपों करना । देवोंकी मूर्तियों कोई (चार) छ या आठ हाथवाली मान सूत्र प्रमाणके साथ—सप्रमाण करना ।

८२-८३-८४-८५-८६

तालमाना* समाख्याता नृत्यंति षोडशां कलाः ।

पद्महस्ताश्च (सहिता) अग्निगणा ते चाप सव्यतावृतम् ॥८७॥

वामहस्तंश्च कर्णाति दक्षयान पद तलम् ।

दक्षपादोत्तलं कृत्वा द्विधा वामांगसंयुतम् ॥८८॥

अधोरुरश्च वामालिन्यो यमो दक्षिणनिरीक्ष्यते ।

नैऋत्ये क्षेत्रपालश्च यक्षगण स्ततोपर ॥८९॥

अधो हेतु तेजां ते (१) उत्तानं नृत्यकारकम् ।

परावृत्य च वरुणं शिर दक्षकरो भवेत् ॥९०॥

अधो दृष्टिं प्रयत्नेन हृदये वामहरतकम् ।

भोजे कथाथी भिलेला तालमानथी नृत्य करती देवागनाना नृपों करवा छ भूजवाणा अग्नि गण सव्यापसव्य गोल अग मरोडवाणा रूपा करवा देवागनाओंमा आगे हाथ कर्णोंमें अंगों करता नभल्लो हाथ पग (पकड़ते) करवा डेटलीक देवागनानो नभल्लो पग कमणनी जेवो भील वीधिथी आभा अग देवाउती जेवी देवागना करवी जेनो हाथ नीचे आगी तरङ्ग ढगता नृत्य करतो करवा दक्षिण दिशाभा यम=धर्मगन निरीक्षण करता करवा नैऋत्य कोणमा क्षेत्रपाल (लैरव नीरति) ना नृपों करवा यक्ष अने गणाना उपो पण करवा श्रेष्ठ (विभी) जेवी “उत्तान” देवागना नृत्य करती करवी पश्चिम दिशाभा वरुण देवतु स्वर्ग करवा देवागनाओंमा डेटलीकनो नभल्लो हाथ भरतकपर करवा नीचे दृष्टि गणेशी अने आगे हाथ छातीजे शशीने नृत्य करती करवी ८७-८८-८९-९०

सोलह कलाओंसे त्रिकसे हुए तालमानसे नृत्य करती देवागनाके स्वरूपों करना । छ भूजवाले अग्निगण सव्यापसव्य गोल अग मरोडवार रूपों करना । देवागनाओंमें बाया हाथ कर्णको स्पर्श करता, गहिना हाथ (पोंको पकड़ता) ,

करना । कहीं देवांगनाओंका दाहिना पाँव कमल जैसा, दूसरी विधिसे बाँया अंग बताती हुई देवांगना करना । जिसका हाथ नीचे बांओं तरफ ढलता नृत्य करता करना । दक्षिण दिशामें यमः धर्मराजको निरीक्षण करते करना । नैऋत्य कोणमें क्षेत्रपाल (भैख-नीरुति) के स्वरूपों करना । यक्ष और गणोंके रूपों भी करना ।.....श्रेष्ठ (ऊँची) ऐसी उत्तान देवांगना नृत्य करती करना । पश्चिम दिशामें वरूणदेवका स्वरूप करना । देवांगनाओंमें से कितनीका दाहिना हाथ मस्तक पर करना । नीचे दृष्टि रखी हुई और बाँया हाथ वक्ष पर रखी हुई नृत्य करती करना । ८७-८८-८९-९०.

वायव्ये वैतालका वक्ष्ये पुनस्तांडव्य ताङ्गतः ॥९१॥

भ्रमरीयं च विशेषेण वस्त्रहस्तं विशेषतः ।

कुवेरे पद्मिनीलिला गण इंद्रादि कोत्तमा ॥९२॥

प्रतांश्चान्ये दक्षहस्ते करैकं शिरभूषिता ।

इशाने इश्वरंश्चैव भुजाष्टकं संयुतः ॥९३॥

अभय प्रीवृतमुक्तिर्ण (?) वामहस्ते कारण (!) ।^३

वायव्य कोणमां (वायुदेव के) वैतालकां स्वरूप करवानुं कहुं छे-ते विशेष करीने भमरी करता तांडव नृत्य करतुं हाथमां वस्त्र धारण करेला करवुं उत्तरमां कुवेरनी साथे पद्मिनी देवांगना लीला करती गण इंद्रादि एवां उत्तम स्वरूपो शोभनां करवां. पद्मिनीनो नृत्य गतिमां नीचे जभणो पग ओक हाथ शिरपर शोभतो राखवो. इशान कोणमां इशानुं स्वरूप आठ भुजावाणुं अलयादि मुद्रा-वाणुं अने आभो हाथ.....६१-६२-६३.

वायव्य कोणमें (वायुदेव या) वैतालका स्वरूप करनेका कहा है । उसे विशेषकर भमरीके चारों तरफ तांडव नृत्य करता हाथमें वस्त्र धारण किया हुआ करना । उत्तरमें कुवेरकी साथ पद्मिनी लीला करते गण इंद्रादि ऐसे उत्तम स्वरूपों सुंदर शोभता करना । पद्मिनी नृत्य गतिमें नीचे पाउ दाहिना एक हाथ शिर

(३) गुजरात सौराष्ट्रनी धण्डी भरी क्षीरार्णवनी प्रतो अडीं श्लोक ६३ पछी समाप्त थाय छे. आगण नथी. परंतु अमारा संग्रहनी ओक प्रतमां अने आठ अध्याय वृक्षार्णवमां संपूर्ण भणतो होवाथी अपूर्णता दूर करी शक्य छे. ओ सद्व्याख्य.

(३) गुजरात सौराष्ट्रकी बहुत कुछ क्षीरार्णवकी प्रते यहाँ श्लोक ९३ के बाद समाप्त होती है । आगे नहीं है । परंतु हमारे संग्रहकी एक प्रतमें और यही अध्याय वृक्षार्णवमें संपूर्ण मिलनेसे-अपूर्ण दूर हो सकी है । यह सद्भाग्य !

Z तिलोत्तमा (कामरूपा) तिलोचना ।

पर शोभता रखना । इशान कोणमे ईशका स्वरूप आठ मुजापाला अभय आवि मुद्रावाला और बाँया हाथ । ९१-९२-९३

करे दक्षे मते सिद्धि वामयान पदस्तले ॥९४॥

मेनका दक्षिणांगानि भूतले प्रतिधारिता ।

रभा इन्द्रस्य संयोगे दक्ष याने पदस्तले ॥९५॥

वाण याम करे रम्या वीणा दक्षकरे पुरे ।

अग्निर्दक्षे वंशहस्ते प्रावर्तस्या च उर्वशी ॥९६॥

तेन नृत्ये पुनर्भावे देवता नृत्यकारिता ।

यमे त्रिलोचन उक्ता तालमंजीर कंसिका ॥९७॥

नृत्य भावे समाख्याता कामरूपा पदस्तले ।

जम्भुो हाथ छिद्र डागो पग ६४ मेनका दक्षिणांगी स्वर्ग
भाथी भूतले आवेल छे रला अने छिद्रना सयोगी आलिगन आपतु स्वर्ग
करतु जम्भुो पग डागो हाथमा रम्य अबु पाबु छे जम्भुो हाथमा
वीणा छे अग्नि डागुमा जम्भुो हाथमा वामणीवाणी उर्वशी अबु लावथी
नृत्य करता देवोना स्वर्गो करता दक्षिण दिशाभा यम भाथे ताल मंजरी अने
कासीया वज्रावती त्रिलोचना करवी नृत्य लाववाणी काम रूपाना पग ६४-
६५-६६-६७

दाहिना हाथ इन्द्र बाँया हाथ (९४) मेनका दक्षिणांगी
स्वर्गमेसे भूतलपर आयी हुई है । रभा और इन्द्रके सयोगी आलिगन देते हुए
स्वरूप करना । दाहिना पाँच बाँये हाथमे रम्य वाण है, दाहिने हाथमे वीणा
है । अग्नि-कोणमे दाहिने हाथमे वाँसुरीवाली उर्वशी ऐसे भावसे नृत्य करते
देवोंके स्वरूप करना । दक्षिण दिशामे ताल-मंजीरे और कासिया वजाती हुई
त्रिलोचना करना । नृत्य भाववाली कामरूपाके पांच ९४-९५-९६-९७

शची नैऋत्य संयोगे क्षेत्रपाल सदक्षिणे ॥९८॥

चंद्राउली दक्षकरं सो ! गणातल्लेखत्रपालका ।

परम लोकौ सप्तवामाङ्गे वरुणदेव समास्पृता ॥९९॥

मर्दनानि समायुक्त वाणं रभादिकोद्भूत ।

नृत्यन्ति वामदेव च मंजुवोपा सदक्षिणे ॥१००॥

वशुहस्ते खड्गगाद्यन्ति दक्षयाने पदस्तलं ।

रभादि देवरूपा च दिग्पाला सहसंयुता ॥१०१॥

नृत्यन्ति इंद्रंभा च देव * भवने चतुर्मुखे ।

मेनकादि ईशान्याद्या तदस्थान प्रदक्षिणे ॥१०२॥

शची नीरुती सहित नैऋत्ये दक्षिणे क्षेत्रपाल अने चंद्राउली हाथ नेउती क्षेत्रपाल अने गणो.....

पश्चिमे वरुण देव. कोष्ठ (शत्रुने) मर्दन करती. धनुष बाणवाणी. रंभा देवांगना करवी. वायव्ये वायुदेवता नृत्य करता करवा तेनी दक्षिणे मंजुघोषा देवांगनानुं स्वरूप करवुं. जेठ हाथना.....जंभणो.....पग.....

जंघाभां रंभादि देवकन्याओ. अने दिग्पालना स्वरूपो साथे इंद्र अने रंभा साथेना स्वरूपो देव लवनना चतुर्भुजभां नृत्य करतां करवां. ये रीते मेनकादि अत्रीश देवांगनाओनां स्वरूपो ध्यान कोणुथी करता प्रदक्षिणाओ. तेना स्थाने जंघाभां करवां. ६८ थी १०२.

शचीनीरुतीके साथ नैऋत्यमें दक्षिणे क्षेत्रपाल और चंद्राउली हाथ जोड़ी क्षेत्रपाल और गणों.....पश्चिममें वरुण देव कोई (शत्रुको) मर्दन करती धनुष-बाणवाली रंभा देवांगना करना । वायव्यमें वायुदेवताको नृत्य करते करना । उनकी दक्षिण दिशामें मंजुघोषा देवांगनाका स्वरूप, करना । दोनों हाथके खड्ग धारण करती दाहिना पग खडा रखे.....जंघामें रंभादि देवकन्याओं, और दिग्पालके स्वरूपोंके साथ इंद्र और रंभाके युग्म स्वरूपों देव भवनके चतुर्मुखमें नृत्य करते करना । इस तरह मेनकादि अत्रीश देवांगनाओंके स्वरूपों, ईशान कोणसे फिरते प्रदक्षिणामें उसके स्थान पर जंघामें करना । ९८ से १०२.

*मेनकादय ईशान्याद्या तदस्थाना च प्रदक्षिणे ॥१०३॥

लीलावती^२ विधिश्चिता^३ सुंदरी^४ शुभभामिनी^५ ।

* पाठान्तरे जिनभवने ।

(४) उपरनी अत्रीश देवाङ्गनाओभां केटलाङ्ग ग्रंथोभां छे. केटलाङ्गभां योवीश कही छे. ओरीस्सा-उडीया शिल्पभां सोण कही छे. वृक्षार्णव : क्षीरार्णव अने अमारा ग्रंथसंग्रहना ओणीयाभां केटलाङ्गना नाम लेहो पृथक् पृथक् कला छे. कोष्ठ ३५ लक्षणुभां भीन्नता छे अटले ५ सुस्वभाविनी=सुभाङ्गीनी. १० पद्मनेत्र=गुडशब्दा. १२ चित्ररूपा=पुत्रवल्लभा-चित्र-वल्लभा. १८ चंद्ररेखा=पत्रलेखा २४ भावचन्द्रा=भावमुद्रा. २८ भुजघोषा=मंजुघोषा. ३० मोहिनी=विजया ३१ उताना=चंद्रवक्ता. ३२ तिलोत्तमा=त्रिलोचना-कामरूपा.

(४) उपरकी वक्तीस देवाङ्गनाएँ कई ग्रंथोंमें है । कईमें चोविस कही है । वृक्षार्णव और क्षीरार्णव ग्रंथमें और हमारे पुराने ग्रंथ संग्रह के ओलियेमें नाम भेद पृथक् पृथक् कहे हैं । कोई कई रूप लक्षणमें भी भीन्नता है । सुखभाविनी=सुभाङ्गीनी १० पद्मनेत्रा=गुड शब्दा १२ चित्ररूपा पुत्रवल्लभ=चित्रवल्लभा १८ चन्द्ररेखा-पत्रलेखा २४ भावचन्द्रा-भावमुद्रा=२८ भुजघोषा=मंजुघोषा ३० मोहिनी=विजया ३१ उताना-चन्द्रवक्ता ३२ तिलोत्तमा=त्रिलोचना-कामरूपा ।

हंसावली^१ सर्पकला^२ तथा कर्पूरमंजरी ॥१०४॥
 पद्मिनी गूढशब्दा^{१०} च चित्रिणी^{११} चित्रवल्लभा^{१२} ।
 गौरी^{१३} गाधारिकाश्रैव^{१४} देवशाखा^{१५} मरीचिका^{१६} ॥१०५॥
 चंद्रावली^{१७} चंद्ररेखा^{१८} सुगंधा^{१९} शत्रुमर्दिनी^{२०} ।
 माननी^{२१} मानहंसा^{२२} च स्वभावा^{२३} भावमुद्रिका^{२४} ॥१०६॥
 मृगाक्षी^{२५} उर्वशी^{२६} रंभा^{२७} भुजघोषा^{२८} जया^{२९} तथा ।
 विजया^{३०} चंद्रवक्त्रा^{३१} च कामरूपा^{३२} च सस्थिता ॥१०७॥

जघानी इरती प्रदक्षिणाभा पोताना स्थाने ध्यान कोणसी १ मेनका,
 २ लीलावती, ३ विधिचिता, ४ सुहृदी, ५ शुभगामिनी (सुभागीनी) ६ हंसा
 वली, ७ सर्वकला, ८ कर्पूरमंजरी, ९ पद्मिनी १० गुह्यशब्दा (पद्मनेत्रा)
 ११ चित्रिणी १२ चित्रवल्लभा (पुत्रवल्लभा, चित्ररूपा) १३ गौरी १४ गाधारी
 १५ देवशाखा १६ मरीचिका १७ चंद्रावली १८ चंद्ररेखा (पत्ररेखा) १९
 सुगंधा २० शत्रुमर्दिनी २१ माननी (मानिनी) २२ मानहंसा २३ सुस्वभावा
 २४ भावमुद्रिका (भावचद्रा) २५ मृगाक्षी २६ उर्वशी २७ रंभा २८ भुजघोषा
 (भजुघोषा) २९ जया ३० विजया (मोहिनी) ३१ चंद्रवक्त्रा (उत्ताना)
 ३२ कामरूपा अथे रीते नृत्य करती जतीश देव कन्याना नाम जलुवा. विजयातु
 मोहिनी, चंद्रवक्त्रातु उत्ताना अने कामरूपातु तिलोत्तमा अथे जलुवा अपरना
 नाम जलुवा ४) १०३ थी १०७

जघानी फिरती प्रदक्षिणामे अपने स्थानपर ईशान कोणसे १ मेनका, २
 लीलावती, ३ विधिचिता, ४ सुहृदी, ५ शुभगामिनी (सुभागीनी), ६ हंसावली,
 ७ सर्वकला, ८ कर्पूरमंजरी, ९ पद्मिनी, १० गुह्यशब्दा, (पद्मनेत्रा) ११ चित्रिणी,
 १२ चित्रवल्लभा, (पुत्रवल्लभा, चित्ररूपा) १३ गौरी, १४ गाधारी, १५ देवशाखा,
 १६ मरीचिका, १७ चंद्रावली, १८ चंद्ररेखा, (पत्ररेखा) १९ सुगंधा, २० शत्रु-
 मर्दिनी, २१ माननी, (मानिनी) २२ मानहंसा, २३ सुस्वभावा, २४ भावमुद्रिका,
 (भावचद्रा) २५ मृगाक्षी, २६ उर्वशी, २७ रंभा, (उत्तान) २८ भुजघोषा,
 (भजुघोषा) २९ जया, ३० विजया, (मोहिनी) ३१ चंद्रवक्त्रा, (उत्ताना) ३२
 कामरूपा, (तिलोत्तमा) । इस तरह नृत्य करती बत्तीस देवागना-देवकन्याका
 नाम जानना । ४ १०३ से १०७

मंडोवर वितानाद्य त्रिपुरुष रविजिना ।

मंडपाश्रैव सोमाद्या च गीतनृत्य समन्विता ॥१०८॥

माहवा स्थान मुत्कीर्णा द्वात्रिंशं च प्रदक्षिणे ।
 स्वयं क्षीरार्णवे प्राज्ञ विशेषेण चतुर्मुखे ॥१०९॥
 तथाश्च जंघामारूढ्य रूपवत्योऽमराङ्गना ।
 त्रय स्थाने भवेद्भ्रमा चतुःस्थाने च मेनका ॥११०॥
 उर्वशी च द्विधास्थाना मरिची पंच भागतः ।
 पञ्चविधा मुजघोषा च चत्वारं च तिलोत्तमा ॥१११॥
 विष्णु दशावतारं च तथा सप्त प्रजापतिः ।
 शिवं च पंचधा प्रोक्तं तथा देवाङ्गनादिका ॥११२॥

ब्रह्मा विष्णु अने रुद्र, सूर्य अने जिन ओ सर्वना प्रासादो अने मंडपोमां सुशोभनमां गीत अने नृत्य करतां देव देवांगनाओ अने उत्तम स्थानमां इरती बत्तीश देवांगनाओ प्रदक्षिणाओ करवी. स्वयं क्षीरार्णवमां उत्पन्न थयेल अने विशेषे करीने चतुर्मुख प्रासादनी जंघामां स्वरूपवान ओवी देवांगनाओनां स्वरूपो करवां. ओक ज प्रासादमां रंजाना स्वरूपो त्रय स्थाने करी शक्य; मेनका चारै स्थाने; उर्वशी ओ स्थाने; मरिचीका पांच स्थाने, मुजघोषा छ स्थाने अने तिलोत्तमा चार स्थाने करी करीने करी शक्य, जंघामां यथायोग्य प्रासादमां विष्णुप्रासादोमां विष्णुना दश अवतारो, ब्रह्माना प्रासादोना सात प्रजापति, शिव प्रासादमां शिवना पांच स्वरूपो. (१ सद्योजात्तर वामदेव ३ अघोर ४ तत्पुरुष ५ ईशान.) करवां कहां छे. ते उपरांत देवाङ्गनाओना स्वरूपो पाणु इरतां करवां. १०८ थी ११२.

ब्रह्मा विष्णु और रुद्र, सूर्य और जिन इन सर्वके प्रासादों और मंडपोंमें सुशोभनमें गीत और नृत्य करते देव-देवांगनाओं और उत्तम स्थानमें फिरती बत्तीश देवांगनाओंको प्रदक्षिणामें करना । स्वयं क्षीरार्णवमें उत्पन्न हुई और विशेष करके चतुर्मुख प्रासादकी जंघामें स्वरूपवान ऐसी देवांगनाओंके स्वरूपों करना । एक ही प्रासादमें रंभाके स्वरूपों तीन स्थलों पर हो सकते हैं । मेनकाको चारों स्थानमें उर्वशी दो स्थल पर, मरिचीका पाँच स्थानों पर, मुजघोषा छः स्थानों पर, और तिलोत्तमा चार स्थानों पर फिर फिर करा सकते हैं । जंघामें यथायोग्य प्रासादमें, विष्णु प्रासादोंमें विष्णुके दश अवतारों, ब्रह्माके प्रासादोंके सात प्रजापति, शिव प्रासादमें शिवके पाँच स्वरूपों (१ सद्योजात्तर वामदेव ३ अघोर ४ तत्पुरुष ५ ईशान) करनेके लिये कहा है । इसके अतिरिक्त देवांगनाओंके स्वरूपों भी फिरते करना । १०८ से ११२.

મેનકા સ્વરૂપાચ્ચંદ્રા ચ નૃત્યતિ ચ પદસ્તલે ।
 આલસ્યા ચ લીલાવતી વિધિચિતા સદર્પણા ॥૧૩॥
 સુંદરી નૃત્ય યુક્તા ચ શુભા કંટક (ગૃક) નિર્ગતા ।
 પાદ શૃંગાર કર્ત્રી ચ હંસા કમલ લોચના ॥૧૧૪॥
 ગાથા ઉચ્ચારણા વાય સર્વકલા અતઃ શૃણુ ।
 'નૃત્યંતિ ચ સર્વકલા વરદાદક્ષપાણિના ॥૧૧૫॥
 મસ્તકે વામહસ્તે ચ ચિંતનમુદ્રા સંયુતમ્ ।

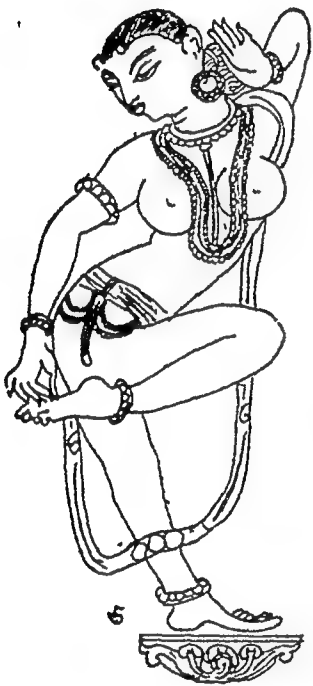


૧ મેનકા ૨ લીલાવતી ૩ વિધિચિતા ૪ સુંદરી

૧ મેનકાનું સ્વરૂપ હાથમાં ખડગ-ઢાલ ધારણ કરતી નૃત્ય કરતી (હાથો પગ જોયો), ૨ આળસ ભરડતી હાથ તેવા સ્વરૂપવાળી લીલાવતી; ૩ દર્પણ ધારણ કરી (મુખ જોતી) કે આલસ્ય કરતી વિધિચિતા બાણવી, ૪ નૃત્ય કરતી એવી સુંદરી બાણવી ૫ પગનો કાઠે કાઠની એવી સુસ્વભાવીની (શુભાગિની) બાણવી, ૬ પગનો શણગાર (ઝાઝર) પહેરતી એવી કમળના લોચનવાળી ગાથાનો ઉચ્ચાર કરવી હાથ તેવી હંસાવતી બાણવી ૭ નૃત્ય કરતી સર્વકલા જેનો જમણો હાથ વરદ મુદ્રાવાળો છે અને હાથ નૃત્ય કરતો મસ્તક ઉપર છે તેવી ચિંતન મુદ્રાવાળી સર્વકલા બાણવી ૧૧૩-૧૧૪-૧૧૫

૫ પાઠાન્તર સ્પર્શજ્ઞાર મૂલિતા । ૬ જૂની પ્રતોભા તે સહ મૂળાળા મચ્છે ધિષ્ઠિ ધિષ્ઠિ ધિર્ ધિર્ જાયતિ । પરપુર વહિ ચતુર્મુખે દ્વિદ્વા સુરનર નૃત્યતિ ભાવના સહજામ્ । પાઠ છે ૬ પુરાની પ્રતમે તે સહ સહજામ્ । પાઠ છે ।

१ मेनकाका स्वरूप हाथमें खड्ग-ढाल धारण किया-नृत्य करना । (दाया पाँव ऊँचा ।) २ आलसको व्यक्त करता स्वरूपवाली लीलावती । ३ दर्पण धारण कर (मुखको देखती) या तिलक करती विधिचिता जानना । ४ नृत्य करती ऐसी सुंदरी जानना । ५ पाँवसे काँटा निकालती ऐसी सुखभाविनी (शुभांगिनी) जानना । ६ पाँवका शृंगार (झाँझर) पहनती ऐसी कमल जैसे लोचनवाली गाथाका उद्धार करती हो वैसी हंसावली जानना । ७ नृत्य करती सर्वकला जिसका दाहिना हाथ वरदमुद्रावाला है, और बाँया हाथ नृत्य करता मस्तक पर है । वैसी चिंतन मुद्रावाली सर्वकला जानना । ११३-११४-११५.



५ शुभगामिनी



६ हंसावली



७ सर्वकला



८ कर्पूरमंजरी

नग्न भावे कृतस्नाना नाम्ना कपूरमंजरी ॥११६॥

पद्महस्ते च नृत्याङ्गी पट्टे पद्मं च पद्मिनी ।

अभयदा शिशुयुक्ता पद्मनेत्रा सा उच्यते ॥११७॥

कपाले वामहस्ता च नृत्यभावा च चित्रिणी ।

चित्ररूपा स पुत्राङ्गी गौरि च सिंहमर्दिनी ॥११८॥

(८) नग्न (भग्न) लावथी स्नान करती अथवा लावमंजरी नृत्य करती ऐसी कर्पूरमंजरी जानुवी. (९) नेना हाथमां पद्म (कमल) राणीने नृत्य अंगवाणी कमल-पद्मना पटवाली ऐसी पद्मिनी जानुवी) (१०) अलंयमुद्रावाणी पडजे शिशु भाण्ड छे ऐसी पद्मनेत्रा गुठशण्डा जानुवी (११) नृत्य लावथी नेना

७. पाठान्तर—मग्नभावामलस्नान ८. चत्वारिवंधु युक्ता च ९. वामहस्ते शिरंदद्यात् ।

ડાળો હાથ કપાળ (મસ્તકે) છે તેવી ચિત્રિણી બાણવી (૧૨) જેણે અગે પુત્ર ધારણ કરેલ તેડેલ છે એવી ચિત્રરૂપા (ચિત્રવલ્લભા-પુત્રવલ્લભા) બાણવી (૧૩) સિંહનું મર્દન કરનારી એવી ગૌરી બાણવી ૧૧૬-૧૧૭-૧૧૮



૧ પદ્મિની

૧૦ ગૂઢશબ્દા પદ્મનેત્રા

૧૧ ચિત્રિણી

૧૨ ચિત્રવલ્લભા=પુત્રવલ્લભા
ચિત્રરૂપા

(૮) નમ્ર (મમ્ર) ભાવસે સ્નાન કરતી અથવા માયમમ્ર નૃત્ય કરતી એવી કર્પૂરમજરી જાનના । (૯) जिसके हाथमे पद्म (कमल) रखकर नृत्य अगवाली कमल-पद्मके पटवाली ऐसी पद्मिनी (गूढशब्दा) जानना । (१०) अभयमुग्धावाली पासमे शिशु बालक है वैसी पद्मनेत्रा जानना । (११) नृत्य भावसे जिसका बाँया हाथ भाल (मस्तक) पर है वैसी चित्रिणी जानना । (१२) जिसने अग पर पुत्र धारण किया है ऐसी चित्ररूपा (चित्रवल्लभा-पुत्रवल्लभा) जानना । (१३) सिंहका मर्दन करनेवाली ऐसी गौरि जानना । ११६-११७-११८

१० उत्तमाङ्गे करन्यस्ता गाधारी नामनर्तिका ।

गोलचक्रं नृत्यकर्त्री देवशाखा सा चोच्यते ॥११९॥

धनुर्वाणाम्भ्यं संघाता वामदृष्टि मरिचिका ।

११ अञ्जली वद्धा नर्तकी च चद्रावली सुलोचना ॥१२०॥

(૧૪) ઉત્તમ અગવાળી જમણેા હાથ ઊંચેા રાખી ગમ્ય એવી નૃત્ય કરતી ગાંધારી બાણવી (૧૫) ગોળચક્ર નૃત્ય કરતા અગવાળીને દેવશાખા

(देवज्ञा) कही छे. (१६) डाणी तरइ दष्टि राणीने धनुष-भाणु ताकती ऐवी मरिचिका नाणवी. (१७) सन्मुख दष्टिभाववाणी अंगली मुद्रावाणी ऐवी सुंदर दोयनवाणी नर्तकी चंद्रावली नाणवी. ११०-१२०



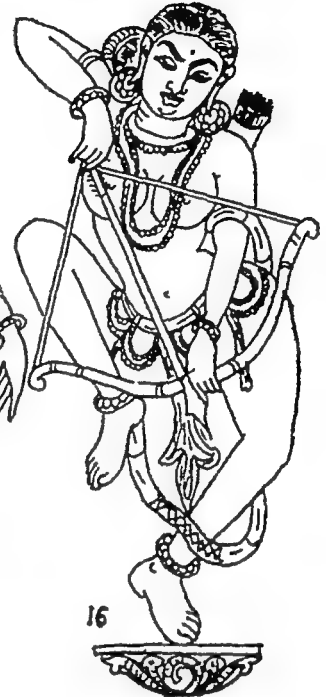
१३ गौरी



१४ गांधारी



१५ देवशाखा=देवज्ञा



१६ मरिचिका

(१४) उत्तम अंगवाली दाहिने हाथको ऊँचा रखकर रम्य ऐसी नृत्य करती गांधारी जानना । (१५) गोलचक्र नृत्य करते अंगवालीको देवशाखा



१७ चन्द्रावली



१८ चन्द्ररेखा पत्रलेखा



१९ सुगंधा



२० शत्रुमर्दनी

(देवज्ञा) कही है। (१६) बाईं तरफ दृष्टि रग्नकर धनुष-नाण ताकनी ऐसी मरिचिका जानना। (१७) सन्मुख दृष्टिभाजवाली अजली मुद्रावाली ऐसी सुत्र लोचनवाली नर्तकी चंद्राउली जानना। ११९-१२०

दक्षिण हस्तकमले ताडपत्रं च धरित्री।^{१२}

ललाटे चंद्ररेखा च सनाम विस्तरे सदा ॥१२१॥

सुगंधा च चक्रधरा चक्र नृत्यं च कुर्वति^{१३}।

^{१४}असिपुत्र धरा नृत्या शोभते शत्रुमर्दिनी ॥१२२॥

जेना नभसा हाथमा लेणिनी छे अने ताडपत्र धारण करी देणन करती ऐवी, जेना ललाटमा अङ्गी रेखा तेना नाम प्रभासे छे ऐवी सदा विस्तारवाणी अङ्गरेखा=(पत्र लेणा) नखुवी (१६) अङ्गे भाथे धारण करीने गोण नृत्य करती ऐवी सुगंधा नखुवी (२०) हाथमा छरी धारण करी नृत्यथी शोभती ऐवी शत्रुमर्दिनी नखुवी १२१-१२२

(१८) जिसके बाहिने हाथमे लेखिनी है, ओर ताडपत्र धारण कर लेखन करती ऐसी जिसके ललाटमे चंद्रकी रेखा उसके नामके अनुसार है ऐसी सदा विस्तारवाली-चंद्ररेखा (पत्रलेखा) जानना। (१९) चंद्रको शिरपर धारण करके गोलाकार नृत्य करती ऐसी सुगंधा जानना। (२०) हाथमे छरी धारण कर नृत्यसे शोभती ऐसी शत्रुमर्दिनी जानना। १२१-१२२

एका स्वर्गस्य भग्ने द्वितिया द्योवने शुभे।

तृतीया च वसुधरे चतुर्मुखे क्षीरार्णवे ॥१२३॥

देवागनातु अेक स्वर्ग भवनमा छे नीलु उद्योत ऐवा शुभ वनमा छे त्रीलु आ पृथ्वी पर छे अने चौथु क्षीर्णार्णवना आ चतुर्मुख प्रासादने विशे छे १२३

देवागनाका एक स्वरूप स्वर्ग भवनमे है। दूसरा उद्योत ऐसा शुभ वनमे है। तीसरा इस पृथ्वी पर है, और चौथा क्षीर्णार्णवके इस चतुर्मुख प्रासादके अंदर है। १२३.

हारहस्ता च नृत्याङ्गी मानवी कुल सुदरी।

^{१५}पृष्ठ वंशोद्धवा नृत्या मानहंसा च सुदरी ॥१२४॥

^{१६}ऊर्ध्वपादे चतुर्भुजा स्वभावा करौ मस्तके^{१७}।

^{१८}हस्तपादौ र्योगमुद्रा भावचंद्रा सुनर्तकी ॥१२५॥

१२ सुलेखा १३ वक्रनृत्य १४ छुरिकारसु नृत्याङ्गी। १५ मष्टाष्ट पृष्ठि सुखा च उपदा मानहंसानी १६ स्वभावा द्विकरा शिर। शिरसि करा। १७ १८ दक्षपादौ।

(२१) जे हाथमां हार धारण करीने नृत्य करता अंगवाणी जेवी कणानी कुण सुंदरी मानवी (माननी) जाणुवी. (२२) पोतानी पूठे-वांसे दर्शावी नृत्य करती जेवी जेतुं मुण पाछण छे जेवी सुंदरी मानहंसा जाणुवी. (२३) जेनो जमणो पग ठांयो राणी जे हाथो मस्तक पर राणीने चार अंगथी मरोडवाणी जेवी स्वभावा जाणुवी. (२४) जेना हाथ पग योग मुद्रा युक्त रडीने नृत्य करती जेवी नर्तकी भावचंद्र-भावमुद्रिका जाणुवी. १२४-१२५



२१ मानवी (माननी) २२ मानहंसा २३ सुस्वभावा २४ भावमुद्रिका=भावचंद्रा

(२१) दो हाथमें हार धारण करके नृत्य करते अंगवाली ऐसी कलाकी कुल सुंदरी मानवी (माननी) जानना । (२२) अपनी पीठ बताकर नृत्य करती ऐसी जिसका मुख पीछे है ऐसी सुंदरी मानहंसा जानना । (२३) दाहिना पांव ऊंचा रखकर दो हाथी मस्तक पर रखकर चार अंगसे मरोडवाली ऐसी स्वभावा जानना । (२४) जिसके हाथ-पांव योगमुद्रा युक्त हो वैसी नर्तकी नृत्य करती भावचंद्रा-भावमुद्रिका जानना । १२४-१२५.

मृगाक्षी सकलानृत्या तथोर्वशी अतः शृणुः^{१९} ।

^{२०} दशहस्ते दैत्यशिखा दैत्यखड्गेन हन्ति च ॥१२६॥

(२५) सर्व कणानी नृत्य करती जेवी मृगाक्षी जाणुवी. (२६) डवे डव-शीनुं स्वरूप सांखणो. जमणो हाथो दैत्यनी शिखा जेच्यो णडगथी भारती जेवी^{२६} उर्वशी जाणुवी. १२६.

(२५) सर्व कलासे नृत्य करती ऐसी मृगाक्षी जानना । अव उर्वशीका स्वरूप सुनो । दाहिने हाथसे दैत्यकी शिखा खिचकर खडकसे मारती ऐसी^{२६} उर्वशी जानना । १२६.

विश्वरुमेण वदेत्वाक्यं जडको जानंति शिल्पिनः ।

तेन वास्तु-तिष्ठति अपोदस्ते चतुरङ्गना ॥१२७॥

१२७

१२७

२१ हस्तद्वयेन छुरिके धृत्वा नृत्यं च कुर्वते ।

ऊर्ध्वी कृत दक्षपाद नाम्ना रम्भा नर्तकी ॥१२८॥

२२ हस्तद्वयेन खड्गे च नृत्यामर्तं च कुर्वति ।

भुजघोषंति नामा सा नृत्यं करोति सर्वदा ॥१२९॥



२५ भृगाक्षी



२६ उर्वशी



२७ रम्भा



२८ भुजघोषा (भुजघोषा)

(२७) जेठ हाथमा छुरी धारण करीने लभल्लो भग उथो राणीने नृत्य करती ओवी रत्ना लल्लुवी (२८) जे हाथमा भडग धारण करीने छ भेशा गोण लभती नृत्य करती ओवी भुजघोषा-भल्लुघोषा लल्लुवी १२८-१२९

(२७) दोनो हाथमे छुरी वारण कर बाहिना पाँव ऊँचा राखकर नृत्य करती ऐमी रम्भा जानना । (२८) दो हाथोंमे खडग धारण कर हमेशा गोल फिरती नृत्य करती ऐसी भुजघोषा-भल्लुघोषा जानना । १२८-१२९

(२९) वसुहस्ते छुरीका (२९) बाण विणायुक रभा ।

२२ धृताची कर्पचिता च यानजाने च मपटी ।

द्वयो खड्गश्च साधारै (रभा) भ्रमरी आचर्तं सयुता ॥१२८॥

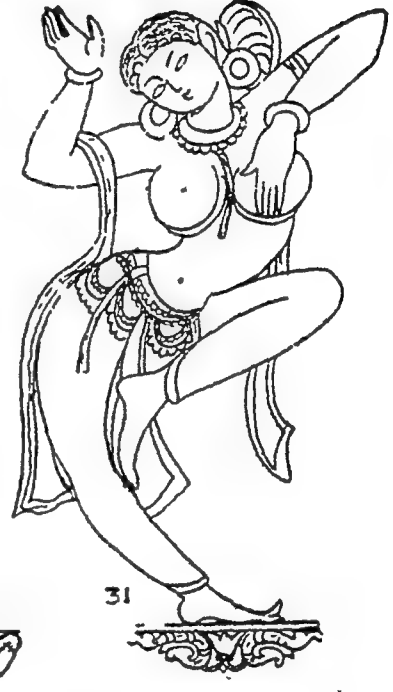
२३ शिरसिकलशं धृत्वा जयानृत्यं च कुर्वति ।
 २४ पुरुषालिङ्गा नयुक्ता मोहिनी नाम्ना नर्तकी ॥१३०॥
 २५ लसत्सुन्दराङ्गी नृत्या चोर्ध्व पादा तिलोत्तमा ।
 काश्यमंजिवा पुष्पाण कामरूपा पर तिलोत्तमा ॥१३१॥
 कांस्य मंजि वंशी विणा शंख मृदंग खंजरी ।
 विविधा वादित्र दश्याच क्वचित नृत्य नायक ॥१३२॥



२९ जया



३० मोहिनी=विजया



३१ चन्द्रवका उत्ताना

२४. नूनी प्रतोभां आ श्लोक १२७ थी जे स्थितिमां छे तेवे ज पाठ आपेज छे. तेमां जे हाथमां भङ्ग धारण करेदी रंभा के भुंजघोषातुं स्वर्ष नाथुवुं, वणी मोहिनीना आगणना पाठमां ईद्र अने रंभानुं स्वर्ष कथुं छे. परंतु अही श्लोक १३० ना छेला पद प्रमाणे मोहिनी स्वर्ष पुरुष-नरते आलिङ्गन आपतुं करवानुं कहे छे. वणी ओके भील प्रतमां “नरयुक्ता समोहिनी” ओभ स्पष्ट कथुं छे. जे के अही मोहिनीना स्वरूपना पाठ लेद छे परंतु ते ओके ज लाव दशवि छे.

पुरानी प्रतोंमें यह श्लोक १२७ के बाद जो स्थिति है वैसा ही पाठ दिया है। उसमें दो हाथमें खडग रखनेवाली रंभा या—मुंजघोषाका स्वरूप जानना। मोहिनीका और आगेके पाठमें इंद्र और रंभाका स्वरूप कहा गया है। परंतु यहाँ श्लोक १३० के अंतिम पदके अनुसार मोहिनी स्वरूप पुरुष-नरको आलिङ्गन देता करनेका कहते हैं। और एक दूसरी प्रतमें “नरयुक्ता समोहिनी” इस तरह स्पष्ट कहा है। जो कि यहाँ मोहिनीके स्वरूपके पाठ भेद हैं परंतु वह एक ही भाव बताता है।

२३. जयाना स्वरूपना पाठ लेदो छे. गीरनडी कलश युक्ता भीजे ओके पाठ पादजंजरी जयाम ओभ पण पाठ डोढिमां भजे छे.

२३. जयाके स्वरूपके पाठ भेदो हैं। गीरनडी कलशयुक्त, दूसरा एक पाठ पादजंजरी-जया च ओभ पण पाठ डोढिमां भजे छे.

२५. वासचिक (वालचीक) स्य संयुक्ता वदनेन तिलोत्तमा—पाठान्तर।

(२८) मस्तक पर कण्ठ धागु करीने नृत्य करती ऐवी ज्या नलुवी

(३०) पुरुषने आलिंगन करती ऐवी विजया=मोहिनी नामकी नर्तकी नलुवी (३१) ओक पग छे सो राणीने लयेला अगथी नृत्य करती ऐवी (उत्ताना)-चंद्रवका नलुवी (३२) कासीया मल्लरा नलवनी अथवा पुष्पपाण धागु करेदी ऐवी कामउपा (तिलोत्तमा) नलुवी १३०-१३१



कासा-मल्लरा-नसरी-वीणा-शभ के ढोल के नजरी नलवती ऐवा विविध वाद्यवादी देवाग नाओ पणु कोर्छ प्राचिन शिल्पमा देभाय छे

काम्य-मजिग, वसरी, वीणा, शर, ढोल या रजरी बजाती ऐसी विविध वाजिन्न बजाती देवाङ्गनाओं कवचित पुराने शिल्पमे दिगती है।

(२९) मस्तक पर कलश वागण कर नृत्य करती ऐसी

३२ कामरुपा (तिलोत्तमा) जया जानना। (३०) पुरुषको आलिंगन करती ऐसी विजया-मोहिनी नामकी नर्तकी जानना। (३१) लचेहुए अगसे नृत्य करती और एक पाँव ऊँचा रखकर नृत्य करती ऐसी उत्ताना-चंद्रवका जानना। (३२) कासीया मजरी बजाती अथवा पुष्पवाण धारण करती ऐसी कामरुपा (तिलोत्तमा) जानना। १३०-१३१



ढोल बजाती

वीणा बजाती

जाजरी बजाती कामीया बजाती देवाङ्गनाओं

शास्त्रोंका पाठसे विशेष प्राचिन मंदिरोंमे देवनेमें आती पृथक पृथक स्वरूप, हावभाव, वाजिन्नवाली देवाङ्गनाओंका स्वरूप।

अधोदृष्टि मताकार्या नृत्य भावेन नर्तकी ।
 ज्ञायते सर्व लोकेऽस्मिन् स्थूलदेहा (च) महीतले ॥१३३॥
 एते जंघा वितानादौ दिव्यस्थाने चतुर्मुखे ।
 दिग्पाला यक्ष गंधर्व भास्करादि ग्रहस्तथा ॥१३४॥

मुनि तापसरूपश्च व्यालादि च जलान्तरे ॥ इति देवाङ्गनादि जंघा स्वरूप ॥

सर्व लोकभां बाणीती येवी देवाङ्गनाओ आ पृथ्वी पर स्थूल देह नृत्य भाववाणी नृत्याङ्गनाओनी दृष्टि नीचे राखी. प्रासादना दिव्य स्थानभां आतुर्मुख प्रासादनी मंडोवरनी जंघा मंडप चौकी अने घूमटो-वितान आदिभां दिग्पाल लोकपाल, यक्ष, गंधर्व अने सूर्यादि नव ग्रहो इत्यादि स्वरूपो इरता करवा. मुनी तापस, व्याल आदिना स्वरूपो पाणीतारभां करवा. १३३-१३४. ॥ इति जंघास्वरूप ॥



शंख बजाती

वाल गुंथती

वंसरीवाली

बंसरी और पात्रवाली

शास्त्रोंका पाठोंसे विशेष प्राचिन मंदिरोंमें देखनेमें आती पृथक पृथक स्वरूप, हावभाव और वाजित्रवाली देवाङ्गनाओंका स्वरूप ।

सर्वलोकमें विख्यात ऐसी देवाङ्गनाओं इस पृथ्वी पर स्थूल देहसे नृत्य भाववाली नृत्याङ्गनाओंकी दृष्टि नीचे रखना । प्रासादके दिव्य स्थानमें चतुर्मुख प्रासादकी मंडोवरकी जंघा मंडप चौकी और घूमट-वितान आदिमें दिग्पाल-लोकपाल यक्ष, गंधर्व और सूर्यादि नौ ग्रहों इत्यादि स्वरूपों फिरते करना । तापस व्याल आदि स्वरूप पानी तारमें करना । १३३-१३४ ॥ इति जंघा स्वरूप ॥

ઉદ્ગમં માર્દ્વચત્વારિ ભરણી ત્રિપદં ભવેત્ ।
 ઉદ્ગમઃ કપિ મંયુક્તો ભરણી પલ્લવૈર્યુતા ॥૧૩૫॥
 શિરાવટી ચતુર્ભાગા ગિરપટ્ટ સમાકુલા ।
 છાદનં પદ મેકેન કપોતાલી ચ પૂર્વતઃ ॥૧૩૬॥
 ત્રિપદં કપોતાલી ચ અંતરપદ મેવ ચ ।
 કૂટછાદ્ય ચતુર્ભાગં પ્રહારં તત્સમં ભવેત્ ॥૧૩૭॥

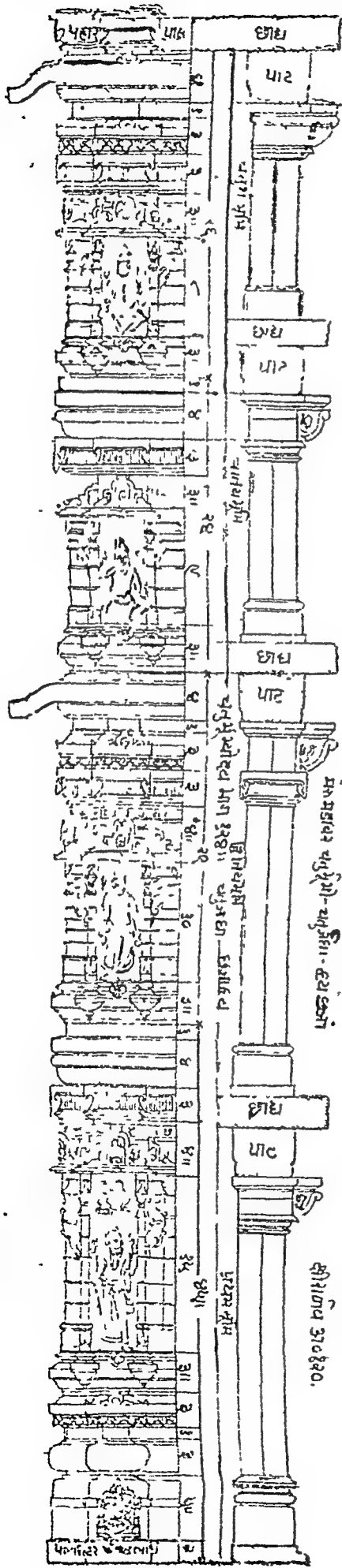
(આગળ જ ધા સુધીના ઉદ્યના ૩૩ ભાગ કહ્યા તેમા પદ્ય ભાગની જ ધા પર) માડા ચાર ભાગનો દોઢિયા-ત્રણ ભાગની ભરણી-દોઢિયામા ગ્રામપટ્ટી ઉપર રાખી ખૂણે ખૂણે કપિ-વાદરાના સ્વરૂપ કરવા અને ભાગણીને ખૂણે પાદડા કરી-(પ્રતિરથમા નીચે ગોળ-વૃત કણિકા કરની) ચાર ભાગની શિરાવટી કરવી તેના ઉપરની પટ્ટીનો સમાસ કરવો એક ભાગનું છાદન, ત્રણ ભાગનો કેવાળ, ફરી ત્રણ ભાગનો ખીજો કેવાળ, એક ભાગની અધારી કરી ચાર ભાગનું છણું કરવું તે પર તેટલો જ એટલો ચાર ભાગના પ્રહારનો થય કરવો ૧૩૫ થી ૧૩૭

(આગે જઘા તકકે ઉદ્યકે ૩૩ ભાગ કહે । उनमे पन्द्रह भागकी जघा पर) સાટે ચાર ભાગકા ડેઢિયા-ત્રણ ભાગની ભરણી-ડેઢિયેમે ગ્રામપટ્ટી ઉપર રાખ કર કોને કોનેમે કપિ-ત્રણકા સ્વરૂપ કરના । ઓર ભરણીકો કોનેમે પત્ર (પ્રતિરથમે નીચે ગોળ વૃત કણિકા) કરના । ચાર ભાગની શિરાવટી કરના ઉસકે ઉપરની પટ્ટીકા સમાસ કરના । એક ભાગકા છાદન, ત્રણ ભાગકા કેવાળ ફિર ત્રણ ભાગકા ખીજો કેવાળ, એક ભાગની અધારી કરકે ચાર ભાગકા છજા કરના । ઉસકે ઉપર ઇતને હી અર્થાત ચાર ભાગકે પ્રહારકા થર કરના । ૧૩૫ સે ૧૩૭

છાદને ન ભવેત્સંચી પ્રમાણ પૂર્વમેન ચ ।
 દિગ્ ભાગાયુતા જંઘા ભરણી પૂર્વત્ રમે ॥૧૩૮॥
 કપોતાલી ત્રયો ભાગા પદમેકં ચાન્તરં ભવેત્ ।
 છાદ્યં ક્રિયતે પૂર્વે પ્રહારાનિ ચતુષ્પદમ્ ॥૧૩૯॥

હવે જે જ ધાનો મડોવર કહે છે (છાદન સુધીના ૪૫મા ભાગ ઉપર) સાડા ત્રણ ભાગની માચી, દશ ભાગની જ ધા, ત્રણ ભાગની ભરણી-કેવાળ ત્રણ ભાગનો, એક ભાગની અધારી અને ચાર ભાગનું છણું કરવું (કુલ ૭૦ ભાગ જે મજલાની જે જ ધાના થયા) છત્ર પર ચાર ભાગનું પ્રહાર કરવું ૧૩૮-૧૩૯.

चार भूमि ४५॥ + २९ + २४ + २६ (१२४॥) विभाग उदय—चार जंघा और दो छज्जावाला महामंडोवर



अब दो जंघाका मंडोवर कहते हैं। (छादन तकके ४५ $\frac{३}{४}$ भाग पर) साढे तीन भाग की माची दश भागकी जंघा, तीन भागकी भरणी—केवाल तीन भागका—एक भागकी अंधारी और चार भागका छज्जा करना। (कुल ७० भाग दो मजलेकी दो जंघाके हुए) छज्जे पर चार भागका प्रहार करना। १३८-१३९:

द्वादशी जेष्ठा जंघा च भरणीकोर्ध्व मंचिका।

नवधा पुनर्जंघा च उद्गमं त्रय सार्द्धतः॥१४७॥

भरणी शिरावटी स्तत्र छादनं तु विशेषतः।

२६ कपोताली भवेद्वे च कूटछाद्यं च मस्तके॥१४९॥

ज्येष्ठ माननी गार जंघा सुधी अडावतां भील जंघानुं छडे छे. (उपरना छल सुधी ७० लागमां) छल पर माची साडा त्रण लागनी, नव लागनी त्रील जंघा, साडा त्रण लागनी होदीये, लराणी शिरावटी छादन जे केवाण ३ ४ १ ३ + ३ (कुल ३० लाग, ओक लाग अंधारी) ते उपर छलुं गार लागनुं करवुं. (अटले छल सुधीना १०५ लाग थ्या.) १४०-१४१.

ज्येष्ठमानकी बारह जंघा तक चढ़ाते तीसरी जंघाका कहते हैं। छजातक ७० भागमें छज्जा उपर माची साढे तीन भागकी नौ भागकी तीसरी जंघा—साढे तीन भागका ढेढिया—भरणी शिरावटी छादन दो केवाल (कुल ३० भाग, ४ १ ३ + ३ एक भाग अंधारी) उसके पर छजा चार भागका करना। (इससे छजा तकके १०५ भाग हुए।) १४०-१४१

(२६) केवाण उपर अने कूटछाद्य नीचे अंतराण आवेवा ज लोठिओ. परंतु अही लढीयाना दोषे जे पद अपूर्ण जलुय छे.

(२७) केवाल उपर और कूटछाद्य नीचे अंतराल आना ही चाहिये, यहाँ लहियाकी गलतीसे दो पद अर्पण हैं।

છાદને મંચિકા તત્ર પુનર્જવાપ્ત ભાગકા ।

મરણી કપોતાલી ચ દ્યયં ચ પ્રહારકઃ ॥૧૪૨॥

ચોથી જઘા ચડાવવાનુ કહે છે (ઉપરના ૯૪ લાગ છાદન સુધીના) છાદન ઉપર માથી ત્રણ લાગની જઘા આઠ લાગની, ત્રણ લાગની ભરણી, કેવાળ ત્રણ લાગનો (અને એક લાગનુ અંતરાળ) ૫૦ છત્રુ ચાર લાગનુ કરી તે ૫૨ પ્રહારનો ચર કરવો (એ રીતે ચાર જઘાનો મહામહોર-એ છત્ર ને ચાર જઘાનો ૧૧૬ લાગનો બાણવો) ૧૪૧-૧૪૨

ચૌથી જઘાકો ઘટાનેકે લિયે કહતે હૈ । (ઉપરકે ૮૪ ભાગ છાદન તરફે) છાદનકે ઉપર માચી ત્રીન ભાગકી જઘા આઠ ભાગકી, ત્રીન ભાગકી મરણી, કેવાલ ત્રીન ભાગકા (ઔર ઇક ભાગકે અંતરાલ) પર છઝા ચાર ભાગકા કર ઉસકે પર પ્રહારકે ચર કરના । ૧૪૧ इस तरह चार जघाका और ७ छज्जाका महामहोर १२४॥ भागका कहा) १४२

અથ કવલીમાન—તથા ચ ગર્ભમધ્યે ચ વિસ્તારં કવલિકોત્તમમ્ ।

દીર્ઘમાન સ્તતો રિપિ શ્રુણુત્વેકાગ્રતો મુનિ ॥૧૪૨॥

ચિત્રો^૧ વિચિત્રા^૨ ચૈવ ।

તૃતીયા અમયા^૩ ચિત્ર રૂપચિત્ર^૪ ચતુર્દલમ્ ॥૧૪૪॥

પળમેકં ગ્રાસાદં કવલી ચાઽમયામયો ।

કર્ણોત્તે પળ સ્ત્રિકૂલી પળ મેઝ ચ ॥૧૪૫॥

પંચ વિસ્તાર ગ્રાસાદ કવલી વિચિત્રાંતરે ।

^{૧૫}(પળમેક ચ ગ્રાસાદં કવલી ત્રિપણાન્તક) ।

ના લંઘયસ્ત્રમાનં ચ પળ સપ્તનતોત્પર ॥૧૪૬॥

ગ્રાસાદ કર્ણ સ્ત્રેણ સ્તૂપસ્તૂર્ણ વિગ્રેપતઃ ।

સિંહશાસ્ત્રા સ્વલ્પશાસ્ત્રા સ્તેન સ્ત્રે ઉદેચરઃ ॥૧૪૭॥

હવે કવલીનુ માન કહે છે ગર્ભગૃહના બેટલા વિસ્તારની કોળી ઉત્તમ માનની બાણવી તેની લગભગ એટલે નીકળતી કોળીનુ માન હે અપિરાજ, હવે એકાગ્રતાથી સાલજો કોળીના ચાર માનના નામો ૧ ચિત્રા ૨ વિચિત્રા ૩ અભયચિત્રા ૪ રૂપચિત્રા એ ચાર નામો બાણવા (૧) ગ્રાસાદના બેટલી એક ખડ બેટલી કોળી અભય નામે બાણવી (૨) ગ્રાસાદ રેખાએ હોય તેના

(૨૮) કૌસમા આપેલા બે પદો વધી પ્રતોષા નથી

મૌમમે દીયે દો પદ કીતની પ્રતામે નહીં હૈ ।



स्थंभ के ठेकेमें परिकर वाले ईद्रस्वरूप-(कल्याण)



लक्ष्मी नारायण युग्मस्य वडव्य महादेव मन्दिर खजुराहो



कडव महादेव मन्दिर में अधोम विष्णुपार्वती और देवाना के खल

त्रीज लागनी चित्रा नामे जाणुवी. (३) प्रासादना पांच लागमांना ओक लाग नेटली कोणी करवी ते विचित्रा नामे जाणुवी. (४) प्रासादना पांच लाग त्रणु लाग नेटली कोणी राखवीने रुपचित्रा नामे जाणुवी. प्रासाद रेखाये होय तेना सातमा लागथी ओष्ठुं मान-उल्लंघन करी कोणी न करवी. सांधार प्रासादना रेखा सूत्रना प्रमाणुथी मध्यनो स्तूप अरधाथी कंठक विशेष राखवो. प्रासादना रेखा सूत्र णराणर सिंहु शाखा अने पत्रशाखा अने उंणरे राखवा. १४३ थी १४७.

अब कवलीका मान कहते हैं । गर्भगृहके विस्तारके बराबर कोली उत्तम मानकी जानना । उसकी लम्बाई अर्थात् निकलती कोलीका मान हे ऋषिराज ! अब एकाग्रतासे सुनो । कोलीके चार मानके नामों १ चित्रा २ विचित्रा ३ अभयचित्रा ४ रूपचित्रा । इन चार मानोंको जानना । १ प्रासादके बराबर एक खंडके बराबर कोली अभय । नामसे जानना । २. रेखा पर हो उसके तीसरे भागकी चित्रा नामसे जानना । ३ प्रासादके पाँच भागमेंसे एक भागके बराबर कोली करना । उसे विचित्रा नामसे जानना । प्रासादके पांच भाग करके तीसरा भागकी कोली रूपचित्रा जानना । प्रासाद रेखाके पर हो उसके सातवे भागसे कम मान-उल्लंघन कर कोली न करना । सांधार प्रासादके रेखा सूत्रके प्रमाणसे मध्यका स्तूप आधेसे कुछ ज्यादा रखना । प्रासादके रेखासूत्रके बराबर सिंह शाखा और पत्रशाखा और उंवरा रखना । १४३ से १४७

अथ भित्तिमान—दशहस्तोत्परे यत्र चतुर्दश यथा भवेत् ।

मध्यस्तूप न दातव्या वेदिका सर्वकामदां ॥१४८॥

दशमांशे यदा भित्ति द्वादशांशेन मध्यतः ।

त्रिविवं भित्तिमानं च ज्येष्ठमध्यकन्यसं ॥१४९॥

मध्य स्तूप प्रदातव्यं भित्तिस्थात्पोडशांशके ।

पंचमांशे निरंधारे भित्ति प्रासाद शैलजे ॥१५०॥

दश हाथथी चौद हाथना सांधार प्रासादना मध्य स्तूप (मध्य क्षिंज भूण गर्भगृह अने लीतो साथेनो लागना नहि परंतु णडार रेखाये होय ते)ना दशमा-अण्यारमा के णारमा लागे ओम त्रिविध मान ज्येष्ठ मध्यम अने कनिष्ठ अनुक्रमे ओसारनुं जाणुवुं. मध्य स्तूपनी भित्ति सोणमा लागे राखवी. निरंधार प्रासादनुं पाषाणुनुं भित्तिमान प्रासादना पांचमा लागे राखवुं. १४८ थी १५०

दश हाथसे चौदह हाथके माधार प्रासादके मध्य स्तूप (मध्य लिंग-मूल गर्भगृह और दिवारोंके साथके भाग) के नहीं लेकिन बारह रेखा पर हो उनके दसवें ग्यारहवें या बारहवें भागमें इस तरह त्रिप्रिधमान ज्येष्ठ मध्यम और कनिष्ठ अनुक्रमसे औसारका जानना । मध्य स्तूपकी भित्ति सोलहवें भागमें रखना । पाषाणके निरधार प्रासादका भित्तिमान प्रासादके पाँचवें भागमें रखना । १४८-१४९-१५०

उपर्युपरिभूमीनां शंखावर्त (सव्यावर्त) प्रदक्षिणे ।

नापसव्येन कुर्वीत् द्वारमारोहणीनि च ॥१५१॥

गर्भमध्ये कृतं द्वारं पुनर्विं च स्थाप्यते ।

नंदवेद्याकृत्ये मय्ये शिखरं सर्वकामदम् ॥१५२॥

आ भडा योभुभनी उपरनी लूभिअे शंखावर्त (सव्यावर्त) इरते। प्रदक्षिणाअे करवा तेना द्वाग्ना कभाउ अपसव्य न करवा उपर गर्भगृह करीने तेभा वअे द्वार भूमी इरी णीण-भूर्तिनी स्थापना उपग्ना भाणे करवी ते सर्व कामनाने देनाउ अेलु शिखर ४६ पदना मध्यभा करवु १५१-१५२

इस महा चोमुखकी उपरकी भूमि पर गत्यावर्त (सव्यावर्त) फिरते प्रदक्षिणामे करना । उनके द्वारके किवाड अपसव्य न करना । उपर गर्भगृह कर उसमे विचमे द्वार रखकर फिर बीच-भूर्तिकी स्थापना उपरके मजले पर करना । इससे सर्व कामनाको देनेवाला ऐसा शिखर ४९ पदके मध्यमे करना । १५१-१५२

शुक्रनाश चतुषक्षे सर्वालकार माश्रिते ।

द्विभूमि सयुता स्तत्रा त्रयो भूमिकृते बुधे ॥१५३॥

एक भूमि द्वयो भूमि चानद् द्वादशभूमिका ।

जघा वृद्धि क्रम योगेन चक्राद्यौ भास्करातिके ॥१५४॥

आवा भडा योभुभ प्रासादने शुक्रनाश आरे तरङ्ग सुशोभित अलकृत करवो ते जे लूमिवाणे के त्रय लूमिवाणे बुद्धिमान शिल्पीअे करवो भडा चातुर्मुख प्रासाद ओक-जे मज्झा अेम णार भाण सुधी करी शक्य तेनी म डोवरनी ७ धा ते कभना योजे करीने ओकथी णार ७ धा सुधी करवी १५३-१५४

ऐसे महा चोमुख प्रासादको शुक्रनाश चारो ओर सुशोभित अलकृत करना । वह दो या तीन भूमिवाला बुद्धिमान शिल्पीको करना चाहिये । महा चातुर्मुख प्रासाद एक दो मजले इस तरह बारह मजले तक कर सकते हैं । उसकी मडोवरकी जघा उम क्रमके योगसे एकसे बारह जघा तककी करना । १५३-१५४

तथा युक्तिश्च विक्षाता रिषिराजं शृणोत्तमाः ।

गर्भद्विं षडांशोन षणश्रेष्ठं च तं भवेत् ॥१५५॥

तत्षणं दिक्कथा प्रोक्तं कन्यसं सप्तभागतः ।

षणमाने यदाशक्ति किञ्चिदधिके सविस्तरम् ॥१५६॥

त द्विषण भवेज्जेष्ठं कन्यसंतु द्विषोडश ।

विस्तारं युक्तिभित्याहु भद्रेष्टादशैस्तथा ॥१५७॥

भावार्थ—हे ऋषिराज, सर्वोत्तम ऐसी () नी युक्ति हुवे सांख्यो. सांधार-प्रासादना गर्भगृहना अर्ध () लागना छुं. लागनी ? () श्रेष्ठ ऋषुवी. तेना दशमा लागे कनिष्ठमान अने सातमा लागे मध्यमान-तेनाथी कंठिक अधिक राखवुं. तेना जे लाग ज्येष्ठमान तेना अत्रीशमे ? कनिष्ठमान () विस्तारनी युक्ति लींत जेटली....भद्र अठार लाग. १५५-१५६-१५७. हे ऋषिराज, सर्वोत्तम ऐसी ? () की युक्ति अब सुनो । सांधार प्रासादके गर्भगृहके आधे भागके छट्टे भागकी ? () श्रेष्ठ जानना । उसके दसवें भागमें कनिष्ठमान और सातवें भागमें मध्यमान; उससे कुछ अधिक रखना । उसके दो भाग ज्येष्ठमान-उसका बत्रीसवाँ ! () कनिष्ठमान () विस्तारकी युक्ति दिवारके बराबर....भद्र अठारह भाग । १५५-१५६-१५७

प्रासाद त्रिषणं वृक्ष्ये षणोक्तं भद्र मेव च ।

मंडपं च भवेत्त्रिणि क्वचिदायत निर्गमे ॥१५८॥

षणमेकं दंतरंतत्र ! द्येष्टं वा विचक्षणम् ? ।

द्विभूमि वेदिका कार्या त्रयोदश विवस्थिता ॥१५९॥

रंजश्च तस्याग्रेन सार्द्धं भूमी विशेषत् ।

षणपंच प्रकर्तव्या मग्रे बलाणक मंडपः ॥१६०॥

तस्याग्रे द्वयोभूमि वेदीकुर्या द्विचक्षण ।

चत्वारो नवमि प्राज्ञ कृत्वा नालीश्च मग्रत ॥१६०॥

भावार्थ—महा प्रासादना रणाये होय तेना त्रणु लाग कहुं छुं. तेना जेक लागना (जे) अमे करवा. अने तेनी त्रणु णाणु मंडपो करवा. ते कंठिक नीकणता राखवा. जेक लाग अंदर.....विचक्षण शिदपीजे करवुं. जे भूमि वेदिकावाणा मंडपो त्रणु दिशाजे करवा. आगण रंग मंडपनी होठ मज्जला जेटली विशेष भूमि जेलाणी राखवी. पांच पह विलागनो आगणनो अलाणुक मंडप जे भूमियुक्त अने वेदिकावाणा विचक्षण शिदपीजे करवा. आर....नव.... आगण नाली मंडप डाह्या शिदपीजे करवा. १५८ थी १६१.

महा प्रासादके रंगपर हो उसके तीन भाग कहता हूँ । उसके एक भागके (दो) भ्रमों करना । और उसकी तीन बाजु पर मंडपों करना । उन्हें कुछ निकलते करना । एक भाग अंदर विचक्षण शिल्पीको करना । दो-भूमि वेदिकावाले मंडपों तीन दिशाओंमें करना । आगे रंगमंडपकी डेढ़ मजलेके बराबर विशेष भूमि-उभणी रखना । पाँच पद विभागका आगेका बलाणक मंडप दो भूमियुक्त और वेदिकावाला विचक्षण शिल्पीको करना चाहिये । चार नय आगे वाली मंडप वृद्धिमान शिल्पीको करना चाहिये । १५८ से १६१

विस्तार युक्तिमाख्यात निर्गमं शृणुतो मुनिः ।

ब्रह्म मूलमार्गानि नालिद्वारं च षोडशं ॥१६२॥

त्रयोदशे त्रयोपक्षे भद्रांते विचक्षण ।

निर्गम भागमेकेन विस्तारं च त्रयोदशं ॥१६३॥

मुखभद्र मूलसंस्थाने निर्गमे भाग भागांतरे ।

फालग्वेत्प्राज्ञ चतुर्दिक्ष विधिपता ॥१६३॥

भावार्थ—विस्तारना विभाग कक्षा हुये नीकणता केटका राभवता ते हे मुनि, साक्षणो जिला गर्भ ब्रह्म मूल मार्गना नालिद्वारना सोण ? करवा त्रयोदश दिशाओं त्रयोपक्ष लक्ष्मि अते विचक्षण शिल्पीको करवु तेना नीकणो ओकेक लाग अने विस्तारमां तेर भाग-पद-पक्ष लक्ष्मि मूलभद्र मूल संस्थान ओकेक लागता आतरे तेनी क्षणताओं चतुर दिक्षीको राखी ते रीते चार दिशाओंको विधि लक्ष्मि १६२-१६३-१६४

विस्तारके विभाग कहे । अब निकलते कितने रखना यह हे मुनि, सुनो । षोडश गर्भ ब्रह्म मूलमार्गके नालिद्वारके सोलह । करना । तीनों दिशाओंमें तीनों बाजु भद्रके अंतर्में विचक्षण शिल्पीको करना चाहिये । उसका निकाला एक एक भाग और विस्तारमें तेरह भाग=पद भी जानना । मुख भद्र मूल संस्थानके एक एक भागके अंतरसे उसकी फाकनाओं चतुर शिल्पी रखें । इस तरह चार दिशाओंका विधि जानना । १६२-१६३-१६४

पुनः चैद्ध्र समारम्भ्य पद् नंदे प्रदक्षणे ।

चत्वारौ मूलयुक्ता च अष्टौते च महाधरा ॥१६५॥

एवंदा समायुक्ता संख्या मष्टोत्तरंगतम् ।

तस्योर्द्ध पुनः द्यष्ट प्रमाणं च अतः शृणु ॥१६६॥

त्यक्ता नालि पुनः युक्ति शृणुत्वैकाग्रतो मुनि ।

मेघनाद स - चाग्रे मंडपे च क्षणंतरे ॥१६७॥

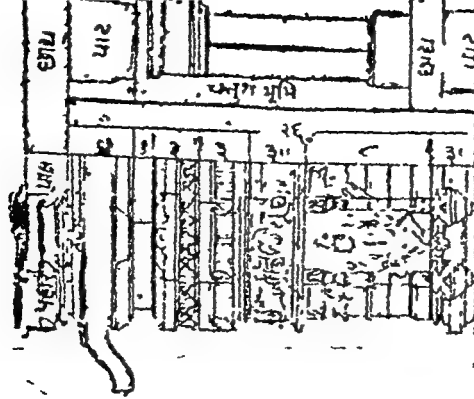
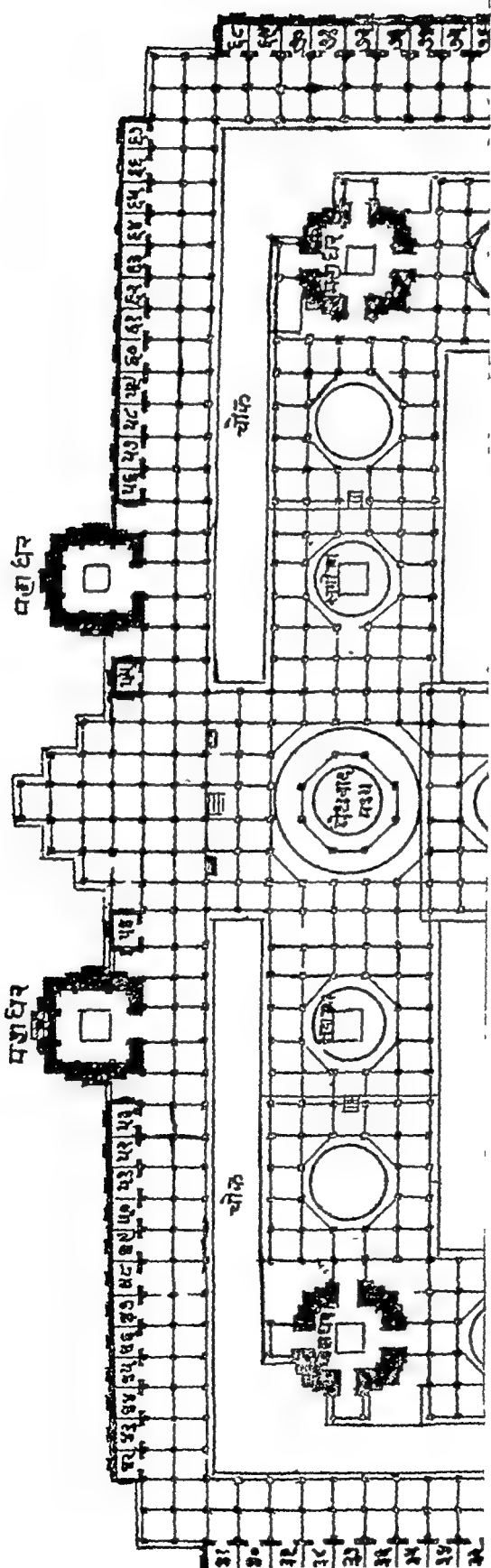
अने
। ते
उपर
कि
दुं
भीने
यभां
शनी

और
इस
ठका



तासे
पको
तम
सकी

। जो
। भां

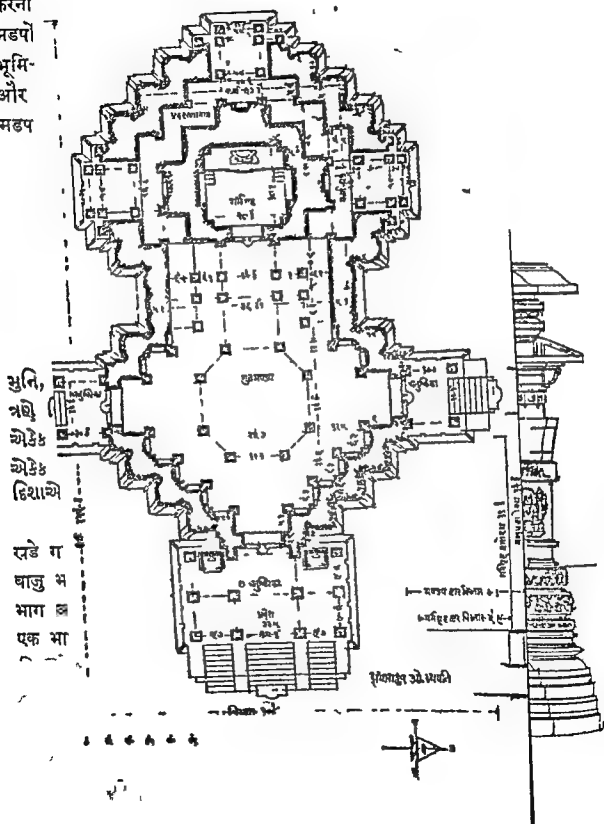


(दो)

करना
महपों
भूमि-
और
महप

श्री तारंगा जैन (भ्रमयुक्त) सांवार प्रासाद तलदर्शन
श्री तारंगा जैन मण्डपसाद (अजयपुर)

શ્રી તારુ, જૈન મહાસાદ (અગ્રણ્ય)



મુનિ,
ત્રણ
એકેક
એકેક
દિશા

खडे ग
वाजु भ
भाग
एक भा

પ્રવચનાદ્ય ઓધવડિ

— दण्डप शास्त्रिका ४ ।

॥ यमिह हारि विजय ॥

षणान्तरे पुनदद्यात् सभ्रमा मंडपोत्तमा ।

समवसरण कृते मध्ये अर्चामूलस्य न्यूनतः ॥१६८॥

इरी चैष्ट्र (देवकुलीकाओं)ना आरंभथी छन्नु-६६ प्रदक्षिणांये अने चार भूण भूणाना अने आठ मंडाधर (चालु पंक्तिमां मोटा मंदिरा आवे ते मंडाधर) ओभ मणीने कुल १०८ ओकसो आठनी संख्या ज्ञाणवी. तेनी उपर इरी आठनुं प्रमाण हुवे सांलणो. प्रवेशनी नाली छोडीने मंडपोनी इरी युक्ति हे मुनि, एकाग्रताथी सांलणो. प्रमुख चोमुखना आगण मंडपनुं ओक पदनुं अंतर छोडीने मेघनाद मंडप आगण करवा. वणी ओक पदनुं अंतर राणीने इरी भ्रमना पद साथेनो ओवो उत्तम मंडप करवो. ते मंडपनी मध्यमां समवसरणनी रचना करवी. अने तेनी प्रतिमा भूण नायकथी नानी पधराववी. १६५-१६६-१६७-१६८.

फिर चैष्ट्र (देवकुलीकाओं) के आरंभसे छियानवे (९६) प्रदक्षिणामें और चार मूल कोनेके और आठ महाधर (चालु पंक्तिमें बड़े मंदिरों आवें वह महाधर) इस तरह मिलकर कुल १०८ एकसौ आठकी संख्या जानना । उसके पर फिर आठका प्रमाण अव सुनो । प्रवेशकी नालीको छोडकर मंडपोंकी युक्ति हे मुनि, एकाग्रतासे सुनो । प्रमुख चोमुखके आगे मंडपके एक पदका अंतर छोडकर मेघनाद मंडपको आगे करना । और एक पदका अंतर रखकर फिर भ्रमके पदके साथका ऐसा उत्तम मंडप करना । उस मंडपके विचनें समवसरणकी रचना करना । और उसकी प्रतिमा मूलनायकसे छोटी पधरानी चाहिये । १६५-१६६-१६७-१६८

मंडप स्यांतरे यावत् मंडपाः सभूमिकाः ।

समवसरणं च दातव्यं सन्मुखे च महाधरः ॥१६९॥

एवमा चतुरोदक्ष कारयस्याद्विचक्षण ।

मंडपा चतुरोदक्ष यावत्मष्टोत्तरं शतम् ॥१७०॥

द्वितीया महाधरा मध्ये समवसरण च यावत् ।

द्वयोर्मध्ये च कर्तव्यं समवसरणं महामुनि ॥१७१॥

तेन माने भवे युक्ति मुनि विद्याधरैर्युता ।

न तेषां दोषदा स्तत्र युक्ति येष्टेन संशय ॥१७२॥

महाधरा द्वितीया पंक्ति प्रदक्षणे तृष्टि दीयते ।

भ्रमं तं च जिनालयं शत मष्टोत्तर (भवे)त्संख्या ॥१७३॥

ये मंडपना अंतर लाग सुधी (मध्यनो) मंडप भूमि मज्जावाणो जियो करवो. मंडाधरनी सन्मुख समवसरण करवुं. ओवी रीते चारे दिशाभां

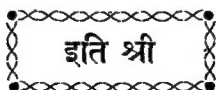
चतुर शिल्पीके करवु आरे तन्त्र मंडपो युक्त ऐकसो आठ जिनायतन सुधीनी
 देवकुलीकाओंनी रचना करवी णीन्त महाधरोनी वन्धे समवसरणुनी रचना
 करवी तेम न जे महाधरोनी वन्धे पणु छे मुनिराज, समवसरणादिनी रचना
 करवी ते सर्व मान प्रमाण युक्तिथी करवा तेमा मुनीद्रो, विद्याधरो, गधर्वा-
 दिना इपो सहित करवा तेमा वेध दोषोना सशय न रहे तेम करवु
 महाधरनी णीन्त पक्तिमा तेनी पाछा प्रदक्षिणा करवी ऐ रीते भ्रमयुक्त
 जिनायतन ऐकसो आठनी सण्यामा राखवी १६६ थी १७३

दो मंडपके अतरभाग तक (मध्यका) मंडप भूमि मजलेवाला ऊँचा
 करना। महाधरकी सन्मुख समवसरण करना। इस तरह चारों दिशाओंमें
 चतुर शिल्पीको करना। चारों तरफ मंडपोसे युक्त एकसौ आठ जिनायतन
 तककी देवकुलिकाओंकी रचना करना। दूसरे महाधरोमें समवसरणकी रचना
 करना। और दो महाधरोंके विच भी हे मुनिराज, समवसरणादिकी रचना
 करना। उसमें सब मान प्रमाण युक्तिसे करना। उसमें मुनीद्रों, विद्याधरों,
 गधर्वादिके रूपोंके सहित करना। उसमें वेध दोषोंका सशय न रहे इस तरह
 करना। महाधरकी दूसरी पक्तिमें उसके पीछे प्रदक्षिणा करना। इस तरह भ्रम
 युक्त जिनायतन एकसौ आठकी सख्यामें रखना। १६९ से १७३

इति श्री विश्वकर्मा कृताया क्षीरार्णवे नारद पृच्छाया क्षीरार्णव महा
 चातुर्मुखादि लक्षण नाम शताष्टविंशतितमोऽध्याय ॥ १२० ॥

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवे श्री नारदजीके पूछेन महाचतुर्मुख लक्षण
 शिष्ट विशारद स्थपति श्री प्रभाशकर ओषडभाइकी ऐथी गुर्जर भाषामें सुप्रभा नामनी
 भाषा टीकाते ऐकसो बीसमें अध्याय ॥ १२० ॥ (क्रमांक अ० २०)

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवमें श्री नारदजीके पूछे हुए महाचतुर्मुख लक्षण
 शिष्ट विशारद स्थपति श्री प्रभाशकर ओषडभाइकी रचि हुई गुर्जर भाषामें सुप्रभा नामकी
 भाषाटीका का एकसौ बीसवाँ अध्याय ॥ १२० ॥ (क्रमांक अ० २२)



स्थपति प्रभाशंकर ओषडभाई सोमपुरा शिल्प विशारद का संशोधित
प्राचिन शिल्प स्थापत्य कलाका अलभ्य साहित्य ग्रंथों का
प्रकाशन

१. दीपार्णव—

श्री विश्वकर्मा प्रणिन शिल्पका प्राचिन महान ग्रंथ ७६ + ४८८ = ५५४ पृष्ठों बड़ी रोयल साइज ३५० लाईन ब्लोक रेखाचित्र, १०५ हाफटोन फोटो ब्लोक सहित-मूल संस्कृत श्लोक और उनके गुजराती अनुवाद-मर्म और टीप्पणके साथ भरपुर संपूर्ण विवरणके साथ दलदार ग्रंथ, अध्याय २७-जीनमें प्रासादका संपूर्ण प्रमाणो अनेक देव-देवीयोंकी शिल्पाकृतीयां :अनेक प्लानों इलिवेशन साथ दीये गये हैं। स्थपति श्री प्रभाशंकरजीका दीर्घ-सक्तीय अनुभवकी प्रसंशा विद्वानोंने की है। ५० पृष्ठकी विद्वद्पूर्ण प्रस्तावना पढ़नेसे संपादक की कुशलता और विद्वत्ताका परिचय होता है। यह ग्रंथ संपादन में ६० प्राचिन ग्रंथोंका प्रमाण दीया गया है। मूल्य रु. २५ पच्चीस डाक खर्च पृथक्।

२-३. प्रासाद मञ्जरी—हिन्दी और गुजराती अनुवादित

मूल संस्कृत साहित्य, हिन्दी-गुजराती अनुवाद पृथक् पृथक् ८० रेखाचित्र हाफटोन ब्लोक २० है। यह ग्रंथ पंदरमी शताब्दीमें मेवाड़में कुंभाराणाके समयमें मंडन सूत्रधारका लघुबंधु नाथजीने ग्रंथ रचना की है। संपादकका शिल्पका विस्तृत ज्ञान और विद्वत्ताका परिचय होता है। अनुवादके साथ मर्म-टीप्पणसे भरपुर है। अनेक शिल्पग्रंथोंका प्रमाण दीया गया है। प्रत्येकका मूल रु. ७ सात। डाक खर्च पृथक्।

4. PRASADA MANJARI—

मूल सहित अंग्रेजी अनुवाद-उपरोक्त दीये हुए विवरणकी अंग्रेजी आवृत्ति जीनका अंग्रेजी अनुवाद और अन्य विभाग स्थपति प्रभाशंकरजीकी प्रस्तावनाका अंग्रेजी अनुवाद, प्रासादकी १४ जातियाँ वर्तमान प्राप्त शिल्पग्रंथोंका विवरण आदि पुरातत्वज्ञ श्री मधुसुदनभाई अ० ढाकीने अच्छी तरहसे लीखा है। भारतके प्रत्येक प्रांतकी शिल्प स्थापत्य कलाका सुंदर परिचय दीया है। श्री मधुसुदनजी अब अमेरिकन एकेडेमीमें वास्तुशास्त्रके शब्दकोश तैयार कर रहे हैं। यह ग्रंथ प्रेसमें है। मूल्य रु. १५ बारा डाक खर्च पृथक्।

५. जिनदर्शन शिल्प—

यह ग्रंथ दीपार्णवके उत्तरार्ध रूप है-इनमें जैन प्रासाद शिखर जिन प्रतिमा लक्षण, परिकर लक्षण, २४ यक्ष, २४ यक्षीणी, दश दीग्पाल नौग्रहो षोडश विद्यादेवी-आदि। जीनमें १७५ देव-देवीयोंका रेखाचित्र स्वरूप फोटा आदि दीया गया है। मूल्य रु. १० दश, डाक खर्च पृथक्।

६. वेधगास्तु प्रभाकर—

मूल हिन्दी-गुजराती अनुवाद सहित है। इस ग्रंथमें प्रासादगृह प्रतिमा आदिके वेध दोष आदि अनेक प्रकारके दीये हुए हैं। विविध प्राचिन ग्रंथोंके प्रमाणोंके सार अच्छी तरह दीये हैं। दीपार्णव ग्रंथकी पूर्ति रूप है। घर स्थापन शिल्पविज्ञान-द्वार स्तम्भ पाट घंटा आदिके मुहूर्तचक्र-वास्तु-वज्रलेप, सक्षिप्त पूजाविधि मंत्र-पूजाद्रव्यादी सूत्रधार पूजनविधि गणित कोष्टक अनेक विषयोंसे भरपुर अलभ्य सुन्दर ग्रंथमें रेखाचित्रों, फोटा आलेखनों आदि दीया हुआ है। मूल्य रु १० दश, डाक खर्च पृथक्।

७. वेडाया प्रासाद तिलक—

मूल हिन्दी गुजराती अनुवाद सहित है। पंद्रहवीं शताब्दीका सूत्रधार दीरपालकी सुन्दर ग्रंथ रचना अन्य शिल्पग्रंथोंसे पृथक् है, यह ग्रंथ सुन्दर छंद रचनासे लीखा है। प्रासाद शिल्पविषयका अपूर्ण ग्रंथका सशोधन कार्य पूरा हुआ है। थोड़े रोजमें प्रेसमें जायगा। मूल्य रु १० दश, डाक खर्च पृथक्।

८. क्षीरार्णव ग्रंथ । ९. वृक्षार्णव ग्रंथ—

विश्वकर्मा प्रणित है, नारद और विश्वकर्माका संवाद रूप अद्भुत अद्वितीय महाग्रंथ है। साधार प्रासादों-चातुर्मुख महाप्रासादोंके विषय सविस्तर दीया हुआ है। तीन साठेतीन भूमिका मेषनादादि मंडप-रचना-द्वादश जया युक्त १२ भूमिका मंदिरकी रचना अनेक मंडपों पृथक् पृथक् प्रकारके कक्षा है जिनमें अनेक विषयोंकी चर्चा की है। यह दोनू ग्रंथ दुष्प्राप्य अवर्णनिय है।

क्षीरार्णव ग्रंथका २२ अध्याय ८०० श्लोक पुरे हैं। क्षीरार्णव ग्रंथमें मूल संस्कृत, हिन्दी और गुजराती अनुवाद टीप्पण मर्म प्रत्येक अङ्गका आलेखन अनेक देव-देवीयोंका सुन्दर आलेखन अनेक नकसे-फोटो, श्लोक वस्तीस देवाङ्गनाका मूल संस्कृत पाठ सहित उनका आलेखन दिया हुआ है। शिल्प स्थापत्यके अथ तत्त्व जो ग्रंथका प्रकाशन हुआ है। उनमें क्षीरार्णवका प्रकाशन अद्भुत है। भूमिका पुरातत्त्वज्ञ विद्वान डॉ मोतीचंद्रजीने लीखी है।

वृक्षार्णव ग्रंथका सशोधनकार्य पूर्ण हुआ है। आशा है कि यह ग्रंथ गुजरातकी बड़ी विद्वद सस्थाकी तरफसे प्रकाशन होनेका संभव है।

क्षीरार्णव ग्रंथका मूल्य रु २७ सत्ताईश, डाक खर्च पृथक्।

शिल्प स्थापत्य साहित्य-समादक स्वपति प्रभाशकर ओ० सोमपुरा, शिल्प विशारद

शिल्प स्थापत्यकला साहित्य प्रकाशन

३ पथिक सोमायटी, सरदार पटेल कोलोनी

Publisher अहमदाबाद-१३

B. P. Sompura & Bros

3 Pathik Society, Ahmedabad-13

गोराव, डी पालीताणा (सौराष्ट्र)

प्रकाशक

वल्लवतराय प्र सोमपुरा,

आदि भ्रातृओ।

